जीवराज जैन ग्रन्थमाला, हिन्दी विभाग पुष्प-३४

श्रावकाचार संग्रह

हिन्दी छन्दोबद्ध श्रावकाचारों और दो क्रियाकोषों का संग्रह

भाग ५

पूर्व ग्रथमाला सम्पादक
स्व० डॉ हीरालाल जैन
स्व० डॉ ए० एन० उपाध्ये

विद्यमान ग्रथमाला सपादक
सिद्धान्ताचार्य प० कैलाशचन्द शास्त्री
वाराणसी

सम्पादक एवं अनुवादक
सिद्धान्ताचार्य पं० हीरालाल शास्त्री, न्यायतीर्थ
हीराश्रम, पो० साढूमल, जिला ललितपुर (उ० प्र०)

प्रकाशक
सेठ लालचन्द हीराचन्द
अध्यक्ष, जैन-संस्कृति-संरक्षक-संघ, शोलापुर (महाराष्ट्र)
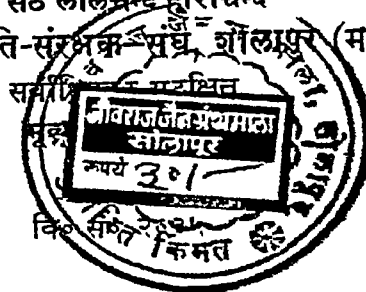
वी० नि० स० २५०४]

[ई० सन् १९७८

प्रकाशक
श्रीमान् सेठ लालचद हीराचंद
अध्यक्ष—जैन सस्कृति संरक्षक सघ
सोलापुर (महाराष्ट्र)

वीर सवत्
२५०४
ई० सन् १९७८

प्रथमावृत्ति
प्रति ५००

मुद्रक
वर्द्धमान मुद्रणालय
जवाहर नगर कॉलोनी, दुर्गाकुण्ड रोड
वाराणसी–२२१००१

स्व ब्र जीवराज गौतमचंद दोषी
स्व. रो ता १६-१-५७ (पौष शु १५)

परिचय

सोलापुर निवासी स्व० ब्र० जीवराज गौतमचद दोशी कई वर्षो से उदासीन होकर धर्म-कार्यमे अपनी वृत्ति लगा रहे थे। सन् १९४० मे उनकी प्रबल इच्छा हो उठी कि अपनी न्यायोपार्जित सपत्तिका उपयोग विशेषरूपसे धर्म और समाजकी उन्नतिके कार्यमे करे। तदनुसार उन्होने समस्त देशका परिभ्रमण कर जैन विद्वानोसे साक्षात् और लिखित रूपसे सम्मतियाँ इस बातकी सग्रह की, कि कौनसे कार्यमे सपत्तिका उपयोग किया जाय। स्फुट मतसंचय कर लेनेके पश्चात् सन् १९४१ के गीष्मकालमे ब्रह्मचारीजीने सिद्धक्षेत्र गजपथा (नाशिक) के शीतल वातावरणमें विद्वानोकी समाज एकत्रित की और ऊहापोहपूर्वक निर्णयके लिए उक्त विषय प्रस्तुत किया।

विद्वान् सम्मेलनके फलस्वरूप ब्रह्मचारीजीने जैनसस्कृति तथा जैनसाहित्यके समस्त अगोके सरक्षण, उद्धार और प्रचारके हेतु '**जैन सस्कृति सरक्षण संघ**' नामक सस्थाकी स्थापना की। उसके लिये रु० ३०,००० के दानकी घोषणा कर दी। उनकी परिग्रहनिवृत्ति बढती गई। सन् १९४४ मे उन्होने लगभग दो लाखकी अपनी सपूर्णसपत्ति सघको ट्रस्टरूपसे अर्पण की। इस सघके अंतर्गत 'जीवराज जैन ग्रन्थमाला' द्वारा प्राचीन प्राकृत-सस्कृत हिंदी तथा मराठी पुस्तकोका प्रकाशन हो रहा है।

आजतक इस ग्रन्थमालासे हिंदी विभागमे ३४ पुस्तके, कन्नड विभागमे ३ पुस्तके, तथा मराठी विभागमें ४४ पुस्तके प्रकाशित हो चुकी हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ इस ग्रन्थमालाका हिंदी विभागका ३४ वाँ पुष्प है।

प्रकाशकीय निवेदन

यह श्रावकाचार सग्रह ग्रन्थ उपासकाध्ययनागका चरणानुयोगका प्रकाशक अनुपम ग्रन्थ है। इसमे सब श्रावकाचारोका सग्रह एकत्रित किया है। श्रावक धर्मका स्वरूप क्या है, आत्मधर्मके उपासककी दिनचर्या कैसी होनी चाहिये, परिणामो की विशुद्धिके लिये क्रमपूर्वक व्रत-सयमका अनुष्ठान नितांत आवश्यक है इसका विस्तारपूर्वक विवरण इस ग्रन्थका पठन-पाठन करनेसे ज्ञात हो सकता है। स्व० श्रीमान् डा० ए० एन० उपाध्ये ने सब श्रावकाचार ग्रथोकी नामावली भेजकर यह ग्रन्थ प्रकाशित करनेके लिये मूलप्रेरणा दी इसलिये यह सस्था उनकी कृतज्ञ है।

श्रावकाचारके इस पाँचवें भागका सपादन एव हिन्दी अनुवाद श्री प० हीरालालजी शास्त्री ने तैयार करके ग्रथमालाको जिनवाणीका प्रचार करनेमे सहयोग दिया है, जिसके लिये हम उक्त जैनधर्मसिद्धांतके मर्मज्ञ विद्वान्‌को हार्दिक धन्यवाद समर्पण करते है।

इस ग्रंथका मुद्रण कार्य सुचारु रूपसे करनेमे श्री वर्द्धमान मुद्रणालय वाराणसी के सचालकवर्गने सहयोग दिया है इसलिये हम उनका भी आभार मानते है।

अतमे इस ग्रन्थका पठन-पाठन घर-घरमे होकर श्रावकधर्मकी प्रशस्त तीर्थप्रवृत्ति अखड प्रवाहसे सदैव कायम रहे यह मगल भावना प्रकट करते है।

श्री बालचंद देवचंद शहा
मत्री श्री जैनसस्कृतिसरक्षक संघ
(जीवराज जैन ग्रन्थमाला, सोलापुर)

सम्पादकोय वक्तव्य

श्रावकाचार-संग्रहका यह पचम भाग पाठकोंके कर-कमसोमे उपस्थित करते हुए मुझे महान् हर्ष हो रहा है । ऐ० पन्नालाल दि० जैन सरस्वती भवनमे पदम कविकृत 'श्रावकाचार'की एक प्रति विद्यमान है, उसे देखकर और पढकर उसकी महत्ताने हृदयपर यह प्रभाव अकित किया कि इसका भी प्रकाशन हो जाना चाहिए । उसमें यत श्रावककी ५३ क्रियाओंका वर्णन किया गया है अतः पं० किशनसिंह जी और पं० दौलतरामजोके क्रियाकोषोको प्रस्तुत सग्रहमें सकलन करनेकी भावना उत्पन्न हुई और गत वर्ष इसी मईमें श्रद्धेय, परम पूज्य मुनि श्री १०८ समन्तभद्र जी महाराजके चरण-सान्निध्यमे कुम्भोज पहुचा । वहाँपर संस्थाके मानद मत्री श्री वालचन्द्रजी देवचन्द्रजी शहा पहिलेसे ही उपस्थित थे । तथा श्री ब्र० पं० माणिकचन्द्रजी चदरे कारंजा, श्री ब्र० पं० माणिकचन्द्रजी भिसीकर और श्री रायचन्द्रजीकी भक्त मण्डली भी मौजूद थी । उन सबके सामने मैंने उक्त तीनोका प्रकाशन श्रावकाचार-सग्रहके पाँचवें भागके रूपमे करनेका प्रस्ताव रखा । सवके द्वारा समर्थन और अनुमोदन किये जानेपर संस्थाके मंत्रीजीने प्रकाशनकी स्वीकृति दी और इस विषयमे जीवराज-ग्रन्थमालाके प्रधान-सम्पादक श्रीमान् पं० कैलाशचन्द्रजी सिद्धान्त-शास्त्रीके साथ परामर्श करनेको कहा । यथा समय मैंने उनसे परामर्श किया और तदनुसार हिन्दी छन्दोवद्ध श्रावकाचारोका यह पाँचवाँ भाग पाठकोके सामने उपस्थित है ।

हिन्दी भापामें रचित होनेसे उनका अर्थ देनेकी आवश्यकता प्रतीत नही हुई । पदम कवि-रचित श्रावकाचारका सम्पादन ऐ० सरस्वती भवनकी एक मात्र प्रतिके आधारपर हुआ है । प्रयत्न करनेपर भी अन्य स्थानसे दूसरी प्रति उपलब्ध नही हुई । शेष दोनों क्रियाकोषोका सम्पादन पूर्व-मुद्रित प्रतियोके आधारपर हुआ है और उसमे किशनसिंहजीके क्रियाकोषका संशोधन श्रीमान् सर सेठ भागचन्द्र जी सोनी अजमेरके निजी भडारकी हस्तलिखित प्रतिके आधारपर हुआ है । प० दौलतरामजीके क्रियाकोषका सशोधन ऐ० सरस्वती भवनकी हस्तलिखित प्रतिके आधार-पर हुआ है, अतः हम उक्त सभीके आभारी है ।

इस भागके शीघ्र प्रकाशनार्थ गतवर्ष नवम्बरमे मैं वाराणसी आया । एक मासके बाद ही मै दमेसे बीमार पड गया और देश वापिस जाना पडा । दमेके शान्त होते ही हृदय-रोगसे पीडित गया और कुछ स्वस्थ होते ही पुन वाराणसी मार्चके प्रारम्भमे आया । कमजोरी अधिक होनेसे श्रीमान् प० फूलचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्री और महावीर प्रेसके मालिक प० बाबूलालजी फागुल्ल एवं अन्य वाराणसी-स्थित विद्वानोने मुझे सर्व प्रकारसे सभाला और स्वास्थ्य-लाभमे सहायक बने । इसके लिए मैं उक्त सभी विद्वानोंका बहुत आभारी हूँ ।

संस्थाके मानद मत्री श्रीमान् सेठ बालचन्द्र देवचन्द्र शहा और ग्रन्थमालाके प्रधान सम्पादक श्रीमान् प० कैलाशचन्द्रजी सिद्धान्त शास्त्रीका आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होने पत्रोके द्वारा एव मौखिक सत्परामर्श देकरके समय-समयपर मुझे अनुगृहीत किया है । वर्धमान मुद्रणालयने तत्प-रताके साथ इसका मुद्रण किया है इसके लिए मैं आप सबका आभारी हू ।

अन्तमे परम पूज्य श्री १०८ मुनि श्री समन्तभद्रजी महाराजका मैं किन शब्दोमे आभार व्यक्त करूँ जिनसे पूरे वर्षभर पत्रोके द्वारा स्वास्थ्य-लाभके लिए शुभाशीर्वाद और कार्य-प्रगतिके लिए सत्प्रेरणाएँ प्राप्त होती रही हैं जिससे प्रभावित होकर मै उनके चरण-सान्निध्यमे बैठकर तीसरे भागके सम्पादकीय वक्तव्यमे उल्लिखित विशेषताओके साथ श्रावकाचारकी विस्तृत प्रस्तावना लिखनेके लिए उत्सुक हो रहा हूँ।

पूर्वानुपूर्वीके क्रमसे नवीन उपलब्ध कुन्दकुन्दश्रावकाचारको प्रस्तुत सग्रहके चौथे भागमे विस्तृत प्रस्तावना और श्लोकानुक्रमणिकादि परिशिष्टोके साथ दिया गया है और तदनन्तर-रचित होनेके कारण इस सग्रहमे हिन्दीकी उक्त तीन रचनाओको दिया जा रहा है। तीनोके रचयिताओका सक्षिप्त परिचय, समय और उनकी विशेषताओकी समीक्षाको प्रस्तावनामे दिया गया है।

आशा है, पूर्व भागोके समान इस भागका भी स्वाध्यायप्रेमी जन समादर करेगे।

श्री पार्श्वनाथ दि० जैन मन्दिर
भेलूपुर, वाराणसी (उ० प्र०)
२७।५।७८

हीरालाल सिद्धान्तशास्त्री
हीराश्रम, साढूमल
जिला—ललितपुर (उ० प्र०)

प्रस्तावना

पदम कविका परिचय और समय

प्रस्तुत संग्रहमे सर्वप्रथम हिन्दी छन्दोबद्ध श्रावकाचार श्रीपदम-कविकृत सग्रहीत है। इन्होने इसके अन्तमे जो प्रशस्ति दी है, उसके अनुसार इस श्रावकाचारकी रचना सम्वत् १६१५ के माघ सुदी पंचमी शक्रवारको पूर्ण हुई है यथा—

> संवत् संख्या जिनभावना[१६], आनन्दा, सवच्छर संख्या प्रमाद[१५]तो।
> मास माहु सोहामणो आनन्द, भाइ वा सुत मर्याद तो ॥६०॥
> तिथि सख्या चारित्र भेदे, आनन्दा, रस संख्या शुभवार तो।
> शुभ नक्षत्रे शुभ योगे, आनन्दा, कीयो मै श्रावकाचार तो ॥६१॥ (पृष्ठ ११०)

इन्होने अपनी जो गुरु-परम्परा दी है उसके अनुसार ईडर शाखाके भट्टारक श्री पद्मनन्दी तत्पट्टे भ० सकलकीर्ति हुए जिनका समय [सवत् १४५०–१५१०, तक] का था उनके पट्ट पर भ० भुवनकीर्ति बैठे जिनका समय [सवत् १५०८–१५२७] तक है। उनके पट्ट पर भट्टारक ज्ञानभूषण बैठे जिनका समय (स० १५३४–१५६०) तकका है उनके पट्टपर भ० विजयकीर्ति बैठे जिनका समय (स०१५५७–१५६८) तकका है। उनके पट्टपर भ० शुभचन्द्र बैठे जिनका समय (स० १५७३–१६१३) तकका है इनके शिष्य भ० कुमुदचन्द्र हुए जिनको पदम कविने अपने गुरु रूपसे नमस्कार किया है।

पदम कविने अपनेको भ० शुभचन्द्रकी आम्नायका उल्लेख किया है, विनयचन्द्रको आगम गुरु और कर्मश्री ब्रह्मको अध्यात्म गुरु लिखा है। हीर ब्रह्मेन्द्रका शिक्षा गुरुके रूपमे उल्लेख किया है। भ० शुभचन्द्रका अन्तिम समय स० १६१३ तकका उल्लेख ऊपर किया गया है उनके शिष्य कुमुदचन्द्रका गुरु रूपसे उल्लेख कर प्रस्तुत श्रावकाचारकी रचना स० १६१५ मे हुई है यह उक्त भ० पट्टावलीसे भी सिद्ध होता है। (पृ० १०७)

पदम कविने जिन आचार्योके श्रावकाचारोके आधारपर अपने श्रावकाचारको रचना की है उसमे स्वामी समन्तभद्रका रत्नकरण्ड, वसुनन्दिका श्रावकाचार, प० आशाधरका सागार-धर्मामृत, और सकलकीर्तिका श्रावकाचार प्रमुख है। फिर भी श्रावक की त्रेपन क्रियाओका वर्णन इन्होने विस्तारके साथ किया है, इन्होने श्रावकाचारको रत्नदीप और त्रेपन क्रियाओको चिन्ता-मणि रत्न कहा है। यथा—

> श्रावकाचार ते रत्नदीप आनन्दा, त्रेपन क्रिया चिन्तारत्न तो।
> सुगुरु रत्न मूल्य नही, आनन्दा, दया करो तस जल तो ॥४४॥ (पृ० १०९)

पदम कविने अपने श्रावकाचारका ग्रन्थ परिमाण २७५० श्लोक प्रमाण कहा है और इमे छब्बीस प्रकारके रासोमे रचा है। यथा—

> छब्बीस भेद भासे भण्यो आनन्दा, श्लोक शत सत्तावीस तो।
> पचास अधिक सही आनन्दा, ग्रन्थ-सख्या अशेप तो ॥५८॥ (पृ० ११०)

उन छब्बीस रासोमेसे कुछ प्रमुख रासोके नाम इस प्रकार है—१ चौपाई, २ दोहा, ३ भास रास, ४ मालंतडानी ढाल, ५ जसोधरनी भास, ६. वस्तु छन्द, ७ अविकानी भास, ८ सहीनी ढाल, ९. वीनतीनी भास, १० भद्रबाहुनी ढाल, ११ हेलिनी ढाल, १२ ढाल, १३ हिंडोलानी ढाल, १४. नरेसुआनी ढाल, १५ गुणराजनी ढाल, १६ वैरागी भास, १७ विणजारानी भास, १८ सहेलडीनी ढाल, १९ सहेलीनी ढाल, २० रसना देवीनी ढाल, २१ आनन्दानी ढाल, २२ रासनी ढाल।

उक्त ढालोमे दोहा, चौपाई और वस्तु छन्दको छोडकर प्राय सभी ढाले गुजरात और राजस्थानके सीमावर्ती प्रदेशमे प्रचलित रही है अत प्रस्तुत श्रावकाचारकी भाषा गुजराती मिश्रित राजस्थानी है ढाल, रास और छन्द ये तीनो एकार्थवाचक है।

पदम कविने अपने माता-पिताके नामका कोई उल्लेख नही किया। केवल अपनेको वाग्वर (वागर) देशके सापुर (शाहपुर) नगर वर्ती श्री आदिनाथके मन्दिरका और नन्दी सघ वाले हुबड़ जाति-खदिर गोत्री और विरीत कुल का अवतस कहा है। (देखो पृ० ११० पद्य ४९-५२)

पदम कविका परिचय 'राजस्थानके जैन सन्त, व्यक्तित्व एवं कृतित्व' नामक ग्रन्थमे नही दिया गया है। इससे ज्ञात होता है कि उक्त कविने प्रस्तुत श्रावकाचारके सिवाय अन्य किसी ग्रन्थकी रचना नही की है। इसकी एकमात्र प्रति ऐलक पन्नालाल दि० जैन सरस्वती भवन, ब्यावरसे प्राप्त हुई। अन्य शास्त्र भण्डारोकी ग्रन्थ सूचियोमे इसका नाम दृष्टिगोचर नही हुआ।

किशनसिंह जीका परिचय और समय

प्रस्तुत सग्रहमे दूसरा हिन्दी छन्दोबद्ध श्रावकाचार श्री किशनसिंह जी का है जिसे उन्होने स्वयं क्रियाकोष नामसे उल्लेखित किया है। (देखे अन्तिम पुष्पिका, पृ० २३९) इन्होने अपने क्रियाकोषको सं० १७८७ के भादो सुदी पूनमको ढूढाहर देश (वर्तमान राजस्थान) के सागानेर नगरमे पूर्ण किया है। (देखो पृ० २३८ पद्य ९१)

ये रामपुराके निवासी थे। रामपुरा उणियारा-टोकके समीप है तथा जो आजकल अलीगढ के नामसे प्रसिद्ध है। किशनसिंहजीके पिताका नाम सुखदेव जी था उन्होने रामपुरामे एक विशाल मन्दिर वनवाया, जिसकी नीव सं० १७३१ मे पड़ी थी। ये दो भाई थे छोटे भाईका नाम आनन्द सिंह था। इनकी जाति खण्डेलवाल और गोत्र पाटनी था। किशनसिंह जी रामपुरासे आकर सांगानेर रहने लगे थे। इनकी अन्य १० रचनाएँ और भी उपलब्ध हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं—

१ णमोकार रास, २ चौवीस दण्डक, ३ पुण्यास्रव कथाकोप, ४ भद्रवाहु चरित, लब्धि विधान कथा, ६. निर्वाणकाण्ड भाषा, ७ चतुर्विंशति स्तुति, ८ चेतन गीत, ९ चेतन लोरी और १० पद संग्रह।

प्रस्तुत क्रियाकोषका ग्रन्थ परिमाण २९०० श्लोक प्रमाण है। (देखो पृ० २३८, पद्य ९४) इस क्रियाकोप की रचना १ हिन्दीके चौपाई, २ पद्धडी, ३. सोरठा, ४ अडिल्ल, ५ गीता, ६ कुण्डलियां, ७ मरहठा, ८ छप्पय, ९ तेईसा, १०. इकतीसा सवैया और तथा त्रिभगीमे तथा सस्कृतके त्रोटक, द्रुत विलम्बित और भुजंगप्रयात छन्दोमे की है। इन्होने अपनी अन्तिम प्रशस्ति मे इनकी छन्द सख्या भी दी है। (देखो पृ० २३८)

यह क्रियाकोष लगभग ५० वर्ष पूर्व सूरतसे प्रकाशित हुआ था जो अब अप्राप्य है।

श्री किशनसिंह जीने उक्तं च करके १४ श्लोक और गाथाएँ उद्धृत की है। जिनमेसे २ श्लोक प्रश्नोत्तर श्रावकाचारके है, १ श्लोक उमास्वाति श्रावकाचारका हैं तथा एक गाथा त्रिलोकसार और एक गाथा द्रव्य सग्रहसे ली गयी है। इन्होने अपने गुरु आदिका कोई उल्लेख नही किया है। इससे ज्ञात होता है कि इनका श्रावकाचार सम्बन्धी ज्ञान स्वयंके शास्त्र-स्वाध्याय-जनित था। अपने समयमे प्रचलित मिथ्यात्वी व्रतो और कुरीतियोका वर्णन कर उनके त्यागका प्रभावक वर्णन किया हैं।

दौलतरामजीका परिचय और समय

प्रस्तुत सग्रह मे तीसरा हिन्दी छन्दोबद्ध श्रावकाचार श्री दौलत राम जी का है जिसे उन्होने स्वय क्रियाकोष नाम दिया है। (देखो पृ० २४०)

इन्होने इस क्रियाकोष की रचना उदयपुर मे सं० १७९५ के भादो सुदी बारस मगलवार को पूर्ण की हे। यथा—

सवत सत्रासै पच्याणव, भादव सुदि बारस तिथि जाणव।
मंगलवार उदै पुर माहै, पूरन कीनी संसय नाहै॥ (देखो पृ० ३८९)

श्री दौलत राम जी ने श्री किसन सिंह जी के क्रियाकोष की रचना (स० १७८४) के ११ वर्ष पश्चात् (सं० १७९५) अपने क्रियाकोष को रचा है। इन्होने अपनी रचना का परिमाण नही दिया है और न रचे गये छन्दों के नाम ही दिये है। फिर भी हिन्दी भाषा के प्रसिद्ध दोहा, चौपाई, बेसरी छन्द, जोगीरासा, इकतीसा सवैया, चाल छन्द, कवित्त, सवैया तेईसा और सोरठा छन्दो मे इस क्रिया कोष को रचना की है।

प० दौलतराम जीने अपने इस ग्रन्थमे उक्त च करके कुछ गाथाएँ और श्लोक दिये है जिनकी संख्या ६ है। जिनमे से मयमूढमणायदण यह गाथा रयणसार की है, ३ श्लोक ज्ञानार्णव के है और २ लोक प्रश्नोत्तर श्रावकाचार के हैं।

डॉ० कस्तूरचन्द्र जी काशलीवालने इनकी १८ रचनाओका उल्लेख किया है, और उन्हे तीन भागो मे विभाजित किया है—

१ मौलिक रचनाएँ, २ अनूदित रचनाएँ और टब्बा-टीकाएँ।

मौलिक रचनाएँ आठ उपलब्ध है। यथा—१. क्रियाकोष, २ जीवन्धर चरित, ३ अध्यात्मा बारह खड़ी, ४ विवेक विलास, ५ श्रेणिक चरित्त, ६ श्रीपाल चरित्त, ७ चौवीस दण्डक, और सिद्धपूजाष्टक में सभी रचनाएँ छन्दोबद्ध है।

अनूदित रचनाएँ सात उपलब्ध है। यथा—१ पुण्यास्रवकथाकोष, २. पद्मपुराण, ३ आदि-पुराण, ४ हरिवश पुराण, ५ पुरुषार्थ सिद्धयुपाय, ६ परमात्म प्रकाश, और ७ सारसमुच्चय। ये सभी ढूढारी भाषा मे गद्य अनुवाद है।

तीसरे प्रकार की रचनाओ मे—१. तत्त्वार्थसूत्र टब्वा-टीका, २ वसुनन्दि श्रावकाचार टब्बा-टीका और ३ स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा टब्वा-टीका ये तीन उपलब्व हैं।

उक्त रचनाओ पर दृष्टिपात करने से यह सहज ही ज्ञात होता है कि प० दौलतराम जी चारों ही अनुयोगोके अच्छे ज्ञाता थे।

प० दौलतराम जीका जन्म वसवाँ (राजस्थान) मे सं० १७४९ के आषाढ़ सुदी १४ को हुआ। इनके पितामहका नाम घासीराम और पिताका नाम आनन्दराम था। जाति खडेलवाल और गोत्र कागलीवाल था। इनका अध्ययन कहाँ और किससे हुआ, इसका कोई उल्लेख उन्होंने अपनी रचनाओमे कही नही किया है। पर इनकी रचनाओको देखते हुए ये प्राकृत और संस्कृतके अच्छे ज्ञाता थे, यह सहजमे ही ज्ञात हो जाता है। तथा इनके पिता यतः राज्यके उच्च पद पर आसीन रहे हैं, अत: इनकी शिक्षा-दीक्षा भी उभय-भाषा विशेषज्ञ विद्वानोके द्वारा हुई होगी, ऐसा निश्चित है। चारो अनुयोगोंका ज्ञान इनका स्वोपार्जित प्रतीत होता है।

समीक्षा

पद्म कवि कृत श्रावकाचार और दोनो क्रिया-कोषोमें क्या समता और क्या विशेषता है इसका कुछ यहा विचार किया जाता है—

जिस प्रकार पदम कविने अपने श्रावकाचारको भूमिकामे समवशरणमे ले जाकर श्रेणिकके द्वारा गौतम गणधरसे श्रावक धर्मके जाननेकी इच्छा प्रकट की, उसी प्रकार किशन-सिंह जीने भी कराई है, किन्तु दौलतराम जीने ऐसा न करके मगलाचरणके पश्चात् त्रेपन क्रियाओका वर्णन यह कहकर प्रारम्भ किया है कि गृहस्थको अनेक क्रियाओमे त्रेपन क्रियाएँ प्रधान है।

दोनो ही क्रिया कोषोमे त्रेपन-क्रियाओकी नाम वाली एक ही गाथा 'उक्त च' कहकर लिखी है। वे त्रेपन क्रियाएँ इस प्रकार हैं—मूलगुण ८, व्रत १२, तप १२, समभाव १, श्रावक प्रतिमा ११, दान ४, जलगालन १, अनस्तमित व्रत (रात्रि भोजन त्याग) १, दर्शन १, ज्ञान १, चारित्र १, =५३।

प्रस्तुत संग्रहमे निवद्ध तीनो ही ग्रन्थकारोने त्रेपन क्रियाओकी मुख्यतासे ही श्रावकके आचारका वर्णन किया है इसके पूर्व श्री राजमल जीने अपनी लाटी सहितामे भी उक्तंच करके त्रेपन क्रियाओके नाम कली उसी गाथाका उल्लेख किया है जिसे कि उक्त दोनो क्रियाकोष कारो ने उद्धृत किया है।

पदम कविने आगे कहे जानेवाले विषयका निर्देश पूर्व कथनके उपसंहारके साथ छन्द में ही कर दिया है, किन्तु किशनसिंह जी ने उसके साथ वर्ण्य विषय का निर्देश पृथक् शीर्षक देकरके किया है, जिससे पाठक को आगे वर्णन किये जानेवाले विषय का बोध सरलता से हो जाता है। दौलतराम जीने शीर्षक नही दिये हैं।

भक्ष्य-अभक्ष्य वस्तुओकी काल-मर्यादाका निर्देश पदम कवि और किशनसिंह जीने पूर्वा-गत गाथाओको देकर सप्रमाण वर्णन किया है, किन्तु दौलतरामजीने उक्त वर्णन करते हुए भी प्रमाण उद्धृत नही किये है।

पदम कविने गृहीत मिथ्यात्वके पांचो भेदोका जितना स्पष्ट और विस्तृत वर्णन किय है, वैसा शेष दो क्रिया कोषकारोने नही किया है।

मिथ्यात्वपूर्ण एवं मन-गढन्त लोक-प्रचलित मिथ्याव्रतो का वर्णन कर उनके त्याग का जैसा उपदेश किशनसिंह जीने दिया है वैसा शेष दोने नही किया है।

पदन कविने मिथ्यात्वके निरूपणके पश्चात् सम्यक्त्व-प्राप्तिकी योग्य भूमिका वर्णन कर सप्त तत्त्वोका और सम्यक्त्वके भेदोका स्वरूप विस्तारसे कहा है। किन्तु किशनसिंह जीने त्रेपन क्रियाओ को गिनाकर और मिथ्यात्व एव सम्यक्त्वका कुछ भी वर्णन न करके मूलगुणोका वर्णन करते हुए इस प्रकारके अभक्ष्योका विस्तारसे वर्णन किया है। दौलतराम जीने भी मगलाचरणके पश्चात् मिथ्यात्व-सम्यक्त्वका वर्णन न करके अभक्ष्य-पदार्थोका वर्णन किया है। साथ ही दोनोने भक्ष्य-अभक्ष्य वस्तुओकी काल-मर्यादा का वर्णन प्राचीन गाथाओ के प्रमाण के साथ किया है ।

पदमकविने रत्नकरण्डकके समान सर्वप्रथम सम्यक्त्व के अगोका विस्तृत स्वरूप और उनमे प्रसिद्ध पुरुषो की प्रश्नोत्तर श्रावकाचार के समान कथाओ का निरूपण किया है। किन्तु किशन सिंह जी ने सम्यक्त्व के अगो का और उनमें प्रसिद्ध पुरुषो को कथाओं का कुछ भी उल्लेख नही किया है। दौलतराम जो ने अति संक्षेप मे आठो अगो का स्वरूप कह कर उनमे प्रसिद्ध पुरुषो के केवल नामोका ही उल्लेख किया है ।

पदम कवि ने उक्त प्रकार से सम्यग्दर्शन का सागोपांग विस्तृत वर्णन करके पश्चात् दर्शन प्रतिमा का वर्णन करते हुए सर्व प्रथम सप्त व्यसन-सेवियो मे प्रसिद्ध पुरुषो का उल्लेख कर उनके त्याग का उपदेश दिया। तत्पश्चात् अष्टमूलगुण, पालने जल-गालने और रात्रिभोजन के दोष बताकर उसके त्यागका उपदेश दिया। तदनन्तर व्रत प्रतिमाके अन्तर्गत श्रावकके बारह व्रतोका विस्तार से वर्णन किया है। किन्तु किशनसिंहजीने प्रतिभाओ के आधार पर उक्त वर्णन न करके आठ मूल गुणो का वर्णन कर अत्यक्ष्य पदार्थों का विस्तार से वर्णन कर उनके त्याग का और चौके के भोतर ही भोजन करने का विधान किया है।

पदम कविने सम्यक्त्वके अगोका और उनमे प्रसिद्ध पुरुषोको कथाओका वर्णन कर व्रत प्रतिमा आदिका विस्तारसे वर्णन कर अन्तमे छह आवश्यक, बारह तप, रत्नत्रय धर्म और मैत्री-प्रमादादि भावनाओका वर्णन कर अन्तमे समाधिमरणका वर्णन कर अपनी वृहत् प्रशस्ति दी है। किन्तु किशनसिंहजीने अभक्ष्य वर्णनके पश्चात् रजस्वला स्त्रीके कर्त्तव्योका विस्तारसे वर्णन कर श्रावकके बारह व्रतोका और समाधि मरणका वर्णन किया है। तद-नन्तर श्रावककी ग्यारह प्रतिमाओका सक्षेपसे वर्णन कर जल-गालन, रात्रि भोजन-त्यागरूप अणथम (अनस्तमित) व्रत और रत्नत्रय धर्मका वर्णन कर कैर-सांगरी आदिकी घृणित उत्पत्ति, गोद, अफीम, हल्दी और कत्था आदिकी जिन्द्य एव हिंसामयी उत्पत्तिका विस्तारसे वर्णन किया है। तत्पश्चात् मिथ्यामतोका निरूपण करते हुए लूँकामतकी आचार-हीनता का, और जिन-प्रतिमा का विस्तारसे वर्णन किया है।

पदम कवि ने लूँकामत का कोई उल्लेख नही किया है और दौलतराम जोने नामोल्लेख न करके उनके मतकी समालोचना कर जिन प्रतिमाकी महत्ताका शंका-समाधान पूर्वक वर्णन किया है। इससे ज्ञात होता है कि पदम कविके समयमे लूकामतका या तो प्रारम्भ ही नही हुआ था, और यदि हो भी गया होगा, तो उसका प्रचार उनके समयमे नगण्य-सा था ।

किशन सिंह जीने जन्म-मरणकी मिथ्या क्रियाओका, सूतक-पातकका ग्रह-शान्ति, ज्योतिषचक्र और सूर्य-चन्द्रके ग्रहणका जैन मान्यताके अनुसार विस्तारसे वर्णन किया है। किन्तु पदम कविने और दौलतराम जीने यह कुछ भी वर्णन नही किया है।

पदम कविने मन्त्र-जापके समय विभिन्न अंगुलियों परसे उसके विभिन्न फलोंका वर्णन किया है, किन्तु किशन सिंह जीने जाप्य मंत्रोका वर्णन करते हुए भी विभिन्न अंगुलियो परसे जाप करने के विभिन्न फलो को का कोई वर्णन नही किया है। दौलतराम जी ने सामायिका विस्तृत वर्णन करते हुए भी उक्त विवेचन नही किया है।

पूजन का वर्णन यद्यपि तीनों की ग्रन्थकारोने किया है, परन्तु पूजन-प्रक्षाल करते समय मुखपर कपड़ा बाँधनेका विधान केवल किशन सिंहजी ने ही किया है। मुखपर कपड़ा बांधकर पूजन-प्रक्षाल करनेका रिवाज मूर्तिपूजक श्वेताम्बर जैनोमे आज भी प्रचलित है और कुछ समय पूर्व तक बुन्देल खण्डके दि० जैनियोमे भी था।

पदम कवि ने निर्माल्य भक्षण के महादोष का वर्णन किया है, परन्तु दोनों क्रिया कोष-कारों ने इस विषय पर कुछ नही कहा है।

किशन सिंह जीने लोक-प्रचलित मन-गढ़न्त मिथ्या व्रतोंका निषेध कर आष्टाह्निक, सोलह कारण आदि अनेक जैन व्रत-विधानोंका जैसा विधि-पूर्वक विस्तृत विवेचन किया है, वैसा शेष दोनोने नही किया है।

दौलतरामजीने बारह प्रकारके तपोका जैसा विस्तृत वर्णन किया है, वैसा शेष दोनो ने नहीं किया है।

किशनसिंहजीने जिन-मन्दिरमे नही करने के योग्य चौरासी आसादनाओं का तथा मिथ्या-त्वमयी नवग्रह-शान्ति का निषेध कर जैनविधि से नवग्रह-शान्ति और ज्योतिष चक्र का वर्णन किया है, पर शेष दोनो ने इस पर कुछ नही लिखा है।

विवाह के समय एवं जन्म-मरण के समय की जाने वाली मिथ्यात्वपूर्ण क्रियाओं का जैसा निषेध पदम कविने किया है, वैसा शेष दोने नहीं किया है।

किशनसिंहजीने प्रातःकालीन पूजनको अष्ट द्रव्योसे, मध्याह्न पूजन सुन्दर पुष्पोंसे और सायंकालकी पूजन को दीप-धूप से करनेका वर्णन किया है, वैसा शेष दोने नही किया है।

पूजकको नौ स्थानोंपर तिलक लगाने और आभूषण धारण करनेका वर्णन भी किशन-सिंहजीके सिवाय शेष दोने नही किया है। वस्तुतः यह विधि पंचकल्याणकादि विशिष्ट पूजा-विधानोंके लिए है, फिर भी भक्तजन अपने नवों अंगोमे चन्दन लगाकर उक्त कर्त्तव्य की पूर्त्ति कर ही लेते हैं।

जाप करते समय णमोकारमंत्रको तीन श्वासोच्छ्वासोंके द्वारा उच्चारण करनेका विधान इन्होंने किया है। यथा प्रथम पदको श्वांस खीचते हुए, दूसरे पदको श्वास छोड़ते हुए, तीसरे पदको श्वास खीचते हुए और चौथे पदको श्वास छोड़ते हुए तथा पचम पदके 'णमो लोए' पदको श्वास लेते हुए और 'सव्वसाहूणं' पदको श्वास छोडते हुए उच्चारण करना चाहिए। इस प्रकार से तीन श्वासोच्छ्वासोमे उच्चारण करनेसे मन इधर-उधर न भागकर स्थिर रहता है।

सभीने पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके पूजन और जाप करने का विधान किया है।

प० दौलतरामजीने अष्ट मूलगुणोके वर्णनसे साथ ही अभक्ष्य वस्तुओने त्यागका, चौका, चक्की, परडा आदिको शुद्धिका, रजस्वला-प्रसूतादि स्त्रीके हाथसे स्पर्शी वस्तुओकी अग्राह्यता का, और सप्त व्यसनो का जैसा भावपूर्ण वर्णन किया है, वह पढते ही बनता है। शेष दोनो के वर्णनमे वैसी भावपूर्ण सरसता नही है।

इसी प्रकार व्रती श्रावकके नही करने-योग्य व्यापारोका, सम्यक्त्वके भेदोका विशद और सरस वर्णन तथा अहिसाणुव्रतके वर्णनमे दया का अपूर्व विस्तृन वर्णन भी बार-बार पढने के लिए मन उत्सुक रहता है।

पदम कविने सामायिकके ३२ दोषों का वर्णन तीसरी प्रतिमामे किया है। किन्तु किशन सिंहजोने दूसरी ही प्रतिमामे किया है। पर दौलतरामजीने उनका कही कोई वर्णन नही किया है। इन बत्तीस दोषोका वर्णन अनेक श्रावकाचार-कर्त्ताओने भी किया है। पर वस्तुत ये दोष साधुओके लिए ही मूलाचार आदिमे बतलाये गये है। श्रावकको जितना सभव हो, उतने दोषोसे बचने का प्रयत्न करना चाहिए।

पदम कविने चार शिक्षा व्रतोंका वर्णन कुन्दकुन्दके अनुसार किया है, किन्तु किशनसिंह जी और दौलतरामजीने तत्त्वार्थसूत्रके अनुसार किया है।

श्रावकके १७ नियमोका वर्णन तीनोने ही किया है।

अन्तमे एक ही प्रश्न विचारणीय रह जाता है कि किशन सिंहजीके द्वारा सांगानेर (राजस्थान) में रहते हुए स० १७८४ में क्रिया कोषको रचना करनेके केवल ११ वर्षके बाद ही दौलत रामजीने उदयपुरमें अपने क्रिया कोषकी रचना क्यो की? दोनों क्रियाकोषोंको गभीर और सूक्ष्म दृष्टिसे देखनेपर हम दो निष्कर्षोंपर पहुचे है। प्रथम तो यह कि सभव है कि दौलतरामजीको किशनसिंहजीके क्रियाकोषके दर्शन ही नही हुए हों। और सस्कृत क्रियाकोषके मिलनेपर उन्हे उसकी उपयोगिता प्रतीत होनेसे भाषा छन्दोंमे सर्वसाधारण पाठकोके लिए उसकी रचना करना आवश्यक प्रतीत हुआ हो।

दूसरा कारण यह भी सभव है कि किशनसिंहजी-रचित क्रिया कोषमे उन्हे भट्टारकीय या वीसपन्थ-आम्नायकी गन्ध आई हो और इसलिए उन्होने विशुद्ध तेरापन्थ-आम्नायके अनुसार क्रियाकोषकी स्वतत्र छन्दोबद्ध रचना करना अभीष्ट रहा हो।

किशनसिंहजीके क्रियाकोषमे वीसपन्थकी गन्ध आनेके कुछ स्थल इस प्रकार हैं—

(१) मध्याह्न पूज-समए सु एह, मनुहरण कुसुम वहु देखि देह।
अपराह्न भविक जन करहि एव, दीपहि चढाय वहु धूप खेइ ॥३८॥
(प्रस्तुत सग्रह पृ० २०४)

(२) जो भविजन जिन-पूजा रचै, प्रतिमा परसि पखालहि सचै।
मौन-सहित मुख कपड़ो करै, विनय विवेक हरष चित धरै ॥४८॥
(प्रस्तुत सग्रह पृ० २०५)

(३) प० किशनसिंहजीने श्रावकके बारह व्रतो और ग्यारह प्रतिमाओके वर्णनके बाद जल-गालन, प्रासुक जल-विधि और रात्रिभोजन-त्याग आदिका वर्णन किया है। प० दौलतरामजीको यह वर्णन कुछ व्युत्क्रम-सा प्रतीत हुआ, हो और इसीलिए उन्होने श्रावकके बारह व्रतोका वर्णन करनेके पूर्व ही उक्त वर्णन सर्वप्रथम करना उचित समझा हो।

जो कुछ भी हो, फिर भी दौलतरामजीकी वर्णन-शैली बहुत ही भावपूर्ण, सरल और रोचक है। उन्होने अहिंसादि प्रत्येक अणुव्रतका वर्णन विधि और निषेध-मुखसे किया है। जैसे अहिंसाणु-व्रतका वर्णन करते हुए पहिले अहिंसा या दया-करुणाकी महत्ता ६७ छन्दोमे बताकर पुन हिंसा पापके दोषोका वर्णन २४ छन्दोमे किया है। (देखो पृ० ५६३-२६८)

इसी प्रकार सत्य-असत्य, चौर्य-अचौर्य, ब्रह्म-अब्रह्म और परिग्रह-अपरिग्रहके गुण-दोषोका वर्णन भी खूब विस्तारसे किया है।

उपसंहार

यद्यपि तीनो ही संग्रहोमे ५३ क्रियाओका वर्णन है, तथापि पदम कविने पूर्व परम्पराके अनुसार उत्थानिकामें श्रेणिकके प्रश्न करनेपर गौतम-गणधरके द्वारा श्रावकके व्रतोका वर्णन कराया है और सस्कृतमे रचित श्रावकाचारोकी दुरुहताके कारण सर्वसाधारणके लाभार्थ उसे अपनी मातृ-भाषामे उन्हे रचनेकी प्रेरणा हुई है। यही कारण है कि उन्होने अपनी रचनाको 'श्रावकाचार'के नामसे ही उल्लिखित किया है। पं० किशनसिंहजी और प० दौलतरामजीने यत. सस्कृत किया-कोषके आधारपर अपनी रचनाएँ की हैं अत उन्होने अपनी रचनाओका नाम 'क्रियाकोष' देना ही उचित समझा है। तीनों रचनाओं की अपनी अपनी स्वतन्त्र विशेषता है, अत तीनो ही पढने, मनन करने और तदनुकूल आचरण करनेके योग्य हैं।

●

श्रावकाचार-संग्रह पंचम भागकी

विषय-सूची

पदम-कृत श्रावकाचार पृष्ठ सं० १–१११

परिशिष्ट

श्री पदम कृत श्रावकाचार

मंगलाचरण

वस्तु छन्द

सकल जिनेश्वर चरण-कमल ते नमुं
गुण छैतालीस सद्धारक वारक मोह-तिमिर-हर।
पंचकल्याण-नायक, दायक
शिवसुखकार मनोहर।
शारदा स्वामीनें मन धरूँ
आण धरूँ गुरु निर्ग्रन्थ पाय।
श्रावकाचार-विधि वरणवुं
जो तुम्हो करो अवसाय ॥१

चौपाई

महीतल द्वीप असख्य मझार, जम्बू द्वीप जम्बु तरु धार।
द्वीप लक्ष योजन विस्तार, चौत्रीस क्षेत्र सोहै सविचार ॥२
ते मध्य मेरु सुदर्शन नाम, लक्ष योजन ऊँचो गुण दाम।
कनक-तणा सोल जिनगेह, त्रिण काल वदु हु नेह ॥३
मेरु तणी दक्षिण दिस जान, भरतक्षेत्र नामे मन आन।
षट् खडे करि सोहै तेह, पंच मलेच्छ एक आरज एह ॥४
आरज खंड माहे शुभ ठाम, जनपद जानु मगध सुनाम।
गिरि-गुहा वन वाडी कूप, वावि खडोर वलि नदी स्वरूप ॥५
द्रोण कर्वट मटंब खेट ग्राम, पुर पाटण वाहन भेद नाम।
मणि माणिक मोती परवाल, धन धान्ये भरिआ हु विशाल ॥६
ठामि ठामि दीसे जिन गेह, हेम रत्न प्रतिमा नहि छेह।
ऋषि मुनी जती अनगार, संघ सहित ते करे विहार ॥७
सरस मगध देश माहि मझार, राजगृही नयरी गुणधार।
गढ गोपुर खाई जलभृत्त, मटकोसीसा शोभाजुत्त ॥८
नगर माहे सोहे जिनगेह, हाट मन्दिर नाला नहि छेद।
चतु·वर्ण वसे परजा लोक, मनुष्य जन्म पामा करि रोक ॥९
जिन पूजे पोषे यति पात्र, तीर्थ सिद्धक्षेत्र करे जात्र।
पुण्यतणा करे षट् कर्म, चार वर्ग साधे ते मर्म ॥१०

राजभवन राजा वसे चंग, श्रेणिक नाम भूप उत्तिग।
क्षायिक समकित सोहे सार, देव शास्त्र गुरु भक्ति उदार ॥११
चेलणा राणी आदि बहु नार, अभय वारिषेण आदि कुमार।
राजा सुख भोगवे ससार, साधर्मी जन करे उपकार ॥१२
एक दिवस श्रेणिक महिपाल, सभा पूरि बैठो गुणमाल।
प्रधान पुरोहित श्रेष्ठी भूपती, वहुविध वात करै निजमती ॥१३
तिण अवसर आव्यो वनपाल, करड भरि फल फूल अपार।
भेट मुकीने करेय जुहार, स्वामी मुझ बोनती अवधार ॥१४
विपुलाचल मस्तक सुविशाल, समोसरचा श्रीवीर गुणमाल।
वार सभाने दे उपदेश, त्रिभुवनपति सेवे जिनेश ॥१५
तव आनद्यो श्रेणिक राय, तिणी दिशं सात पग जाय।
परोक्ष नमोऽस्तु कियो जोडी हाथ, विनय सहित भूप रुळ साथ ॥१६
पछे मालीने कीयो पसाय, वस्त्र आभूषण आख्या राय।
आनंद मेरी तव उछली, वन्दन चाल्यो भूप मन रली ॥१७
राज प्रजा लोके संचरद्यो, अन्त.पुर भविजन पर वस्यो।
हय गय रथ पालखी पदाति, गीत नृत्य वाजित्र जय क्षांति ॥१८
समोसरण मांही जव गया, तव आनन्द भवियण मन भया।
मुखते करता जय जयकार, भेट्या जिननर त्रिभुवन तार ॥१९
तीन प्रदक्षिणा जावे दोघ, अष्ठ प्रकारी पूजा कीव।
जल गन्ध अक्षत पुष्प नैवेद्य, दीप धूप-फल अर्घ वसु भेद ॥२०
जिन पूजी स्तवन उच्चरी, भाव-सहित भक्ती घणुं करी।
अनन्त गुणसागर जिनदेव, सुर नर फणिपति करें जिन सेव ॥२१
सफल चरण जाणों तेह तणा, जे जिन यात्र धरि आपणा।
प्रशस्त हस्त कमल ते कही, जिन पूजे ते पात्र-दान ते सही ॥२२
धन्य मुख जिह्वा तेह तणी, स्तवन करो जे जिन गुण भणी।
नयन सफल कीवो वली नेह, दीठ स्वामी जु जिन जेह ॥२३
जिनवाणी सुनी निज करण, सफल मस्तक तें नमे जिन-चरण।
तप जप ध्यान अध्ययन अभ्यास, उत्तम शरीर जे सावे शिववास ॥२४
पूजी स्तवी वांछे भूप इष्ट, जन्म जरा मृत्यू हरो अनिष्ट।
दुक्ख करमनो क्षय जिन करो, जनमि जनमि पाड अनुसरो ॥२५
साष्टांग प्रणमी जिन पाय, पाछे वद्या गौतम गुरु पाय।
यथायोग्य भगति सहुं करी, साधर्मी जन विनय अनुसरी ॥२६
नर सभाइ कीयो परवेश, निज निज स्थानें बैठ्या नरेश।
धर्म वांछा करें भविजन्न, जिम चातक मेह जीवन्न ॥२७
दिव्य वाणि प्रगट तव भई, निज निज भासा पृच्छ जु जुई।
अर्धं मागधि श्री जिनवर भाग, सर्वं संदेह करे विनाश ॥२८

द्विधा धर्म कियो परकाश, द्रव्य पदारथ तत्त्व निवास ।
षट्द्रव्य पंचासतिकाय, जुजूआ लक्षण गुण पर्याय ॥२९
लोकालोक तणु स्वरूप, त्रिकाल गोचर रूप अरूप ।
श्री जिनवाणी सूर्य समान, टाले मोह तिमिर अज्ञान ॥३०
धर्म हस्त अवलंब आपिया, स्वर्ग मोक्ष पद भवि थापिया ।
महाव्रत अणुव्रत समकित सार, निजशक्ति मिलिया भवतार ॥३१
धर्म सुणी आणंद्यो राय, वली प्रणमी श्री जिनवर पाय ।
गौतम गणधर वली वंदिया, धर्म वृद्धि सहुने दिया ॥३२
कर-पद्म जोडी वीनवे ते भूप, गौतम स्वामी नु गुण-कूप ।
गृहस्थ धर्म तणो विस्तार, विधी सहित कहो श्रावक आचार ॥३३
मति श्रुत अवधि मन· परियय ज्ञान, सप्त रिद्धि जाणो निधान ।
गणपति कहे सावधाने सुणो, सप्तम अगमाहे जिन भणो ॥३४
द्विविध धर्म तणी न हि आदि, सदाकाल सास्वतो अनादि ।
भूत भावि छि अने वर्तमान, त्रिलोक्य माहि दीपे जिम भान ॥३५
द्वादश अग कहीइ श्रुत ज्ञान, सातमो उपासकाध्ययन अभिधाम ।
उपासक व्रत तणो विचार, बहुविध कहुं ते अंगमझार ॥३६
श्रावक अंग तणो सुणो मान, जे जिम कहीउ श्री वर्धमान ।
लक्ष एकादश पद परिमाण, सत्तरि सहस्र अधिक सू जाण ॥३७
तिन अक्षर पद एक ज तणा, सोलसे चौत्रीस कोडि तस भणा ।
असी लक्ष सप्त सहस्र कही, आठ सैं अठयासी अक्षर सही ॥३८
बत्तीस अक्षर तणा सलोक, संख्या केती कहि कोविद लोक ।
कोडि एकावन अधिक अष्ट लक्ष, सहस्र चौरासी ते समक्ष ॥३९
छै से अधिका साढा एकवीस, श्लोक सख्या कहि जगदीश ।
धर्म धर्म सहु को जिन कहे, धर्म भेद ते विरला लहे ॥४०
कनक जेम चहुविध परखीय, छेद भेद कष ताप निरखीय ।
चहु गति माहि पामे जीव दुक्ख, धर्म विना कले न हि काई सुक्ख ॥४१
अधोगत्ति पडता जे उद्धरे, सार्थक नाम धर्म शिव करे ।
श्रावक ते जे समकित धरे, ज्ञान-सहित निज तप जे करे ॥४२
दया-सहित व्रत पाले सार, भावसहित दान दे चार ।
॥४३

अथ त्रेपन क्रिया वर्णन

दोहा

दया शील तप भावना, सुध समकित भवतार । सुर नर वर पदवी देइ, आये शिव-घर-बार ॥१
देव-कुदेव गुरु-कुगुरु, वली साहास्त्र विचार । धर्म-अधर्म गुणउ लखी, तत्त्व-कुतत्त्व भेदसार ॥२
चैत्य[1] एकादश ऊजली, उत्तम अष्ट मूल गुण मूल । नेम निशा भोजन तणो, जल-गालन निपूण ॥३
चतुर्विध दान समतापणो, द्वादश व्रत विशाल । तप द्वादश रत्नत्रय, त्रेपन क्रिया गुण माल ॥४
एणिपरि श्रावक क्रिया कही, संक्षेपे सविचार । जे नर नारी पालसी, ते तरसी संसार ॥५

अथ भास रासनी

गौतम स्वामी ऊचरे ए, सुनो श्रेणिक सावधान तू ।
मन वच काय निश्चल करीए. परिहारि मोह अज्ञान तू ॥६
श्रावक धर्म तरु तणो ए, मूल ए समकित सार तो ।
दृढ पाइ थलहर थिर ए, प्रासाद पीठ उद्धार तो ॥७
समकित विण सोभा नही ए, जल विण जिम तलाव तो ।
दंत विना दंती जेम ए, केसरि दष्टरा त्याग तो ॥८
चन्द्र विना रजनी जेम ए, हंस विना जेम काय तो ।
गंध सुगंध विना पुष्प जेम ए, राज विना जेम राय तो ॥९
धर्म विना जीव तेम ए, वृथा तस अवतार तो ।
मनुष्य वेषें पशू रूप ए, जेह्वो नर आकार तो ॥१०
अनादि काल ए आतमा ए, ससार-सागर मझार तो ।
नाना विध दुख सह्रू ए, भमतां दुर्गति च्यार तो ॥११
मिथ्यात पाप तणो फल ए, त्रस थावर जोनि माहे तो ।
नित्य-इतर निगोदे रही ए, कष्ट बहुविध चाहि तो ॥१२
मूल मिथ्यात एक भेद ए, उत्तर पंच असार तो ।
उत्तरोत्तर अनेक भेद ए. असंख्य लोक प्रकार तो ॥१३
दर्शन मोह तणें उदये, जीवने होइ मिथ्यात तो ।
तत्त्व श्रद्धा ते न वि करे ए, रुचि नही तस वात तो ॥१४
जिम मतवालो जीवड़ो ए, ते न लहे हेयाहेय तो ।
दुर्धर ज्वर जिम ऊपने ए, न वि रुचि औषध पीय तो ॥१५
भाव मिथ्यात अनादि काल ए, द्रव्यरूप तणी आदि तो ।
पाखंडी भेद घणा ए, विरुद्ध करे वावाद तो ॥१६

---

१. प्रतिमा ।

एकान्त विपरीत संशयपणो ए, विनयमत अज्ञान तो।
द्रव्य भाव सहूउ लखी ए, टालो विष-समान तो ॥१७
असत्य वस्तु अहितकारी ए, स्थापना भाव एकान्त तो।
द्रव्य रूप बौद्ध मत ए, करूँ बोधकीर्ति असत तो ॥१८
श्री पार्श्वनाथ-तीर्थ समे ए, पलास नयर-नदी तीर तो।
पिहिताश्रव सूरी शिष्य ए, बुद्धि कीर्त्ति मुनि भीरु तो ॥१९
कर्म-वशे भामरि गयो ए, वेश्यातणे वली गेह तो।
अजाणपणे चोरी करी ए, अखादि भक्ष कीयो तेह तो ॥२०
निज गुरु ते साभल्यु ए, पछे कीयो तस निषेध तो।
छेदोपस्थापना ल्यो वच्छ ए, न वि माने ते अवेदतो ॥२१
चारित्र-भ्रष्ट होइ बापडो ए, आदरयो वरया तिणें रक्त तो।
पात्र-पतित पवित्र कह्यो ए, खादि-अखादि असक्त तो ॥२२
तिलमात्र-मास जु भक्षि ए, जीव-हिंसा-पापवंत तो।
. .. . ॥२३
मद्य-विन्दु जो जीव विस्तरी ए, सो माइ नहिं त्रिलोक्य मझार तो।
कृत्य-अकृत्य ते न वि लहे ए, विह्वल करे जीव सघार तो ॥२४
मद्य मांस दोष ण भक्ष ए, न वि माने ते पाप तो।
क्षणिक शून्य जीव कही ए, मोह मिथ्यात्वे व्यापतो ॥२५
कर्मतर्णो कर्ता जुदू ए, तस फल भोग वे अन्य तो।
क्षिण जादू आवे क्षिण ए, जिम परिणामे मन्य तो ॥२६
बुद्ध देव नाम कहु ए, तस प्रतिमा सविकार तो।
ऊर्ध्व कर जपमालिका ए, यज्ञोपवीत कंठ धारतो ॥२७
ए आदेइ विकृत धणी ए, थापी मत एकान्त तो।
घोर नरके ते बापडा ए, दुर्धर दुःख सहत तो ॥२८
सुगत मत जे आदरी ए, मिथ्या कदाग्रही जेह तो।
काल अनन्त ते जीवडा ए, भवि भवि दुक्ख सहत तो ॥२९
इम जाणि आसन्न भव्य ए, परिहरो मत एकात तो।
जिन वाणी हृदय धरो ए, स्याद्वाद जिनमत सत्य तो ॥३०
विपरीत मिथ्यात तम्हे सुणो, जेह करे जीव अहित तो।
कहिंवु रे हवु जे जू जू तु ए, ते जाणो विपरीत तो ॥३१
वस्त्रापूत जल पीजिए, वली कहु वहि तिन ही दोष तो।
कन्दमूल दूषण कहियिए, वली खाइ ते मोख तो ॥३२
रयणी नीर दोष कह्यो ए, वली रयणी भोजन तो।
रुधिर मास समु जल अन ए, ए मार्कंड-वचन तो ॥३३
एह वो दोष जे उचरि ए, वली करे निस आहार तो।
माहरी माँ ने वाझणी ए, ए विपरीत अपार तो ॥३४

ब्रह्मचारी देवने कही ए, अर श्री लक्ष्मी नार तो ।
राधासूँ क्रीड़ा करि ए, सोल सहस्र स्त्री भरतार तो ॥३५
जीव दया धर्म कहे ए, करे जीवनों घात तो ।
पुण्य कारण प्राणी हणे य, धर्म तणी कहे क्षात्त तो ॥३६
यागि अग्नि जीव होमो ए, नरक जवाजा वाग तो ।
मीढा महिष जे वावड़ा ए, पसुअ प्राण करे घात तो ॥३७
वेद माही दया कही ए, वेद मध्य हिंसा कर्म तो ।
जस कर्मे जीव हणिए, ए विपरीत्त कुधर्म तो ॥३८
शौच काजि स्नान करिए, नवि हणि मांहि चर्मपात्र तो ।
अशुचि अस्थि वली आदरीए, ते विपरीत्त कुशास्त्र तो ॥३९
जीव हणी स्वर्ग वांछीए ए, तो नरके किम होइ तो ।
पाप करे जो सुख होइए तो पुण्य निष्फल जोइ तो ॥४०
जलता जीव जु सुख होइ ए, तो क्यो न दीइ माय वाप तो ।
विपरीत भाष्या मोटा जीव ए, ते वाहे पर आप तो ॥४१
दीन जीव तृण-भक्षक ए, त वोल्या वलि कर्म तो ।
वाघ सिंह क्यों न कह्या ए, ते दे वलि तो मर्म तो ॥४२
सहस्र अठ्यासी रिखि कह्या ए, जुदु जुदु भाष्यो तेण तो ।
विपरीत्त मत ते जाणीए, ते वर्णव्यो जाइ केणि तो ॥४३
श्रावस्ती नयरी पत्ती ए, वसु नामि नरेन्द्र तो ।
क्षीर कदम्बा द्विज सूरी ए, तस पुत्र पर्वत्त भद्र तो ॥४४
निज पिताइ दीक्षा ग्रही ए, पर्वत्त रह्यो निज गेह तो ।
नारद सख्य-शिरोमणि ए, आसन्न भव्य जीव तेह तो ॥४५
वेद पढ़ता पर्यंत कहू ए, अज सवदि छाग जाणि तो ।
अज त्रयो वरसतणा व्रीही ए, इम कहे नारद वाणि तो ॥४६
माहो माहे विवाद करिए, माने नहि पर्वत मूढ तो ।
गुरु-भ्राता जे वस्तु करया ए, तेह वचन सत्य प्रौढ तो ॥४७
पर्वत-माता ए सांभल्युं ए, पुत्र-वाणी असत्य तो ।
पृच्छनपणे वसु वीनव्यो ए, वर-दान मांगि अनुमति तो ॥४८
मुझ पुत्र-वाणी थापज्यो ए, कृपा करी वसु भूपाल तो ।
मूढपणों त्तिण मांनीउ ए, निज घर आवी ते वाल तो ॥४९
राजसभा सहु देखता ए, नारद पर्वत कहे वाणि तो ।
आपणे गुरु अर्थ कुण कह्यो, अज शब्द तणो जाणि तो ॥५०
पर्वत्त दोल ते थापीए तु ए, भूप होय वसु मिथ्यात तो ।
फटिक सिंहासन कांपीओ ए, भूमिओ उ निपात तो ॥५१
कूटी साख जव भूप कह्यो ए, तव हुओ हा-हाकार तो ।
घरा विकसी अवो गति गयो ए, सातमी नरक मझार तो ॥५२

सुर-नर खग धिक्कार करी ए, कीयुं पर्वत्त निःसार तो ।
नारद वाणी सत्य सही ए, जिन-शासन जयकार तो ।।५२
पर्वत वन जाय चिंतवि ए, मुझ वचन कर्‌युं विस्तार तो ।
कर्मयोगे कालासुर साहाज ए, मधुपिंगल जीव गमार तो ।।५३
यजुर्वेद याग रच्यो ए, जीवतणा बहुघात तो ।
याजक जन स्वर्ग लहे ए, एहवी कहे खोटी बात तो ।।५४
भोला लोक भ्रमें पड्या ए, न लहि धर्म-विचार तो ।
पर्वत्त मरि नरकें गया ए, दुक्ख सहे पच प्रकार तो ।।५५
ए मिथ्यात जिणे कर्‌यो ए, करैं छै करसी जेह हो ।
तेहनां दुक्ख नो पार नहिं ए, ये घणु सू वर्णवू तेह तो ।।५६
मुनिसुव्रत तीर्थ समिए ए, उपज्यो मिथ्यात्व विपरीत्त तो ।
पंचम काल घणु विस्तर्‌यो ए, दुर्द्धर दीसे कलि रीत्त तो ।।५७
जे जिन शासन थी जुओ ए, तेह मिथ्यात नुं जाण तो ।
संक्षेपे कवि कथा हु कह्यु ए, विस्तार महापुराण तो ।।५८
विनय मिथ्यात्व मरीचि यथा ए, भरत्त चक्री तणु पुत्र तो ।
दर्शन रूप पाखंड घणा ए, कर्म वशि विचित्र तो ।।५९
एक दंड त्रिदंड धरिए, शिखा शिर एक मुंड तो ।
नग्न वेष जटा धरिए ए, काने मुद्रा करि-दड तो ।।६०
चरम कंबल कौपीन धारिए, शींगी वाइ गीत ग्यान तो ।
शख बजावे भस्म लगाइ ए, पवनपुरे चलि रीत तो ।।६१
विनय करी, गुणि निर्गुणी ए, दंडरूपे नमस्कार तो ।
बाल वृद्ध सहु नें नमे ए, न वि लहे तत्त्व विचार तो ।।६२
कदमूल वावरिए ए, अणगल जल करि स्नान तो ।
अपेय अभक्ष ते आदरे ए, न वि जाणे विज्ञान तो ।।६३
शिला धरि ऊभो रह्यो ए, अधो शिर ऊँचा चरण तो ।
पंचाग्नि साधे तप ए, कष्ट करे वली मरण तो ।।६४
नैयायिक साख्य मत ए, चारवाक मत कीध तो ।
सोल पचवीस तत्त्व कह्यो ए, निज निज कल्पे बुद्धि तो ।। ५
आत्म स्वरूप ते न वि लहे ए, एक कडुं चन्द्र आकाश तो ।
जल कुम्भ-प्रतिबिम्ब जिम ए, जू जूआ शरीर निवास तो ।।६६
आदीश्वर आदि करीए, आज लगे उत्तपन्न तो ।
हित-अहित्त ते न वि लहे ए, न वि लहे कृत्य-अकृत्य तो ।।६७
कुदर्शन कुज्ञान तप ए, कुत्सित्त ते आचार तो ।
तिसहु कर्म विडम्बणा ए, विनय मिथ्यात विकार तो ।।६८
जिनवाणी हृदय धरो ए, जुओ तत्त्व विचार तो ।
विनय मिथ्यात सहु परिहरो ए, अनुसरो जिनधर्म सार तो ।।६७

संशय मिथ्यात्व हवे सुणो ए, भावरूपे सदा होय तो ।
द्रव्यरूपे किहां उपन्नों ए. तेह विचार नु जोय तो ॥७०
विक्रम राय चस्प्यां पुरे ए, वरस एक सौ छत्रीस तो ।
सोरठ देश मांहे कही ए, विलहण नय निवेस तो ॥७१
पंचम श्रुत केवली हुआ ए, श्री भद्रवाहु गणेन्द्र तो ।
तत्रासीस शाति सूरी ए, तेह शिष्य जिनचन्द्र तो ॥७२
दुर्भिक्ष दोष ते विभचग ए, शिथिल थया आचार तो ।
निजगुरे सबोधीया ए, माने नही गमार तो ॥७३
आपणी वुद्धि कल्पना करी ए, श्वेतपट परि थाप तो ।
कंधे कवलि लाठी करी ए, राखे छिद्र लांवा कान तो ॥७४
पात्र परिग्रह ते ग्रही ए, भिक्षा याचे गेह गेह तो ।
स्वेच्छापणें भक्षण करी ए, प्रत्याख्यान नहि तेह तो ॥७५
निर्दोष देव दूषण कहे ए, उपजावे संदेह तो ।
वाह्य आभूषण थापना ए, सविकार प्रतिमा देह तो ॥७६
श्री वीरने दूषण दीइए, ब्राह्मणी उरे अवतार तो ।
पछे इन्द्र विस्मापिओ ए, गरभ कीयो परिह्रार तो ॥७७
त्रिशला राणी कूखे ठवी ए, पछे हूवो गर्भ वृद्धि तो ।
बाले मेरू कंपावीयो ए, एह वी थापी खोटी बुद्धि तो ॥७८
वीर पाणिग्रहण कहिए, पुत्री तणी उत्तपत्ति तो ।
वैराग उपजे घर रह्या ए, वरस लगे सनमत तो ॥७९
दीक्षा लेई ध्याने रह्या ए, उपसर्ग गोवाल तो ।
करणां खीला कानें ठव्या ए, पग पय पाक विशाल तो ॥८०
ध्यान थका कायर हुआ ए, दीन पणे करी वुंबतो ।
वीर वेदना उपजी घणी ए, एह्र वा वोल ज वोल तो ॥८१
केवल ज्ञान उपज्या पुठे ए, घर घर जावे आहार तो ।
क्षुधा तृषा राग रोग कह्यु ए, रोग कह्यो वली सार तो ॥८२
वीर विगोणु घणु कह्यो ए, तेसु कही ए वात तो ।
कुक्कुट पाक औषध देई ए कीधौ रोगनो घात तो ॥८३
संशयमत मां इम कह्यो ए. केवलीने आहार-निहार तो ।
प्रासुक अन्न जिहा मल्यो ए, ते लीज अविचार तो ॥८४
चउदे उपग्रहण ते ग्रही ए, अवर लिंग जाइ मोक्ष तो ।
स्त्री सातमी नरके जाई ए, स्त्रीय लहे शिव-सौख्य तो ॥८५
घोटक गणधर ने कहे ए, मल्लिन जिन स्त्री लिंग तो ।
ग्रही नें मुक्ते कही ए, इह वा वोले वहु विग तो ॥८६
अस्थि चरम वली आदरया ए, न वि माने लौकिक छोत तो ।
पुष्पवती नारी दोप ए, कहे नहिं सूतक-प्रसूति तो ॥८७

आछणं अथाणा आदरि ए, रसाईया जीव तणु भक्ष तो ।
अंतराय पाले नहिं ए, अन्न वासी लेई रक्ष तो ॥८८
ए आदि वहु दूपण ए, आगम तत्त्व विरुद्ध तो ।
थापना करि अछेरा कही ए, संशय ज्ञान असुद्ध तो ॥८९
प्रथम चौरासी गच्छ कही या ए, वहु हुआ अधिकनें टोल तो ।
आप आपणी वुद्धि कल्पिए ए, जुजूआ माने बोल तो ॥९०
कूहित दृष्टान्त देई करी ए, थापे सशय कुमत्त तो ।
मूढजीव माने घणा ए, न वि लहे सत्य-असत्य तो ॥९१
इणी परि श्वेतपट्ट मत करी ए, जिनचन्द्र पामी मरण तो ।
प्रथम नरकि ते ऊपज्यो ए, दु.ख सहे नहिं कोई सरण तो ॥९२
माया मानें मूढनी ए देई ए, धूर्त्त वाहि पर आप तो ।
ते पापी ससार मा ए, भवि भवि सहे सताप तो ॥९३
पारसनाथ तणो गणधर ए, तेह तणो शिष्य अज्ञान तो ।
मशक पूरण नामे मुनी ए, वश थई मिथ्या मान तो ॥९४
श्री वर्धमान तीर्थ समै ए, अवगणना पामी दुष्ट तो ।
जिनशासन गुण परिहरी ए, हुओ आचारते भ्रष्ट तो ॥९०
पश्चिम दिश जइने रह्यो ए, खोटा शास्त्र तेणे क्षुद्र तो ।
अज्ञानी लोक वश कीया ए, बोली जिनशासन छाइ तो ॥९६
अज्ञान पणे मुक्ति कह्यो ए, मुक्ति जीव नहि ज्ञान तो ।
गमनागमन नहि वली ए, अवर कहे बहु भ्राति तो ॥९७
हजह जीरा थापीया ए, माने शून्य आकार तो ।
हिंसा कर्म ते वहु करि ए, पसुतणा संघार तो ॥९८
जे जे जिनतत्त्व हुता ए, ते माने विपरीत तो ।
अणाचार अति आदरयो ए, अवली देखा डेरीत तो ॥९९
जिन शासन सू ं रोस करि ए, सूरज देखी जिम घूक तो ।
चैत्यालय भंजन करे ए, रजक अग्यानी लोक तो ॥१००
अग्यान मिथ्यात नरक हुआ ए, जाणे नही कृत्य अकृत्य तो ।
निगोद माहे ते दुख सहे ए, पापी पामी ते मृत्यु तो ॥१०१
जे अज्ञान पणु ं आचरि ए, तेहनो होइ बहु पाप तो ।
जनमि जनमि ते जे जीवडा ए, सहि ससार सताप तो ॥१०२

दोहा

मूल मिथ्यात्व ते एक कह्यो, उत्तर भेद ते पाच ।
अवर असख्य लोक भेद, किम कही जाय ते वाच ॥१०३
मिथ्यात्व घणु ं स्यू वर्णवु ं, माहे दीसे नही काई सार ।
धूल ऊपर जिम लीपणो, जाता न लागे वार ॥१०४

पंच मिथ्यात्व सदा सहि, भावरूपे वहु होइ । ते हुण्डावसर्पिणी माहे, द्रव्य रूपइ लिंग जोइ ॥१०५
षट्दर्शन छन्नु पाखण्ड, जैनाभास वली पंच । संशय विभ्रम उपजावीने, मूढ़ करे परपच ॥१०६
शुद्ध दर्शन श्री जिनतणों, द्रव्य भावे अनादि । अवर डम्भक दीसे घणां, ते सघला उपाधि ॥१०७

जिन शासन थी वाहिरा, भिन्न भिन्न दीसे जेह ।
पचम काले पाखण्ड घणा, मिथ्या जाणो सहुं तेह ॥१०८
मिथ्यात्व समो शत्रु नही, नारक गति दातार ।
अनन्तकाल दुखदायक, भमे भवोदधि मझार ॥१०९

मिथ्याती सगथी भलो, वाघ सिंघ विसवास । जल अग्नि भृगुपात भलो, मिथ्याते दुखरास ॥११०

मिथ्यात्व समो कोइ पाप नही, भारे वज्रसमान ।
आगे हुउ होसे नही, लोकमांहे नहिं वर्तमान ॥१११
इम जाणि निश्चै करी, जो जिन तत्त्व विचार ।
जीव-हित होइ ते आचरो, घणुं स्युं कहुं वारं-वार ॥११२

ढाल मालंतडानी

सम्यक्त्व भेद हवे कहु ए, सुणे सुन्दरे, संक्षेपे विचार । मालंतडारे संक्षेपे सविचार ।
गुरु उपदेशे पामीउ ए, सुणे सुन्दरे, श्रावक धूरि अधिकार । मा० ॥१
मूल भेद एक कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, अथवा द्विविध जाण । मा०
त्रिहु भेदे जे निरमलो ए, सुणे सुन्दरे, इम कही जिन वाण । मा० ॥२
समकित विना ए आतमा ए, सुणे सुन्दरे, लक्ष चौरासी जोनि माँहि । मा०
द्रव्य क्षेत्र काल भाव ए, सुणे सुन्दरे, पंचविध दुखतें चाहि । मा० ॥३
आसन्न भव्य पंचेन्द्री पणु ए, सुणे सुन्दरे, गर्भ सज्ञी जेह । मा०
चतुर्गतिक पर्यायनो ए, सुणे सुन्दरें, कठिण कर्म तणी छेह । मा० ॥४
पंच सामग्री दुर्लभ ए, सुणे सुन्दरे, भव-सायर जे नाव । मा०
अनन्त भव दुख छेदक ए, सुणे सुन्दरे, भेदक कर्म कुग्राव । मा० ॥५
क्षय उपशम पहिली लब्धि ए, सुणे सुन्दरे, मन विशुद्धि बीजी होय । मा०
देशन, प्रायोग्यता लब्धि ए, सुणे सुन्दरें, करण लब्धि पंचम जोय । मा० ॥६
च्यारि लबधि सहु जीव लहि ए, सुणे सुन्दरे, करण लब्धि भव्य जाणि । मा०
अधः करण अपूरव करण ए, सुण सुन्दरे, अनिवृत्ति करण मनि आणि । मा० ॥७
काल लब्धि आवा जव ए, सुणे सुन्दरे, तव ते करे त्रण करण । मा०
समकित रत्न सुधू ग्रहि ए, सुणे सुन्दरे, ससार माहि जे मरण । मा० ॥८
तत्त्वतणी रुचि जव करि ए, सुणे सुन्दरे, तव ते लहे समकित । मा०
तत्त्व-भेद हवे कहु ए, सुणे सुन्दरे, जिण होइ निज-पर-हित । मा० ॥९
जीव अजीव आस्रव वध ए, सुणे सुन्दरे, संवर निर्जरा मोक्ष । मा०
चेतन अचेतन भेद ए, सुणे सुन्दरे, सप्त तत्त्व कहि दक्ष । मा० ॥१०
पुण्य पाप दुहु मलीए, सुणे सुन्दरे, नव ए पदारथ जाण । मा०
द्रव्य उत्पत्ति व्ययात्मक ए, सुणे सुन्दरे, द्रव्य गुण पर्याय वखाण । मा० ॥११

जीव तत्त्व ह्वे सुणो ए, सुणे सुन्दरे, चेतना लक्षण जीव । मा०
जीव्यो जीवसे जीवसी ए, सुणे सुन्दरे, सदाकाल ते शिव । मा० ॥१२
सुख सत्ता चैतन्य ए, सुणे सुन्दरे, निश्चयरूपे प्राण चार । मा०
आउ इन्द्री बल उस्वास सुणे सुन्दरे, ए प्राण विवहार । मा० ॥१३
ससारी मुक्त भेद विन्यू ए, सुणे सुन्दरे, मुक्त ए कर्म-रहित । मा०
ससारी जीव बहु विध ए, सुणे सुन्दरे, कर्म आठ सहित । मा० ॥१४
ससारी तणा वे भेद ए, सुणे सुन्दरे, थावर तरस बखाणि । मा०
थावर नाम उदयहू वसिए, सुणे सुन्दरे, पण एकेन्द्री जाणि । मा० ॥१५
त्रस नाम कर्म उदय ए, सुणे सुन्दरे, वे इन्द्री ते इन्द्री चौइन्द्री जात । मा०
नामकर्म विपाक ए, सुणे सुन्दरे, असज्ञी सज्ञी पचेन्द्री विख्यात । मा० ॥१६
पर्याप्त अपर्याप्त प्रकार ए, सुणे सुन्दरे, भेद जाणो सात-सात । मा०
चौद समास जीवतणा ए, सुणे सुन्दरे, कर्म करे भाँति भाँत । मा० ॥१७
गुण पर्याय सहित द्रव्य ए, सुणे सुन्दरे, गुण सुख दर्शन ज्ञान । मा०
चहुँ गति काय पर्याय ए, सुणे सुन्दरे, कर्म तणो सतान । मा० ॥१८
कनक द्रव्य सदा सोही ए, सुणे सुन्दरे, पीत वरण सत गुण । मा०
हेम परीर्या मुद्रिकादिक ए, सुणे सुन्दरे, तेम जीव द्रव्य निपुण । मा० ॥१९
द्रव्य रूपे सदा सास्वत्तो ए, सुणे सुन्दरे, पर्यायरूपे अनित्य । मा०
पूर्व पर्याय विणसी सही ए, सुणे सुन्दरे, नूतन तणी उत्पत्ति । मा० ॥२०
गति चार, इन्द्री पाँच ए, सुणे सुन्दरे, छ काय, पन्नर योग । मा०
वेद त्रण पचवीस कषाय ए, सुणे सुन्दरे, अष्टे ज्ञान जीव भोग । मा० ॥२१
संयम सात, दर्शन चार ए, सुणे सुन्दरे, षट्लेश्या भव्य अभव्य । मा०
वे सज्ञी असज्ञी ए, सुणे सुन्दरे, आहारक अनाहारक दिव्य । मा० ॥२२
चौदे गुणस्थाने जीव जोइ ए, सुणे सुन्दरे, अट्ठाणु जीव समास । मा०
पर्याप्ति छ, प्राण दस, सज्ञा चार ए, सुणि सुन्दरे, उपयोगते द्वादश । मा० ॥२३
ध्यान सोल, प्रत्यय सत्तावन ए, सुणे सुन्दरे, चौरासी लक्ष जीव जाति । मा०
एक सौ साढी नवाणु लाख ए, सुणे सुन्दरे, कुलकोडि जीव विख्यात । मा० ॥२४
चौवीस स्थाने जीव लखो ए, सुणे सुन्दरे, जो इए ते तत्त्व विचार । मा०
जीवतत्त्व सक्षेपे कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, आगम जाणो विस्तार । मा० ॥२५
अजीव तत्त्व भेद पच ए, सुणे सुन्दरे, धर्म अधर्म आकाश । मा०
काल ए पुद्गल जांणीइ ए, सुणे सुन्दरे, द्रव्य गुण पर्याय वास । मा० ॥२६
अमूरत धरम गमन गुण ए, सुणे सुन्दरे, असख्य प्रदेश पर्याय । मा०
पुद्गल जीव ने लोक माहे ए, सुणे सुन्दरे, मच्छ ने जिम जल सहाय । मा० ॥२७
ठहरता पुद्गल जीव ने ए, सुणे सुन्दरे, सहाय अमूर्त अधर्म । मा०
असख्य प्रदेश लोक मात्र ए, सुणे सुन्दरे पथी ने जिम छाया धर्म । मा० ॥२८
द्रव्य सहुँ जिहाँ अवकाश गुण ए, सुणे सुन्दरे, तेतलु लोकाकाश । मा०
तेथी अवर अलोक नभ ए, सुणे सुन्दरे, अनन्त प्रदेश प्रकाश । मा० ॥२९

काल प्रदेश एक ए, सुणे सुन्दरे, नव-जीर्ण-कारी गुण । मा०
जुजुआ अणुत्तर रासि जिम ए, सुणे सुन्दरे, रहि लोक माँहि निपुण । मा० ॥३०
पुद्गल भेद छ हुइ ए, सुणे सुन्दरे, मूर्त्त रूपी गुणवत्त । मा०
स्परस, रस गंध वर्ण वीस ए, सुणे सुन्दरे, संख असख अनत्त । मा० ॥३१
सूक्ष्म सूक्ष्म परमाणु ए, सुणे सुन्दरे, पुद्गल तणा पर जाय । मा०
[1]स्कन्ध देश प्रदेश अणु ए, सुणे सुन्दरे, लोक माहे अवि जाय । मा० ॥३२
आस्रव तत्त्व हवे साभलो, सुणे सुन्दरे, भावि द्रव्य ते होइ । मा०
मन परमाणे भावास्रव ए, सुणे सुन्दरे, कर्म अणु द्रव्ये जोई । मा० ॥३३
मूल आस्रव पंच भेद ए, सुणे सुन्दरे मिथ्यात अविरत कषाय । मा०
योग प्रसाद भेदे कही ए, सुणे सुन्दरे, अवर अनेक ते थाय । मा० ॥३४
मिथ्यात पंच पेहले कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, अविरत तणां वार भेद । मा०
पच इन्द्री मन मोकला ए, सुणे सुन्दरे, छ काय जीव करे छेद । मा० ॥३५
अनन्तानुवन्धी अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान ए, सुणे सुन्दरे, सज्वलन कसाय असार । मा०
क्रोध मान माया लोभ ए, सुणे सुन्दरे, चौकडी भेद च्यार च्यार । मा० ॥३६
हास रति अरति सोक ए, सुणे सुन्दरे, भय जुगुप्सा स्त्री वेद । मा०
पुरुष नपुंसक नो कषाय नव ए, सुणे सुन्दरे, कषाय ते पचवीस भेद । मा० ॥३७
सत्य असत्य उभय अनुभय ए, सुणे सुन्दरे, मन वचन च्यार च्यार ।
औदारिक औदारिकमिश्र काय ए, सुणे सुन्दरे, आहारकमिश्र ते आहार । मा० ॥३८
वैक्रियिककाय वैक्रियिकमिश्र ए, सुणे सुन्दरे, कार्मण कर्म तणो भोग । मा०
आठ सात भेदे करी ए, सुणे सुन्दरे, इणि पूरे पन्नर योग । मा० ॥३९
विकथा कथा च्यार भेद ए, सुणे सुन्दरे, पंच इन्द्री निद्रा स्नेह । मा०
पन्नर प्रमाद इणि परि ए, सुणे सुन्दरे, आस्रव तणा कारण एह । मा० ॥४०
बहुत्तरि आस्रवइं इमउं लखो ए, सुणे सुन्दरे, अवर जाणो असंख्यात । मा०
घड नाले जिम नीर आव ए, सुणे सुन्दरे, तिम आवे कर्म संघात । मा० ॥४१
कर्मास्रव ए आत्मा ए, सुणे सुन्दरे, चहूगति भ्रमें अपार । मा०
नानाविध कष्ट ते सहे ए, सुणे सुन्दरे, भव-सागर मझार । मा० ॥४२
बन्ध तत्त्व चतुर्विध ए, सुणे सुन्दरे, प्रकृति स्थिति अनुभाग । मा०
प्रदेश भेद कर्मवन्ध ए, सुणे सुन्दरे, जेहवो होइ रोस राग । मा० ॥४३
मूल प्रकृति अष्टविध ए, सुणे सुन्दरे, उत्तर एक सौ अड़ताल । मा०
अवर असख्य लोकमात्र ए, सुणे सुन्दरे, प्रकृति वन्ध विशाल । मा० ॥४४
ज्ञानावरणी पचविध ए, सुणे सुन्दरे, दरसणावरणी नव होय । मा०
द्विविध वेदनी मोहनो अट्ठावीस ए, सुणे सुन्दरे, आयुकर्म चतुर्विध जोय । मा० ॥४५
नामकर्म त्राणु भेद ए, सुणे सुन्दरे, गोत्र तणा भेद दोय । मा०
अन्तरायकर्म पंचविध ए, सुणे सुन्दरे, एक सौ अडतालीस इम होय । मा० ॥४६

---

१. यहा सूक्ष्म सूक्ष्म-स्थूल आदिका वर्णन छूट गया है ।

आवरण विघन वेदनी स्थिति ए, सुणे सुन्दरे, सागर कोडाकोडि तेत्रीस । मा०
सत्तरि मोहनी वीस नाम गोत्र ए, सुणे सुन्दरे, आयु सागर तेत्रीस ॥४७
अनुभाग उदयरसरूप ए, सुन्दरे, सुख देई प्रकृति प्रशस्त । मा०
गुड खाड साकर अमृत समए, सुणे सुन्दरे, फल सुख देई समस्त । मा० ॥४८
अप्रशस्त विपाक वसि ए, सुणे सुन्दरे, जीव लहे असुक्ख । मा०
नीव काजीर, विष हालाहल ए, सुणे सुन्दरे, अशुभकर्मे बहुदुक्ख । मा० ॥४९
असखप्रदेशी आतमा ए, सुणे सुन्दरे प्रदेश प्रति कर्म अनन्त । मा०
परस्पर मिलि रहिए, सुणे सुन्दरे, प्रदेशबन्ध दुरन्त । मा० ॥५०
बँधने बन्ध्यो जिम चोर ए, सुणे सुन्दरे, परवसि पामे कष्ट । मा०
तिम ए जीव कर्मबन्धी ए, सुणे सुन्दरे, दु ख देखे निकृष्ट । मा० ॥५१
प्रकृति प्रदेश बन्ध विधि ए, सुणे सुन्दरे, योग विशेषी होय । मा०
स्थिति अनुभाग कषाय बसे ए, सुणे सुन्दरे, इण परिबन्धनु जोय । मा० ॥५२
कर्मास्रव जे रुंधिइ ए, सुणे सुन्दरे, ते सवर बखाणि । मा०
घडनाला जिम रुधीइ-ए, सुणे सुन्दरे, आवे नही नव पाणि । मा० ॥५३
नाव छिद्र जिम रुधीइ ए, सुणे सुन्दरे, आवे न नीर ऊगार । मा०
मण वय काया तिम रुधीइ ए, सुणे सुन्दरे, न वि होइ कर्म पसार । मा० ॥५४
सूको तुबू जिम जल तिरे ए, सुणे सुन्दरे, ज्यो नही गर्वनो भार । मा०
तिम कर्मसहु सोखीइ ए, सुणे सुन्दरे, जीव तिरे ससार । मा० ॥५५
सविपाक अविपाक निर्जरा ए, सुणे सुन्दरे, सहजि सविपाक जोइ । मा०
ससारी सहु प्राणी ते ए, सुणे सुन्दरे, कर्म जाइ बली होइ । मा० ॥५६
यती व्रती ध्यान वली ए, सुणे सुन्दरे, जे करे कर्मनी हाणि । मा०
तीव्र तप जे कर्म गलिए, सुणे सुन्दरे, ते अविपाक मन आणि । मा० ॥५७
जिम जिम जीव कर्म निर्जरि ए, सुणे सुन्दरे, तिम तिम ऊर्ध्व स्वभाव । मा०
भार विना जिम नीरमाहे ए, सुणे सुन्दरे, ऊँची दीसे नाव । मा० ॥५८
कर्मरुधि सवर हुई ए, सुणे सुन्दरे, कर्मक्षये निर्जरा जोय । मा०
सवर निर्जरा मोक्ष हेत ए, सुणे सुन्दरे, काललब्धि भव्ये होय । मा० ॥५९
सर्व कर्मक्षय जे हेतु ए, सुणे सुन्दरे, परिणाम भावे मोक्ष । मा०
जीवथी पृथक् कर्म जे कीजिए, सुणे सुन्दरे, ते द्रव्ये सिद्धि सोक्ख । मा० ॥६०
शुक्लध्यान अब ध्यायता ए, सुणे सुन्दरे, जे होइ कर्मविनाश । मा०
केवलज्ञान तब ऊपजे ए, सुणे सुन्दरे, लोकालोक प्रकाश । मा० ॥६१
अगघात सहु परिहरो ए, सुणे सुन्दरे, जे पामे शाश्वत्त ठाम । मा०
क्षायिक पच परम भाव ए, सुणे सुन्दरे, ते मोक्ष कहीए उद्दाम । मा० ॥६२
इन्द्र आदि जे भोगवे ए, सुणे सुन्दरे, हुव होइ छे हसे जेह । मा०
तेहना सुक्ख थी अनन्तगुणुं ए, सुणे सुन्दरे, एकसमय लहे ते सिद्धगेह । मा०॥६३
तत्त्व सात इमउ लखो ए, सुणे सुन्दरे, निज द्रव्य गुण पर जाय । मा०
जिन वाणीमे जिम कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, ते तिम निश्चल ध्याय । मा०॥६४

पुण्य पदारथ किम कहुँ ए, सुणे सुन्दरे, समकित ज्ञान व्रत सार। मा०
दान पूजा तप जप कीजिए ए, सुणे सुन्दरे, श्रावक जतिय आचार। मा० ॥६५
सम दम यम नियम पालिए ए, सुणे सुन्दरे, मन वच काया निरुद्ध। मा०
पापाचार सब संवरीए ए, सुणे सन्दरे, कीजे क्रिया विशुद्ध। मा० ॥६६
सदाचार पुण्य ऊपजे ए, सुणे सुन्दरे, सुख लहे पुण्य पसाय। मा०
सुर नर खग फणपतितणा ए, सुणे सुन्दरे, मनवाछित फल थाय। मा०॥६७
पाप पदारथ हवे कहुं ए, सुणे सुन्दरे, पंच पातक राग रोष। मा०
शल्य गारव त्रण दंड.ए, सुणे सुन्दरे, सज्ञा विसनथी दोष। मा० ॥६८
पंच मिथ्यात अविरत्ति वार ए, सुणे सुन्दरे, विकथा कषाय पंचवीस। मा०
पन्नर प्रमाद योग कुक्रिया ए, सुणे सुन्दरे, सेवि विषय अठावीस। मा० ॥६९
पाप विपाके प्राणी या ए, सुणे सुन्दरे, परवसि पामे दुक्ख। मा०
नरक पशू कुनर तणा ए, सुणे सुन्दरे, बहुविध देइ असुक्ख। मा० ॥७०
पुण्य पाप इमउ लखी ए, सुणे सुन्दरे, सप्त तत्त्व सहित। मा०
नव पदारथ इणि परि ए, सुणे सुन्दरे, जाणे होइ जीव-हित। मा० ॥७१
षट्द्रव्य पंचास्तिकाया ए, सुणे सुन्दरे, पदारथ नव परकार। मा०
संक्षेपे वखाणिया ए, सुणे सुन्दरे, आगम जाणो सार। मा० ॥७२
तत्त्व पदारथ द्रव्य तणी ए, सुन्दरे, श्रद्धाइ होइ समकित्त। मा०
जे जे जिनवर जेम कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, ते तिम आणे चित्त। मा० ॥७३
श्रद्धा रुचि प्रतीति सुं ए, सुणे सुन्दरे, निश्चय भावे भेद चार। मा०
सत्यतणे तत्त्व निश्चय ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा रुचि भवतार। मा० ॥७४
श्रद्धा समकित जाणीइ ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा थी शुभ ज्ञान। मा०
श्रद्धा थी शुभ चारित्र ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा सर्व प्रधान। मा० ॥७५
श्रद्धाइ पुण्य, पुण्य पूजा तणूं ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धाइ पुण्यदान। मा०
तप जप सजम श्रद्धा पणे ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा गुण-निधान। मा० ॥७६
तत्त्व श्रद्धा शुभ भावना ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा भावे निज ध्यान। मा०
श्रद्धा कर्म-क्षय-कारण ए, सुणे सुन्दरे, इम कहे जिन भान। मा० ॥७७
श्रद्धा विना समकित नही ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा विना नहि तप दान। मा०
केवल काय कष्टकारी ए, सुणे सुन्दरे, होय नहि मोक्ष निदान। मा० ॥७८
इम जाणी हृदै आपणो ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा करो जिन तत्त्व। मा०
संशय विमोह विभ्रम टालीयए, सुणे सुन्दरे, नि शल्य भावि भवितत्त्व। मा० ॥७९
जिण-जिणें तत्त्व सरदह्या ए, सुणे सुन्दरे, तिण तेणें लह्यां बहु सोक्ख। मा०
सुर नर वर पदवी लही ए, सुणे सुन्दरे, अनुक्रमे पाम्या मोक्ख। मा० ॥८०
तत्त्व अर्थ शुभ सद्दहणा ए, सुणें सुन्दरे, सम्यक्दर्शन एह। मा०
संक्षेपे एक भेद कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, अवर वे कहु तेह। मा० ॥८१
निसर्ग पहेलो भेद ए, सुणे सुन्दरे, दूजो अधिगम जोय। मा०
सहजि भवि रुचि उपजिए, सुणे सुन्दरे, उपदेश विना ते होय। मा० ॥८२

कर्मतणे उपराम होइ ए, सुणे सुन्दरे, अथवा क्षय उपशम । मा०
कर्मक्षयथकी उपजे ए, सुणे सुन्दरे, निसर्ग दृष्टि उत्तम । मा० ।।८३
गुरु उपदेशे पामीय ए, सुणे सुन्दरे, करता तत्त्व अभ्यास ।
भणता सुणता अधिगम ए, सुणे सुन्दरे, उपजे चित्त उलास । मा० ।।८४
जिन प्रतिमा प्रासाद देखीय ए, सुणे सुन्दरे, पेखी महिमा सासन्न । मा०
पूजा प्रतिष्ठा जात्रा आदि ए, सुणे सुन्दरे, ऋद्धि वृद्धि यति जन्न । मा० ।।८५
देवा अतिशय देखि करी ए, सुणे सुदन्रे, तीव्र तप दान ज्ञान । मा०
तत्त्व जाणी अधिगम होइ ए, सुणे सुन्दरे, करता गुण-आख्यान । मा० ।।८६
श्रद्धा समकित सेवीये ए, सुणे सुन्दरे, निसर्ग दृष्टि अधिगम । मा०
निर्मल मूल गुण कारण ए, सुणे सुन्दरे, शुद्ध भावें ते उत्तम । मा० ।।८७

वस्तु छन्द

शुद्ध भाव करो, शुद्धभाव करो, भविजण इणि परे ।
श्रावक जती धर्मकारण, तारण ससार सागर निर्भर ।
स्वर्ग मोक्ष फल दायक, नायक समकित सार मनोहर ।।
अनुदिन जे जन अनुसरे, धरे जे समकित रत्न । जिन सेवक **पदमो** कहे, तेह तणो करो जत्न ।।१

अथ भास जसोधरनी

भाव धरी भव्य साभलो ए, सुभ समकितभेद । उपशम वेदक क्षायिक, जेम कह्यो जिनदेव ।।२
समकित रत्न गुणघातक, प्रकृति जाणो सात ।
मिथ्यात्व मिश्र सम्यक्त्व प्रभृति, दर्शनमोहतणी ख्यात ।।३
अनादि काल अनन्तानुबन्धी, क्रोध मान माया लोभ ।
शिला अस्थि वश तणो मूल, लाख रग सम लोभ ।।४
मिथ्यात्व उदयें मिथ्यात्व हुइ, पाले नही जिनधर्म ।
मिथ्यात देव गुरु शास्त्र तणी, सेवा नीच कर्म ।।५
मिश्र प्रकृति तणे विपाके, मिश्र होइ परिणाम । देव-अदेव गुरु कुगुरु, सारिखा परिणाम ।।६
देवतणा लक्षण सुणो, देव जाणो अरिहन्त । इन्द्रादिक पूजा करे, कर्म अरि करे अन्त ।।७
चोत्रीस अतिशय निर्मला, अष्ट प्रतिहार्यवन्त । अनन्तचतुष्टय ऊजला, छियालीस गुणसन्त ।।८
समोसरण लक्ष्मी भली, सेवा करे शत इन्द्र । धर्मोपदेश देइ सदा, इह वा ध्याओ जिनेन्द्र ।।९
देवदूषण थी वेगला, सुणो दोष अठार । क्षुधा तृषा नही जेहं नइ, नही भय रोग लगार ।।१०
राग मोह चिन्ता नहि, जरा मृत्यु नही जन्म । खेद स्वेद मद रति नही, नही निद्रा रोगकर्म ।।११
विस्मय विखवाद जेहने नही, एह दोष अठार । अवर अवगुण पण कोय नही, ते देव भवत्तार ।।१२
एह वा जिनदेव सेवी ए, पूजीए जिनचरण । मुक्तिनारीवर निर्मला, भव-तारण-तरण ।।१३
गुरु आ गुरु सेवो गुणवन्त, गुरु जाणो निर्ग्रन्थ । धर्मोपदेश दीये ऊजलो, देखाडे मोक्ष पन्थ ।।१४
अभ्यन्तर बाह्यतणा नही, परिग्रह चौवीस । नग्न मुद्रा धरे निरमली, दिगम्बर जति-ईश ।।१५
चारु चारित्र धरे तेरस भेद, अट्ठावीस मूलगुण । दशलक्षणधर्म-धारक, तप वारस निपुण ।।१६
सम दम सूधो आचरइ, जीती इन्द्री मदमार । क्रोध मान माया लोभ नही, नही राग द्वेष विकार ।।१७
भव-सागर जे तरे तारे, जेम अच्छिद्रनाव । सेवो गुरु गुण उत्तम, हृदय आणी शुभ भाव ।।१८

सत्य शास्त्र ते जाणी ए, जेह मां होइ दयाधर्म । सत्य अचौर्यशील गुण, जिहा सदा शौचकर्म ॥१९
चार अनुयोग जहा निरूपिया, प्रथमानुयोग पवित्र । त्रेसठशलाका नरतणां, वास कीधा चरित्र ॥२०
त्रैलोक्यतणु जिहां वर्णन, ते करणानुयोग । श्रावक यतिव्रत व्याख्यान, जाणो ते चरणानुयोग ॥२१
षट्द्रव्य पंचास्तिकाय, तत्त्व अर्थ प्रकार द्रव्यानुयोग ते निर्मलो, श्री जिनवाणी उद्धार ॥२२
देवगुरु शास्त्र नव भेद, जोइड सत्य सुजाण । पूर्वापरङ्गि जे विरुद्ध नही, तेंहहि शास्त्र प्रमाण ॥२३
कुदेवतणु लक्षण सुणुं, दीसे देह सिणगार । वस्त्र नारी करी लकर्या, हाथे छे हथियार ॥२४
गदा शख धरि चक्रपाणि हाथे छै जपमाल । गरुडगामी मोर पीछ भार, भामा भोगवै विशाल ॥२५
एक मूर्त्तिदीसे लजामणी, लिंग जोणी मझार । पुरुष नारी साथे सदा करे वृषभ विहार ॥२६
भस्म अगि कपाल हस्ति, कठे छै रुडमाल । करि त्रिशूल भुजग कठि, जटा नग्न विकराल ॥२७
अवर देव तणी विकृत, दीसे वदन ते चार । राग-रंग रमे सदा, हस यान सचार ॥२८
तिलोत्तमा रागि रल्यु, दण्ड कमण्डलु पात्र । कोपीन जज्ञोपवीत कठि, अक्षसूत्री कुगात्र ॥२९
धड लेई एक नर तणो, थापी शिर एक हस्ति । तेल सिन्दूर रचना रची, एहवी कहे देवमूर्त्ति ॥३०
पदे पसू चापी रहे, करे क्रूर हथियार । रुधिर मास बलराती सदा, आगल पशु सिंघार ॥३१
जक्ष-जक्षी नाग-नागिणी, गुरु गोत्रज नाम । जलमी वराही इआदे करी, देवी भीषण भाम ॥३२
धात पाषाण माटी काष्ट, देव-देवी तणां मंच । मूढ जीव तणा रजक, माने मिथ्याती सच ॥३३
ए आदे देव देवी तणी, दीसे बहुमूर्त्ति । जिन-प्रतिमा थी बाहिरी, ते सहु मिथ्या विकृत्ति ॥३४
कुगुरु चिह्न-हवे साभलो, पंच पातक-सक्त । हिंसा असत्य चोरी आचरे, मैथुन अग जे रक्त ॥३५
मठ मन्दिर वनवासी आ, रामा रागे ते राता । कषण करे पशु-पालक, राग रोस मद माता ॥३६
विणज वीवाहे वैद ज्योतिषी, विद्या मन्त्र कुतंत्र । कामण मोहण वसिकरण पाखंड करे कुजत्र ॥३७
चर्मरोम ओढे घणा, वनवण कुलकारी । पंचविध वस्त्र आदरे, नग्न कोपीन एक धारी ॥३८
विप्र संन्यासी कापडी, योगी दरवेश दोहिल्या । बौद्ध सांख्य कुतापसी, बहुभिक्षुक वोल्या ॥३९
गोपिच्छक धवल अम्बरी, द्रावड़ आपली संग । पिच्छविहीना दुर्मती, जैनभाषा प्रसंग ॥४०
जिनशासन जे बाहिरा, जिनमार्ग विखण्ड । ते कुगुरु मिथ्यात्तीया, कुवेष लिंग सहित ॥४१
कुत्सित शास्त्र हवे सांभलो, जेमां कुत्सित आचार । धर्मकाज हिंसा करे, जज्ञ जीव सन्धार ॥४२
असत्य चोरी अब्रह्मचर्य, निगि भोजन पाणी । कन्दमूल मधुभक्षण, स्नान नीर अछाणी ॥४३
श्राद्ध संवच्छरीने तर्पण, जागर मण्डल प्रश्न । पितरपिंड उतारणा अम्बर देवी कुकृष्ण ॥४४
वड पीपल शमड़ीवृक्ष, काग सूकर स्थान । वापी सरोवर नदी अ कूप, पूज्य माने अज्ञान ॥४५
रवि अ शनिञ्चर सक्रम, ग्रहण आदित चन्द्र । एकादशी आमास आदि, ओछी स्थापना क्षुद्र ॥४६
देवने तो दूषण दीये, परनारी अपवाद । स्वामी लीला एहवी करै, एह इन्द्री उनमाद ॥४७
शीलवन्ती सती कहु, वली पच भरतार । अष्टादश पुराणमाहे, स्थापे असत्य अपार ॥४८
एक सौ असी क्रिया भेद, चौरासी अक्रियावाद । अज्ञानी सडसठे भेद, वत्तीस विनयविवाद ॥४९
त्रणसै त्रेसठ एणि परे, कुवाद कुस्थान कुमन्त । सशय विमोह कारणें, ते कुशास्त्र असत्य ॥५०
जे जिम जेणें किया, थापए ते विपरीत । कुबुद्धि वलें धूर्त कल्पित, दीखे अवली कुरीत ॥५१

जे जिनवाणी वेगला, थाप्या बहु विभचार ।
विरुद्ध वचनें रचना रची, किम कह्यो जाय विस्तार ॥५२

सत्यदेव कुदेव तत्त्व, गुरु कुगुरुने सरिखा । शास्त्र कुशास्त्र सम लेखवे, न जाणे ते परिक्षा ॥५३

गोलख सम ते लेखवे, चिन्तामणि-सम काच । गो-महिषी अर्क थोहर, दुग्ध सम एक वाच ॥५४
अमृत हलाहल विष समा, उद्योतनि अन्धकार । धर्म अधर्म सम लेखवे, भूला जीव गँवार ॥५५
मिश्रप्रकृति तणे उदये, न वि जाणे जिय भेद । शुभ अशुभ न वि उ लेखे, घणुं स्यू कीजे निखेद ॥५६
सम्यक्त्व प्रकृति हवे साभलो, माने देव अरिहन्त । निर्ग्रन्थ गुरु सेवा करिये, धर्म दशलक्षणवत ॥५७
देव शास्त्र गुरु उ लखे, करे जिनधर्म विचार । तत्त्व पदारथ सरदहे, लहे समकित सार ॥५८
सत्य देवसू प्रीति करे, नाही मनमे भ्रान्ति । देव गुरु ये मुझतणा, मुझ विघन करे शान्ति ॥५९
आदि देव अतिशयवन्त, परतो मुझ पूरे । शान्तिनाथ शान्तिकरण, दु क्रम सकट चूरे ॥६०

समकित विना स्यु धर्म स्यु, भ्रान्ति आणे ते बाल ।
जिनशासन बोडे नही, भमे जिम घटा लाल ॥६१

क्रोध मान माया लोभने, कठिण कसाय जे चार । अनादिकाल अनन्तानुबन्धी, दुःख देई अपार ॥६२

मिथ्यात मिश्र समकितनाम, प्रकृति टालो ए सात ।
उदय होय जब तेह तणो, तब समकित करे घात ॥६३
ये सातो जब उपशमे, तब होय उपशम भाव ।
स्वस्ति परिणामे जीवने, शुद्ध सहज परिणाम ॥६४

कचोली कर्दम नीर सहित, कसमल दीसे तेम । कतकफल माहे तबै, स्वच्छ थाइ जल जेम ॥६५
सर्वघातिस्फर्धकतणुं, होइ उपशम ज्यारे । समता भावे सात पणे, लाभे दर्शन त्यारे ॥६६
सप्तमध्य छ उपशमे, उदय समकित एक । वेदक रुचि तब ऊपजे, लहे धर्म विवेक ॥६७
नदी अ वहे जिम नीरपूर, समल ते जल माहे । समकित पाके वेदक, भ्रान्ति जिन घरम चाहे ॥६८

वेदकतणी उत्कृष्ट स्थिति, जाणो छासठि समुद्र ।
निश्चल पणे जो रहे सदा, सौख्य आपे जिनधर्म ॥६९
सर्वघाती तणो क्षय होय, प्रकृति टले जब सात ।
क्षायिक समकित तब ऊपजे, नीपजे गुण व्रात ॥७०
आकाश जिम अभ्र विना, निर्मल दीसे तेज भान ।
प्रकृति क्षय क्षायिक रुचि, होय गुण-निधान ॥७१
क्षायिकतणी स्थिति उत्तम, जाणो सागर तेतीस ।
अष्ट वरस हीण वे पूर्व कोडि, अधिक भणे जगदीश ॥७२

चौथा गुणस्थान आदे करी, इग्यारमा पर्यन्त । उपशम सम्यग्दर्शन, प्राणी चढे उपशान्त ॥७३

अविरत आदि अप्रमत्त लगे, स्वामी वेदकवन्त ।
चौथा आदि चौदमा लगे, क्षायिकदृष्टि जयवन्त ॥७४
सम्यग्दृष्टी भवी अण, नरक गति न वि जाये ।
शर्करा प्रभृति आदि छ लगे, नारकी न विया ये ॥७५

भवनवासी व्यन्तर ज्योतिषी, देव देवी ते माहि । कल्पदेवी अवर स्त्रीवेद, षढवेद न वि वाहि ॥७६
दुर्योनि न वि उपजिए, हीन दीन दारिद्री । खंज पग कुब्ज वामणा, न वि थाये विकलेन्द्री ॥७७

पृथ्वी अप तेज वाय तरु, बेइन्द्री तेइन्द्री चौइन्द्री ।
निगोद म्लेच्छ कुभोगभूमि, पसु असंज्ञी पंचेन्द्री ॥७८

वार मिथ्या उपपाद माहि, तिहां जन्म न पावे।
सम्यग्दृष्टि प्राणी आ, अल्प योनि न वि जावे ॥७९

वहिरा वारा बोबडा, वहु अन्ध विकराल। कोढी काला कुत्सित, न वि होइ मृत्यु अकाल ॥८०
एह आदे जे कष्टकारी, तिहा नही अवतार। सम्यदृष्टी, न वि लहे दु ख संसार ॥८१

दोहा

सम्यग्दृष्टी आतमा, उत्तम स्वर्ग अवतार। इन्द्र अहमिन्द्र ऊपजे, महर्धिक देव मंझार ॥१
कामधेनु चिन्तामणी, कल्पवृक्ष निधान। देवीस्यु क्रीडा करे, भूधर चैत्य उद्यान ॥२
उत्तम नर मांहे ऊपजे, भोगभूमि भागवंत। दशविध कल्पतरुतणा सुख लहे महत ॥३
कर्मभूमि कुल महर्धिक, उपजे राज अधिराज। मंडलीक महामंडलीक, कान्ह केशव वलराज ॥४
चक्रवर्त्ति षट्खंडतणी, तीर्थंकर पदसार। सुर नर सहु सेवा करे, आपे मोक्ष दुवार ॥५
सम्यग्दृष्टी सजनतणों, महिमा कह्यो किम जाइ। सुर नर वर सुख भोगवी, अनुक्रमे सिद्ध थाइ ॥६
इम जाणी निश्चय करी, सेवो समकित रत्न। जनमि जनमि सुखदायक, सदा करो तस जत्न ॥७

अथ भास अंबिकानी

सम्यग्दृष्टी जेह जीव, तेह लक्षण हवे सांभलो ए।
नि.शकित आदे अष्ट अंग संवेग गुण ऊजलो ए ॥१
उपजे पंचवीस दोष, समकित ना जत्न करो ए।
तेहतणा सुणो हवे भेद, सम्यग्दृष्टि मल परिहरि ए ॥२

मूढ त्रय मद अष्ट, छ अनायतन दुद्धर ए। संका आदि दोष, पंचवीस मल निरभर ए ॥३
देवमूढ, शास्त्रमूढ लोकमूढ त्रण भेद ए। न लहे देवस्वरूप, मूर्खपणु' तेहने मन मनि ए ॥४
देव एक अरिहंत, तेह विना दूजो नहि ए। अवर करे जो सेव, देवमूढ मल ते सही ए ॥५

अवत्र सुणी जे शास्त्र, हित अहित ते नवि लहे ए।
तत्त्व अतत्त्व गुण दोष, विचार भेद ते नवि कहि ए ॥६
मारह संगीत कोकशास्त्र, मिथ्यापंथ जो रोपीया ए।
ज्योतिष वेद कुवाद कुगुरुमुखे निरूपिआ ए ॥७

लोकमूढ लोकीक, कुतीर्थ जात्राए जे गमिए। गगा जमुना पुष्कर सागर-सगम जे भमिए ॥८
शीत उष्ण पडवेय, भैरव बीज गुरु त्रीजए। रक्ष सयोग पांचमि, शील सातमि आठमि दोजए ॥९

तुलीतु' नवमी अहव दशमी, एक द्वादसी अमावास ए।
अे आदि कुतिथि दिन्न, वहु मूढ लोक ते भास ए ॥१०
उत्तरायण होली शिवराति, नव हस्ती नवरात्र कही ए।
गणागुरिणी गोत्राड, साचो रवि सोमवार कही ए ॥११
जाग जागरण चन्द्रायण, गुंजन आदि त रोटला ए।
ग्रहण सती सक्रान्ति, कुदान पाप पोटला ए ॥१२
पच ते कुमती भाव, छन्नु पाखण्ड जे कह्या ए।
ते जाणो लोकीक मूढ, जिनशासन वाह्य रह्यां ए ॥१३

अशुभ जे आचार, मिथ्यात्व पूजा पाय ए। जे जिनवाणी थी भिन्न, ते सहु मिथ्या पाप ए ॥१४

एणी परे त्रण मूढ, विवेक गुणे करि व्यजो ए। प्रौढ होय समकित्त, हितकारो सदा भजो ए ॥१५
हवे सुणों अष्ट मद, मत्सर माने पाप उपजे ए। अहितकारी अति कष्ट, राग रोष ते नीपजे ए ॥१६
जाति मद कुल मद, लक्ष्मी ज्ञान रूप मद ए। तप बल विज्ञान मद, आठ मद पाप प्रमाद ए ॥१७

जाति तणो एह मद, पक्ष मोटो मुझ माय तणो ए।
मोटो कीधो तेणे काज तुनुस्तुंलिकसुं घणु ए ॥१८

लक्ष चौरासी जीव, अनेक वार जीव ग्रही ए। जाति तणो सक्रम, परपराते कुण लहे ए ॥१९
कुल तणो करे गर्व उत्तम काज वृद्धे कर्युं ए। वश मोटे मुज तात, एम कही मद अनुसरे ए ॥२०

एक सौ साढे नवाणुं, लक्ष कोडि ते कुल कहीया ए।
वली-वली ऊपजे जीव, तात सक्रम ते कुण लहि ए ॥२१
लक्ष्मी तणो किसी गर्व, अल्परिद्धि रामी करी ए।
छिण आवे छिण जाय, वक्ष छाया छिण जिम फिरे ए ॥२२
अल्प भणी श्रुतज्ञान, मत्सर करे मूढमती ए।
ज्ञान लही केवल बोध, तो अज्ञानी कहे जती ए ॥२३

पामी शरीर सरूप, देखी मद करे तेह तणो ए। जिन चक्री काम देव, ते आगले त्रिसू घणू ए ॥२४
पामी अंग सबल, कहे शक्ति मुझ ने घणी ए, आगे हुआ कोटी भट्ट, ते सम बड काइ भणु ए ॥२५
अल्प करी उपवास, कठिण तप घणो कीयो ए। एक बेच्यारे षट् मास, ते आगलि काइ भणु ए २६
चित्र-मंडण लेख कर्म, सीखी मद स्यु तणु ए। एक एक थी अधिक विज्ञान, तु रीझे किसु घणु ए ॥२७

इणि परे आठे मद, जुजुआ जोउ जुगत्ति करी ए।
समकित्त ने दीये दोष, मद छाडो मार्दव धरी ए ॥२८

जे-जे कृत्रिम वस्तु, कर्म सजोगे जे मिली ए। छिण-छिण विणसे तेह, सू मद कीजे जू तेटलू ॥२९
कर्मत्तणे वशि जीव, ऊँच नीच गोत्र ग्रही ए।
हीन अधिक बुद्धि कुबुद्धि, शुभ अशुभ कर्म लहि ए ॥३०
कुदेव कुगुरु तणा भक्त, कुलिंगी भक्त तेह तणा ए।
कुशास्त्र कुशास्त्र तणा भक्त, अनायत्तन षट् भेद भण्या ए ॥३१
दूषण-सहित्त कुदेव, परिग्रह-सहित कुलिंगि कहीया ए।
कुत्सित्त आचार कुशास्त्र, पूजा भक्ति दूषण ग्रह्या ए ॥३२
अष्ट शंकादिक दोष, भेद कहुँ हवे तेह तणा ए। दोष टाले होइ गुणा, अष्ट भेद अग सुण्या ए ॥३३
जल-बिन्दु जीव असख, निगोद देही अनत रासी ए।
सूक्ष्म कह्या तत्त्व भेद, शका दोष सशय भास ए ॥३४
दान पूजा तप ध्यान, अध्ययन धर्म करी ए। निंदा न करी वाछे भोग, आकाक्षा दूषण धरी ए ॥३५
जती व्रती गुणवन्त, जल्ल-मल्ल अग रोग देखी ए।
सूग करे जे मूढ, विचिकित्सा दोष पेखीये ए ॥३६
देव-अदेव गुरु-कुगुरु, तत्त्व अतत्त्व जे न वि लहि ए।
धर्म-अधर्म अविचार, मूढ दोष इणि परि वहि ए ॥३७
सागारी अणगार, चारित्र आचरण वसि ए। मलिण देखि त्रस व्रत, अन आछादन देइ दोष ए ॥३८

उपासक यतिनाथ, कर्म वसि व्रतथी चल्यो ए ।
स हि न निज राखे धर्म'अस्थिति करण मल ठवि ए ॥३९
यती व्रती सावर्मी, वात्सल्ल भक्ति ते न वि करे ए ।
न वि करे प्रीति उपगार, अवात्सल्ल दूपण वरि ए ॥४०
जिन प्रासादमां प्रतिमा, प्रतिष्ठा अतिगय लोपीय ए ।
गासन महिमा करे हानि, अप्रभावना दोप रोपी ए ॥४१
ए इणी परे आठे दोप, मल उ लखी जो परिहरि ए ।
तो होय उत्तम अंग, नि गंकादि अष्ट गुण वरि ए ॥४२
अंग-विहूणो दर्गन, निज काज असमर्थ कही ए ।
अक्षर-हीन जिम मंत्र, विप-वेदना टाले नहीं ए ॥४३
राज-अंगे जिस भूप, सवल पणे वैरी ने जीति ए ।
तिम अंग-सगे सवल, दर्गन कुकर्म क्षेपीइ ए ॥४४
जिम तिम करी भव्य जत्न, दोष पंचवीस दूरे करो ए ।
अंग गुण अष्ट समृद्ध, निर्मल समकित अनुसरो ए ॥४५
गंकाकारी सात भय, दुखदाई गल्य त्रणि ए ।
कपट माया मिथ्यात, निदान गल्य त्यजी जन ए ॥४६
एह लोक भय परलोक, अत्राण अगुप्ति कही ए ।
आकस्मिक भय रोग, मरण भय सातमो सही ए ॥४७
संवेग निर्वेद निन्दा, गर्हा, उपगम भक्ति ए । वात्सल्य अनुकम्पा, अष्ट गुणे रुचि उत्पत्ति ए ॥४८
धर्म अवर्म तणा फल, प्रीति रुचि संवेग गुण ए । संसार-भोग एह अंग, वैराग्य निर्वेद पुण ए ॥४९
प्रमाद पणें करी काज, निन्दा करे ते आपणी ए ।
देव गुरु गास्त्र भक्ति करि, उच्छाह भावना जोड़ी ए ॥५०
सावर्मी वाच्छल्ल, स्नेह धरे गो-वच्छ परि ए । दया करे परिणाम, अष्ट गुणे दृष्टि वरी ए ॥५१
अष्ट अग सवेग, सम्यग्दृष्टी जीव लक्षण ए ।
समकित तणा एह मूल, जिम तिम करो एह रक्षण ए ॥५२
समकित सर्व प्रधान, जिम तारा मांहे चन्द्रमा ए ।
पसुअ मांहे जिम सिंघ, देव मांहे जिम इन्द्र तो ए ॥५३
तरु मांहे जिम कल्प वृक्ष, रत्न मांहे जिम चिन्तामणी ए ।
रस माहे जिम अमृत, धर्म माहे समकित रत्न ए ॥५४

वस्तु छन्द

धरो दर्गन धरो दर्गन, भवि जिन भावे करी ।
मद गंका दोप वेगलो, मूढ अनायतननि जु कसमला,
अष्ट अगे करी दृढ पणें, सवेग गुणे करी ऊजला ।
अनुदिन जि जन अनुसरे, अगे धरि अति उल्हास,
जिन सेवक पदमो कहे, ते लहे अविचल वास ॥५५

अथ ढाल सहीनी

नि शकित पहिलो निर्मलो, नि·काक्षित दूजो भलो । निर्विचिकित्सा तीजो ऊजलो, सही ए ॥१
अमूढ अग चौथो कही, उपगूहन पचमो लही । सस्थितिकरण अंग छट्ठो सही ए ॥२
वात्सल्य अंग सातमो, प्रभावना अग आठमो । आठ अंगे दर्शन अति बली ए, सही ए ॥३

नि.शकित गुण किणि पाल्यो, जिनशासन ते अजु आल्युं ।
अजना चोर कथा हवे साभलो ए, सही ए ॥४

भरत क्षेत्र एह जाणीए, मगध देश मण आणी ए । राजगृही नयरी वखाणिइ ए, सही ए ॥५
जिनदत्त श्रेष्ठी नाम, साधे ते धर्म अर्थ काम । दान पूजा तप जप ते गुण ग्राम ए, सही ए ॥६
चतुर्दशी पोसह कही, समसान रह्यो काउसग्ग धरी । घर सावद्ययोग सब परिहरी ए, सही ए ॥७
आकाश देव युग आवीया, अमितप्रभ पहिलो भावीया । विद्युत्प्रभ दूजो सोहावी उ ए, सही ए ॥८
प्रथम सुर सम्यग्दृष्टी, दूजो मिथ्यादृष्टि । दोय मित्र पहिला नरभव तणा ए, सही ए ॥९
विचार करी ते माहो माहे, धर्मतणी परीक्षा चाही । यमदग्नि पासे आवीया ए, सही ए ॥१०

चिडो चिडी रूप लीयो, तापस कान्ह मालो कीयो ।
चिडी मूकी निज काज चिडो चालीयो ए, सही ए ॥११
चिडी कहे कही कहीये आवसो, न वि आवो तो सम करो ।
आवूं नही तो कुतापस पापे लीजिए, सही ए ॥१२
तदि तापस मन कोपियो, कुच मालो करि लोपियो ।
तब पखी उडि आकाशे गया ए, सही ए ॥१३
क्षमा भ्रष्ट तापस देखी, कुमत धर्म तेणे उ वेखी ।
चालो मित्र गुरु जोउ तुम तणा ए, सही ए ॥१४

देवे दीठो जिनदत्त श्रेष्ठी, ध्यावे निज मन परमेष्ठी । नि कम्प मेरु जिम, ऊभो रह्यो ए ,सही ए ॥१५
जैन देव ते इम कहे; सद्-गुरु वाणो तत्त जोऊ । जिन शासन श्रावक परीक्षा करो ए, सही ए ॥१६
दुद्धर उपसर्ग ते करे, देव माया विकृति धरे । बहुविधि विक्रिया भय देखविए, सही ए ॥१७
च्यार पहर कीयो उपसर्ग, निश्चल जाणो कायोत्सर्ग । परिषह सहता प्रभात हुओ ए, सही ए ॥१८
तब देव मन रीझियो, जिनशासन धर्मे भीजीयो । प्रगट थई श्रेष्ठी पाये नमे ए, सही ए ॥१९

अमितप्रभ कहु कहु अम्हो, आकाशगामिनी ल्यो तम्हो ।
विद्या बले अढाई द्वीप जिन भेटीए, सही ए ॥२०
विधि-सहित विद्या दीधी, वस्त्र आभरण देई भक्ति कीधी ।
साधर्मी परशंसी ते सुर गया ए, सही ए ॥२१
श्रेष्ठी निज घर आवीयो, विद्या लाभे हर्ष पामीयो ।
पूजा लेइ मेरु जिन जात्रा गयो ए, सही ए ॥२२
एक दिन श्रेष्ठी जात्रा जाई, सोमदत्त सेवक मन ध्याई ।
विद्या मागे श्रेष्ठी पासे रूबडी ए, सही ए ॥२३
हुआ बुझी मै तम साथे, पूजा द्रव्य धरी निज हाथे ।
तुम प्रसादे स्वामी जात्रा करूँ ए, सही ए ॥२४

तव श्रेष्ठी कृपावत, विद्या उपदेश देइ सत । एक मना साभल तूं सोमदत्त ए, सही ए ।।२५
कृष्ण चतुर्दशी रात्रे, वे उपवास करी पवित्र । रात्र स्मसान वडतरु पूर्व शाखि ए, सही ए ।।२६
दर्भ तणो शीको रूवडो अठोत्तर सौसरि जोडु । भूतली ऊर्ध्व मुखि खड्ग तीक्ष्ण ए, सही ए ।।२७
शीके वेसी निर्भयपणे, अपराजित मत्र गुणी । एकेकी सर छेदे शीकातणी ए, सही ए ।।२८
जव मंत्र पूरण थाय, तव आकाश विद्या आय । मनवाछित कारज करे घणु ए, सही ए, ।।२९
श्रेष्ठि उपदेश साभली, सोमदत्त पूगीडली । विद्या साधन ते लागो वुध वली ए, सही ए, ।।३०
मंत्र जपि एक सर कापी, खड्ग देखी मन भय व्यापी । सशय हवो तव श्रेष्ठि ने ए, सही ए ।।३१

शस्त्र ऊपर जो होसे पात, तो निश्चय होइ धात ।
इम जाणी ते चढे ऊतरे वली वली ए, सही ए ।।३२
अजन चोर तिण अवसरे, आव्यो अंजनसुंदरि घरे ।
सन्मुख न वि दीठी ते कामिनी ए, सही ए ।।३३
चोर पूछे किम द्यामणी, गणिका कहे सुणो धणी ।
राणी तणो हार द्यो तम्हो आणी ए, सही ए ।।३४

राजा ते प्रजापाल, तस राणी कनकमाल । ते हार विना किसूं जीविए ए, सही ए ।।३५
अजन चाल्यो अजन वले, हार हर्यो ते छोर वले । अदृश्य रूप ते लेइ नीसर्यो ए सही ए ।।३६
हार तेजे उद्योत कीयो, कोटवाल वेगें लीयो । हार मूकी अंजन नीसरी गयो ए, सही ए ।।३७

सोमदत्त कन्हे आवीयो प्रौढ, किसू आक्षेप करै छैं मूढ ।
श्रेष्ठी सम्बन्ध तेणे सहुँ कह्यो ए, सही ए ।।३८

अलगो रहे ए हवु कही, शीके वेसी ते सर ग्रही । एकवार ते सघली शर छेदी ए, सही ए ।।३९
श्रेष्ठी वयण करी प्रमाण, जव आवे भूपति मू जाणि । तव आकाश देवे झेलीयो ए, सही ए ।।४०

नि:शंक अंग प्रगट कर्यो, विमान वेसता संचर्यो ।
जिहां श्रेष्णी छे तिहां जात्रा गयो ए, सही ए ।।४१

मेरु अकृत्रिम जिन भेटीया, पाप सकट वे छुटीया । चारण मुनि नधा श्रेष्ठी पासे ए, सही ए ।।४२
तव श्रेष्ठी अचंभीयो, अजन देखी मन क्षोभीयो । चोर सम्बन्ध कही थोभीयो ए, सही ए ।।४३
मुनिवंर दीयो उपदेश, धर्म लीउं ते यति ईश । सीस नामी अंजन एम वीनवी ए, सही ए ।।४४
स्वामी तम्हो कृपा करो, भवसायरते उत्तारो । सजम देओ मुझ देव दुर्लभ ए, सही ए ।।४५
अल्प आयु ते जाणीउ, आसन्नभव्य मन आणीउ । श्रेष्ठे अजन गुण बखाणीयो ए, सही ए ।।४६
दीक्षा दीधी मुनिवर तणी, सह गुरु प्रशंसा करे घणी । तप जप संजम अजन करी ए, सही ए ।।४७

ध्यान वले कर्म निर्जरी, केवल ज्ञान प्रगट करी ।
कैलाशगिरि आवी मुकति श्री वरी ए, सही ए ।।४८

धन्य धन्य मुनि अंजन, सिद्ध हवो करम भंजन । सुरे आवी निर्वाण पूजा करी ए, सही ए ।।४९

दोहा

नि शकित अग ऊजलो, पाल्यो अजन चोर । श्रेष्ठी वयण निश्चय करी, परिहरि सशय घोर ।।१

निश्चय विणा दर्शण नही, निश्चय विणा कोई नही सिद्धि ।
निश्चय विणा शिव सुख नही, निश्चय विणा नहिं वृद्धि ऋद्धि ।।२

सात विसन ते सेवतो, करतो पाप अनन्त । कर्महणी मुकते गयो, अजन समकितवन्त ॥३
इम जाणी निश्चय करी, जिनवर-वचन प्रमाण । सुरनर सुख ते अनुसरी, अनुक्रमे लहे निर्वाण ॥४

भास वीनतीनी

उपराजी जिनधर्म, भोग वाछा नवी कीजिइ ए ।
सतोष धरी निजमंत्र, नि काक्षित गुण लीजिइ ए ॥१
कुणे पाल्यो एह अग, जिनशासन माहे ऊजलो ए ।
अनन्तमती सती नाम, तेह वृत्तान्त हवे साभलो ए ॥२
अगदेश मझार, चपा नयरी छै भली ए । श्रीवर्द्धन तस राय, लक्ष्मी मती राणी निर्मली ए ॥३
प्रियदत्त श्रेष्ठी नाम, अगवती नारी धणी ए । धर्म अर्थ साधि काम, देवागम गुरु भक्ति घणी ए ॥४
तस विहु कूखे जाणि, अनन्तमती पुत्री रूवडी ए ।
रूप सौभागनि खाणि, कनकतणी जे सीपडी ए ॥५
एक वार वनहँ मझार, धर्मकीर्त्ति गुरु आवीया ए ।
वन्दन चाल्यो श्रेष्ठि, निज परिवार सुहावीयो ए ॥६
वन्दे सद्गुरु श्रेष्ठी, धर्मकथा रस साभली ए ।
नन्दीश्वर दिन अष्ट, शीलव्रत लीधो वली ए ॥७
अवसर तेणे श्रेष्ठी, निज पुत्री प्रति भासीउ ए ।
बेटो लेउ तमे शील, विनोद व्रत अपादीयो ए ॥८
वंदी सद्-गुरु पाय, ते सहु आव्या निज मन्दिरे ।
यौवन पामी अनुक्रमे, सयल लक्षण देखी सुंदरी ए ॥९
विवाह तणी सुणि वात, तात प्रते बेटी कहे ए ।
तम्हो देवास्यु अम्हे व्रत, शीलवंती वर किम गुही ए ॥१०
वाप वोल्यो सुण वेटी, विनोद व्रत देवारीयो ए । अष्ट दिन पर्यन्त, इम कही लेवारीयो ए ॥११
वलतु कहे ते पुत्री, धर्मकाज किस्यु हासु ए ।
मुझ नियम सीमा न कीध, वली वली कहु किसु ए ॥१२
तव भाख्यो थयो साह, निश्चल मन बेटी तणु ए ।
अविचारी करे जे काज, पश्चात्ताप होइ घणु ए ॥१३
पापी करावे पाप, धर्मी ने धर्मरुचि ए । हासे लेवा सु नेम, पुण्यतणो हवे संचय ए ॥१४
धन्य धन्य पुत्री मन्न, तात कहे रहो घरे ए । सखी सजन सहित, दान पूजा तप करे ए ॥१५
एक वार वनहिं मझार, चैत्रमासे क्रीडा करै ए ।
हरखे हिंडोले हीलत्त, निज सखी स्युं परिवरी ए ॥१६
तिण समय ते जाण, विजयार्ध दक्षिण श्रेणी ए ।
किन्नर नगर को ईस, कुंडल मंडित विद्या धणी ए ॥१७
सुकेशी तस नार, विमान वेसी बिन्हे चालिया ए ।
शोभा जोइ भूपीठ, कन्या देखी मन हालिया ए ॥१८
काम जाग्यो मन माहे, ए कन्या विण जीववु किस्यु ए ।
पाछो आव्यो मूको घर नारिं, कन्या पासे आव्यो धसी ए ॥१९

कन्या हरी चाल्यो खग, जिम नागिण गरुड ग्रहिए।
मनोरथ करे ते मूढ, कठिण कष्ट कन्या लहिए ॥२०
सुकेशी तत्काल, कत्तकेडे वेग वलो ए। नारी नही अ विश्वास, आवत्ती दीठी ते कसमली ए॥२१
नारी तणो देखी कोप, ते कन्या खगे तजी ए।
प्राण लघवी प्रभाव, सन्नि सन्नि ते वन भजी ए॥२२
रुदन करे अपार, एकली घोर अटवी माहि ए। दुःख देखे ते वाल, क्रूर वनचर भय वहू ए॥२३
तव आव्यो एक भील, कन्या लेइ निज घर गयो ए।
देखी वालारूप, मोह-मयण विह्वल थयो ए॥२४
भील कहे धणु नार, यौवन इन्द्रीफल भोगवो ए।
हूँ भीम पल्लीनाथ, मुझ साथे सुख अनुभवो ए॥२५
कन्या मन अविचल, भीम भाषा भेदे नही ए। उपसर्ग करे ते दुष्ट, राति मरम वयण कही ए॥२६
सती अ शील प्रभाव, वनदेवी आवी उचरि ए।
रे पापी भील मूढ, सती अ संग तु किम करी ए॥२७
हवे हुँ टालुं तुझ राजि, काज सहित प्राण हरूं ए।
तव हुओ भील भयभीत, ते बाला दूरे करी ए॥२८
पुष्प नामें सार्थवाह, ते कन्या आपी तस ए। देखी रूप विशाल, साह हवो काम वशी ए॥२९
कन्या नें देखाडे लोभ, भार्या थाऊं मुझ घर तणी ए।
तू मुझ तात समान, वलती कन्या इस भणी ए॥३०
अविचल जाण्यो तस मन्न, साह अजोध्या नयरी गयो ए।
कामसेना वेश्या गेह, कन्या आपी निश्चल थयो ए। ३१
वेश्या कहे सुणो बाल, यौवन भोग सुख अनुसरो ए।
न वि भीजे तस मन्न, निश्चल जिम मेरु सिरो ए॥३२
नगरस्वामी सिन्धराय, कन्या आपी वेश्या कहे ए।
ए तुम्ह होसे पटदेवि, स्त्री लोभे भूप ग्रही ए॥३३
रात्रि समये ते भूप, कामचेष्टा करे धणी ए।
आ ले वस्त्र- आभरण, देवी थाउ मुझ पटतणी ए॥३४
माने नहि तस बोल, क्रोधे भूप उपसर्ग करी ए।
सती अ गणे नवकार, परमेष्ठी पद मनि धरी ए॥३५
सती अ पुण्य प्रभाव, नगर देवी सहाय कीयो ए।
यष्टि मुष्टि देई प्रहार, राजा खेद-खिन्न कीयो ए॥३६
देवी कहे भूप मूढ, अन्याय कर्मका मांडीयो ए।
हवे हरूं तुम राज्य-काज सहित प्राण खंडुं ए॥३७
तव थयो भूप भयभीत, कन्या घर थी मोकली ए।
देवी स्युं करी क्षमितव्य, निज स्थाने गई एकली ए॥३८
धन्य धन्य शील-प्रभाव, धन्य धन्य मन कन्या तणो ए।
आसन कम्प्या देव देवी साहाय करयो घणु ए॥३९

अनन्तमती तिणि वार, कर्मतणा फल चिन्तवी ए।
तब आर्यिका आवी एक, पद्मश्री नामे स्तवी ए ॥४०
बाला देखी गुणवन्त, आर्या पूछे मीठी भाष ए।
सकल कह्यो सम्बन्ध, साधर्मी जाणि विश्वास कीयो ए ॥४१
आर्यिका लेई ते वाल, तेठी आवी श्री जिन गेह ए।
साहाय करे साधर्मी, साँचो सन्त गुण सस्नेह ए ॥४२
साधर्मी घरे आहार, तप जप संजम आचरि ए।
विज्ञान विजन पाक, ते कन्या चतुराई करे ए ॥४३
बम्या अन्न समान, भोग-वाछा न वि करे ए।
सन्तोष धरि निज मन्न, आर्यिका पासे ते रहे ए ॥४४
तिण समये प्रियदत्त, पुत्री-वियोगे विह्वल थयो ए।
दुःख विसामा काज, तीर्थजात्रा अजोध्या गयो ए ॥४५

ते अ नगर मझार, जिनदत्त सालो वसे ए। साह आव्यो तेह गेह, सजन-सन्मान दे तस ए ॥४६
पुत्री-विरह-सम्बन्ध, परस्परि ते जाणियो ए। बात करे सुख-दुःख, कर्म-विपाक बखाणियो ए ॥४७

प्रभात समय श्रेष्ठि, स्नान धौत वस्त्र पहिरिए।
अष्टप्रकारी लेई पूज, जिनमन्दिरने सचरिए ए ॥४८
पूजे जिनवर-पाय, सद्गुरु स्वामी वदिया ए।
साभली श्री जिनवाणि, धर्मध्याने आनदिया ए ॥४९
जिनदत्त केरी नारि, कन्या तेठी प्रीते जडी ए।
अंगण पूराव्यु चौक, रसोई सन्धावी रूअड़ी ए ॥५०
साधरमी करी काज, कन्या निज स्थानक गई ए।
तब आव्यो प्रियदत्त, जोई मडण सन्मुख थई ए ॥५१

स्वस्तिक कीधो जेण, तेतेडो चौसाल कए। विस्मय पाम्यो साह, तब अ बीते बालक ए ॥५२
जब दीठी ते बाल, साह नेत्र नीर बहे ए। हा हा तू मुझ धीह, मुझ विण तु किहा रही ए ॥५३

बाप बेटी तिण वार, कठ लागी रुदन करी ए।
सजन सहु परिवार, प्रतिबोध वाणी उचरी ए ॥५४

अहो अहो कर्म-विपाक, पापकर्मे वियोग होइ ए। शुभकर्मे सजोग, जन पडित सदा कहि ए ॥५५
पिता आगल ते पुत्री-हरण बात सवल कही ए। पछे जीम्या सज्जन, कन्या सुख ते रहो ए ॥५६
तात कहे सुणो धीय, हवे आवो आपणे घर ए। वलतु कहै ते बाल, घर सुख पूरे मुझ ए ॥५७

दीक्षा देवारो अम्ह तात, जो वाछो हित मुझ ए।
तात प्रशसि धन्य मन्न, धन्य धन्य शील तुझ तणो ए ॥५८
क्षमी क्षमावी सजन, पदमसिरि आर्जिका पासे ए।
धरियो सजमभार, अनन्तमती ध्यान धरे ए ॥५९

समकित फले तेह, ज्ञान अभ्यास सदा करि ए। तीव्र करे वहु तप, जप ध्यान धर्म धरी ए ॥६०

जब जाण्यो क्षीण आय, समभावे सन्यास लीयो ए।
छेदि नारीनो लिग, समाधिमरण तेणे कीयो ए ॥६१

सहस्रार बारमें स्वर्ग, महर्धिक देव ऊपजो ए।
सहज वस्त्र आभरण वैक्रियिक देह ते नीपज्यो ए ॥६२
कल्पवृक्ष विमान, देवी स्यु क्रीडा करि ए।जिनकेवली पूजे पाय, धर्मरुचि सदा धरि ए ॥६३

दोहा

विनोद शील नियम ग्रही, अनन्तमती सती नार।
स्वर्गतणा सुख अनुभवी, ते तरसी संसार ॥६४
नि काक्षित अग ऊजलो, पाले जे नरनार। स्वर्ग मोक्षसुख ते लहे, अन्त तिरे ससार ॥६५
सती-शिरोमणि सीता कही, द्रौपदी चन्दनबाल।
नि:काक्षित गुण आदरी, पाम्पा सुख गुण माल ॥६६
इम जाणिय दृढ मन करी, समकित पाले सार। जिनसेवक पदमो कहे, ते पामे भवपार ॥६७

अथ तृतीय अंग लिख्यते। ढाल भद्रबाहुनी

निर्विचिकित्सा पालो अंग, रोग देखी श्रावक यति सघ, सूग साधमी परिहरी ए ॥१
निर्विचिकित्सा धर्यो केणे अग, तेह तणो हवे कहु प्रसंग, भूप उद्दायण कथा सुणो ए ॥२
भरतक्षेत्र माहे कच्छ देश, रौरवनयर तणो नरेश, उद्दायण भूप तणो ए ॥३
प्रभावती नरमे तस राणी, पूजे श्रीजिन सद्गुरु वाणी, दान पूजा जप तप करी ए ॥४
एक बार सौधर्म स्वर्गनाथ, सभा पूरी बैठो देबसाथ, धर्मतणां गुण वर्णवे ए ॥५
निर्विचिकित्सा समकित अग, उद्दायण पाले अभग, रंग सदा जिनधर्म तणु ए ॥६
इन्द्र प्रशसा सुणी तब देव, विस्मय पाम्यो वासव देव, परीक्षा जोवाने चालीओ ए ॥७
वृद्ध मुनिवर तणु रूप लीधो, गलित कोढ व्रण अंगते कोधो, देह दुर्गन्ध माखी भमे ए ॥८
थर-थर कापे मुनिवर-देह, मध्याह्न समय आव्यो राय-गेह, तिष्ठ तिष्ठ करी पडिगाहिआ ए ॥९
आसन देय पखाले पाय, विधि-सहित आहार देई राय, प्रभावत्ती भक्ति करै ए ॥१०
तब मुनि वम्यो आहार, राय-अग ऊपर अपार, दुर्गन्व अग व्यापीयो ए ॥११
हा हा भूप कहे मुनिवृद्ध, अजाणपणे अन्न दीधो विरुद्ध, भूप निन्दा करे आपणो ए ॥१२
वली मुनि वमे बीजी वार, प्रभावती छांटी सविचार, अवर जन सहु दूरे गया ए ॥१३
सूग नवि आणी राजा राणी, निर्मल प्रासुक लेय पाणी, मुनि अग पखालियो ए ॥१४
तब देवें प्रगट रूप लीयो, राय-राणो स्तवन बहु कीयो, धन्य धन्य इन्द्रे प्रशसिया ए ॥१५
देवे वस्त्र आभूषण आपो, समकित महिमा महीथल थापी. गुण स्तवी सुर घर गयो ए ॥१६
भूप राणी सुखे करे राज्य, सारै प्रजा तणू बहु काज, न्याय विधि राज भोगवे ए ॥१७
धरम काज करता दिन जाय, निमित देखी वैराग्य मन ध्याय, निज पुत्र राज थापियो ए ॥१८
श्री वर्धमान जिनेश्वर पासे, दीक्षा लेइ ते शास्त्र अभ्यासे, ध्यान अध्ययन तप आचरि ए ॥१९
शुक्लध्याने घाती कर्मचूरी, केवलज्ञान ते वाछित पूरी, धर्म उपदेश देइ निर्मलो ए ॥२०
अग अघाती कर्म क्षय कियो, साम्राज्य सिद्ध पद लियो, उद्दायण मुनि मुकते गयो ए ॥२१
प्रभावती राणो तिणी वार, वैराग लीधो सयम भार, तप जप सूधो आचरि ए ॥२२
निर्मल समकित पाले चग, तब वले टाले स्त्री लिंग, मरण समाधि साधीयो ए ॥२३
ब्रह्म स्वर्ग ते उपज्यो देव, महर्धिक वैक्रियिक नीपज्यो, वस्त्राभरण ते लकर्यो ए ॥२४
उद्दायण भूप पाम्या मोक्ष, प्रभावती राणी देव सौख्य, निर्विचिकित्सा अग करी ए ॥२५

मुनिवर हुवा श्रीनन्दषेण, निर्विचिकित्सा अग पाल्यो तेण, दशमे स्वर्गे ते देव हुओ ए ॥२६
पछी हुओ वसुदेव सुजाण, तेह कथा हरिवंशे जाण, अवर जीवे अग पालियो ए ॥२७

चौथो अमूढ अंग प्ररूप्यते

एह रहीयो इहा वृत्तान्त, अमूढ अग कहुँ हवे सन्त, रेवती राणी कथा सुणो ए ॥२८
देव आगम गुरु परीक्षा कीजे, सगुण निर्गुण भेद लहीजे, मूखपणु दूरे तजो ए ॥२९
विजयार्ध एह दक्षिण श्रेणी मेघकूट नयर तणो धणी, चन्द्रप्रभ खेचरपती ए ॥३०
राजरिद्धि सुख भोगवे राय, अढाई द्वीप माहे जात्रा जाय, पूजे जिन केवली पद ए ॥३१
जात्रा करतो आव्यो दक्षिण देश मथुरा एह, शशिनामे सूरी भेटीआ ए ॥३२
धर्मसुणी उपज्यो वैराग, सगतणुं करि परित्याग, चन्द्रशेखर राज थापियो ए ॥३३
जात्रा काजे विद्या एक राखी, क्षुल्लक दीक्षा लीधी गुरु साखी, तप जप सजम आचरे ए ॥३४
ब्रह्म कहे सुणो, गुरु तम्हो, उत्तर मथुरा जाइ अम्हो, कहोनो काई कहो छो किसु ए ॥३५
गुरु कहे सुणो वच्छ विचक्षण, सुव्रत मुनि छै शुभ लक्षण, मुझ वन्दना कहियो तस ए ॥३६
मथुरातणो स्वामो छै वरुण, तस राणी रेवती शुभ चरण, धर्म वृद्धि कहियो तस ए ॥३७
ब्रह्म पूछी सद् गुरु त्रण वार, अवर काई भविक है गुणधार, आज्ञा लेइ ब्रह्म सचर्यो ॥३८
तब मन चिंते ब्रह्मचारि, भव्यसेन भणे अग इग्यारि, तेहने काइ कह्यो नही ए ॥३९
विस्मय पाम्यो ते मन माहे, तेह तणी हवे परीक्षा चाहे, कवण कारण छै तेह तणुं ए ॥४०
उत्तरमथुरा वनहिं मझार, सुव्रत मुनि वंद्या भवतार, निज गुरु तणी वदना कहीइ ए ॥४१
ब्रह्मने धर्मवृद्धि तेणे दीधी, गुप्त गुरु प्रतिवंदना कीधी, सामाचारी जती तणी ए ॥४२
क्षुल्लक तणो वात्सल्य बहु कीयो, विनय सहित सन्मान ते दीयो, माहो माहे क्षेम प्रश्न करी ए ॥४३
भव्यसेन मुनिवर छे जिहां, ब्रह्मचारि आव्यो वली तिहा, नमोस्तु करी ऊभो रह्यो ए ॥४४
वलतो धर्मवृद्धि न वि दीधी, साधर्मी भणि भक्ति न वि कीधी, मिथ्या अहकारे संचर्यो ए ॥४५
विद्या गर्व-भूधर ते चढी उ, अभ्यन्तर अज्ञाने जडीउ, नडीयो मोह कर्मे धणु ए ॥४६
ते मुनि उपज्यो मिथ्या मान, न वि जाणे ते भेदने ज्ञान, ज्ञान विना शुभ गुण नही ए ॥४७
प्रभात समय मल-मोचन जाय, विनय सहित ब्रह्म साथे, थाय, जलकुडी निजकर ग्रही ए ॥४८
चन्द्रप्रभ विद्याप्रभावे, एकेन्द्री अकुर सहावे, हरित कायमय पथ कियो ए ॥४९
भव्यसेन अंकुरा वाहे, एकेन्द्री कह्या आगम माहे, मन चिंतवि पण रुचि नही ए ॥५०
ते अकुरा ऊपर मुनि चाले, यत्न विना ब्रह्म दुख साले, पाप प्रमादे ऊपजे ए ॥५१
ब्रह्मचारी प्रपच जब कीयो, कुण्डी जल सोसी तव लियो, दीनू कमडलु गीतो करी ए ॥५२
व्यामि जई कु डी मुनि जोई, जल विना शौच किम होई, मन मूकी पछे बोलीयो ए ॥५३
ब्रह्मचारी कहे भव्यसेन, मृतिका शौच करो तमे तेह, सर दाखी अलगो रह्यो ए ॥५४
सरोवर जाई तेणे लीधो, कृपाभाव मुनि नवि कीधो, विचार थकी ते वेगलो ए ॥५५
सुध बोध कुज्ञान ते थाइ, सूर्य तेज घूक नवि पाइ, तिम मिथ्या ते जीव दू सियो ॥५६
शुद्ध स्वाद सहजे जिम दूध, कटुकतु वी थाइ असुद्ध, मिथ्या अज्ञान ते वासीयो ए ॥५७
अभव्यसेन नामे तस दीयो, लोक माहे प्रगट गुण कीयो, ब्रह्मचारी निजस्थानक गयो ए ॥५८
एक दिन पुर पूरव पगार, ब्रह्मा रूप कीया मुख चार कमलासन कठे सूत्र धरे ए ॥५९
कोपीन करि कमडल पात्र, बह्म वेद भणे बहु छात्र, गात्ररूप लोक-रंजक ए ॥६०

राजा आदि पुरलोक, आव्या, अभव्यसेन आदे मुनि भाव्यां, ब्रह्मा देखी मन रीझिया ए ।।६१
रेवती राणी आगल ते कहीयो, ब्रह्मा प्रत्यक्ष पिते रहीयो, प्रेरी घणुं पण गई नही ए ।।६२
दूजे दिन पोलिते दक्षिण, महेशरूप कीयो रे विलक्षण, वैल वैठो गौरी साथे ए ।।६३
वरुण आदि आव्या पुरि-जन्न, चले नही रेवती मन्न, महेश देखी लोक मोहिया ए ।।६४
तीजे दिन पुर पश्चिम द्वार, विष्णु-गोपी सोलसह कुमार, गदा शंख-चक्र धरी ए ।।६५
विष्णु वन्दन वहु लोक ते जाइ, विस्मय पामी आव्यो ते राइ, कृष्ण मायाए लोक रजीया ए ।।६६
मूढलोक अचम्भो ते पाम्यां, घरे रही ते रेवती गमा, भामें पड़ा भोला लोक ए ।।६७
दिन चौथे उत्तर दिस जाण, समोसरण जिन करे वखाण, वार सभा पुरे दीसए ।।६८
लोक सहित भूपे जई वंद्या, अभव्यसेन मुनि आनद्या, जिन देखी लोक चमकीया ए ।।६९
रेवती रानी चिन्ते तिण वार, जिन चौवीस गया मोक्ष दुवार, ब्रह्मारूप ते को छैं नही ए ।।७०
होइ गया ते रुद्र इग्यार, नव केशव ते गति अनुसार, जिन आगम माहे सांभल्यो ए ।।७१
विद्याधर अथवा कोइ देव, कपट मायाए करावे सेव, देव दानव वैक्रिय करी ए ।।७२
चन्द्रप्रभ माया सहु छाडी, वृद्ध ब्रह्म तणु रूप माडी, कांपि काया रोग घणो ए ।।७३
मध्याह्न समय तस आंगण आवी, भूमि पडयो ते मूर्च्छा आवी, देखी रेवती हाहाकार करे ।।७४
शीतल जल घाली सीस नवाय, सावधानी करी ब्रह्म काय, प्रासुक आहार तेणें दीयो ए ।।७५
आहार लेय वमे ब्रह्मचार, रेवती सुश्रूषा करे तिणी वार, अग पखालि निशंकपणे ए ।।७६
तव क्षुल्लक प्रगटरूप लीयो, रेवती गुण प्रशंसा कीयो, धन धन तुभ अमूढगुण ए ।।७७
निज गुरुनी ते धरमवृद्धि दीधी, तुझ नामें मे जात्रा कीधी, गुण स्तवी ब्रह्मचार गयो ए ।।७८
धन धन राणी अग अमूढ, धन धन महिमा जस प्रौढ; अमूढव्रतें मन चल्यो नही ए ।।७९
वरुणराय तस रेवती राणी, जिन पूजे सुणे सद्-गुरुवाणी, राज रिद्धि सुख अनुभवी ए ।।८०
वरुणराय पाम्यो वैराग्य, दीक्षा लीधी करी सग त्याग, वसुकीर्त्ति राजा थापीयो ए ।।८१
रेवती राणी तप जप संजम सुद्धो पाले, मरण समाधि आप सभाले, माहेन्द्र स्वर्ग ते देव हुओ ए ।।८२
रेवती राणी संजम तप वलीउ, सम दम, तप वहु तेणे कीयो राग रोष मद परिहरो ए ।।८३
समकित वले टाले स्त्रीलिंग, ब्रह्म स्वर्गें हुओ देव उत्तुंग, महर्धिक सपदा लकर्यो ए ।।८४
मेरे नदीश्वर जात्रा जाय, जिनकेवली सदा पूजे पाय, धरम ध्याने सुखे रहे ए ।।८५

वस्तु छन्द

अमूढ अंग धरो, अमूढ अंग धरो
भवियण इणि पर देव तत्त्व गुरु परखीय मूर्ख पणूं तजि अनि निर्भर,
रेवती स्त्रीलिंग छेदीने, पंचमे स्वर्ग हुओ देव मनोहर।
अवर जीव वहु आदरो अमूढ अंग गुण धार, जिन-सेवक पदमो कहे ले पामे भव पार ।।८६

उपगूहन अंग। ढाल हेलिनी

उपगूहन पालो अंग, दोष अछादु व्रती तणु हेलि। कर्म-उदय होय दोप, न कीजे तेह घणुं हेलि ।।१
ढाकी पर अवगुण गुण वालो, पर उजला हेलि।
कुणे पाल्यो एह अग, तेह कथा हवे संभलो हेलि ।।२

सोरठ देश मझार, पाटलीपुर नयर घणी हेलि ।
जसोधर तस राय, सुषमा राणी तेह वणी हेलि ॥३

तस बहु कूखे पुत्र, सुवीर नामे उपज्यो हेलि । कर्म तणे प्रभाव सप्त विसन ते नीपज्यो हेलि ॥४

उत्तम कुल तस जात, मात तात तस रूवडा हेलि ।
कहिने न दीजे दोष, पाप कर्मे जीव बहु नडा हेलि ॥५
विसन वाहायो रे कुमार, राजरिद्धि मूकी नीसर्यो हेलि ।
सुवीर हुओ ते चोर अवर चोरे बहु परिवर्यो हेलि ॥६

गौडदेश इह जाण, ताम्रलिप्त नयरी धणी हेलि ।
जिनेन्द्रभवत्त नामे श्रेष्ठि, देव शास्त्र गुरु भक्ति घणी हेलि ॥७
सात क्षेत्र वेवे वित्त, जिन-भवन जिन-विम्ब तणा हेलि ।
चतुविधि सघने दान, ज्ञान त्रिस्तारे जिन भण्या हेलि ॥८
जिन गेह सातमी भूमि, प्रासाद कीयो श्री जिन तणो हेलि ।
श्री पार्श्व जिन प्रतिमा सुण्यो जस ते धणो हेलि ॥९

प्रतिमा ऊपर त्रण छत्र, दड वैडूर्य रत्न धर्यो हेलि ।
अमोलिक मणि तेजवन्त, सत सदा रक्षा करे हेलि ॥१०
तेह ज रत्न प्रभाव, पर देशें जस विस्तर्यो हेलि ।
साचो जे गुणवन्त, सत महिमा ले प्रसरे हेलि ॥११
सुवीर सुणी ते बात, निज साथी प्रति कहे ते हेलि ।
जेह ल्यावे ए रत्न, रत्न सहित जस विस्तरे हेलि ॥१२

सूर्पक कहे चोर, रत्न आणु इन्द्र सिर तणु हेलि ।
एह मणि कुण बात, क्षात बोलु छैं किसु घणु हेलि ॥१३
आदेश लेय ते चोर, गूढ ब्रह्म वेष कीयो हेलि ।
कोपीन धरी ऊ खड वस्त्र, जल पात्र निजकर लीयो हेलि ॥१४
तप करे बहु कष्ट, क्षीण अग कीयो घणु हेलि ।
सम दम बहु धरि नेम, जस विस्तार्यो तेणे आपणो हेलि ॥१५

देश नयर द्रोण ग्राम, विहार करतो ते आवीयो हेलि ।
ताम्रलिप्त पुर पास, गुण श्रेष्ठि भावीयो हेलि ॥१६
महिमा करो तस प्रौढ, साह निज घर आणीयो हेलि ।
जिहाँ छैं जिन रत्न बिम्ब, जात्रा करी गुण वखाणीयो हेलि ॥१७
रत्न देखी ते अमोल, ब्रह्म सत्तोष ते पामीयो हेलि ।
जिन सोनी देखे हेम, हृदय हरखे तेम पामीयो हेलि ॥१८

धूरत जीव बहु चिह्न, डभपणो कोई न वि लहे हेलि ।
गुणी जाणे गुणवत, साधर्मी भक्ति श्रेष्ठी वहे हेलि ॥१९
स्वामी रहो मुझ गेह, यत्न करो प्रतिमा तणु हेलि ।
बाल इच्छा विण ब्रह्म, कूड करे छल जोइ घणु हेलि ॥२०

एक दिवस ते श्रेष्ठि, व्यापार काजि ते संचर्यो हेलि ।
निज वनि कीयो प्रस्थान, सेवक जिन वहु परिवर्यो हेलि ॥२१
व्यापार तणें ते काज, घरि जन सहु व्यग्र देखीयो हेलि ।
मध्य रात्रे ब्रह्मचार, रत्न हरण समय पेखीयो हेलि ॥२२
अमोलिक लेई रत्न, सन्नि-सन्नि ब्रह्म चालीयो हेलि ।
तेज देखि कोट वाल चोर जाणी ते झालीयो हेलि ॥२३
नोसरी न सक्यो ते दुष्ट श्रेष्ठि पासे ते आवीयो हेलि ।
रक्ष-रक्ष तू नाथ, हाथ जोड़ी शरण भावीयो हेलि ॥२४
तव वोल्या ते साह, कोटवाल तम्हे साभलो हेलि ।
तम्हे कीउं अपराध, साधु संताप्यो अह्म तणो हेलि ॥२५
हुं जाऊ छुं व्यापार, सार रत्न अण्याव्यो अह्मो हेलि ।
मुझ तणुं सद्‌गुरु कांई, सताप्यो घणो तम्हे हेलि ॥२६
कोटवाल कहे सुणो देव, अम्हे तो गुरु जाण्यो नही हेलि ।
क्षमा करो अम्ह साथ, इम कही ते गयो सही हेलि ॥२७
निज रत्न लेइ साह, ब्रह्म एकान्त तिणे तेडीयो हेलि ।
कवण करम ते जोडीयों रे-रे पापी दुष्ट, हेलि ॥२८
तं अज्ञानी दुष्ट कपट करी मुझ वचीयो हेलि । ब्रह्मचारी लेय रूप, पाप करम ते सचीयो हेलि ॥२९
पामी जिन सासन्न, दुर्जन ने माया करे हेलि ।
ते वाहि पर आप, पाप भारे भव किम तरे हेलि ॥३०
निर्भ्रान्ति कीयो ते चोरि, जिन शासन थी निकालियो हेलि ।
वाहा अ आछादी दोष, उपगूहन अंग साह पालियो हेलि ॥३१
जिनेन्द्र भक्त शुभ साह, उच्छाह जिन शासन करी हेलि ।
ते पाम्यो शुभ स्थान, उपगूहन अंग धर्यो हेलि ॥३२
इम जाणि भव्य जीव, दोप म वोलो पर तणों हेलि ।
ढाकी पर-अवगुण, गुण ग्रहो ते पर गुण वणो हेलि ॥३३

अथ स्थितिकरण अंग

एक कथा रही इह, अवर वृत्तान्त हवे कहूँ हेलि ।
संस्थितिकरण जे अंग, श्री जिनशासनमें कह्यो हेलि ॥३४
सागरे अणगारे, धर्मथको चलतो देखी हेलि ।
जिम किम रहे निज ठाम, स्थितिकरण ते गुण देखी हेलि ॥३५
मगध देश मझार, राजग्रही नयरी भली हेलि ।
श्रेणिकनामे भूपाल, चेलणा राणी महासती हेलि ॥३६
धर्म अर्थ वली काम, त्रण पदारथ साधक हेलि ।
पाले समकित सार, जिन शासन आराधक हेलि ॥३७
तस घिहु जायो पुत्र, वारिषेण नामे रूवडु हेलि ।
रूप कला गुणवन्त, शील सदाचार हें भलो हेलि ॥३८

चौदसि करी उपवास, पोसह लेई ते वन गयो हेलि ।
रहियो कायोत्सर्ग धर्म ध्याने निश्चल मन रह्यो हेलि ।।३९
तिण समय एक साह, वसन्त क्रीडा करवा आवीयो हेलि ।
श्रीकीर्ति तस नारि, तेह कंठे हार सोहावीयो हेलि ।।४०
मगधसुन्दरि वेश्या हार, ते देखी मन क्षोभीयो हेलि ।
घर आवी ते नारि, विद्यू तस्कर ते लोभीयो हेलि ।।४१
मुझ तणो जोउ कत, तो हार आणीने मुझ देओ हेलि ।
सर्वकला ते निपुण, हार लेवा ते नीकल्यो हेलि ।।४२
परपच करी हर्यो हार, नयर माहे लेई नीसर्यो हेलि ।
तव दीठो कोटवाल, हार तेज ते विसार्यो हेलि ।।४३
तव नावो ते चोर, तलरक्षक केडे गयो हेलि ।
जिहा छै श्री वारिखेण, हार मूकी तिहा अदृश्य थयो हेलि ।।४४
कोटवाल तिणिवार, पद-आगलि हार देखीयो हेलि ।
विस्मय पाम्या घणु तेत्त, वारिषेण कुमर पेखीयो हेलि ।।४५
राय-आगल कही वात्त, वारिखेण तुम्ह नन्दन हेलि ।
राते हरी लयो हार, कायोत्सर्गे रहिउ जइ वन हेलि ।।४६
तव कोप्यो भूपाल, विचार न कीयो दुर्मति हेलि ।
कुमार-मारिवा काज, मातग मोकल्या भूपत्ति हेलि ।।४७
ते आव्या कुमरने पास, खडग घात कठे भेदीयो हेलि ।
कुमर-पुण्य-प्रभाव, पुष्पमाल खडग कीयो हेलि ।।४८
तब हूओ जय जयकार, सुर-असुर पुष्पवृष्टि करे हेलि ।
वाजे दुदुभि-नाद, साधु तणी महिमा हुई हेलि ।।४९
साचो पुण्य प्रभाव, समुद्र ते गोष्पद थाइ हेलि ।
अग्नि जल, विष अमृत, शत्रु मित्र सम थाइ हेलि ।।५०
राजा सुणी तब बात्त, परिवार-सहित्त ते आवीयो हेलि ।
प्रशसा करे घणु भूप, धन धन्य तुम्ह गुण भावीयो हेलि ।।४१
धन्य धन्य तुझ मन्न, पुण्य प्रभाव देवे कीयो हेलि ।
विरासी ओ हुँ अ मूढ, विचार विना मिं दड दीयो हेलि ।।५२
जे जे मूढा जीव, काज विमासी करे नही हेलि ।
अर्थ हानि पश्चात्ताप, अपजस ते पामे बहु हेलि ।।५३
राय दीयो अभयदान, तब ते चोर प्रकट थयो हेलि ।
स्वामी हर्यो ए मे हार, इहा मूकी हु अदृश्य थयो हेलि ।।५४
तब ते हूओ परभात, भूप कहे कुमर सुणो हेलि ।
हवे आवो निज गेह, राज-सुख भोगवो घणो हेलि ।।५५
तब बोल्यो ते कुमार, राज सुख मुझ छे घणु हेलि ।
अहार लेऊं कर-पात्र, दीक्षा-सहित्त मे नियमु हेलि ।।५६

सहुज क्षमावी स्वजन्न, सुरदेव गुरु वंदिया हेलि ।
छांडी परिग्रह भार, संजम लेइ आनंदिया हेलि ॥५७
वारिषेण हुआ मुनीश, तप जप करे ते ऊजलो हेलि ।
ध्यान अध्ययन अभ्यास, ग्रास प्रासुक ले निर्मलो हेलि ॥५८
पलासकूट एह ग्राम, श्रेणिक मंत्री अग्निमित्र हेलि ।
तेह पुत्र पुष्पडाल, सोमिल्ला नारी तणो पती हेलि ॥५९
वारिषेण एक वार, आव्यो पुष्पडाल घरे हेलि ।
प्रासुक दीयो तेणे आहार, सोल गुण प्रकट करि हेलि ॥६०
मुनि वोलावा ते जाय, वालमित्र मुनिवर केडे हेलि ।
जल-कुण्डी लेइ हाथ, नगर वाहर चाले जिम हेलि ॥६१
सरोवर देखाडे मित्र, आगे क्रीडा करता इहा हेलि ।
वली देखाडे अत्र वृक्ष, सुख रमता आपणें इहां हेलि ॥६२
पाछो वलवा काज, भपड्यो मनोरथ करे हेलि ।
पुष्पडाल ते विप्र, सोमिल्ला नारी सू स्नेह धरे हेलि ॥६३
मुनि चाले समभाव, न वि तेडि न वि रहो करे हेलि ।
आव्या निज गुरु पासि, नमोस्तु करी आगलि रहे हेलि ॥६४
परसंस्यो ते पुष्पडाल, वाल मित्र गुण स्नेह धरे हेलि ।
दीक्षा देवारी गुरुपासि, उल्हास विना लाजि करी हेलि ॥६५
लाज काजि भय भाव धरे, धर्म काज कीजे सदा हेलि ।
पुष्पडाल तिणि वार, भार संजम लीयो हेलि ॥६६
तप जप करे मुनीश, ध्यान ज्ञान-अभ्यास करे हेलि ।
द्रव्य दीक्षा पाले चंग, अन्तरंग सोमिल्ला साथे धरे हेलि ॥६७
वार वरस पूरा होइ वारिषेण गुरु वीनव्या हेलि ।
सद्गुरु आज्ञा दीध, तीर्थ जात्रा करते परठव्या हेलि ॥६८
वारिषेण पुष्पडाल, दोय मुनि विहार कर्म करे हेलि ।
आव्या समवसरण श्रीवीर, वंद्या भाव धरी हेलि ॥६९
धन धन्य तुम जिन स्वामी, काम वालापणें ते जीतियो हेलि ।
टाली करम सवल, केवल ज्ञानें गुण देखीयो हेलि ॥७०
स्तवी वंदी वर्धमान, पुण्य उपार्जो वारिषेण हेलि ॥
वैठा मुनिवर कोष्ठ, धरम सुणे तत्क्षण हेलि ॥७१
इन्द्र-पूजित पद-पद्म, गन्धर्व देव स्तवे घणु हेलि ।
गीत नृत्य वाजित्र, सराग शब्द मुनि सुण्यां हेलि ॥७२
तव चिंते पुष्पडाल, वाला-विरह दुःख उपनो हेलि ।
त्यजवा संजम भार, विकार मुनि मनि नीपनों हेलि ॥७३
विचक्षण वारिषेण, निज मित्र मन जाणीयो हेलि ।
ल्याव्यो नयर मझार, चेलणा राणी घरि आणीयो हेलि ॥७४

आवता देखी मुनि अकाल, चतुर चेलणा परीक्षा करे हेलि।
वीतराग सराग, आसनं, मुनि ने धर्या हेलि ॥७५
वैरागे आसन मुनि बैठा, चेलणा आयी नमोस्तु करे हेलि।
गुरु देइ धर्म वृद्धि, वारिषेण बली उच्चरे हेलि ॥७६
चेलणा सुणो मुझ बात, अन्त पुर आणो मुझ तणो हेलि।
धरीय सयल सिणगार, नारि बत्रीसे रूप घणों हेलि ॥७७
आवी ते सहु बाल, प्रणाम करी आगलि रही हेलि।
देखाडी पुष्पडाल, विशाल वाणी गुरु कहे हेलि ॥७८
मित्र सुणो मुझ बात, युवराज तम्हे भोगवो हेलि।
सहित सकल परिवार, सार सौख्य तमे जोगवो हेलि ॥७९
तव लाज्यो पुष्पडाल, एह वी रिद्धि गुरु परिहरी हेलि।
अपछर-सरिखी एह वी नारि, सोय संपदा न वि अनुसरी हेलि ॥८०
अल्प रिद्धि मुझ होइ, एक नारी नेत्रकाणी हेलि।
तेह साथे हूँ धरूँ मोह, धिग ते रागी प्राणीयो हेलि ॥८१
हूँ अज्ञानी मूढ, प्रौढ बाला स्नेह जडो ले हेलि।
दु ख देखे अपार, झूरि-झूरि घणू रडोले हेलि ॥८२
तव ते कहे पुष्पडाल, तू धन धन्य गुरु निर्मलो हेलि।
बार वरस मे कीयो कष्ट, शल्य-सहित तप कसमलू हेलि ॥८३
तब गुरु कहे सुणो वच्छ, दु.ख जणित-मोह भजू हेलि।
करम तणें विपाक, भाव विषम जीव ऊपजे हेलि ॥८४
जिन आगम अनुसार, प्रायश्चित्त गुरु आपीयो हेलि।
विनय भक्ति-सहित व्रत शुद्धि मन थापीयो हेलि ॥८५
आवी बनहिं मझार, तप जप करे ते निर्मलो हेलि।
सस्थितिकरण अंगसार, वारिषेण कीउ उज्जलो हेलि ॥८६

दोहा

पुष्पडाल व्रत थापिओ, वारिषेण मुनिराय। धर्म-स्थितिकरण तेणें की धन्य दे गुणराय ॥१
नागश्री नारी निर्मली, प्रति बोधी निज कत। व्रत स्थितिकरण तिणे कीयो, पाल्यो धर्म महत ॥२
तेह कथा तुमे जाणज्यो, जबु कुमार चरित्र। भवदेव भावदेव तणी, विस्तार-सहित पवित्र ॥३
धर्म स्थितिकरण जेणे कियो, साहाय करी गुण धार।
सुर नर सुख ते भोगवे, ते पाम्या भव-पार ॥४

अथ वात्सल्य अंग। अथ ढाल

वाच्छल्ल अग हवे कहीइ, साधर्मी तणो विनय वहीइ, लहीइ शासन धर्म ॥१
जती व्रती साधर्मी जेह, तेह साथे धरो शुभ स्नेह, जिम प्रीति गोवच्छ तेह ॥२
साधर्मी सू म करो रोस, कहीने न वि दीजे दोस, सतोष धरो सहु साथे ॥३
वाच्छल्ल अग केणि पाल्यो जिनशासन माहे आल्यो, विष्णु वृत्तान्त साभल्यो ॥४

भरत क्षेत्र मझार अवन्ती देश, उज्जेणी पुरी श्री ब्रह्म नरेश, श्रीमती रानी तणु ईशा ।।५
बलि वृहस्पति नाम प्रधान, प्रल्हाद, नमुचि अभिधान, ए चार मत्री राजान ।।६
राजा छै जिनधर्मी सार, मिथ्यादृष्टि मत्री गमार, सर्प व्याघ्र वदन जिम फार ।।७
नगर तणा उद्यान मंझार, आव्या अकम्पन गुणधार, सात सै मुनि परिवार ।।८
सहि गुरु कहे ते ज्ञान भण्डार, सघाष्टक सहु सुणो भवतार, मौनि रहिज्यो इणि वार ।।९
कवण साथे बोलो जे सार, तो होसे सही सघार, गुरु आज्ञा मुनि धार ।।१०
गुरु-आज्ञा माने नही जेइ, कुत्सित शिष्य जाणो तमें तेह, जनक पीडा कुमित्र ।।११
नयर जन गुरु वदन जाइ, देखी पूछे मत्री राइ, कवण काजे पुर जन्न ।।१२
वलतु बोले मत्री ते वाणि, स्वामीने गुरु आव्या जाणि, निर्ग्रन्थ गुरु गुण खानि ।।१३
तव राजाने आपनो भाव, गुरु वदूं भव-सायर नाव, सजन सहित भूप चाल्यो ।।१४
केता रहीया ऊभा लेइ ध्यान, केता बैठा मन शुभ स्थान, निश्चल मेरु-समान ।।१५
गुरु देखी हरख्यो भूपाल, प्रत्येक प्रत्येक वंद्या गुणमाल, आसीस न कही तिणि वार ।।१६
वदी स्तवी जाइ तिणी चार, तब ते मत्री करे अहकार, जाणे मुनि नहि काई विचार ।।१७
आवतो साम्हो दीठो मुनि ऐक, मत्री न जाणे काइ विवेक, उदर पूरी आव्यो विशेष ।।१८
तब मुनि वोल्यो स्याद्वाद, वाद करीओ तास्यो वाद, मंत्री पाम्या विषवाद ।।१९
मुनि आवी गुरु बद्या जैवन्त, वाद तणु कहियो वृत्तान्त, रुडु न कीयो वच्छसंभ ।।२०
जइ रहो तमे वादने ठाम, तो टले उपसर्ग उद्दाम, सयल मुनि गुणग्राम ।।२१
श्रुतसागर तब पाछो जाय, वाद स्थाने रही निश्चल थाय, मेरु समी निज काय ।।२२
तब आव्या रात्रे परधान, मिथ्यादृष्टि ते अज्ञान, मूढ धरे बहु मान ।।२३
ऊभो रहियो ते मुनिवर देखी, क्रोध धरे ते अवरउ वेषी, तीखी खडग तणी धार ।।२४
मुनि मारेवा मत्री चार, खडग घात दीया एकी वार, मुनि कठे दु.खकार ।।२५
मुनिवर स्वामी पुण्य-प्रभावे, आसन कपे पुर देव ते आवे, सार्या काज गुण भावे ।।२६
ऊर्ध्वं हस्त खडग मत्री थम्या, प्रभात समय देखी लोक अचम्या, दुर्वचने मत्रो क्षोभ्या ।।२७
समंध सुणि आव्यो सिहां राय, मंत्री देखि कोप तसथाम, प्रणमी रया मुनि पाय ।।२८
भूप कहे मत्री तमो इष्ट, कांइ अपराध कीयो कनिष्ट, हवे करू निज राज भ्रष्ट ।।२९
देव खमी मुकाव्या मत्री, अधम विप्र मारे किम क्षत्री, शत्रु पणे कृपा ऊपजी ।।३०
सांचा नर जे होइ साध, ते क्षमे पर-तणु अपराध, केहने करै नही वाध ।।२१
अग्नि दहन्ते अगर हरिचन्दन, सुगन्धवास करे मन नन्दन, तिम सज्जन सहतो वेदन ।।३२
अ विधि पुरी वैठा गुणधार, सुर नर वदि करे जयकार, धर्म वृद्धि कही भवतार ।।३३
भूपे मत्री दंड वहु दीयो, निर्भंछन विडंबन कीयो, देश छेह करी धन लियो ।।३४
तुरत पाप लागो परधान, राजभ्रष्ट थया अपमान, पाम्या दु ख निधान ।।३५
मुनिवर स्वामी क्षमा भडार, परीषह जीती सोहता संघ मझार, घर गया जन परिवार ।।३६
कुरुजांगल नामे शुभ देश, हस्तिनगर महापद्म नरेश, लक्ष्मीमती नारी जीवेश ।।३७
पुत्र दोय हुअ पद्म विष्णु नाम, रूप कला यौवन गुणग्राम, अनुभवे सुख उद्दाम ।।३८
महापद्म पाम्यो वैराग, पद्म राज थापी कर्यो संग त्याग, सांचो संत शिव राग ।।३९
वन जाय वंद्या श्रुत मुनिसागर, दीक्षा लीधी महिमा आगर, सहित विष्णु कुमार ।।४०

गजपुर आव्या ते अपराधी, मंत्री पदम सेवा आराधी, परधान पदवी तिणे साधी ।।४१
पद्म भूप सभा एक वार, झाख्यु देखी पूछे मंत्री चार, कवण चिंता मन अपार ।।४२
भूप कहे सुणो परधान, चिंता कारण दुःख निदान, वैरी धरे एक मान ।।४३
कुम्भ नयर सिंहरथ भूपाल, गढ तणु बल पामी विकराल, माने नही आज्ञा विशाल ।।४४
आदेश लेय चाल्या परधान,हय गय रथ पायक सधान, परपचे गया अरि स्थान ।।४५
बुद्धि वलें वैरी जीति आव्या, सिंहरथ आणि आण मनाव्या, पद्म मने मंत्री भाव्या ।।४६
पद्म भूप कहे हवे हू तुष्ट, मंत्रो मांगो मन अभीष्ट, बलि कहे वलतु विशिष्ट ।।४७
स्वामी वर भडार ते थापो, ज्यारे मागू त्यारे मुझ आपो, इम कही बोल जस व्यापो ।।४८
हस्तिनागनयर तणा तेणे वन्न, सघ सु आव्या सूरि अकपन्न, जाणि क्षोम्यो मंत्री मन्न ।।४९
मुझ तणा छै रिपुनी एह, मान भग अम्ह कीधो जेह, हवे दुःख देन बहु तेह ।।५०
वर माग्यो आवि भूप पासे, सात दिन रहो नारी वासे, राज देय सारो मुझ काजे ।।५१
पद्म आप्यो वरदान, राज करे ते बलि परधान; राणीवासे रहे राजान ।।५२
वलि मंत्री उपज्यो कोप, मुनि तणो हवे करु हु लोप, ऊपर कीयो मडप रोप ।।५३
मुनि पाषल कीधी वहुवाडि, चरम रोम घाल्या घणा हाड, कलेवर कीधी तस आड ।।५४
मुनि मारिवा तणी ते काज, नरमेध मार्यो तिणे राज, वैरीतणो करे काज ।।५५
अग्नि धूम आकाशे व्याप्यो, यती वर निश्चल काउसग्ग थाप्यो, जिन ध्यान मन व्याप्यो ।।५६
अनशन लीधी दोइ प्रकार, जो जीवसुं तो लेसुं आहार, न हि तो प्राण परिहार ।।५७
तिणि अवसरे मथुरा नयर, सागरचन्द्र छे ते मुनिवर, तिहा आव्या वसति दुआर ।।५८
कंपतो देखी श्रवण नक्षत्रे, निमित्त जोइ ते अवधि नेत्रे, खेद करे मध्य रात्रे ।।५९
तब पूछे ते ब्रह्म पुष्पदत, खेद किस्युं करो भगवन्त, गुरु कहे सुणो वच्छ तुरन्त ।।६०
हस्तिनाग नयर उद्यान, सात सै मुनिवर छै गुणभान, उपसर्ग करे बलि परधान ।।६१
कवण परे उपसर्ग ति जाय, ते स्वामी मुझ करो उपाय, विद्याबल मुझ थाय ।।६२
गुरु कहे गिरि धरणीभूषण, तिहां मुनि रह्यो विष्णु महन्त, विक्रिया रिद्धि शुभ लक्षण ।।६३
तब वेगे चाल्यो ब्रह्मचार, वन जाय वद्या विष्णुकुमार, भेद कह्यो मुनि सघार ।।६४
उत्पन्नी न जाणें वैक्रिय रिद्धी विष्णु मुनि परीक्षा तस कीधी, कर पूरी हुए मन शुद्धी ।।६४
राज प्रते चाल्यो विष्णु कुमार, रात समय आव्या घर द्वार पद्मे कीधो नमस्कार ।।६६
विष्णु कहे पद्म तू परम, काइ अपराध माडयो नीच करम, न जाणो स्वामी हु मर्म ।।६७
पद्म भूप कहे सुनो मुझ वाणी, वरदान आप्यो मे अजाणी, हवे कसू करू तुम वाणी ।।६८
तब विष्णु विप्रवेष लीयो, वैक्रिय वामन रूप ते कीयो, आवी आसीस बलिने दीयो ।।६९
वलि राज बोलै तस वाच, जे मागो ते आपु द्विज राज, मन वाछित करो साच ।।७०
वामन कहे सुणो भूप तुम्हो, त्रण कदम भूमि मागू अम्हो, अवर न जाचू अम्हो ।।७१
अवर हसि बोल्यो तिन वार, एहवो स्यु जाच्यो वृममध गमार मागो अर्थ भडार ।।७२
उदक-सहित वाणी कहि थापी, त्रण कदम भूमि तस आपी, सर्वसाखे परतापी ।।७३
वामन वैक्रिय देह तस कीधो, एक चरण मेरु मस्तके दीधो, मानुषोत्तर दूजे पाय लीधो ।।७४
त्रीजो पद ऊचो करि उद्यम, तोली रहियो ते मागे ठाम, बलि पूठी दीयो ताम ।।७५
तब बलि खेद खिन्न बहु कीयो, स्वजन सहित मुनि शरण ते लीयो, तव अभयदान सहु दीयो ।।७६

सकल मुनि टाल्यो उपसर्ग, जय जयकार करे सुरवर्ग, गर्भ वा अण उतारे अर्घ ॥७७
प्रगट थया मुनि विष्णुकुमार, क्षमी क्षवामी सहु परिवार, कीयो वात्सल्य गुणधार ॥७८
सात सौ मुनिवर कीधो रक्षण, जाय गुरु वद्या देय प्रदक्षिण, प्रायश्चित्त लीयो व्रत ततक्षण ॥७९

दोहा

वात्सल्य अंग ते पालीयो, विष्णु कुमार भवतार। ध्यान धरी कर्म निर्जरी, पहुँचा मोक्ष दुआर ॥१
वज्रकरण भूप तणो वाच्छल्ल कीयो श्रीराम। कुल देश भूषण तणो, टाल्यो उपसर्ग उछाम ॥२
जलता मुनिवर राखीया, कन्या सहित वर्नाहि मझार।
सुधि जाता सीता तणी, वाच्छल्ल हनुमत कुमार ॥३
तेह कथा तुम्हे जाणज्यो, पदम-चरित्र मझार। अवर जीय वहु आदर्यो, ते किम कहियो जाय ॥४
साधर्मी श्रावक मुनि तणो, वाच्छल्ल करे जव जेह।
सुर नर सुख ते भोगवी, पामे शिव-सुख तेह ॥५
जती व्रती गुणि जीवसू, रोष धरे जे मूढ। मत्सर पणे माने नही, ते दुख देखे प्रौढ ॥६
इम जाणिय भवियण सदा, वात्सल्य करो गुणधार। जिन सेवक पदमो कहे, ते पामे भवपार ॥७

आठमो प्रभावना अंग। ढाल हिंडोलानी

प्रभावना अंग कीजिए, जिन शासन प्रभाव।
प्रासाद प्रतिमा प्रति प्रतिष्ठा करी, हिंडोल डारे ज्ञान, दान तप भाव ॥१
प्रभावना अंग केणें कीयो, कथा कहूँ अव तेह।
वज्रकुमार मुनि तणी, हिंडोलडा रे, प्रसिद्ध कीधो गुण जेह ॥२
हस्तिनाग नयर भलो, वलिनामे भूपाल।
गरुड पुरोहित छै तेह तणो, हिंडोलड़ा रे, सोमदत्त पुत्र विशाल ॥३
वाद शास्त्र ते वहु पठ्यो, चाल्यो द्विज सोमदत्त।
अहिछत्र नयर तें आवीयो, हिंडोलडा रे सुभूति मित्र विद्यामत्त ॥४
परहुणावार मामे कीयो, सोमदत्त कहे सुणो वात।
दुर्मुख भूप मुझ मेलवो, हिंडोलडा रे, जिम पामू बहु ख्यात ॥५
विद्यामदे ते मातुल, माने नही तस वाणि,
उपाय रची भूप भेटीयो हिंडोलडा रे, आपणपे वुद्धि जाणि ॥६
वाद करी ते वुद्धिवले, राजसभा मझार।
सस्कृत वचन ते उच्चरी, हिंडोलडा रे, अवर मनाव्या द्विज हार ॥७
विद्वान् सोमदत्त जाणीइ, राय थाप्यो परधान।
साचु ज्ञान गुण अति वले, हिंडोलडा रे, विप्र पाम्यो वहुमान ॥८
सोमदत्त तिणे मातुले, सुभूति तिणी वार।
जज्ञदत्ता कन्या रुआडी, हिंडोलडा रे, परिणावी तिणि सार ॥९
सोमदत्त ते सुखे रहे, नारी उपनो ते गर्भ।
डोहलो हुओ आम्रफल तणो, हिंडोलडा रे, वरषा काले ते दुर्लभ ॥१०
आम्रफल जोवा चालीयो, सोमदत्त वनह मझार।
सफल आवो एक देखीओ, हिंडोलडा रे, विस्मय पाम्यो अपार ॥११

आम्र तरु तले रहिया, सुमित्र सूरी योगवन्त ।
ऋद्धि प्रभावे तरु फल्यो, हिंडोलडा रे, निज मन वाछे द्विज सन्त ॥१२
आम्रफल लेइ मोकल्या, सेवक साथे निजगेह ।
आम्र आस्वादी ते कामिनी, हिंडोलडा रे, सतोष पामी तब देह ॥१३
सोमदत्त वैराग हुओ, अथिर जाण्यो ससार ।
सग छाडी गुरु वीनवी, हिंडोलडा रे, लीधू ते सयम भार ॥१४
ध्यान अध्ययन तप आचरे, धर्यो आतापनयोग ।
नाभिगिरि मस्तक रूअडो, हिंडोलडा रे, कायोत्सर्ग लीयो ध्यान भोग ॥१५
जज्ञदत्ताइ पुत्र जाइनुं सबध कीउ गुरु भ्रांत ।
आदी मुनिपद ऊपरे, हिंडोलडा रे, बाल मूकी कहे बात ॥१६
ए पुत्र कत तुम्ह तणु, माहरे नथी काइ काज ।
रोस धरी धरि ते गई, हिंडोलडा रे, नारी निर्गुण नही लाज ॥१७
तिणे समय रूपाचली अमरावती पुरी ईश ।
दिवाकर देव पुरन्दर, हिंडोलडा रे, सहोदर घर विद्वेष ॥१८
पुरन्दरा विद्यावले, जुद्ध कीये ज्येष्ठ भ्राति साथ ।
नयर मूकी नीसरी गयो, हिंडोलडा रे, दिवाकर दिवाखग नाथ ॥१९
यात्रा करतो आवीयो, मुनि भेटचा सोमदत्त,
बालक देखि अर्चभियो, हिंडोलडा रे, वज्र कुमार नाम दीयो सत्य ॥२०
विद्याधर इम वोलीयो, निजनारी सु सार ।
ए बालक, तुम्हे लेयो, हिंडोलडा रे, रूप कला गुणधार ॥२१
कनक नयर ते आवीयो, विमल वाहन करे राज ।
ते सालो ते खगतणो, हिंडोलडा रे, सुखे रहि करे राज ॥२२
अनुक्रमे पुत्र मोटो थयो, विद्या साधी तिण वार ।
रूप कला यौवन भरे, हिंडोलडा रे, सोहे ते वज्रकुमार ॥२३
गरुड वेग विद्याधर, गर्गावती तस नार ।
बस तणी कूखे उपनी, हिंडोलडा रे, पवन वेग कुमार ॥३४
ह्रीमन्त भूधर, मस्तके, विद्या साधी ते बाल ।
प्रज्ञप्ती नामे भली, हिंडोलडा रे, मत्र जपे सकुमाल ॥२५
बदरी कटक वाइ पर्युं, कन्या नयन मझारं ।
चित्त चले नेत्र गले, हिंडोलडा रे, पावे नही नमोकार ॥२६
रमतो कुमार ते आवीयो, ते कन्या तिणि पास ।
विज्ञानी शल्य जाणीउ, हिंडोलडा रे, कंटक दीयो निकास ॥२७
कन्या ध्यान जव लागीयो, विद्या हुई तस सिद्ध ।
कन्या कहे कुमार धन्य, हिंडोलडा रे, तुम्ह पसाय विद्या रिद्ध ॥२८
कन्या कहे अवर वरू नही, तुं मुझ हुजे भरतार ।
भाव जाणी महोच्छव करी, हिंडोलड़ा रे, कन्या वरी वज्रकुमार ॥२९

विद्या बले ते चालीयो, जुद्ध करवा तिणि काज।
काको जीति राज लीयो, हिंडोलड़ा रे, तात थापु निज राज ॥३०
राय राणी सु रगे रहे, बहु अर सहुँ परिवार।
जया राणी इच्छा करे, हिंडोलडा रे, देखी ते वज्रकुमार ॥३१
ए छता मुझ पुत्रने, राज तणु' नही भार।
इम जाणिय रोषज धरे, हिंडोलडा रे, धिग् धिग् लोभ असार ॥३२
कवण पुत्र ए जन्मीयो, कहि ने करे संताप।
कुमर सुणी विस्मय हुओ, हिंडोलडा रे, पूछयो ते निज बाप ॥३३
तात मुझ साची कहो, कहि तणो पुत्र सत।
नहिं तो हुँ जीमू नही, हिंडोलडा रे, ताते कहो रे वृत्तान्त ॥३४
सयल सबंध साभली, चाल्यो वज्रकुमार।
निज तात गुरु वदिवा, हिडोलड़ा रे, साथे खग-परिवार ॥३५
मथुरा नगरी आवीया, क्षत्रिय गुफा मझार।
सोमदत्त गुरु वदीया, हिंडोलड़ा रे, बैठा तिहां वज्रकुमार ॥३६
धर्म कथा रस सांमली, पूछ्यो निज वृत्तान्त।
सकल सम्बन्ध ते गुरु कयो, हिंडोलड़ा रे, जनम आदि पर्यन्त ॥३७
सह गुरु कहे वच्छ तमे लेउ ते संयम-भार।
गुरु वचनें संग छाडियो, हिडोलड़ा रे, दीक्षा लीधी वज्रकुमार ॥३८
अवर सजन बहु घरि गया, मुनि करे शास्त्र-अभ्यास।
सम दमे संजम आचरे हिंडोलड़ा रे, तप जप करे गुरु पास ॥३९
मथुरा नयरी तणो धणी, पूत गन्ध भूप नाम।
अचिणा (उर्मिला) राणी तस तणी, हिंडोलड़ा रे, दान पूजा गुण ग्राम ॥४०
सागर दत्त श्रेष्ठी वसे, समुद्र दत्ता नारी नाम।
दरिद्रा नामें पुत्री हवी, हिंडोलड़ा रे, दारिद्र दुख तणो ठाम ॥४१
पुत्री जब उरे अपनी, मरण पाम्यो तप बाप।
धनसू' कुटुम्ब क्षय गयो, हिंडोलड़ा रे, धिग धिग कर्म कुपाप ॥४२
दु:ख देखीतें वृद्धि थई, कुत्सितई लेवे आहार।
क्षुधा पीड़ी पर धरि भमे, हिंडोलडा रे, दीन दारिद्र कुमारि ॥४३
दोय मुनीश्वर संचर्या, लघु मुनि कहे तिणी वार।
ए वर की कष्टे जीवे, हिंडोलडा रे, धिग धिग पाप अपार ॥४४
ज्येष्ठ मुनि तत्र बोलियो, वच्छ सुणो मुझ वात।
पट्टराणी होसे भूपतणी, हिंडोलडा रे, पामिसे ए बहु ख्यात ॥४५
भिक्षा काजे वन्नक भमे धर्मश्री तस नाम।
मुनि-वयण निश्चय करी, हिंडोलडा रे, ते लेइ गयो निज ठाम ॥४६
अन्न पान मिष्ट देई, पुष्टि पमाडी ते बाल।
वस्त्र आभूषण आपीया, हिंडोलडा रे, यौवन थई गुणमाल ॥४७

हरषि हिंडोले हिचली, वसन्त क्रीडा चैत्र मास ।
पूतिगन्ध भूपे दीठी, हिंडोलडा रे, उपनो राग-अभिलाष ॥४८
भूपे मत्री मोकल्यो, कन्या जाची निजकाज ।
बुद्ध कहे भूपति सुणो, हिंडोलडा रे, जो धर्म लेय बुद्धराज ॥४९
तो कन्या तुम्हने देऊ, न ही तो करो संतोष ।
मूढ भूपे बोल मानीयो, हिंडोलड़ा रे, अर्थी न देखे दोष ॥५०
चिन्तामणि तिणे परिहरी, राय लीयो तब काच ।
सत्य धर्म जिन-भाषित्त, हिंडोलडा रे, किहा मन बौद्ध असाच ॥५१
महोच्छव करि कन्या वरी, राय गयो निज घरि सार ।
पट्टराणी पद थापियो, हिंडोलडा रे, आपी स्त्री-सिणगार ॥५२
अचिला राणी भूप तणी, सदा करे जिन धर्म ।
नन्दीश्वर अष्ट दिन, हिंडोलडा रे रथ जात्रा करे परम ॥५३
आषाढ कार्तिक फागुण, वरस व्रते त्रण वार ।
रथ ऊपर जिन विम्ब धरि, हिंडोलडा रे, महोच्छव करे गुणधार ॥५४
अचिला तणो रथ देखी ने, बुद्धि राणी करे कोप ।
प्रथम रथ चाले मुझ तणो, हिंडोलडा रे, देव छै सारी बुद्धदेव ॥५५
अचिला कहे पहिलो मुझ तणु, जो चाले रथ सार ।
तब ते करूँ हुँ पारणो, हिंडोलडा रे, नही तो नियम-आहार ॥५६
क्षत्रिय गुफा जाइ वदिया, मुनिवर श्री सोमदत्त ।
अनशन मागे निर्मलो, हिंडोलड़ा रे, मुनि पूछ्यो सयल वृत्तान्त ॥५७
तिणि अवसरि गुरु वन्दिवा, आव्या दिवाकर देव ।
वज्रकुमार भणे, खग सुणो, हिंडोलडा रे, अचिला सहाय करो देव ॥५८
तब खेचर विद्याबले, बुद्धि-रथ कीयो ध्वस ।
मिथ्याती मान चूरीयो, हिंडोलडा रे, तिमिर उगे जिम हंस ॥५९
रथ चाल्यो अचिला तणो, तब हुओं जय जयकार ।
जिन बिम्ब रथ आगे हुओ, हिंडोलडा रे, गीत वाजे अपार ॥६०
जिन शासन प्रभावना, अचिला जस विस्तार ।
राय राणी ते जैन हुआ, हिंडोलडा रे जिन धर्म करे भवतार ॥६१
प्रत्यक्ष महिमा देखी ने, लोक करे जिन धर्म ।
मिथ्यात-विष सहु परिहरी, हिंडोलड़ा रे, निश्चय आणी मत परम ॥६२
वज्रकुमार ते इणी परे, कीयो प्रभावना अग ।
सहाय कीयो अचिला तणो, हिंडोलडा रे दिवाकर देव प्रसग ॥६३
निज शक्ति प्रगट करी, शासन करे जे उद्धार ।
सुर नर वर पदवी लही, हिंडोलडा रे, ते पामे भव-पार ॥६४
जिणे किणे उपाय करी, शासन करी प्रभाव ।
समकित अग सुद्धो धर्यो, हिंडोलड़ा रे, ते होई भवोदकि-पार ॥६५

शासन दोष जे ऊचरे, जिन-महिमा करे लोप ।
ते मूढ मिथ्यात्वीआ, हिंडोलडा रे, भव-भव लहे कष्ट कूप ॥६६
जिणे जिणें जीवें कीयो, माहातम जिन शासन ।
संसार-दुख दूरे करी, ते पाम्या मोक्ष भविजन हिंडोलड़ा रे ॥६७

वस्तु छन्द

प्रभावना अंग, प्रभावना अंग धारो भवियण अनुदिन ।
वज्रकुमार मुनिश्वर कीयो, शासन विलास तणों मनोहर ।
सुर नर सुख ते भोग वै अनुक्रमे पामे शिव निर्भर ॥
आठो अग करि अति बलो, पाले जे समकित सार ।
जिन-सेवक पदमो कहे, धन धान्य ते अवतार ॥६८

अथ ढाल नरेसुआनी

समकित गुण इम वणवीए, नरेसुआ, प्रतिमा सुणो हवे भेद ।
दर्शन नामे निर्मली ए, नरेसुआ, जिम होय कर्म-तणो छेद ॥१
सात विसन दूरे टाली ए, नरेसुआ, पालीये अष्ट मूल गुण ।
श्रावक सर्वक्रिया मांहीए, नरेसुआ, दर्शन धारो निपुण ॥२
द्यूत मांस सुरा पान ए, नरेसुआ, वेश्या संग आखेट ।
चोरी पर नारी सेवा ए, नरेसुआ, सप्त विसन पाप मूल ॥३
जूआ खेले योगी थया ए, नरेसुआ, पाडव हुआ राज्य-भ्रष्ट ।
द्यूत व्यसन दुख देइ ए, नरेसुआ, प्रथम नरकनें कष्ट ॥४
मास-लोलुयी पाप करे ए, नरेसुआ, जीव तणां सघार ।
वक राजा ए बापडो ए, नरेसुआ, दुर्गति सहे दुख भार ॥५
मद्यपान मति विह्वल ए, नरेसुआ, न वि जाणे हेया हेय ।
नयर सुं यादव क्षय गयो ए, नरेसुआ, मित पामी मद्य एह ॥६
वेश्या संगे पाप उपजे ए, नरेसुआ, अर्थ-हानि, जाय लाज ।
चारुदत्त चचल पणे ए, नरेसुआ, हार्यो निजघर-काज ॥७
आहेडे आरम्भ घणो ए, नरेसुआ, पशु अ तणो विणास ।
ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती ए, नरेसुआ, सातमी नरक-निवास ॥८
चोरी व्यसन पातक घणा ए, नरेसुआ, विहू लहे पर वध ।
शिवभूति तापस आदि ए, नरेसुआ, पाम्यो दुख तणो कंध ॥९
परनारी दूरे तजो ए, नरेसुआ, तेहथी होइ महापाप ।
रावण धवल श्रेष्ठि ए, नरेसुआ, सह्या ते नरक-सताप ॥१०
द्यूत व्यसन पहिलो नरक ए, नरेसुआ, मास बीजो श्वभ्र जाण ।
मद्यपान तीजी नरक ए, नरेसुआ, वेश्या-संगे चौथी जाण ॥११
आहेडे पांचमी नरक ए, नरेसुआ, चोरी सेवि छठ्ठी जाय ।
पर नारीए सातमी नरक ए, नरेसुआ, पचविध दुखने खान ॥१२

सप्त व्यसन-सम सात नरक ए, नरेसुआ, न वि जाणे हेयाहेय ।
जुजूआ सेवे जेह एकेके विसने करी नरेसुआ, दुख देखे बहु तेह ।।१३
एक व्यसनिजो नरक हुए नरेसुआ, साते सेवे जे सात ।
तेहना दु खनो पार नही ए नरेसुआ, किम कही जाय ते बात ।।१४
उत्तम वशे जे उपजी ए, नरेसुआ, व्यसन सेवे जे मूढ ।
लाधू चिन्तामणि जे त्यजी ए, नरेसुआ, नीच गति पामे ते प्रौढ ।।१५
इम जाणिय भविजन तुम्हो ए, नरेसुआ, जो सुख वाछो देह ।
तो बिसन सहु परिहरो ए, नरेसुआ, घणु सू कहिए वलि तेह ।।१६
अष्टमूल गुण हवे सुणो ए, नरेसुआ, मद्य, मास मधु त्याग ।
ऊँबर बड कठुंबरी ए, नरेसुआ, पीपल पीपरी कुराग ।।१७
मद्य मांहे जीव बहु मरे ए, नरेसुआ, मद्य पीधे नही सान ।
दु ख दुर्गति होइ ए, नरेसुआ, पापी मद्य कुपान ।।१८
एक विन्दु मद्य तणा ए, नरेसुआ, थाह जो जीव विस्तार ।
त्रैलोक्य माहि मावे नही ए, नरेसुआ, किम कह्यो जाइ पाप विस्तार ।।१९
अथाणा सधाणा त्यजो ए, नरेसुआ, अनन्त जीव रस काय ।
कुली निगोद बहु ऊपजे ए, नरेसुआ, शास्त्र कही, ते किम खाय ।।२०
दिन विहु पूठे दही छाछ ए, नरेसुआ, वासी न स्वाद-रहित ।
आछण फूली वस्तु त्यजो ए, नरेसुआ, मद्य-नेम-सहित ।।२१
मास-भक्षण दूरे त्यजो ए, नरेसुआ, मास मरे बहु जीव ।
जिह्वा लपट पापी आ ए, नरेसुआ, अधोगति पाडे ते रीय ।।२२
चर्मघाल्या घृत तेल ए, नरेसुआ, जल हीग सरस वस्त ।
सरसव शुल्वा धान त्यजो ए, नरेसुआ, दोषते मास समस्त ।।२३
चर्म-जोगे जल रस थकी ए, नरेसुआ, उपजे जीवते सूक्ष्म ।
सूर्यकान्त चन्द्रकान्त मणि ए, नरेसुआ, अग्नि जल झरे तेम ।।२४
चर्म पात्रे जल त्यजो ए, नरेसुआ, शौच कर्म नहि योग्य ।
तो स्नान तिणे किम कीजिए, नरेसुआ, किम पीजे जल अभोग्य ।।२५
जीव इड थी उपनो ए, नरेसुआ, म्लेच्छ ते चर्वित जाण ।
मधु भक्षे सूग ऊपजे ए, नरेसुआ, नीपजे वहु जीव हाणि ।।२६
सात गाम वाले जेतलु ए, नरेसुआ, तेतलु पाप होइ ताम ।
मधु बिन्दु एक भक्षण करे, नरेसुआ, लोक-प्रसिद्ध एक भाष ।।२७
शरीर धाय व्रण आदि ए, नरेसुआ, नेत्र करण अयोग्य ।
औषध काजे मधु त्यजो ए, नरेसुआ, कीजे नही ते प्रयोग ।।२८
पत्र पुष्प शाका त्यजो ए, नरेसुआ, विहु घडी पूठे नवनीत ।
काचु दूध नीर त्यजो ए, नरेसुआ, भागो नेम-सहित ।।२९
काचा गोरस-मिश्रित ए, नरेसुआ, त्यजो ते द्विदल अन्न ।
वरसाले अन्न दल्यां ना ए, नरेसुआ त्यजो ते जिन मासी मन्न ।।३०

श्रावक व्रत तरुतणां ए, नरेसुआ, पीठ बंध गुणमूल ।
यत्न करो घणु ते तणों ए, नरेसुआ, दृढपणे अनुकूल ॥३१
सप्त व्यसन जे परिहरे ए, नरेसुआ, धरे जे मूलगुण अष्ट ।
प्रथम प्रतिमा ते सहित ए, नरेसुआ, दर्शन नामी अभीष्ट ॥३२
जल गालण भेद सुनो ए, नरेसुआ, हृदय थई सावधान ।
जे जाण्या विण जीवने ए, नरेसुआ, हुए ते बहु परिज्यान ॥३३
गाढो नूतन चीरज ए, नरेसुआ, दीर्घ अंगुल छत्तीस ।
दुगुणो चीर ते कीजिए ए, नरेसुआ, विस्तारे चौवीस ॥३४
बिहु-बिहु घडी इ जल गगलिए, नरेसुआ, दिन पर ते बिहु-वार ।
कोमल परिणाम कीजिए ए, नरेसुआ, जीव जत्न गुणधार ॥३५
जल-बिन्दु एक माहि ए, नरेसुआ, असंख्यात जीव होय ।
भमर जेम वडो जो थाइ ए, नरेसुआ, त्रैलोक्य न वि माइ सोय ॥३६
अणगल नीर किम पीजिइ ए, नरेसुआ, जीव तणो होइ भक्ष ।
त्रस भक्ष जो कीजिए, नरेसुआ, तो किम मूल गुण दक्ष ॥३७
काचो नीर न पीजिइ ए, नरेसुआ, पाणी गल्यो तत काल ।
पवित्र भाजने ते घालिइ ए, नरेसुआ, माहे न रहे पक-सेवाल ॥३८
बेहडा कसेलो कुछठ ए, नरेसुआ चूर्ण करी पवित्र ।
अधिको ऊनो न वि मूकिइ ए, नरेसुआ, निरति करीइ विचित्र ॥३९
वर्ण रुडो जब देखिइ ए, नरेसुआ, तव ग्राहीये ते नीर ।
प्रासुक जल जले करो ए, नरेसुआ, प्रमाद छांडी सरीर ॥४०
गल्या जल प्रासुक पछे ए, नरेसुआ, प्रासुक पहर ते दोय ।
अतिउष्णं आठ पहर लगे ए, नरेसुआ, पच्छे अ सम्मूर्च्छिम होय ॥४१
अनगल स्नान न कीजिइ ए, नरेसुआ, न वि धोइ ए ते वस्त्र ।
सावु जो जल माहे पडे ए, नरेसुआ जलचर ने शस्त्र ॥४२
इम जाणि जल-जत्न करो ए, नरेसुआ, जीव-जत्ने दया होय ।
जिहाँ दया तिहाँ धर्मज ए, नरेसुआ, धर्म तिहाँ सुख जोय ॥४३
धर्मे सुर नर वर पद ए, नरेसुआ, धर्मे मनवांछित सुक्ख ।
ऋद्धि वृद्धि वुद्धि घणी ए. नरेसुआ, धर्मे अनुक्रमे मोक्ष ॥४४
पाणी प्रमादे गाले नही ए, नरेसुआ जत्न न करे जे सार ।
ते पापी अज्ञानि जीव ए, नरेसुआ, भमे ते भवहि मझार ॥४५
पाप फले नरक पशुगति ए, नरेसुआ, नर नारी निरधार ।
हीन दीन दलिद्री देखिए, नरेसुआ, पापे पर-वश गँवार ॥४६
बहिरा बाडा बोबडा ए, नरेसुआ, खज पग मुका जेह ।
अधम विध वियोगीआ ए, नरेसुआ पाप तणा फल एह ॥४७
इम जाणी सावधान हो ए, नरेसुआ जो सुख वांछो देह ।
तो जल जत्न सदा करो ए, नरेसुआ तण न तजिए नेह ॥४८

रात्रि भोजन दूरे करो ए, नरेसुआ, भेद सुणो हवे तेह।
सूर्य उग्या घडी विहुँ पुठे ए, नरेसुआ, भोजनकाल छै तेह ।।४९
दिवस दोय घडी जब होय ए, नरेसुआ, ति वार पहिलो आहार।
सूर्य किरण मद दीसइ ए, नरेसुआ, निशा समो तिणि वार ।।५०
सध्या समै जे भोजन ए, नरेसुआ, प्रगट न दीसे भान।
निशि-आहार ते जाणीइ ए, नरेसुआ, दिवस तणे अवसान ।।५१
अधारे अगासडे ए, नरेसुआ, जिहा नहि गोचर दृष्टि।
असन तिहा न वि कीजिइ ए, नरेसुआ जिहा दीसे नही स्पष्ट ।।५२
प्रमादी जे लोभीया ए, नरेसुआ, ते वाहे निज अक्ष।
जिह्वा लम्पट वा पडा ए, नरेसुआ, रयणी देखे प्रतक्ष ।।५३
बुवडत्त विम्ब उ तावला ए, नरेसुआ, पशु परि करे आहार।
भोजन करे ते वाउला ए, नरेसुआ, रुले घणु ससार ।।५४
डस कीट पतगीआ ए, नरेसुआ, वहु जीव पडे सूक्ष्म।
अन्न रस तक्र माही ए, नरेसुआ, त्रस जीव दीसे केम ।।५५
रात्रे भोजन जो कीजीइ ए, नरेसुआ, तो ते जीव हुइ भक्ष।
मास-आहार सम ते सही ए, नरेसुआ, दूषण दीसे समक्ष ।।५६
मूढ जे रात्रे जीमिइ ए, नरेसुआ, तेनु सरूप राक्षस जेय।
जाति-अन्ध सम ते कहीइ ए, नरेसुआ, न वि जाणे हेयाहेय ।।५७
तम्बूल सु जल मूकोने ए, नरेसुआ, जो अणसण आथमे सूर।
भोग्य अशन फल जो लीइ ए, नरेसुआ, तो दर्शन तेहने दूर ।।५८
रात्रि तणा राध्या जीमिइ ए, नरेसुआ, ते कहिए मूढ गवार।
स्थूल सूक्ष्म वहु जीव मरे ए, ते नही मूल गुण धार ।।५९
निशा-आहार पापकारी ए, नरेसुआ, नरकगत्ति-अवतार।
पल्योपम सागर तणा ए, नरेसुआ, दु ख सहे पच प्रकार ।।६०
क्रूर पशूगति ऊपजे ए, नरेसुआ, सर्प वीछी व्याघ्र व्याल।
माजार कूकर सूकर ए, नरेसुआ, काक पंखी विकराल ।।६१
पापी नीच नरकगत्ति लहे ए, नरेसुआ, हीन दीन दालिद्र।
अल्प आयु काय रोगीआ ए, नरेसुआ, विकल वियोगी क्षुद्र ।।६२
ए आदे सुर नर तणा ए, नरेसुआ, जे जे दीसे नर वहु दुक्ख।
निशा-आहार तणा फल ए, नरेसुआ, कहिय न पावे सुक्ख ।।६३
इम जाणी जे परिहरे ए, नरेसुआ, रयणी तणो आहार।
मनवाछित सुखते लहे ए, नरेसुआ, पुण्य फले गुणधार ।।६४
सुख संयोग सौभागिया ए, नरेसुआ, वृद्धि ऋद्धि सन्तान।
सुर नर वर पदवी लही ए, नरेसुआ, अनुक्रमे मोक्ष निदान ।।६५
चित्रकूट नयर भलो ए, नरेसुआ, जागरी नामे चडाल।
निशा भोजननि फल ए, नरेसुआ, विस्मय पामी विशाल ।।६६

सागर श्रेष्ठी कुल उपनी ए, नरेसुआ, पुत्री नामे श्री नाम।
रूप कला लावण्य घणु ए नरेसुआ, यौवन देखो गुण ग्राम ॥६७
श्रीवर श्रेष्ठी ते वरी ए, नरेसुआ, सुख पामी संसार।
तप करि स्त्रीलिंग छेदीयो ए, नरेसुआ, स्वर्गे लीयो अवतार ॥६८

दोहा

निश्चल नियम जे आचरे, निशा आहार-परित्याग। संसार सुख ते अनुभवि, पामे शिवपुर भाग ॥१
सूर्य साखे भोजन करो, दिन प्रति एक बे पार। अरता-फिरता खाइए नही, उत्तम नही आचार ॥२
समकित-सहित सदा धरो, उत्तम मूलगुण अष्ट। विसन भय शल्य गारव त्यजी, दर्शनप्रतिमा अभोष्ट ॥३
दर्शनप्रतिमा इणि परे, वर्णवी गुण बहुधार। व्रतप्रतिमां बीजी सुणो, सक्षेप कहु सुविचार ॥४

अथ ढाल गुणराजनी

साभलो ए व्रत शुभ वार, पंच अणु व्रत पालीए, गुणव्रत त्रण प्रकार।
चार शिक्षा व्रत संभलो ए, साभलो ए व्रत शुभ वार ॥१
अहिंसा ए पहिलो अणुव्रत, सत्य व्रत बीजो सही ए।
अचौर्य ए ब्रह्म सुचर्य, संग-संख्या पाचमो कहीं ए ॥२
थावर ए पंच प्रकार यत्न सहित विराधक ए।
गृहस्थ ए श्रावक सार, अणु व्रत आराधक ए ॥३
त्रसघात ए बहु घात जेह प्रमाद विषय सहु परिहरो ए।
बेन्द्री तेइन्द्री चौइन्द्री जीव, पंचेन्द्री रक्षा करो ए ॥४
कृमि कीट ए अलसी ए जुल, संख सीपी नां बेइन्द्री ए।
कीड़ी कुन्थु ए जुआ की देह, माकण आदि तेईन्द्री ए ॥५
दंश मशक ए माखी पतंग भमर आदि चौइन्द्री ए।
नरक पशु ए माणस देव पंच इन्द्री ए त्रस जीव ए ॥६
इणि परे ए उ लखी त्रस, मन वच काय रक्षा करो ए।
कृत कारित ए अनि अनुमोद, नव भेदे यत्न धरो ए ॥७
खंडणि ए पीसणी चुल्लि, जलकुम्भी प्रमार्जणी ए।
गृही कर्म ए पच ए सूना, छहुं इ द्रव्य उपार्जनी ए ॥८
पीसण ए करीय पवित्र, सुल्या अन्न सोधन करो ए।
जत्न सहित ए कीजे चूर्ण, वासी जंत्र न फेरीइ ए ॥९
जोड पुजीइ ए कजिए जत्न, उखले खण्डण कीजिइ ए।
सुल्या झुल्या ए हुए जे अन्न तस घाय नवि दीजिए ॥१०
इंधण ए छांणा जेह जीव सोधि तावड़े वरीइ ए।
जीव-जयणा ए कीजे, पाक सवुक्षण जतनें करीइ ए ॥११
व्यापार ए कीजे तेह, जेह थी हिंसा न उपजे ए।
अचौर्य ए सत्य-सहित, जिन्हे आरंभ न नीपजे ए ॥१२

आरभ थी ए उपजे पाप, वचन द्रोह छद्म घणु ए ।
असत्य ए हुइ अन्याय, व्यापार त्यजो ते द्रव्य तणो ए ॥१३
कटोल ए धातुडी पान, सावु मैण महुडा गली ए ।
विप लोह कु काष्ट ढोर अस्थि चरम वली ए ॥१४
मद्य मांस ए मधु कुचीड, माखण न वि तवावीइ ए ।
कण सल ए कवण व्यापार, घाणी न वि कराविइ ए ॥१५
वापी कूप ए द्रह तडाग, खाई न वि खणावीह ए ।
कपावीइ ए नहि वन काष्ट, अगष्टिनीमा न चडवाइ ए ॥१६
एह आदि दुर्व्यापार, पाप आरभ उपजे वहू ए ।
लाभ न दीसै ए मूल विनास, ते वाणिज्य त्यजो सहु ए ॥१७
उपार्जि ए कष्टे द्रव्य, व्यापार करे ते अति बलो ए ।
कुटुम्व ए लेवते भोग, नरके जाइ तू एकलो ए ॥१८
इम जाणीय दुर्व्यापार, पापारभ ते परिहरो ए ।
हित मित ए न्याय सम्वन्ध, जोग्य वाणिज्य ते अनुसरो ए ॥१९
खंडण पीसण चुल्ली, जल स्थान ऊपर कहीइ ए ।
देरासर ए समन ऊपर, चन्द्रोपक वाधो सहीइ ए ॥२०
षट् कर्म ए जत्न सहित, सदा कीजे त्रस-रक्षण ए ।
जो कीजे ए जीव वहु जत्न, ते अहिंसा व्रत-रक्षण ए ॥२१
चालीइ ए जत्न-सहित, जीव जत्न करि वेसीइ ए ।
सोइए ए जत्न सहित, जीभ जत्न करि भासीइ ए ॥२२
जीव जत्न ए करे आरम्भ, अल्प पाप हुए तस ए ।
कोमल ए कीजे परिणाम, परिणामे पूण्य जस ए ॥२३
इम जाणिय ए आसन्न भव्य, सर्वदा जीव जत्न करो ए ।
जीव जत्ने ए उपजे पुण्य, पुण्य फल स्वर्गे सचरे ए ॥२४
आपीए ए भार सोवर्ण मेरू-सहित वसुन्धरा ए ।
जीव एक ए दीजिइ दान, ते सम नही कोइ गुणधणी ए ॥२५
वल्लभ ए एणि ससार, जीवितव्य विना अवर नही ए ।
ते भणी ए जीव दया दान, जिम किम दीजे सही ए ॥२६
आपण ने ए जो जीववु इष्ट, सो परने जीववु वल्लभ ए ।
तो किम ए लीजे पर प्राण, जीव जत्न करो दुर्लभ ए ॥२७
दया विण ए नही जिन पूज, पात्र दान नही दया विन ए ।
तप जप ए ध्यान अध्ययन, दया विण नही कोई गुण ए ॥२८
देव माहि ए जिम जिनदेव, ज्ञान माहे केवल ज्ञान ए ।
रत्न माहि ए जिम चिन्तारत्न, तिम दान माहे जीव दया ए ॥२९
जीव दया ए ल्हे वहु आयु, काय निरोग रूप घणु ए ।
पामीइ ए सुख सजोग, भोग वाछित निज भलपणुं ए ॥३०

सुर नर ए वर पद होइ, ऋद्धि वृद्धि बुद्धि धणी ए।
जेह जेह ए उपजे सुख, ते सहु फल दया पणे ए ॥३१
तिल सम ए कन्दमूल माहे, जीव अनन्त निगोद भर्या ए।
सूक्षम ए गोचर नहिं दृष्टि, केवलज्ञान श्री जिन कह्या ए ॥३२
तिल सम ए कदमूल भक्ष तो ते जोव अनन्त मरे ए।
अल्प सुख ए जिह्वा लोल, वहु जीव ते घात करे ए ॥३३
नरक पशु ए गति अवतार, हिंसा ए पामे ते बापडा ए।
क्षुधा तृषा ए सहेय सन्ताप, जन्मि जन्मि दु खे जड्या ए ॥३४
हीन दीन ए नर दारिद्र, दुखी अ दोर्भागी दोहिला ए।
रोग सोग ए कष्ट वियोग, अल्प आयू ते पामीया ए ॥३५
नर नारी ए हुइ निरधार, वन्ध्या नारी ते सही ए।
एह आदि ए हुअे वहु कष्ट, ते फल पाप हिंसा सही ए ॥३६
इम जाणिय कीजे दया जीव, जिहा दया तिहा धर्म जए।
जिहा धर्म ए तिहा होइ सुक्ख, सुक्ख तिहां शिव पद फल ए ॥३७
नर नारी ए पशु बालक, कर्ण नासा न वि वीधिअे ए।
न वि छेदी ए तस तणा अग, छेद नामे न छेधिअे ए ॥३८
भार बहु ए जे नर ढोर, मानथी अधिक न रोपीइ ए।
बापडा ए पर-वश तेह, भार-मान न वि लोपइ ए ॥३९
मानुष ए पशु ए हवाल, अन्न पान न वि रुधीइ ए।
निज पर ए पीडा होइ, ते विती पात मन सोधीइ ए ॥४०
इण परि ए पंच अतीचार, जीव दया व्रत तणा ए।
जत्न करो ए टालो निर्दोष, प्रमाद विषय ते जो घणा ए ॥४१
अतीचार ए रहित धरे व्रत, सोल मे स्वर्गे ते उपजे ए।
उत्तम ए नर पद होइ, अनुक्रमे शिव मुख सपजे ए ॥४२
प्रथम ए अणु व्रत एह, जत्न करी पालो सदा ए।
मातग यमपाल नाम, तेह कथा हवे साभलो ए ॥४३
सौरम्य ए देश मझार, पोदनपुर नयर धणी ए।
महाबल ए नामे भूपाल, तस पुत्र बलि दुर्मती ए ॥४४
नन्दीश्वर ए अष्ट दिवस, भूपे अमार आण दीधी ए।
जे कोई ए करसे जीव वध, ते मोकलु जम सन्निधी ए ॥४५
राजपुत्र ए वलिकुमार, भक्ष करे मास तणो ए।
बन्न जाइ ए तेणे मूढ, गूढपणे मीढ्यो हणो ए ॥४६
वलि जाणे ए न वि देखे कोई, जिह्वा लम्पट मांस ग्रह्यो ए।
तिण समि ए चम्पा वृक्ष, ऊपर माली दर्प्य रह्यो ए ॥४७
सन्ध्या समय ए आव्यो नही मेष, राय कहे कु ण कारण ए।
पूछियो ए निज कोटवाल, मीढो जुओ के तस मारण ए ॥४८

नही तो ए देऊँ तुम्हे दड, मुझ आज्ञा भाजी किणि ए।
गुप्तचर तल रक्षक ए मुकीया चार, राते घर जइ सुणे ए ॥४९
तिण समे ए माली निज गेह, अति अधारे आवीयो ए।
नारी ऊ ए पूछे निजकंत, असुरो तु का भावीयो ए ॥५०
मालीय ए कहे सुण वात, राजपुत्र मीढो हण्यो ए।
तिण समे ए रह्यो हुँ झप, मुझने भय घणो उपनो ए ॥५१
एहवु ए नुणी संवध, चर आयी भूपने कह्यो ए।
प्रभात ए पूंछ्यो माली तेह, निर्भयपणे ते सहु लह्यो ए ॥५२
तव भूपने ए उपनो कोप, लोप कीयो आज्ञा तणो ए।
तल रक्षक ए मलावो वार, दुष्ट खड करो घणो ए ॥५३
मातग ए यमपाल नाम आव्या तल वर तस घरे ए।
आवता ए देखी तेह, प्रच्छन्न रह्यो तिणी समे ए ॥५४
तल रक्षक ए पूछी तस नारि किहाँ गयो मातंग आज ए।
नारी कहे ए मुणो कोटवाल, घर नही, गयो निज काज ए ॥५५
तल रक्षक ए कहे तिणी वार, भाग्य नही मातग तणो ए।
राज पुत्र ए मारी ने आज, वस्त्र आभूषण द्रव्य घणो ए ॥५६
तव नारी ए उपनो लोभ, हस्त सज्ञा ते देखाडीयो ए।
घर तणे ए सुणे रह्यो तेह तव बले तेणे काढीयो ए ॥५७
मातग ए कहे सुणो वात, घात जीव छे मुझ तिम ए।
चौदस ए दिन व्रत आज, कीजे कृपा कहो इम ए ॥५८
तल रक्षक ए पाम्या कोप, हठ करी ते डीगया ए।
राय आगल ए कही तस वात, घात नही विस्मय भया ए ॥५९
मातग ए कहे सुणो नाथ, हाथ जोडी ऊभो रहो ए।
स्वामी मुझ ए वीनती अवधार, सार नियम कथा लही ए ॥६०
एक दिन ए मुझ डसीयो सर्प, मूर्च्छा आयी धरणी पड्यो ए।
मूकीयो ए हु लेइ समसान, सज्जन मिली घणु रुले ए ॥६१
मुनिवर ए ऋद्धि गुणवत, शरीर-स्पर्श-पवन बले ए।
निर्विष ए हुई मुझ देह, चेतना आयी मूर्च्छा वली ए ॥६२
सावधान ए हुओ तिणि वार, मुनिवर बोल्या कृपावत ए।
वधतणो ए मुझ दीयो नेम, चौदस एक दिन गुण सत ए ॥६३
ते नियम ए पालु भवतार, सार जीव हण वातणो ए।
गुरु साक्षी ए लीयो जे व्रत, हित जीव सदा घणु ए ॥६४
प्राण त्याजे ए नवि छोडु नेम, प्राणी जन्म-जन्म धणु ए।
दुर्लभ ए जीव दया धर्म, समकारी भूपे सुण्या ए ॥६५
तब कोपे ए कहते भूप, तू चडाल अधम सही ए।
निर्मल ए श्री जिन धर्म, नेम तुझ योग्य नही ए ॥६६

भूपति ए दीयो आदेश, नंदन मातंग मारवा ए।
क्रोधे ए नही शुद्धि वुद्धि, गुण दोष विचारवाए ॥६७
सेवक ए मिल्या बहु दुष्ट, यष्टि मुष्टि प्रहार करे ए।
बाँधीयो ए वलि मातग, मारण लेइ ते सचरया ए ॥६८
विडबन ए वा देई दहु दुष सिसुमार द्रह नाखीउ ए।
राजपुत्र ए हिंसा पाप दुर्गति दुख ते दाखीया ए ॥६९
मातंग ए नेम प्रभाव जल देव आसन कपीगा ए।
जल उपरे ए कमल आसन, तिहाँ मातग आरोपिया ए ॥७०
नीपनो ए जय जयकार, गीत नृत्य वाजित्र घणा ए।
सुर नर ए करे पुष्प वृष्टि, प्रातिहार्य भूते सुण्या ए ॥७१
निगर्व ए थयो तव राइ, अन्याय कीयो मे मूढपणो ए।
आपीयो ए मातग पास, क्षमितव्य करे वली-वली घणो ए ॥७२
सुर नर ए देय सनमान, वस्त्र आभूषण आपीया ए।
मातग ए आण्यो निज गेह, महोत्सव करि जस थापीया ए ॥७३
धन धन्य ए नेम प्रणाम, सुधन धन्य जस धणो ए ॥
जाव जीव ए पालियो नियम निश्चल मन करी आपणो ए ॥७४
इहि लोक ए पामीउ सुख, मरण समाधि साधीयो ए।
मातंग ए पाम्यो देव लोक, महर्धिक पद आराधीयो ए ॥७५
जुओ जुओ ए पुण्य प्रभाव, किहां मातग नीच जाति ए।
उपनो ए ते देवलोक, ऋद्धि वृद्धि गुण ख्यातिय ए ॥७६
उत्तम ए नरपति वंश, बलि कुमार हिंसा करी ए।
पांमीयो ए अपजस दुक्ख, पापे नीच गति अणुसरी ए ॥७७
इमि जाणि ए धर्म उत्तम, उत्तम वन्दो सुरोझीये ए।
धर्म हाणि ए जाइ नीच गति गुणीअ गुणीने वुझीये ए ॥७८
धनश्री ए जार कु नारि, जार लक्षीते पापिणी ए।
मारीयो ए गुणपाल पुत्र, अपकीर्त्ति पांमी आपणी ए ॥७९
भूपत्ति ए दीयो बहु दड, खर-आरोहण विडवण ए।
धनश्री ए जीव-हिंसा पाप, दुर्गति पामी खडण ए ॥८०

दोहा

जीव दया व्रत्त निर्मलो मातग नाम जमपाल। स्वर्ग तणो सुख पामीयो, धन धन्य दया गुण माल ॥१
जीव-हिसा करि पापिणी, धनश्री नामि कुमार। दुख दुरगति ते सही, धिग हिंसा असार ॥२
हिंसा समु कोइ पाप नही, हूवो होसे वर्तमान। दया समो कोइ धर्म नही, एहवो कह्यो जिन भान ॥३
इम जाणीय निश्चल करी, दया पालो गुणवार। सुर नर सुख ने भोगवे, पामे मोक्ष भवतार ॥४

ढाल

अहिंसा अणुव्रत वर्णव्यो ए, हवे अ कहुँ सत्य व्रत्त तो।
वीजो अणुव्रत निर्मलो ए, थूलपणे जीव हित तो ॥१

झूठा वचन न बोलिये ए, कडुआ कठिण कठोर तो ।
कूट कपट कडक सत्य जो ए, मरम मोसा घनघोर तो ॥२
अलिय वयण नवि बोलीये ए, छल छद्म वंचन द्रोह तो ।
परपंच पर वचन ए, सच न पाप सदोह तो ॥३
असत्य वाणी तमे परिहरो ए, कूडी साख कुबोल तो ।
निन्दा अपजस विस्तरे ए, ते टालो निटोल तो ॥४
पर पीडाकारी वचन, पर-पैशुन्य अपवाद तो ।
जिणे बोले अधर्म होइए, तेऊ तजो विसवाद तो ॥५
जो बोले आप पीडिये, ते किम पर सोहाय तो ।
निर्लज्जपणे न वि बोलीए, जिणे उपजे पर दाह तो ॥६
तीव्र कोपकारी त्यजु ए, मान मायाने लोभ तो ।
राग द्वेष मद उपजे ए, जिणे होइ पर क्षोभ तो ॥७
जिण बोले हिंसा होय ए, उपजे असत्य अपवाद तो ।
मरम बोलवाडी त्यजो ए, सूल समी जे भास तो ॥८
जिणें साचे दुख उपजे ए, वध बन्ध हुई परछेद तो ।
विष था विष समी तज्यो ए, वेदनाकारी न खेद तो ॥९
अविचार्युं न वि बोलीए ए, न वि दीजे केइते आल तो ।
आर्त्त रौद्र दु ध्यान करी ए, केहते न दीजे गाल तो ॥१०
आपण झूठू न बोलीये ए, बोलावी जे नही कोई तो ।
अनृत न वि अनुमोदीये ए, मन वच कायाइ जोइ तो ॥११
सत्य वचन सदा बोलीये ए, हित मित कारी मिष्ट तो ।
जेणे बोले जस होइ ए, आपण पर होइ इष्ट तो ॥१२
असत्य वोले पाप उपजे ए, पापे सहि ते सताप तो ।
नरक पशू गति ते लहिए, रहे दुखें अति व्याप तो ॥१३
सत्य बोले पुण्य उपजे ए, पुण्ये होइ बहु सुक्ख तो ।
सुर नर वर पद पायीइ ए, कहीये न वि देखे दुक्ख तो ॥१४
इम जाणी सत्य बोलीइ ए, टालीए पंच अतिचार तो ।
स्थूल सुव्रत तेह तणा ए, हवे सुणो तेह प्रकार तो ॥१५
मिथ्या उपदेश न वि दीजीइ ए, एकान्त होइ जे वात तो ।
ते तो न वि प्रकाशीये ए, न वि कीजे तेह बात तो ॥१६
कूट लेख न वि कीजिये ए, तेणे होइ विश्वास घात तो ।
थापण मोसो हरीइ नही ए, न्यासापहार ते जाति तो ॥१७
साकार मत्र तुम त्यजो ए, न वि कीजे मरम प्रकाश तो ।
पर ईर्ष्या न वि कीजीइ ए, ईर्ष्या पाप-निवास तो ॥१८
इणि परि पच भेद धरो ए, छोडो दोष अतिचार तो ।
निर्मल सत्य व्रत पालीइ ए, जिम तरीए ससार तो ॥१९

सत्य व्रत किणे पालीयो ए, कहुँ अ तेइ व्रतान्त तो ।
धनदेव श्रेष्ठि तणो ए, कथा सुणो तुम्हे सन्त तो ॥२०
जम्बूद्वीप सुहावणो ए, मेरु तणी पूर्व विदेह तो ।
पुष्कलावती क्षेत्र नाम तो ए, पुडरीकिणी पुरी एह तो ॥२१
धन देव श्रेष्ठो वसे ए, अल्प ऋद्धि तणो नाथ तो ।
जिनदेव दूजो श्रेष्ठि ए, बहुधन जन बहु साथ तो ॥२२
एक दिवस ते जिनदेव ए, करवा चाल्यो व्यापार तो ।
धन देव साथे लीयो ए, सच कीयो तिणे वार तो ॥२३
वणिज-वित्त जे बाध तो ए, तेह माँहे भाग आधो आध तो ।
माहो माँहे ते संच कीयो ए, साखि न कीयो कोई साध तो ॥२४
ए हवु कहो ते सचर्या ए, परदेसे पुण्य पसाइ तो ।
द्रव्य घणो उपराजीयो ए, जिनदेव मन लोभ थाइ तो ॥२५
कुशल क्षेम पुरी आवीया ए, धनदेव मागे निज भाग तो ।
जिनदेव आपे नही ए, लोभ करे द्रव्य राग तो ॥२६
जिनदेव आपे झूठो बोलीयो ए, अल्प देइ तस वित्त तो ।
सत्यवादी धनदेवनो ए, भाग मांगे निज हित्त तो ॥२७
मांहो मांहे झगडो करे ए, बुझे नही निज वृद्धि तो ।
प्रजा लोके प्रीच्छ्या नही ए, पछे गया राज-सान्निध्य तो ॥२८
अग्निदेव तिहाँ कीयो ए, सुध पाम्यो धनदेव तो ।
सत्यपणे साहस वल ए, जय पाम्यो ते सेवि तो ॥२९
सत्यपणे अग्नि जल थाइ ए, सती सर्प पुष्प माल तो ।
सत्ये सुर नर पूजा करे ए, सत्ये जय वाल गोवाल तो ॥३०
जिनदेव अशुद्ध होवो ए, राजसत्ता मझार तो ।
झूठू वोलें ते वापड़ा ए, सहु मिली कियो धिक्कार तो ॥३१
तस भूपें न्याय विधि ए, वित्त अल्पावु, तरु सर्वतो ।
वस्त्र आभूषण पूजिया ए, लेइ आव्यो घर द्रव्य तो ॥३२
धनदेव जय पामीयो ए, सत्य बोली इह लोक तो ।
जस महिमा गुण विस्तर्यो ए, सुख पाम्यो परलोक तो ॥३३
जिनदेव झूठुं वोलीयो ए, द्रव्य लीयो सहु तेह तो ।
अने वली अपजस पामीयो ए, पापे परभव कष्ट तो ॥३४
पर्वत झूठी साख भरी ए, वसु नामे मूढ राइतो ।
निंदा अपजस पामीयो ए, सातमे नरकें जाय तो ॥३५
सत्यघोष विप्रतणी ए, पर्वत वसु भूपाल तो ।
तेह कथा तम्हे जाण ज्यो ए, महापुराण विशाल तो ॥३६
झूठू बोल्ने जे जीवडा ए, भट कहे तस लोक तो ।
ख्याति पूजा जाइ तस ए, परभवे दुःख सहे तेह तो ॥३७

इम जाणी सत्य सदा ए, जे बोले सुख खाणि तो ।
सुर नर वर पद भोगवे ए, अनुक्रमे पामे निर्वाण तो ॥३८
अचौर्य व्रत ह्वे साभलो ए, तीजो अणुव्रत नाम तो ।
स्थूल पणे ते वर्णवु ए, स्तेय विरति गुण ग्राम तो ॥३९
अण आप्पो जे पर तणु ए, चेतन-अचेतन द्रव्य तो ।
आपण पै जे लीजीइए, ते चोरी पाप सर्व तो ॥०४
पर द्रव्य जो चोरीइ ए, तो होइ विश्वास-घात तो ।
विश्वासघाते हिसा होइ ए, हिसाथी पापवन्त होइ तो ॥४१
आपणपे न वि चोरिये ए, चोरी दौजे न वि अन्य तो ।
परलेत्ता द्रव्य देखीये ए, न वि कीजे अनुमित्त तो ॥४२
वाटे पडियो पर द्रव्य ए, थापण वीसरे चित्त तो ।
ते किम्हे न वि राखीये ए, मन वचन काया करी चित्त तो ॥४३
पडी देखी वस्तु बहु मूल्य ए, उलघे न हि,जेह तो ।
तो सहूँ समक्ष लेई मूको ए, पूज्य काज जिन गेह तो ॥४४
चोरी करे पातक बहु ए, कूट कपट दुख खाणि तो ।
निन्दा अपजस विस्तरे ए, निजधर्म गुण होइ हाणि तो ॥४५
वध बंधन छेदन करे ए, राजा देइ बहु दड तो ।
खर-आरोहण विडबण ए, दुख देखाडे प्रचंड तो ॥४६
चोरी आणे पर वस्तु तो ए, जो दीजे लेइ मोल तो ।
माहो माँहि मर्म कही ए, भय देखाडे अतोल तो ॥४७
जो राजा लीधो जाणे ए, तो हरे मूल सहित तो ।
यष्टि मुष्टि प्रहार करी ए, कष्ट पमाडे अहित तो ॥४८
जीवितव्यथी वालो घणु ए, धन जाता मूकी प्राण तो ।
तो ते धन किम लीजिये ए, हिंसाकारी ते जाण तो ॥४९
त्रण आदे रत्न लगे ए, सधणी होइ जे वस्तु तो ।
अण पूछे जो लीजिये ए, ते चोरी सम तुल्य तो ॥५०
जे करता इम जाणीइ ए, पर देखे रखे कोइ तो ।
तेह काज नवि कीजिये ए, कारण विना व्रत जाइ तो ॥५१
धन चोरे तु एक लो ए, धन कुटुम्ब सहु खाइ तो ।
वध बधन सहे तु अकेलो ए, एकलो नरके जाइ तो ॥५२
विष भखवा सारु सही ए, विष हरे एक भव प्राण तो ।
चोरी पाप दुख-दोहिलु ए, जनमि जनमि दुख खाणि तो ॥५३
इम जाणिय चोरी त्यजो ए, न्यायविधि करो व्यापार तो ।
हित मित्त सुख कारीया ए, सतोष धरो मन सार तो ॥५४
जे ह्वुं कर्म उदय आपणु ए, ते ह्वु फल देई सोय तो ।
लाभ-अलाभे समप्रीति ए, नवि कीजे राग द्वेष तो ॥५५

चोरी उपदेश न दीजिये ए, लीजे नही चोरी आणी वस्तु तो।
राजनीति न विलोपी ए, रोपीये प्रगट प्रशस्त तो ॥५६
तुला मान निरता राख तो, अधिक ओछो न वि कीजीइए तो ।
सखर निखर वस्तु मभेल तो, घाट वस्तु न वि दीजिए तो ॥५७
इणि परे पचे भेद लीउ ए, अतीचार दोष टाल तो ।
थूल पणे त्रीजो अणुव्रत ए, मन वचन कायाइ सभाल तो ॥५८

दोहा

अचौर्य अणुव्रत आचरी, पच रहित अतिचार । सुर नरवर पूजा लही, श्री वारिषेण कुमार ॥१
श्रेणिक भूपति-नन्दन, चेलणा उरि अवतार ।
स्तेय विरती व्रत फल लही, वारिषेण पाम्यो भवपार ॥२
तेह कथा मे पहिली कही, स्थितिकरण अग मझार ।
ते सम्बन्ध तिहाँ जाणजो, सक्षेपै कहियो सार ॥३
जिण-जेणे चोरी आदरी, इहि लोक देखी दुक्ख ।
पर भवि ते दुरगति गया, कही न वि पायी सुक्ख ॥४
इम जाणिय चोरी परिहरि, धरइ जे अचौर्य भवतार।
जिन सेवक **पदमो** कहे, ते पामे भवपार ॥५

भास वैरागी

अचौर्यव्रत इम वर्णवी हो, हवे सुणो शीलव्रत ।
चौथौ अणुव्रत उजलो हो, थूल पणे जीव-सहित, हो जीवडा ॥१
ब्रह्मचर्य दृढ़ पालो, पर-नारी संगति टालो हो, जीवडा ।
अग्नि साखे जे नारी वरी हो, तेह सु कीजे सयोग ।
काम-रोग शान्ति हेतु हो, सन्तान-काजे सेवा भोग, हो जीवडा ॥२
स्वदार-सन्तोप कीजिये हो, निवृत्त कीजे परदार ।
एह वुं अणुव्रत गृहमेधी हो, थूल ब्रह्मचर्य धार, हो जीवड़ा ॥३
पर-नारी सहु परिहरो हो, वृद्ध यौवन रूप वाल ।
मात वहिन पुत्री समी हो, लेखवो ते सकोमाल, हो जीवड़ा ॥४
नारी परायी दूरि तजो हो, घृणि भजो तेह सग ।
काम क्रीडा न वि कीजिए हो, दोजे नही दृष्टि रग, हो जीवडा ॥५
हास्य वहु आले तजो हो, मूकीए नही निजलाज ।
मरम वयण न वि वोलिए हो, मयण चेष्टा तणो काज, रे जीवडा ॥६
वात गोष्ठी संगति तजो हो, नुणि चिनुन मगग ।
रूप निरीक्षण नारी तणो हो, घृणु म चितो सोभाग, रे जीवडा ॥७
पर नारी सापणि-समी हो, गग विप विकराल ।
दृष्टि विपसम दूर धगे हो, माधी चाल गोपाल, हो जीवडा ॥८

पुरुष मन नवनीत समो हो, पर-रामा अग्नि कुज्वाल ।
राग तापि तल तले हो, नर पतग बाले बाल, हो जीवडा ॥९
दूर रहि नारी देखीइ हो, पुरुष मन विनाश ।
जिम कणक काकडि गध हो, वेगे थाइ ते निराश, हो जीवडा ॥१०
हाव भाव विभ्रम करी हो, पुरुष तणो मन पाडि ।
कपट माया मेणो देइ हो, भोला नर रमाड, हो जीवडा ॥११
पर-नारी सगे पाप होइ हो, झटके लोक दे आल ।
निन्दा अपजस विस्तरे हो, भूप दंडे ततकाल, हो जीवडा ॥१२
मन वचन कायाइ करी हो, पर नारी संग टाल ।
कृत कारित अनुमोदना हो, नव भेदे शील पाल, हो जीवडा ॥१३
वेश्या सग तम्हो परिहरो हो, जेह वु उच्छिष्ट अन्न ।
रजक शिला-समी सही हो, चरखी ऊच नीच जन, हो जीवड़ा ॥१४
मास-भक्षण करे पापिणी हो, करे ते मद्य कुपान ।
ते वेश्या किम सेवीइ हो, सेवे लम्पट ते खान, हो जीवड़ा ॥१५
धनवत नर ने आदरे हो निर्द्रव्य करे परिहार ।
द्रव्य काजि ते स्नेह धरे हो, भोला भूला गवार, हो जीवडा ॥१६
जेणे नर वेश्या आदरी हो, ते थया लाज-भ्रष्ट ।
धन यौवन ने गुण तजी हो पाम्या नरक निकृष्ट, हो जीवडा ॥१७
इम जाणी रामा पर तजो हो, छोड़ो वेश्या तणु सग ।
सधणी निधणी नारी तजो हो, पालो शील अभग, हो जीवड़ा ॥१८
ब्रह्मचर्य व्रत तणा हो, छोडो पच व्यतिपात ।
तेह भेद हवे सामलो हो, जेह थी पाप-सघात, हो जीवडा ॥१९
पर विवाह पहिलो भेद हो, इत्वरीया-गमन दूजो होइ ।
पर गृहीत अनगृहीत हो, त्रीजो भेद ते जो दूरे, हो जीवड़ा ॥२०
अनग क्रीडा भेद चौथो हो, अभिनिवेश तीव्र काम ।
इणें दोषे पाप उपजे हो, पच अर्ता चार एह नाम, हो जीवड़ा ॥२१
पर विवाह न वि कीजीये हो, कीधे न होइ जस पुन्न ।
इत्वरिका दासी जे नारी हो, न कीजे तेह गेह गम्य, हो जीवडा ॥२२
परगृहीत अनगृहीत नारी, तस घर गमन त्यजानि ।
योनि विना अवर अगे हो, अग क्रीडा न वि कीजे, हो जीवडा ॥२३
तीव्र काम जेणे उपजे हो, नीपजे उद्रेक राग ।
तेह वस्तु न वि सेविये हो, दोष करो परित्याग, हो जीवड ॥२४
इणि परे पच भेद हो, छोडो व्रत अतिचार ।
स्थूल अणुव्रत पालिये हो, नव ब्रह्मचर्य गुणधार, हो जीवड़ा ॥२५
निर्मल ब्रह्मचर्य जे धरे हो, दृढ मने भवतार ।
ते धन्य ते पुण्यवन्त हो, तेह गुणनो नही पार, हो जीवडा ॥२६

शीले अग्नि ते जल थाइ हो, शीले सर्प पुष्पमाल ।
शीले केशरी मृग थाइ हो, शीले व्याघ्र सियाल, हो जीवड़ा ॥२७
शीले विष अमृत होइ हो, समुद्र गोष्पद थाय ।
शीले वन भवन होइ हो, महिमा कह्यो किम जाय, रे जीवड़ा ॥२८
शीले शत्रु सहु मित्र थाइ हो, शीले संकट विनाश ।
शीले सुर नर पूजा करे हो, शीले अतिचल वास, रे जीवड़ा ॥२९
इम जाणी शील सदा पालीइ हो, टालो दोष तुरन्त ।
शील व्रत किणे पालीयो हो, तेह कहुँ वृत्तान्त, हो जीवड़ा ॥३०
आरजखण्ड एह रूअड़ो हो, लाड विषय विशाल ।
भृगुकच्छ नयर भलो हो, राजा तिहां वसुपाल, हो जीवड़ा ॥३१
जिनदत्त श्रेष्ठी तिहां वसे हो, जिनदत्ता स्त्री भरतार ।
तस तणी कूखें उपनी हो, पुत्री नीली नाम धार, हो जीवड़ा ॥३२
रूप यौवन ते संचरी हो, जिनधर्म करे भवतार ।
निज सहेली पर वरी हो जिन गेह गई एक बार, हो जीवड़ा ॥३३
अष्ट भेदे जिन पूजिया हो, जल आदि फल-पर्यन्त ।
जाप जपी स्तवन भणी हो, कायोत्सर्ग लेइ रही सन्त, हो जीवड़ा ॥३३
अवर श्रेष्ठि तिहां वसे हो, समुद्रदत्त तस नाम ।
सागरदत्ता नारी ते भणी हो, पुत्र सागरदत्त अभिराम, हो जीवड़ा ॥३५
रूप यौवन ते मंडीयो हो, क्रीड़ा करे अ कुमार ।
ते कन्या तेणे दीठी हो, लावण्य गुणह भडार, हो जीवड़ा ॥३६
स्वर्ग तणी ए अपछरा हो, अथवा नाग कुमारी ।
चन्द्रतणी ए रोहिणी ए रोहिणी हो, अथवा खेचर ते नारी, हो जीवडा ॥३७
कन्या रूपे नर मोहीयो हो, आव्यो ते निज गेह ।
प्रियदत्त मित्रने कहे हो, मन तणी वात सहूँ तेह, हो जीवड़ा ॥३८
निज ताते ते साम्भल्यो हो, साह बोले तिणी वार ।
वच्छ, आपण बौद्धधर्मी हो, ते जैन गुणधार, हो जीवड़ा ॥३९
आपणने ते लेखवे हो, मातंग लोक समान ।
तो कन्या तुझ किम दीये हो, ते श्रावक गुणमान. हो जीवड़ा ॥४०
कपटपणे तें श्रावक थयो हो, पूजे जिन गुरु पाय ।
शास्त्र सुणे व्रत आचरे हो, कूट जाण्यो किम जाय, हो जीवड़ा ॥४१
कन्या मागु तिणे कीयो हो, साधर्मी थइ ते माह ।
निष्कपटी जिनदत्त श्रेष्ठी हो, जैन जाणि कीयो उच्छाह, हो जीवड़ा ॥४२
ते कन्या तेह नें दीधी हो, परण्यां सागरदत्त ।
वहु अर निज धरि आवीआ हो, साचो धर्म फल सत्य, हो जीवड़ा ॥४३
मुक्यो तेणें धर्म जिन तणा हो, वली थयो बौद्ध भक्त ।
नारी निज मन चिन्तवे हो, देवे कीयो अयुक्त, हो जीवड़ा ॥४४

जिनदत्त श्रेष्ठी इ साभल्यो हो, कन्या धूती गयो धूर्त्त ।
प्रपच रचि विवाही गयो हो, कपट पणें बौद्ध वृत्त, हो जीवडा ॥४५
हा, कन्या रत्न मुझ तणु हो, लेइ गयो बौद्ध भाग ।
जानें समुद्र माहे पडचो हो, अथवा कूप अथाग, हो जीवडा ॥४६
कन्या रत्न मुझ तणो हो, दैवे उदा लीने लीध ।
मिथ्याती घरि काइ पडचो हो मोटो पातक कीध, हो जीवडा ॥४७
जैन विना निज पुत्री ने हो, मिथ्याती ने जे देय ।
ते अज्ञानी महापापी आ हो, वहु जन्म दुख ते लोय, हो जीवड़ा ॥४८
कूप माहे घाले वावारु हो, अथवा दीने वारु विष ।
एक भव ते दुक्ख दीये हो, मिथ्याती बहु भव दु:ख, रे जीवडा ॥४९
मिथ्याती ने जो दीजिइ हो, तो करे मिथ्यात वुद्धि ।
जिनधर्मी नें जो दीजिइ हो, तो होइ धर्म सन्तान शुद्धि, हो जीवडा ॥५०
जो जैन ने परिहरि हो, द्रव्य तणो करि लोभ ।
मिथ्यादृष्टि ने जो देइए हो, तो होय निजधर्म क्षोभ, हो जीवड़ा ॥५१
इम जाणी जत्न करी हो, कन्या रत्न मनाख ।
साधर्मी दानज दीजिये हो, अथवा दीक्षा काजे राख, हो जीवडा ॥५२
सुसरो केहो वहु धर्म करो, हो, बौद्ध तणी करो सेव ।
ज्ञानवंत गुरु अम्ह तणा हो, परतक्ष जाणे सहु हेव, हो जीवडा ॥५३
भोजन काजे नोतरा हो, आव्या बौद्ध ततकाल ।
एकेकी पगखरी तणो हो, कीधो व्यजन रसाल, हो जीवडा ॥५४
जीम करी ते सचर्या हो, एकेकी खुरीउ न वि देख ।
पूछे कहो किहा पगखुरी हो, अरू परू इम जोइ रे, हो जीवडा ॥५५
नीली कहे तम्हे ज्ञानें जोउ हो, निज उदर छै मझार ।
अन्न वमी तिणे जोइयो हो, देख्या खड तिणी वार, हो जीवड़ा ॥५६
तब लाज्या ते बापड़ा हो, बौद्ध गया निज मट्ठ ।
बौद्ध मान भग जाणीने हो, सजन करे तस हट्ठ, रे जीवडा ॥५७
जुदी उ रीते मूकिया हो, रहे ते स्त्री भरतार ।
निश्चल मन नीली तणु हो, धर्म न मूके सार, हो जीवडा ॥५८
कत पिता मणी सहोदरी हो, रोसे दीओ तस आल ।
नीली ए पर नर सेवियो हो, जाणे उवी विषझाल, हो जीवडा ॥५९
हलुअें हलुअें दोष विस्तरे हो, नीली तणो लोक माहि ।
नीली निज काने सांभल्यो हो, कर्म-तणा फल चाहि, हो जीवडा ॥६०
जिन-आगल कायोत्सर्ग धरी हो, द्विविध लीयो सन्यास ।
यो दोष टले तो पारणु हो, नही तो प्राण-विनास, रे जीवडा ॥६१
पुर देवी आसन कपीयो, सती य शील प्रभाव ।
अवधिज्ञाने जाणीने हो, नीली पासे देवी आव, रे जीवड़ा ॥६२

सेने प्राण तम्हो तजो हो, सती सुणो मुझ बात ।
नयर प्रतोली हुं जड़ु हो, आलउ-तारु प्रभात, रे जीवडा ॥६३
राजा प्रधान श्रेष्टीने हो, सरखुं सुपन देखाडि ।
सती तणे वाम पाय हो, नयर-पोल उघाड, रे जीवडा ॥६४
एह्वुं कहि मन थिर करी हो, देवी गई निज ठाम ।
तिणी रात्रे स्वप्न देख्यु हो, देवाणी पोल उदास, रे जीवडा ॥६५
नयर क्षोभ ते सांभली हो, रुंधी पुरी-पोल चार ।
राजा आदि सहु आवीया हो, रात्रे स्वपन संभार, रे जीवडा ॥६६
नयर नारी सहु तेडीआ हो, देवाड्यो वाम पाय ।
प्रतोली न वि उघडी हो, लाजी ते पाछी जाय, रे जीवड़ा ॥६७
पछे सती नीली आणी हो, देवाड्यो डांवो कदम ।
चारी पोल तव उघडी हो, लोक तणो गयो भरम, रे जीवडा ॥६८
जय जयकार तव नीपनो हो, देव करे पुष्प वृष्टि ।
सयल सती माहे शिरोमणि हो, नीली सती उत्कृष्ट, रे जीवडा ॥६९
वस्त्र-आभूषण भूप दीया हो, पुहती कीधी निज गेह ।
गीत नृत्य महोच्छव करे हो, कलंक ठल्यो सहु तेह, रे जीवडा ॥७०
इहि लोके सुर पूजा लही हो, परलोके पायी पद देव ।
शील व्रत फल्या सती हो, नीली जस गुण हेव, रे जीवडा ॥७१
सती सीता शील बल हो, अग्निकुंड जल पूर ।
सूरजे पण पूजा कही हो, सोलमे स्वर्ग हुओ सुर, रे जीवड़ा ॥७२
द्रौपदी चन्दन बाला आदि हो, शीलतणा फल जोइ ।
इहि लोके जस गुण पायीने हो, परलोके देव पद होइ, रे जीवड़ा ॥७३
सुदर्शन श्रेष्ठी भलो हो, तेहनो गुण प्रसिद्ध ।
सुर नर पूजा पायीने हो, शील फल हुवो सिद्ध, रे जीवडा ॥७४
जयकुमार सेनापति हो, शील प्रशसा इन्द्र कीध ।
देव आदी परीक्षा करी हो, जस कीर्त्ति जय लीध, रे जीवडा ॥७५
सुकेत श्रेष्ठी आदे करी हो, जिणे जिणे शील पाल ।
सुर पूजा महिमा लही हो, ससार तणा दु ख टाल, रे जीवडा ॥७६
तेह कथा तमे जाण ज्यो हो, जिन शासन मझार ।
शील महिमा किम वर्णवु हो, किम कह्यो जाइ पार, रे जीवडा ॥७७
शील जिणे न वि पालीयो हो, तेह तणी कहु वात ।
जमदंडी माता शिवा हो, भूपे कियो तस घात, रे जीवड़ा ॥७८
दु.ख देखि दुर्गति गयो हो, जमदडी कोटवाल ।
लंपटपणे माता सेवी हो, पाम्यो वहु कष्ट जाल, रे जीवडा ॥७९
रावण तिहु खडे राजीया हो, सीता तणें अभिलाष ।
निन्दा अपजस पायीयो हो, पाम्यो नरक निवास, रे जीवडा ॥८०

धवलश्रेष्ठी दुरमती हो, मदन मंजूषा करी आस।
धन जस भ्रष्ट थयो हो, सहे दुर्गति-वास, रे जीवडा ॥८१
अमृता महादेवी नामे हो, कुब्ज लपट कुनार।
छट्ठी नरक भूमि उपनी हो, जसोधर कत मार, रे जीवडा ॥८२
ए आदे बहु नर नारी हो, जेणे शील न रक्ष।
तेह दु:ख सुवर्णवुं हो, ससार दु:ख तणा दोष, रे जीवडा ॥८३

वस्तु छन्द

शील पालो शील पालो, भविजन भविजन भावे करी।
शील चिन्तामणि कामधेनु, शील कल्प वृक्ष अमूल्य।
मनोहर सुर नर वर पद देई ने, अनुक्रम आपे मोक्ष निरभर॥
जे नर नारी शील पालसी, टाले सर्व अतीचार। जिन सेवक **पदमो** कहे, धन धन्य ते अवतार ॥८४

अथ पंचम अणुव्रत वर्णन। ढाल विणजारानी

चौथो कह्यो शीलव्रत, पाचमो व्रत हवे साभलो, विणजारा रे।
परिग्रह संज्ञानाम, थूल अणुव्रत ऊजलो, विणजारा रे ॥१
श्रेत्र वास्तु धन धान्य, द्विपद वली चतुष्पद, विणजारा रे।
आसन शयन कुप्य भांड, आदि पद दश भेद, विणजारा रे॥२
क्षेत्र करो मर्याद, हल भूमि सख्या लीजिये, विणजारा रे।
हाट घर तणा वास, कोटि-कोटि सख्या कीजिये, विणजारा रे ॥३
धन सौवर्ण रत्न रूप्य, अर्थ मर्यादा कीजिये, विणजारा रे।
गोधूम चणका शालि, कोग कोदव आदे सक्षेपिये, विणजारा रे ॥४
दासी दास कर्मकारि, चौपद महिषी गोकुल, विणजारा रे।
शकट सिंहासन रथ, जान जपान चकडोल, विणजारा रे ॥५
टोल खाट पट पाटि, वस्त्र आभूषण नारीना, विणजारा रे।
धातुतणा भाजन, क्रयाणा वस्तु-रक्षण, विणजारा रे ॥६
क्षेत्र आदि दस विध परिग्रह तणी सख्या करो, विणजारा रे।
छाडि ममता मोह, निज मने सतोष धरो, विणजारा रे ॥७
छोडो बहु आरभ, आरंभथी हिंसा घणी, विणजारा रे।
हिंसा तृष्णाकारी पाप, तृष्णा पाप दुख खाणी, विणजारा रे ॥८
परिग्रह पाप नु मूल शूल-समो साले सदा, विणजारा रे।
जिम जिम मिले बहुधन, तिम तिम लोभ वाधे तदा, विणजारा रे ॥९
लोभ ए दावानल धन, ईधन अधिको बले सही, विणजारा रे।
तृष्णा तेल सचित अधिक पणे घणु तल फले, विणजारा रे ॥१०
लोभे करे सहु क्षोभ, लोभके हनें माने नही, विणजारा रे।
लोभे बहु अवगुण, लोभे दु:ख सदा सहे, विणजारा रे ॥११
सतोष पाणी पूर, लोभ अनल ते उछले, विणजारा रे।
तृष्णा तजो पाप बीज, मन मुधे ते योग वो, विणजारा रे ॥१२

धन काजे सहे कष्ट, वन सागर दे समे फिरे, विणजारा रे।
वरपा शीत उष्ण काल, वात शीतलु अणुसरे, विणजारा रे ॥१३
धन काजे करे सेव, घोटक आगल सचरे, विणजारा रे।
मस्तक घरे वहुभार, धन काजे कष्ट घणुं करे, विणजारा रे ॥१४
कष्टे मिले जो धन, तो दुर्जन राजा हरे, विणजारा रे।
जल अग्नि धन विघ्न, गोत्री धन इच्छा करे, विणजारा रे ॥१५
धन उपजता होय कष्ट, जो आव्यो तो कष्टे रहे, विणजारा रे।
कष्टे आवे कष्ट देय जाय, धिग धिग रा धन कष्ट वहे, विणजारा रे ॥१६
मोटा करे मनोरथ, पुण्य विना ते किम फले, विणजारा रे।
उदय होय जो पुण्य, तेह सहिजे सहु मिले, विणजारा रे ॥१७
इम जाणी करो पुण्य, पुण्य नियम थी ऊपजे, विणजारा रे।
नियम करो संग सीम, सीमे संतोष ऊपजे, विणजारा रे ॥१८
नियम विना नही पुण्य, पुण्य विना सुक्ख नही, विणजारा रे।
नियम विना मन प्रसार, मन प्रसरे, पाप उपजे, विणजारा रे ॥१९
मन तृष्णा महापाप, सालसिक्थ ए माछलो, विणजारा रे।
मन तृष्णा करि तेह, नरकें गयो ते कसमलो, विणजारा रे ॥२०
करो मन गज संवर, मन गज गाढो वंधीए, विणजारा रे।
परिग्रह-संख्या ते सीम, नियम-अंकुश ते साधी ए, विणजारा रे ॥२१
मन मोकले महादुक्ख, छिन एके त्रिभुवन फिरे, विणजारा रे।
पवन थी मन चंचल, सवलि सघले ते सवरे, विणजारा रे ॥२२
परिग्रह तणा मनोरथ, मन प्रसर पाप कारण, विणजारा रे।
अणमिलतां चिंते जेह, तेह कीजे निवारण, विणजारा रे ॥२३
जिम किम रहे निज ठाम, त्यास पणे मल संवरो, विणजारा रे।
वुद्धि वले धरि सतोष, रोष राग ते परिहरो, विणजारा रे ॥२४
नियम विना नर-नारि, असज्ञी पशुसम जाणिये, वियजरा रे।
तेह भणी संग सीम, यथाशक्ति तिम आणिये, विणजारा रे ॥२५
परिग्रह संख्य अणुव्रत, थूल पणे पंचमुं कही, विणजारा रे।
छोड़ो पच व्यतीपात, तेह भेद सुणो सही, विणजारा रे ॥२६
अतिवाहन पहिलो नाम, अतिसग्रह अतिविस्मय. विणजारा रे।
अति लोभ चोथो भेद, अति भारारोपण पंचम, विणजारा रे ॥२७
अतिवाहन ते जोइ, वैल आदि पशु खेडे घणु, विणजारा रे।
नियम उलघी जेम यदि, अतिवाहन दूषण तेह तणु, विणजारा रे ॥२८
संग्रहे धान अत्यन्त, कुहि कीट पहे घणुं, विणजारा रे।
वेचे नही अति लाभ, लोभे करी करे घणुं, विणजारा रे ॥ २९
लेय वेंचे क्रयाणुं, वस्तु सार मूल्य देई, विणजारा रे।
पछे करे विसंवाद, तृष्णा पणे विस्मय लेई, विणजारा रे ॥३०

विणजी वस्तु अत्यन्त, लाभ लेय विक्रीय करी, विणजारा रे।
पछे करे मन क्षोभ, बहुमूल्य ममता धरे, विणजारा रे ॥३१
सखर बेईल महिष, जीव जेता भार वहे, विणजारा रे।
मान अधिक छाले भार, अतिभारा रोप दोष लहे, विणजारा रे ॥३२
इणि परि पंचे अतिचार, पचम व्रत, दोष तजो, विणजारा रे।
परिग्रह सख्या अणुव्रत, थूण पणे निर्मल भजो, विणजारा रे ॥३३
जिम जिम कीजे सवर, तिम तिम सन्तोष ऊपजे, विणजारा रे।
सन्तोषे होय पुण्य, पुण्ये धन सुख सम्पजे, विणजारा रे ॥३४
सग-सख्या शुभ नियम, पंचम अणुव्रत किणे पाल्यो, विणजारा रे।
हवे कहु ते सम्बन्ध, जेणे व्रत अजुआ लीयो, विणजारा रे ॥३५
कुरुजागल इह देश, हस्तिनागनयर भलो, विणजारा रे।
सोमप्रभ तसराय, कुरुवशी भूप गुण-निलो, विणजारा रे ॥३६॥
तस पुत्र जमनामा, सुलोचना नारी तेह तणी, विणजारा रे।
भरततणो सेनापती, महिमा जसकीर्त्ति घणी, विणजारा रे ॥३७
वन्दे सह गुरु पाय, एक पत्नी व्रत लियो, विणजारा रे।
सुलोचना एक नारि, अवर नारी-नियम कियो, विणजारा रे ॥३८
एक दिन जयकुमार, ऊपर ली भूमि बैठो रूही, विणजारा रे।
पासे सुलोचना नारि, पूरब भवकथा कही, विणजारा रे ॥३९
हिरण्यवर्मा भूपाल, प्रभावती नारी धणी, विणजारा रे।
जातिस्मरण-प्रभाव, पहिला भव सम्बन्ध सुणी, विणजारा रे ॥४०
तव आवी विद्याचग, आकाशगामिनी आदे करी, विणजारा रे।
साधी थी जे पेहले भव, पुण्य प्रभावे ते वरी, विणजारा रे ॥४१
विमान रचि विशाल, विद्याधर जात्रा गयो, विणजारा रे।
साथे सुलोचना नारि, जयकुमार सन्तोष भयो, विणजारा रे ॥४२
मेरु आदि करी जात्र, कैलाश पर्वते आवीयो, विणजारा रे।
चौवीस जिन हिम गेह, भरत भूपे जे भावीया, विणजारा रे ॥४३
पूजी वन्दि जिन पाय, राय-राणी गिरि-शिर गया, विणजारा रे।
वन क्रीडा करे सार, जुजुआ दोई जव ते थया, विणजारा रे ॥४४
तिणसमय सौधर्मनाथ, साथ सभा माहे इम कहे, विणजारा रे।
पुण्यवन्त जयकुमार, एक पत्नी नाम वहे, विणजारा रे ॥४५
तव रविप्रभ एक देव, परीक्षा करवाते सचर्यो, विणजारा रे।
कीयो नारी शुभरूप, तिहु विल्यासती परिवर्यो, विणजारा रे ॥४६
जिहा छै जयकुमार, तिहा आगल आवी ऊभो रही, विणजारा रे।
हाव भाव विलास, हास्य करी विनती कही, विणजारा रे ॥४७
नेमी विद्याघर ईश, तरु नारी हु रूवडी, विणजारा रे ॥४८
निज कत इच्छा भाव, ते तजी हु इहा आवी, विणजारा रे।

तुझ ऊपर धर्यो मोह, मुझ वाछा पूरो हवे, विणजारा रे ॥४९
जब सुणी जय बात, पात वज्र जाणे हुओ, विणजारा रे।
जय कहे सुणो तम्हे वात, भाव काइ कीजे जुठो, विणजारा रे ॥५०
तुनें कहीइ परनार, सुलोचना विण नियम मुज्झ, विणजारा रे।
सहोदरा होइ परनार, खप नही माह रे तुज्झ, विणजारा रे ॥५१
इम कही धरियो मौन, कायोत्सर्ग लेइ ध्यानें रह्यो, विणजारा रे।
निश्चल जैसो मेरु, धीर वीर गम्भीर कह्यो, विणजारा रे ॥५२
तब नारी तिणी वार, दुर्धर, उपसर्ग करे, विणजारा रे।
देखाडे बहु शृङ्गार, रागचेष्टा विकार धरे, विणजारा रे ॥५३
निष्कम्प जाणिय मन्न, तब देव ते प्रगट थयो, विणजारा रे।
धन्य धन्य जयकुमार, सुधन्य-धन्य शील भयो, विणजारा रे ॥५४
इन्द्र प्रशंसा तव कीध, सत्य सहाय तुझ निर्मलो, विणजारा रे।
आयी वस्त्र-आभरण, सुर पूजी गयो ऊजलो, विणजारा रे ॥५५
जय पामी जयकुमार, निज नारी सुधर आवीयो, विणजारा रे।
भोगवी राज भडार, सार वैराग ते भावीयो, विणजारा रे ॥५६
भव भोग क्षण-भग, रंग जिम मेघ बीजली, विणजारा रे।
अथिर आयु जिम वायु, काय यौवन जल अजली, विणजारा रे ॥५७
राजा थापी निजपुत्र, समोसरण आदि जिन वदिया, विणजारा रे।
छोडा परिग्रह भार, सजम धरि आनदिया, विणजारा रे ॥५८
ध्यान अध्ययन अभ्यास, तप वल कर्म निर्जरी, विणजारा रे।
पामी केवलज्ञान, जय मुनि मुक्त गयावी, विणजारा रे ॥५९
जुओ जुओ नियम प्रभाव, एक पत्नी व्रत पालियो, विणजारा रे।
जय पामी सुर पूज्य, ससार दु ख वली टालियो, विणजारा रे ॥६०
इणि परे करी संग सीम, पचम अणुव्रत जे धरे, विणजारा रे।
पामी सोलमे स्वर्ग, अनुक्रमे शिवते अनुसरे, विणजारा रे ॥६१॥
पाले नही जे व्रत्त, परिग्रह-ममता जे करे, विणजारा रे।
नियम विना होइ पाप, पापे दुर्गति सचरे, विणजारा रे ॥६२
लुब्धदत्त इक श्रेष्ठि, परिग्रह ममता करी घणी, विणजारा रे।
सचिय कूर्च नवनीत, अग्नि जल्यो ते तृष्णा धणी, विणजारा रे ॥६३
पाम्यो वहु दुर्ध्यान, मरण पामी दुर्गति गयो, विणजारा रे।
ममता पाप विपाक, सदा सहु दुखी भयो, विणजारा रे ॥६४

दोहा

सुभूमि चक्रवर्ती आठमो, वहु आरभ पसाय। लोभ तृष्णाफल लपट, सातवे नरके जाय ॥६५
नव नारायण नारद, चक्री प्रति वासुदेव। वहु आरभ पाप आचरी, नरके पाम्या दुख हेव ॥६६
जे जे नरके जीव उपना, उपजे हैं वर्तमान। वली उपजसे जे नारकी, ते पापारंभ निदान ॥६७
इम जाणी मन दृढ़ करी, छाडो आरभ पाप। संतोपे मन सवगे, जिम टले भव-सताप ॥६८

ढाल चौपाइनी

पंच अणुव्रत इणि परे कही, त्रण गुणव्रत हवे सुणो सही।
अणुव्रतने वधारे जेह, ए त्रण ही सार्थक गुण तेह ॥१
दिग्-संख्या पेहलो गुणव्रत, बीजो देश व्रत गुण सत्य।
त्रीजो अनर्थ दड परिहार, ए त्रणे व्रत करिये सार ॥२
पूरव दक्षिण उत्तर दिसा, अग्नि नैऋत्य वाय ईशान।
इन जुत अधो ऊर्ध्व दस भेद, एह दिस-संख्या करो तेह ॥३
नदी सागर पर्वत वन जाणि, देश नयर सख्या मनि आणि।
गाव योजन तणी करो मर्याद, दिग्-सख्या व्रत गुण अनादि ॥४
भूमि-सीमा कीजे जेतलो, उलघे नही किमे तेतलो।
सीमा अभ्यन्तर अणुव्रत होइ, सीमा बाह्य ते महाव्रत जोइ ॥५
थावर त्रस जीव रक्षा कीध, अभय दान सदा तस दीध।
दिग्-सख्या होइ व्रत गुण, महाव्रत पुण्य आये निपुण ॥६
यत्न करि धरो गुणव्रत सदा, किणे विसारो निजव्रत कदा।
व्रत तणां छोडो अतिचार, हवे कहूँ ते पच प्रकार ॥७
अधो ऊर्ध्व अतिक्रम दोय, तिरछ गमन त्रीजो ते जोय।
क्षेत्र-अवधि-लंघन चौथो होय, स्मृति अन्तर पचम ते सोय ॥८
गिरि-शिखर आकाशे जे चढे, ऊर्ध्व गमन अतिक्रम जडे।
भू-गर्भ वापी कूप गर्तखाणि, अधो गमन अतिक्रम ते जाणि ॥९
नगर-गमन उलघन जेह, तिरछ अतिक्रम दूषण तेह।
क्षेत्र-अवधि-लोप न वली करे, सीमस्मृति अन्तर ध्यान धरे ॥१०
इम जाणीने थई सावधान, व्रततणां छोडो दोष वितान।
निर्मल गुणव्रत सदा धरो, निजशक्ति दिग्-सख्या करो ॥११
देशविरत हवे तम्हे सुणो, दिग्-सख्या माहे ते भणो।
निजनयर प्रतोली भणी, सख्या कीजे सीमा भणी ॥१२
प्रभात समय निरन्तर तणी, सीमा कीजे गाव योजन तणो।
ग्राम सेरी पाटिक हाट गेह, अनुदिन सख्या कीजे तेह ॥१३
देश गुणव्रत इणि परिधरो, निजशक्ति संख्या अनुसरो।
तेहतणा छोड़ो अतिचार, हवे कहु ते पच प्रकार ॥१४
आनयन नाम पेहलो अतिचार, पर-प्रेषण बीजो प्रकार।
त्रीजो शब्द, रूप चौथो होय, पुद्‌गल क्षेप पचम ते जोय ॥१५
रहते निज सीमा मझार, पर पाहि वस्तु अणावे सार।
उपदेश देय करावे काज, पर-प्रेषण ते दोष-समाज ॥१६
आपणपें सीमा-माहे रही, काज करावे शब्दे कही।
रूप देखाड़ी पर आपणो, सेवक पेरी कीजे घणो ॥१७

काज वश पुद्गल-क्षेप करी, प्रेरे परने संज्ञा धरी ।
इणि परे अतिचार पंच, दोप टालि करो पुण्य सच ॥१८
देश अणुव्रत इणि परे धरो नियम-संख्या अणुव्रत सरे ।
थावर जीव त्रस-रक्षा काजि, जल-सहित पालो भव्य राजि ॥१९
त्रीजो गुणव्रत अनर्थ दड, मन वच काया त्यजो प्रचड ।
अर्थ विना जे कीजे काज, ते अनर्थ पाप जानो समाज ॥२०
अनर्थदंड तम्हो दूर करो, पचविधि सदा परिहारो ।
तेह तणा सुणो हवे भेद, वृथा पाप कीजे नहि खेद ॥२१
पाप उपदेशो पेहलो नाम, हिंसा उपदेश दूजो उद्दाम ।
त्रीजो अपध्यान चौथो दुःश्रुति होय, प्रमादचर्या पंचम ते जोय ॥२२
पापोपदेश न वि दीजिए, हिंसा झूठ चोरी नवि कीजिए ।
मैथुन सेवा परिग्रह मोह, क्रोध मान माया मद लोए ॥२३
भूमि-खनन वृथा राधन नीर, अग्नि-जालण निक्षेप समीर ।
तरु-छेदन भेदन त्रसजीव, खंडण पीसण पातक अतीव ॥२४
धर्म-विघ्न विहवा आदेश, वापी वेहला सरकूप निवेश ।
धर्म विना जेणे उपजे पाप, तेह उपदेश छोडो सताप ॥२५
हिंसातणा उपकरण जे वहु, खडग आदि आयुध जे सहु ।
कोस कुदाला छुरिका दात्र, फरसी साखल वंधन कु गात्र ॥२६
अग्नि ऊखल मूसल कुजंत्र, क्षेत्र सारण वन वाडी तत्र ।
मंजारि कुर्कट श्वान सिचांण, ते नवि पालो हिंसक अज्ञान ॥२७
दुर व्यापार तजो अपध्यान, पापकारी वहु कुवस्तु सवान ।
कन्दमूल मधु माखण व्यापार, जिणे उपजे सावद्य अपार ॥२८
हिंसा मृषा चोरी सभोग, रतिचिंतन टालो संयोग ।
इष्ट अनिष्ट पीडा निदान, आर्त्त पाप तजो अपध्यान ॥२९
भरत पिंगल संगीत कुनाद, कोकशास्त्र करे उन्माद ।
दु श्रुति अष्टादश पुराण, कलकारी परमत कुराण ॥३०
कामण मोहण वशि कारी जंत्र, स्तम्भ डम्भ चमत्कारी मत्र ।
राज आदि विकथा पंच वीस, करता सुणतां होइ पाप-उपदेश ॥३१
प्रमाद पणें ते नवि चालीइ, फोके पाप पिंड नवि घालीइ ।
आलस कीवे सावद्य उपजे, यत्न विना पुण्य किम नीपजे ॥३२
इम जाणिय छोडो परमाद, राग द्वेष तजो विसवाद ।
अनर्थ दंड तणा अतिचार, पंच भेद करो परिहार ॥३३
कन्दर्प पहेलो व्यतिपात, बीजो कुकर्म त्रीजो मौखर्य वात ।
असमीक्ष्याधिकरण चौथो होय, भोगोपभोगानर्थ पचम जोय ॥३४
काम चेष्टाकारी वहुराग, बीभत्स वचन बोले अभाग ।
कुत्सित बोले वहुभंड, गालि दुर्वाक्य बोले व्रत खंड ॥३५

मौखर्य पणें जल्पन बहु करे, काज विना वचन जु उच्चरे।
हित-अनहित अविचारी कहे. असमीक्ष्याधिकरण ते वहे ॥३६
भोग-उपभोगकारी जे वस्त, अर्थ विना चिंते समस्त।
ये पच टालो अतिचार, त्रीजो व्रत पालो गुणधार ॥३७

वस्तु छन्द

त्रिण गुणव्रत त्रिण गुणव्रत धरो भवियण भावे करी।
पच अणुव्रत गुणदायक, सार्थक नाम जेह तणा निर्भर।
थावर त्रस रक्षा कारण वारण संसार-दु ख दुर्धर ॥
जे भवियण जत्ने करी पाले गुणव्रत सार। सुर नर सुख ते भोगवी, ते पामे भवपार ॥३८

ढाल रासनी

गुणव्रत इम मे वर्ण्यव्यो ए, हवे कहुँ शिक्षाव्रत चार तो।
शिक्षा जीव हित कारण ए, वारण सख्या ससार तो ॥१
भोग्य वस्तु शिक्षा पहिलो ए, उपभोग्य दूजो होय तो।
अतिथि सविभाग त्रीजो व्रत ए. अंत सलेखणा चौथो जोय तो ॥२
भोग्य वस्तु ते जाणिये ए, जे होइ भोग्य एक वार तो।
पुनरपि काज आवे नही ए, अनुभव होइ नि सार तो ॥३
चन्दन कुकुंम केशर ए, पुष्प फल रस-पान तो।
असन खादिम स्वादु वस्तु ए, लेय पेय पकवान तो ॥४
भोग्य वस्तु ते परिहरो ए, सावद्यकारी अहित तो।
कन्दमूल अथाणा आदि ए, अनन्तकाय परित्याग तो ॥५
पत्र पुष्प शाक रु त्यजो ए, नवनीत दूध नहि लाग तो।
दोह्या पछी काचा दूधमा ए, बेहु घडी केडे जाणि तो ॥६
सम्मूर्च्छन असख्य होइ ए, इम कहे जिनवाणि तो।
पशु दोहि दूध गालिये ए, उष्ण करो ततकाल तो ॥७
जल करी ते आखरो ए, आलस छाडी तम्हो बाल तो।
पीलु प्रपोटा जावु बोर ए, बेल सेलर जाति तो ॥८
मीठा कडुवा तुंवडा ए, पिंडोला कुसुमा भाड तो।
किरकाली गलकल काफल ए. छिदल काचा दही छाछ तो ॥९
निज कठ श्वास योगिये ए, उपजे त्रसजीव राशि तो।
देश विरुद्धारी गणा ए, अवर विरुद्ध कवली जेह तो ॥१०
शास्त्र विरुद्धी जे होइ ए, भक्ष तजो बहुँ तेह तो।
... . . ॥११
ए आद अयोग्य जे जाणिये ए, जीव असख्य, अनन्त काय तो।
लव सुख, दु ख मेरु समु ए, भविजन ते किम खाय तो ॥१२
इम जाणि भोग्य वस्तु ए, कीजे तस मर्याद तो।
त्रस थावर-रक्षा हेतु ए, होय नही हरष विषाद तो ॥१३

प्रथम ते शिक्षाव्रत तणा ए, छोडो पंच अतिचार तो ।
पंच इन्द्री भोग सख्या ए, उलंघन करो परिहार तो ॥१४
बीजो शिक्षाव्रत सुणो ए, उपभोग वस्तु जेह तो ।
वली वली जे अनुभवीये ए, उपभोग्य वस्तु जाणो तेह तो ॥१५
निज नारी आदे करी ए, वस्त्र आभूषण माल तो ।
कनक रजत माणिक मोती ए, हीरा छीक परवाल तो ॥१६
देश नयर घर हाट ए, द्विपद चतुष्पद आदि तो ।
चेतन अचेतन जे वस्तु ए, तस कीजे मर्याद तो ॥१७
हस्ती तुरंग पालकी रथ ए, भाजन वस्तु वाहन्न तो ।
गीत नृत्य वाजित्र आदि ए, गमन शयन आसन्न तो ॥१८
तिथि नामे अन्न फल रस ए, नित प्रति कीजे नेम तो ।
निजशक्ति मास वरस ए, जावजीव अथवा सीम तो ॥१९
नेम विना एक घडी ए, वृथा गयो तेनो काल तो ।
इम जाणि सावधान थई ए, कीजे व्रत सभाल तो ॥२०
नेम विना नर जाणवु ए, कृत्रिम मनुष्य आकार तो ।
अथवा असंज्ञी पशु-समो ए, जाणे नही विचार तो ॥२१
नेम-सहित एक दिन ए, जीवितव्य तस प्रमाण तो ।
व्रत विना वरस कोटी ए, वृथा जीवितव्य जाण तो ॥२२

इम जाणि नियम धरो ए, नियमे उपजे पुण्य तो ।
पुण्ये ऋद्धि वृद्धि संपजे ए, ऋद्धिपणे सुख धन्य तो ॥२३
मूढ मन चिंतवी ए, वाछा करे वहुभोग ए तो ।
उपभोग चिंते घणां ए, पुण्य विण नही सजोग तो ॥२४
उपभोग सख्या करो ए, संख्याथी होय संतोष तो ।
संतोषे सुख उपजिये ए, नवि होइ राग कुरोष तो ॥२५
उपभोग व्रततणा ए, जोडो पच व्यतिपात तो ।
व्यतीपाते पाप उपजे ए, पापे होवे व्रतघात तो ॥२६
अनुप्रेक्षा पहिलो दोष ए, अनुस्मृति दूजो होय तो ।
अति लौल्य तृष्णा चौथो ए, अनुभव पचम जोय तो ॥२७
निरन्तर भोग सेवीइए, ते अनुप्रेक्षा नाम तो ।
भोग-सीम सभारे नही ए, ते अनुस्मरणदोष भान तो ॥२८
लंपट पणें भोग सेवियें ए, अति रागे तुल्य होइ तो ।
भविष्यत भोगवांछा करि ए, अतितृष्णा ते जोइ तो ॥२९
अतृप्तिपणे भोग सेवीये ए, अनुभव करे असतोप तो ।
पंच इन्द्री उपभोग्य सीम ए, उलघन पंच दोष तो ॥३०
उपभोग्य व्रततणा ए, टालो पच अतिचार तो ।
सावधान पणे सदा धरो ए, निर्मल शिक्षाव्रत सार तो ॥३१

व्रत पाले पुण्य उपजे ए, जस महिमा गुण होइ तो ।
सुर नर वर सुख पामीइ ए, अनुक्रमें शिव सुख जोइ तो ॥३२
तीजो शिक्षाव्रत तणो ए, नाम अतिथि संविभाग तो ।
आहार औषध अभय ज्ञान ए, दीजे चतुर्विध त्याग तो ॥३३
तिथि वार पर्व माही ए, निमित्त उच्छव नहिं राग तो ।
काय स्थिति काजें अन्न लीये ए, ते अतिथि पात्र करूँ भाग तो ॥३४
आमंत्रण निमित्त करी ए, आहार काजे आवे जेह तो ।
अतिथि पात्र ते हुइ नही ए, अभ्यागत जाणो सहु तेह तो ॥३५
त्रिधा पात्रे भेद सुणो ए, विधि जणावली भेद तो ।
दान तणा भेद कहुँ ए, जिम कह्यो जिनदेव तो ॥३६
उत्कृष्ट मध्यम जधन्य पात्र ए, मुनिवर पात्र उत्कृष्ट तो ।
अट्ठावीस मूल गुण धारी ए, रत्नत्रय विशिष्ट तो ॥३७
परिषह सहे तिहुँ कालतणा ए, धर्मदश लक्षण सहित तो ।
सहस्त्र अष्टादश शीलधर ए, परिग्रह चौवीस रहित तो ॥३८
उत्तम अष्ट ध्यान धरी ए, तप द्वादश गुणवत्त तो ।
सोल भावना भावक ए, तेर क्रियाव्रत सत्त तो ॥३९
तप जप सजम आचरे ए, निज-पर करितु उपकार तो ।
ख्याति पूजा वाछे नही ए, भवोदधि तरग तार तो ॥४०
रागद्वेष सर्व विगला ए, तृण-रत्न समभाग तो ।
ऊँच-नीच समगेह ए, श्रीमन्त समधन त्याग तो ॥४१
ममता मोह थी विगला ए, गुण चौरासी लक्ष तो ।
ध्यान अध्ययन सदा करि ए, उत्तम पात्र मुनि दक्ष तो ॥४२
जती थये जे धन ग्रहे ए, द्रव्य आपे दातार तो ।
जतीव्रत भग पापी ए, ते जाइ नरक अवतार तो ॥४३
जत्र मंत्र तंत्र करे ए, कामण मोहण वशीकार तो ।
ज्योतिष वैद्यक कुविद्या करे ए, तेहने पाप अपार तो ॥४४
श्रावक मध्यम पात्र कह्या ए, जे धरे प्रतिमा इग्यार तो ।
समकित सु अणुव्रत्त धरे ए, ब्रह्मचर्य गुणधार तो ॥४५
व्रत विना दर्शन धरे ए, भक्ति करे जिन देव तो ।
तत्त्व श्रद्धा धर्म रुचि ए, जधन्य जाणो सक्षेप तो ॥४६
सप्त गुण दातारतणा ए, श्रद्धा शक्ति अलुब्ध तो ।
भक्ति ज्ञान दया क्षमा ए, गृहमधी गुण शुद्ध तो ॥४७
श्रद्धापर्णे दान-रुचि करे ए, शक्ति प्रगट करे निज तो ।
दान भेद वाछे नही ए, अलुब्ध पुण्य गुण बीज तो ॥४८
पात्र विनया भक्ति करे ए, विवेक-सहित विज्ञान तो ।
जीव जत्ने दया करो, कोपे क्षमा निधान तो ॥४९

स्नान करी धौत वस्त्र पेहरी ए, पूजि जिन भवतार तो।
मध्याह्न समये द्वारावलोकन ए, गणिये नव नमोकार तो ॥५०
पुण्य प्रेर्यो पात्र आवीयो ए, सावधान थई मनि धीर तो।
तिष्ठ तिष्ठ करी पडिगाहिये ए, प्रासुक देखाडी नीर तो ॥५१
गुरु उच्चासन दीजिए ए, चरण कीजे प्रक्षाल तो।
गुरु-पद-पूजन कीजिए ए, प्रणाम कीजे गुणमाल तो ॥५२
मन वचन काया शुद्ध कीजिए ए, पवित्र देहु आहार तो।
दोष त्राणुथी वेगलो ए, एषणा शुद्धि थी वेगला तो ॥५३
सप्त गुण दातार तणां ए, नव ए पुण्य प्रकार तो।
सोल गुण प्रगट करो ए, दान वेला सविचार तो ॥५४
तुष्टि पुष्टि तप-वृद्धिकरी ए, न्याये उपार्ज्युं जे धन्न तो।
निज कुटुम्ब काजे नीपनुँ ए, ते सदा द्यो शुभ अन्न तो ॥५५
आहारदान इम दीजिए ए, विवेक लेइ ते पात्र तो।
ममता मोह थी वेगलो ए, स्थिल कीजे निज गात्र तो ॥५६
आहार थी औषध जाणिए ए, जेह थी समे क्षुधारोग तो।
रोग शमे कृपा नीपने ए, नीपने ज्ञान नियोग तो ॥५७
इम जाणि आहार दीजिए ए, छांडी कृपण-कुमाय तो।
जस महिमा पूजा करी ए, भव-सागर जे.नाव तो ॥५८
उत्तम औषध दान दीजिए ए, पात्रतणा टालो रोग तो।
जिणें किणे उपाय करि ए, शरीर कीजे सुख भोग तो ॥५९
निरोगपणें दृढ़ अंगि ए, धरें ते संजम-भार तो।
ध्यान अध्ययन तप आचार ए, द्दु कर्म-क्षयकार तो ॥६०
च्यार नियोग चतुरपणे ए, विस्तारो जिन सूत्र तो।
... . ॥६१
लिखो लिखावों भक्ति करी ए, जिनवाणी अनुसार तो।
शास्त्रदान सदा दीजिइ ए, निज-पर करे उपकार तो ॥६२
वेहरी मठ करावीइ ए, शून्य घर गुफा स्थान तो।
संजमी सहाय कारण ए, दीजे वसतिका दान तो ॥६३
अभयदान शुभ दीजिइ ए, थावर त्रस जीव जेह तो।
मन वचन काया करीइ ए, रक्षा कीजे सहु तेइ तो ॥६४
दीन दरिद्री दोहिला ए, अशरण कायर जे वृद्ध तो।
जिनें दीये दया उपजे ए, कीजे ते कृपा समृद्ध तो ॥६५
अभयदान अभ्यन्तर ए, उत्तम दान ए चार तो।
जिहाँ दया तिहाँ दान सहुँ ए, दया सर्व सुधीर तो ॥६६
केवल दर्शन ज्ञान सुख ए, केवल वीर्य वितान तो।
जिहाँ आतमा तिहाँ गुण ए, तिम अभय माहे सव ही दान तो ॥६७

दया बिना तप जप नही ए, दया विण नही धर्म ध्यान तो ।
दया विण शम सजम नही ए, दया सर्व प्रधान तो ॥६८
इम जाणिय दया दीजिए ए, कीजे पर उपकार तो ।
गुण सगला दयादान ए, घणु सु कहीए वारो-वार तो ६९
सयल भूधर माँहि मेरु ए, देव माँहे जिन देव तो ।
रत्न माँहि चिन्तामणी ए, तिम दान माँही दया एव तो ॥७०
पात्र आहार दान फल ए, भोग भूमितणा सुक्ख तो ।
सुर नर वर पदवी लही ए, अनुक्रमे धर्म मोक्ष तो ॥७१
योग्य औषध दानफल ए, निरोग होइ शरीर तो ।
कान्ति कला लावण्य गुण ए, सबल सरूपी धीर तो ॥७२
ज्ञान दान तणो फल ए, मति श्रुत अवधि बोध तो ।
मन पर्यय केवल गुण ए, कोविद कला कवि सुद्धि हो ॥७३
गढ गोपुर धवल गृह ए, त्रि-सप्त खणा आवास तो ।
दैव विमान असुर रोह ए, मठ दाने पुण्य राशि तो ॥७४
कोडि पूरव पल्यतणा ए, सागर जे वर आयु तो ।
उत्तम काय सबल पणु ए, लहे ते दया पसाय तो ॥७५
गृहा धरमइ दानन बडी ए, व्रत सुधे न वि होइ तो ।
निज शक्तें प्रगट करि ए, दान देयो सहु कोइ तो ॥७६
दाने लक्ष्मी संपजे ए, दाने जस गुण होइ तो ।
ख्याति पूजा महिमा घणु ए, दान तोले नही कोई तो ॥७७
इहि लोके जस विस्तरे ए, पंचाश्चर्य करे देव तो ।
दातृ-पात्र विधि लहो ए, परलोक शिव सक्षेप तो ॥७८
दान गृहां बन संपजे ए, जेह वो पंक्षी माल तो ।
आठ पोहर पावकरी ए, दुर्गति लहे ते बाल तो ॥७९
दान पुण्ये लक्ष्मी वधे ए, निष्कासित कूप नीर तो ।
द्रुघुटाती वाधे जिम ए, तिम दाने धन धीर तो ॥८०
व्यसन चोर हरे नही ए, दाने खुटे नहिं धन्न तो ।
जिम सर उगन मूकीइ ए, नीर रहे अखूट तो।॥८१
धने सहु संकट टले ए, विष भी अमृत सम थाइ तो ।
शत्रु मित्र समो थई ए, दाने राज्य पसाइ तो ॥८२
अल्प धन हू पात्र-दाने ए, पुण्य पामे विस्तार तो ।
अल्प वड बीज जिम ए, तरु पामे वहु विस्तार तो ॥८३
सम्यग्दृष्टी पात्र दान ए, सुर नर पायी सौख्य तो ।
चक्रवर्ती तीर्थंकर पद ए, पामे अविचल मोक्ष तो ॥८४
दान पात्र दान विधि ए, इण कही संक्षेप तो ।
अवर कुपात्र भेद कहुँ ए, जिम जाणो गुण हेव तो ॥८५

पात्र-कुपात्र भेद विहु ए, कुपात्र कहु हवे चिह्न तो ।
समकित विना जे व्रत धरे ए, क्रिया पाले चल मन्न तो ॥८६
यतीश्वरा वक वेष लेई ए, परीषह सहे त्रण काल तो ।
तीव्र तप सतपि घणो ए, कष्ट करे विशाल तो ॥८७
तप व्रत-सहित मुनि ए, पोषे जे मिथ्यात्व तो ।
अथवा श्रावक मिथ्यात्व-पोषि ए, ते कुपात्र साक्षात तो ॥८८

दृष्टि व्रत जैन गुण नही ए, आरभ करे पट्कर्म तो ।
मिथ्यात्वी मूढमती ए, सग-सहित गृहाश्रम तो ॥८९
देव-गुरु साधर्मी तणी ए, निन्दा करे गुण हीन तो ।
जिनशासन थी वेगला ए, ते अपात्र कही ए दीन तो ॥९०
कुपात्र-दान-तणे फले ए, कुभोगभूमि कुनर जन्म तो ।
छन्नुं अन्तर द्वीप माहे ए, अल्प पामी कुशर्म तो ॥९१

म्लेच्छ राजा नीच नर ए, जे पामे बहु ऋद्धि तो ।
हस्ती घोडा बैल महिषी ए, ते कुपात्र पुन विधि तो ॥९२
अपात्र दान निष्फल गमी ए, जिम ऊसर भूमि बीज तो ।
पाथर-नाव-सम सही ए, ते बोले पर निज तो ॥९३
अपात्र दान दीधा वि ण ए, डु डु नाख्यु कूप मध्य तो ।
अनेक जन्म दु.ख देई ए, पापाचारि ते वुद्धि तो ॥९४
पात्र-कुपात्र सम लेखवि ए, ते भोला अजाण तो ।
अमृत विष, रत्न काच ए, तुम्ब नाव पाषाण तो ॥९५

एक कूप नर सिंचीए ए, सेल डीली बध तुर तो । धतूरे-विष ऊपजे ए, सेलरी मधुर तो ॥९६

स्वाति नक्षत्रे मेह वरसि ए, मोती पड़े सीप विशाल तो ।
ते जल सर्प मुखे पड़े ए, विष थाइ हलाहल तो ॥९७
त्रिधा सत्पात्र दान ए, त्रिधा होइ भोगभुमि तो ।
दशधा कल्प तरु सुख ए, देव शिव अनुक्रमे तो ॥९८

दान लही क्रिया जेहवी करे ए, दाता लहे तेहमा भाग तो ।
कुलवी जिम करषण करे ए, राजा ले जिम भाग तो ॥९९
सत्पात्र क्रिया शुभ करे ए, अपात्र कुत्सित आचार तो ।
दान वले जेहवु कर्म करे ए, तेहवु उ फल दातार तो ॥१००

गौ हेम गज वाजि तिल ए, मही दासी नारी गेह तो ।
रथ आदे कुदान कह्यां ए, ए दश भेदे पाप-हेत तो ॥१०१
क्रोध मान माया लोभ ए, राग-द्वेष मदकार तो ।
पापारम्भकारी कह्यां ए, दुःख महे दानार तो ॥१०२
मूढ नाला मिथ्यामती ए, थाप्या दश कुदान तो ।
मेघ रथ भूपे दीधा ए, वार्या सुमति प्रधान तो ॥१०३

मेघरथ मूढसाला पण ए, सातमी नरके ते जाय तो ।
कुदान-पाप तणे फल ए, अवर नारकी इम थाय तो ॥१०४
इम जाणि विवेक धरी ए, परिहरु कुदान कुपात्र तो ।
जैन पात्र सहु पोषीए ए, सफल कीजे निज गात्र तो ॥१०५
पात्र-कुपात्र इमउं लखी ए, पात्र-दान धर्म बुद्धि तो ।
अवर कुपात्र-अपात्र कह्यां ए, दान दीजे दया शुद्धि तो ॥१०६
लक्ष्मी तणा फल लीजिए ए, पुण्य सांचो दातार तो ।
सप्त क्षेत्रे वित्त वावरो ए, जिनशासन मझार तो ॥१०७
जिन प्रासाद करावीइ ए, जीर्ण तणो उद्धार तो ।
जिनवर बिम्ब भरावीइ ए, जिनपुस्तक विस्तार तो ॥१०८
प्रासाद प्रतिमा जत्र आदि ए, कीजे प्रतिष्ठा चंग तो ।
अष्टविध जिन पूजीइ ए, कीजे महोत्सव चग तो ॥१०९
जिन गेह्-बिम्ब ज्या लगि नादीइए, पूजा करे भविजन्न तो ।
धर्मे उपराजी बहु परि ए, त्या लगे दाता लहे पुण्य तो ॥११०
यव-सम प्रतिमा जिन-सम ए, बिम्ब-दल प्रासाद तो ।
तेहना पुण्य नो पार नही ए, भव्य मन करे आह्लाद तो ॥१११
जेह घर जिन बिम्ब नही ए, त्रिधा पात्र नही दान तो ।
जिहा साध्ररमी आदर नही ए, ते घर जाणो समसान तो ॥११२
मुनीश्वर आर्या कहीइ ए, श्रावक-श्राविका सध चार तो ।
भक्ति विनय घणो कीजीइ ए, कीजे पर उपकार तो ॥११३
संघ मिलि सघपति थइ ए, सिद्धक्षेत्र कीजे जात्र तो ।
साधर्मी वात्सल्य कीजीइ ए, सफल कीजे धन गात्र तो ॥११४
ए आदि बहु परि ए, कीजे पुण्य आचार तो ।
त्रीजा शिक्षाव्रत तणी ए, दोष कहुँ पच प्रकार तो ॥११५
सचित्त-निक्षेप पेहली दोष ए, सचित्त पद्म पत्र आदि तो ।
ते उपर ववि आहार करे ए, ते तमे त्यजो अतिचार तो ॥११६
आदर विना आहार दीइ ए, अथवा द्ये उपदेश तो ।
व्यापार काजे वेगो जाइए, ते त्रीजो दान दोष तो ॥११७
दान देतो मत्सर करे ए, धरे ते लक्ष्मी-अहकार तो ।
दान काल उलघन करे ए, प्रमादपणे तिणि वार तो ॥११८
ये पंच दूषण त्यजी ए, सदा देओ शुभ दान तो ।
अतिथि सविभाग व्रत धरो ए, हृदय थई सावधान तो ॥११९
चौथो शिक्षाव्रत सुणो ए, अन्त संलेखण नाम तो ।
शरीर-संलेखण कीजीइ ए, क्षीण कषाय परिणाम तो ॥१२०
क्रोध मान माया लोभ ए, क्षीण कीजे रोष कुराग तो ।
पच इन्द्री प्रसार मन ए, कीजे मद परित्याग तो ॥१२१

अभ्यन्तर ज्ञान वल ए, कीजे दूर कषाय तो।
वाह्य वैराग्य तप वले ए, क्षीण कीजे इन्द्री काय तो ॥१२२
जिम जिम काया कस कीजिये ए, तिम तिम इन्द्री मद जाइ तो।
रागद्वेष उपशम हवे ए, दुर्धर मन वश थाइ तो ॥१२३
मन गज गाढो वांधीइ ए, अंकुश देई निज ज्ञान तो।
सुमति सांकल साकलो ए, वैराग्य स्तम्भ समान तो ॥१२४
अग इन्द्री कषाय कृषि ए, लीजे शुभ संन्यास तो।
चतुर्विध आहार त्यजी ए, कीजे ध्यान अभ्यास तो ॥१२५
दर्शन ज्ञान चारित्र तप ए, आराधना आराधो चार तो।
मरण समाधि साधीइ ए, अंत सलेखणा भव-तार तो ॥१२६
पंच विधि अतिचार होइ ए, जीवित मरण सशय होय तो।
मित्र प्रीति सुख-अनुवन्ध ए, निदान पचम दोष होइ तो ॥१२७
दीर्घ जीवे वांछा करि ए, कष्ट देखी वाछे मरण तो।
मित्रें घणुं अनुराग धरे ए, सुख वाछा अनुसरण तो ॥१२८
दान पूजा तप जप करि ए, वाधे निदान कुकर्म तो।
रागें अथवा द्वेष भावे ए, चिंते निज मन मर्म तो ॥१२९
इणि परे पंच दूषण त्यजी ए, साधु संलेखणा सार जो।
सुर नर वर सुख भोगवी ए, पामीइ भवोदधि-पार तो ॥१३०

वस्तु छन्द

व्रतह पालो व्रतह पालो भविजन जिन भावे करी।
पंचव्रत अणुव्रत निर्मला, त्रिणि गुणव्रतचार शिक्षाव्रत उज्ज्वल।
गुण शिक्षा सम शील कहि, स्वर्ग षोडश दायक निर्मल ॥
अणु गुण शिक्षा एणी परे धरे जे एह व्रत वार। जिन-सेवक पदमो कहे, ते तरसे ससार ॥

ढाल सहेलडीनी

दान तणा फल वर्णवु रे, किणे दीयो दान आहार।
तेह कथा तम्हे सांभलो रे, श्रीषेण तणो भवतार ॥
साहेलडी, दीजे दान सुपात्र, सफल कीजे निजगात्र साहेलडी, दीजे दान सुपात्र ॥१
आर्य खड इह जाणीए रे, मलय देश मझार।
रत्न संचय नयर भलो रे, श्रीषेण भूप गुण धार, साहेलडी० ॥२
तस दोय राणी रूवडी रे, सथन दिता पेहिली नाम।
अनिन्दता दूजी निर्मली रे, रूपकला गुण दाम, साहेलडी० ॥३
वे वेहु कूखें पुत्र अवतर्या रे, इन्द्र नामे पेहिली होय।
उपेन्द्र बीजो ऊजलो रे, चरम शरीरी ते दोय, साहेलडी० ॥४
सातकी विप्र तिहा वसेरे, जंवुनामे तस नार।
तेह कूखे पुत्री उपनी रे सत्यभामा कुमारि, साहेलडी० ॥५

एह कथा इहां रही रे, अवर सुणो एक बात ।
पाडलीपुर नगर वसे रे रुद्र भट्ट विप्र जाति, साहेलडी० ॥६
तस चेटी भणो नन्दनु रे, कपिल नामे ते जाण
विप्र पासे शिष्य बहु भणे रे; वेद ने शास्त्र पुराण, साहेलडी० ॥७
कांन झटे तिणे सोखिया रे, भणे ते बहु कुशास्त्र ।
निज बुद्धि बले आचार्यां रे, कपिल थयो कुछात्र, साहेलडी० ॥८
शास्त्र भण्यो ते साभली रे, रुद्रभट्ट पाम्यो कोप ।
निज नयरे थी निकासियो रे, शूद्र माटे कीयो लोप, साहेलडी० ॥९
कपिल तिहां थी संचर्यो रे, लीधो विप्र आकार ।
कंठे जनोई उत्तरासण रे, धीर थयो तिणि वार, साहेलडी० ॥१०
सन्नि सन्नि ते आवीयो रे, सात्तकी विप्रतणे गेह
विद्वांस ते जाणीयो रे, सत्यभामा दीधी तेह, साहेलडी० ॥११
कपिल सुखे तिहा रहे रे, सत्यभामा एक बार ।
रतिवन्ती हुईं कामिनी रे, लिंग स्वभाव एहवो नार, साहेलडी० ॥१२
तब कपिल मूढमत्ती रे, चेष्टा करे तस काम ।
नीच जाति जाणि वरजिया रे, चिन्ते ते सत्यभाम, साहेलडी० ॥१२
पुष्पवन्ती नारी तणो रे, सुणों ते दोष विचार ।
चिहु दिन विन जे भोगवी रे, ते नर नीच गंवार, साहेलडी० ॥१४
पेहिले दिन चंडाली समी रे, दूजे दिन रजकी समान ।
अस्पृश्य शूद्र तीजें दिने रे, दिन दिन करे ते स्नान, साहेलडी० ॥१५
उपवास बने करि निर्मला रे, अथवा एकान्तर जाणि ।
रस तजी भोजन करे रे, ई भाति श्री जिनवाणि, साहेलडी ॥१६
चौबीस पहर दूरे रहे रे, घर-व्यापार ने जोग ।
एकान्त रहे ते एकली रे, कवण काजे नही भोग्य, साहेलडी० ॥१७
देव शास्त्र गुरु वेगली रे, चाहे नही धरमी मुख ।
माहो माहे स्परसे नही रे, आप निन्दा लिंग दु ख, साहेलडी० ॥१८
रतिवन्ती नारी तणी रे, मांने नही जे बहु छोनि ।
तेह प्राणी पाप-फल भोगवे रे, पामे दु ख दुर्गत्ति जोनि, साहेलडी ॥१९
परतक्ष दोष ते साभलो रे, बडी पापड़ी विनाश ।
रंग-भग ते नीपजे रे, सरस वस्तु निरास, साहेलडी० ॥२०
नेत्र रोगी अन्ध थाइ रे, मरण पामे घायवन्त ।
एह आदे दूषण घणा रे, लोक-प्रसिद्ध, नही अन्त, साहेलड़ी ॥२१
इम जाणी दूरे परिहरो रे, पुष्पवन्ती नारी संग ।
घणु घणु सु वर्णवु रे, लाज तणो प्रसग, साहेलड़ी० ॥२२
सत्यभामा मन चिन्तवे रे, कर्म कीधो अयुक्त ।
द्विज वश मुझ निर्मलो रे, नीच वर मुझ भक्त, साहेलडी० ॥२३

एक दिन ते रुद्रभट्ट रे, चाल्यो तीर्थ सु जात्र ।
रत्न संचय पुर आवीयो रे, कपिल मिल्यो कुछात्र, साहेलड़ी० ॥२४
कपिल निज घरि आणीयो रे, लोक मांहे कहे मुझ तात ।
भक्ति विनय भोजन दियो रे, कुशल तणी पूछी वात, साहेलड़ी० ॥२५
सत्यभामा प्रच्छन्नपणें रे, सौवर्ण आपी पूछे जाति ।
कन्त तणी ते निर्मली रे, सत्यपणे कहो वात, साहेलड़ी० ॥२६
रुद्रभट्ट कहे वधु सुणो रे, मुझ दासी तणो पुत्र ।
शूद्र जाति भणी परिहर्यो रे, भण्यो ते वेद वहु सूत्र, साहेलड़ी० ॥२७
तव भामा भय उपनों रे, मुझ शील होसे भंग ।
संघनन्दित्ता राणी तणें रे, शरणि गई मन रंग, साहेलड़ी० ॥२८
नाम प्रशंसा पासें राखी रे, सावर्मी दीयो सनमान ।
धरमी वाछल्य करे नहीं रे ते पापी अज्ञान, साहेलड़ी० ॥२९
श्रीषेण भूप घरे आवीया रे, चारण-युगल गुणधार ।
विधि-सहित आहार दीया रे, निरन्तराय हुओ आहार, साहेलडी० ॥३०
श्रीषेण भूपे दान दियो रे, निज नारी सार्थे दोय ।
सत्यभामा भावें भावना रे, भावनाए पुण्य होय, साहेलडी० ॥३१
काल मरण पामीयो रे, श्रीषेण भूपते जाणि ।
उत्कृष्ट भोगभूमि अवतर्यो रे, दशविध भोग सुख खाणि, साहेलड़ी० ॥३२
भूपतणी दोय कामिनी रे, सत्यभामा सहित ।
दान पुण्ये तिहां उपनी रे, भोगभूमि निज हित, साहेलडी० ॥३३
पात्र दाने फल श्रीषेण रे, भोगभूमि पाम्यो सुख ।
दश विध कल्पतरु तणां रे, आखों मेष नहीं दुक्ख, साहेलड़ी० ॥ ३४
त्रण गाउ नुं देह उंची रे, त्रण पल्य तस आय ।
मरण पामी ते आवीया रे, स्वर्गे देवते थाय, साहेलड़ी० ॥३५
सुर नर सुख ते भोगवी रे, श्रीषेण भूपतिणी वार ।
पात्र दान फल निर्मलो रे, लेइ जन्म ते वार, साहेलड़ी० ॥३६
सोलमो जिन ते उपमो रे, शान्तिनाथ जस नाम ।
चक्रवर्त्ति जे पांचमो रे, वारमों देव ते काम, साहेलड़ी० ॥३७
पंच कल्याणक भोगवी रे, गुण छेतालीस वार ।
कर्म हणी केवल लही रे, पोहचा मोक्ष दुआर, साहेलड़ी० ॥३८
वज्रजंघ दान फले रे, पांमो भोग भूमि सुक्ख ।
अनुक्रमें आदि जिन हुआ रे, कर्म हणी पाम्या मोक्ष, साहेलडी० ॥३९
श्रीमती राणी दान दीयो रे, अनुक्रमें श्रेयान्स भूप ।
आदि जिन दीयो पारणु रे, व्यापो जस गुण रूप, साहेलडी० ॥४०
एह आदें वहु भवि जन्न रे, पात्रने देई दान ।
सुर नर सुख ते पामीआ रे, किम कह्यो जाइ ते पार, साहेलड़ी० ॥४१

पात्र आहार पुण्य वर्णवी रे, अवर सुणो वृत्तान्त ।
औषध दान कथा कहुँ रे, वृषभसेना तणी सत्त, साहेलडी० ॥४२
आर्य खंड माहे जाणीइ रे, जनपद देश विशाल ।
काबेरी नयरी भली रे, उग्रसेन भूपाल, साहेलडी० ॥४३
धनपत्ति श्रेष्ठि तिहाँ वसै रे, धनश्री तेह तणी नारि ।
तस तणी कूखे उपनी रे, वृषभसेना कुमारि, साहेलडी० ॥४४
रूपवत्ती धाय तेह तणी रे, स्नान अजन करे भक्ति ।
पय पान देई पोषे घणु रे, अन्न पाणी करे युक्ति, साहेलडी० ॥४५
वृषभसेना स्नान-पाणी रे, रह्यो ते गरत मझार ।
रोगी कूकर आवीयो रे, लोटयो ते तिणी वार, साहेलडी० ॥४६
श्वान नीरोग थयो देखीने रे, विस्मय पांमी धाय तेह ।
निज मातानेत्र रोगी रे, वरस बार पीडा जेह, साहेलडी० ॥४७
परीक्षा काजे नीर सिंचीयो रे, नेत्र हुआ ते निरोग ।
धाय-महिमा जस व्यापीयो रे, कन्या तणे सयोग, साहेलडी० ॥४८
उग्रसेन नामे भूप तीरे, तस मंत्री पिंगल नाम ।
मेघ पिंगल भणीमो कल्पो रे, ते वैरी विषमे ठामि, साहेलडी० ॥४९
दलबल वहुते परवर्यो रे, वेगे चाल्यो परधान ।
वेरी तणे देस आवीयो रे, साथे लेई बहु सधान, साहेलडी० ॥५०
विष-मिश्र जल वावस्करे, ज्वर उपनों मंत्री देह ।
वेगे वली पाछी आवीयो रे, नीरोग हुओ नर-देह, साहेलडी० ॥५१
उग्रसेन तव कोपीयो रे, चाल्यो ते वैरी पासि ।
तिणे जले ज्वर उपनो रे, पाछो आव्यो हुई निराशि, साहेलडी० ॥५२
वृषभसेना-कन्या तणो रे, जल जाचे वा काज ।
दूत प्रेषी अणावीयो रे, निरोग हुओ तब राज, साहेलडी० ॥५३
धनपति श्रेष्ठि ते डावीयो रे, आव्यो ते सभा मझार ।
कन्या देउ मुझ निर्मली रे, भूप कहे तिणी वार, साहेलडी० ॥५४
श्रेष्ठी कहे भूप सांभलो रे, जिन पूजो अष्ट प्रकार ।
पंजर थी पक्षी मूको रे, बदी छोडो करो राग, साहेलडी० ॥५५
जिम जिम श्रेष्ठी इजे कह्यो रे, ते तिम कीधू भूपाल ।
वृषभसेना कन्या वरी रे, महोच्छव करी गुणमाल, साहेलडी० ॥५६
विवाह समय बंदी मुक्या रे, एक न मुक्यो पृथ्वीचन्द्र ।
वाणारसी नयरी धणी रे, पाय पाके आव्यो तन्द्र, साहेलडी० ॥५७
तस राणी नारायणदत्ता रे, मत्री सु कीयो विचार ।
वृषभसेना तिणें नामे रे, माडयो तिणे सत्तकार. साहेलडी० ५८
सत्तकार भोजन करी रे, लोक आवे बिहु जाणि ।
वृषभसेना जस बोले रें, निज काते सुणी वाणि, साहेलड़ी० ॥५९

राणी धावे द्विज पृछीया रे, सत्तकारह तजेह ।
वाणारसी नयरी पती रे पृथ्वी चन्द्र-वदि-गेह, साहेलड़ी० ॥६०
वषभसेना वेगे करी रे, मूकाव्यो तव भूप ।
पृथ्वीचन्द्र विनय वहे रे, पट्ट लिखी त्रण रूप, साहेलडी० ॥६१
राणी तणे पाय नमे रे, आपणपे भूप जेह
चित्र रूप देखी रीझियो रे, उग्रसेन भूप तेह, साहेलड़ी० ॥६२
पृथ्वीचन्द्र संतोपीयो रे, उग्रसेन दीयो आदेश ।
मेघपिंगल वैरी जीपी रें, निजपुरि जाइ नरेश, साहेलडी० ॥६३
मेघपिंगले भूप सांभल्यो रे, मुझ भरवी पृथ्वी चन्द्र ।
वेगे आवी भूप भेदीयो रे, महत पांम्यो नरेन्द्र, साहेलडी० ॥६४
हेम रत्न मोती आदे रे, गज वाजी मूकी भेट
मेघपिंगल विनय करी रे, उग्रसेन मान्यो श्रेष्ठि, साहेलड़ी० ॥६५
जूझ विना आवी मिल्यो रे, हरख्यो उग्रसेन राय ।
मेघपिंगल सेवक जाणी रे, भूपति कीयो पसाय, साहेलड़ी० ॥६६
वहुमूल्य भेट जे आवी रे, रत्न कंवल निज दोय ।
निज निज नामें अंकीयो रे, जुजूआ आपे ते सोय, साहेलडी० ॥६७
वृषभसेना एक आवीयो रे, मेघपिंगल एक दीध ।
पलटाणो ते काज वसे रे, तो देवे विपरीत कीध, साहेलडी० ॥६८
कर्म उदय पाप वशे रे वस्तु थापे विपरीत ।
वृषभसेना पूर्व पापे रे, हित हुओ ते अहित, साहेलडी ॥६९
मेघपिंगल कंवल ओढी रे, सभा आव्यो एक वार ।
निज नारी नाम ते देखी उ रे, कोप्यो ते भूप गँवार, साहेलडी० ॥७०
रक्त मुख भूप देखीने रे, मेघपिंगल वुद्धिवंत ।
काज मिसे नासी गयो रे, उग्रसेन हुओ असंत, साहेलडी० ७१
वृषभसेना सुं कोपियो रे, जाण्यो शील-हीण नारि ।
निज भृत्य आदेश दीयो रे, नाख्यो स्त्री समुद्र मझारि, साहेलडी० ॥७२
शीलवंती ते कामिनी रे, निश्चल कीधो निज मन्न ।
कलंक टले तो पारणु रे, नही तो नियम भोजन्न, साहेलड़ी० ॥७३
समुद्र मांहे ते क्षेपवी रे, सती शील गुण माल ।
जलदेव आसन कंपियो रे, आवी ते ततकाल, साहेलडी० ॥७४
कमल सिंहासन तिहां कीयो रे, सती विचारी गुणवत ।
गीत नृत्य वाजित्र करी रे, प्रातिहार्य होइ सत्त, साहेलडी० ॥७५
घन-धन्य शील सती तणु रे, आसन कंप्या देव ।
सती-महिमा भूपे साभली रे, उग्रसेन आव्यो णिक्षेव, साहेलडी० ॥७६
क्षमा करावी विनय करी रे, वेसारी पाव लखी माहि ।
संभ्रम करी आवी जिसे रे, तत्र सती मुनि वाहि, साहेलड़ी० ॥७७

गणधर गुरु ते ददिया रे, पूछं पूर्वभव वृत्तान्त ।
केवली मुखते पामीयो रे, पापे कलक दूरन्त, साहेलडी० ॥७९
अवधि ज्ञान गुरु निर्मला रे, बोल्या ते भवतार ।
एकमना सती साभले रे, पेहलो भव विचार, सालेहडी० ॥८०
इणि नगरी द्विज तणी रे, पुत्रीनु नागश्री नाम ।
जिन चैत्यालय सदा करी रे, प्रभार्जन सुभाम, साहेलडी० ॥८१
सन्ध्या-समय एक आवियो रे, मुनिदत्त नामे जतीराय ।
गढ पासे गरता मांहे रे, रह्यो निश्चल करी काय, साहेलडी० ॥८२
रात्रि तणो योग लेइ रह्यो रे, रह्या धरी निज ध्यान ।
प्रभात समय आवी नागश्रो रे, बोले ते अज्ञान, साहेलडी० ॥८३
सैन्य सहित भूप आवसे रे, इहा थी जाउ मुनि आज ।
अलीक बोले मद भभली रे, इक्ष किरे नि काज, साहेलडी० ॥८४
इम कही मही पूजावी रे, एक बुछकरी कतवार ।
मुनि ऊपर ने नाखीयो रे आछाद्या मुनि भवतार, साहेलडी० ॥८५
निन्दा करे मुनिवर तणी रे, जोडे ते पाप अपार ।
रोष करे ते पापिणी रे, करम करे असार, साहेलडी० ॥८६
क्रीडा काजे भूप आवीयो रे, देखो शासन स्वास ।
तब कतवार दूरे कियो रे, दोठा मुनि गुण रासि, साहेलडी० ॥८७
मुनि प्रशंसा भूप करे रे, स्वामी ते क्षमा भडार ।
मुनि-अग पीडा उपनी रे, पाम्यो योग तिणि वार, साहेलड़ी० ८८
तव लाजी ते कामिनी रे, करे औषध जोग्य काज ।
भक्ति सुश्रूषा करे घणी रे, निरोगा कीया मुनिराज, साहेलडी० ॥८९
योग्य औषध दान दीयो रे, कीयो जती वैयावृत्य ।
पुण्य घणु पोते करयो रे, सर्व औषधि ऋद्धि हेत, साहेलडी० ॥९०
निन्दा गर्हा घणी करी रे, मरण पामी ते नारि ।
निन्दा दोषे तु उपनी रे, वृषभ सेना कुंवारि, साहेलड़ी० ॥९१
कन्या स्नान पवित्र जले रे, सर्व रोग विनाश ।
महिमा ख्याति जस पामीयो रे, राजा देई सुखवास, साहेलडी० ॥९२
मुनि वैयावृत्य तणे फले रे, योग्य औषधि दीयो दान ।
तिणि गुणे तुझ उपनी रे, औपधि ऋद्धि निधान, साहेलडी०॥९३
निन्दा करी मुनि टाकीया रे, नाखी ते कतवार ।
तिणे पापे तुझ आवीयो रे, कलक दु.ख दातार, साहेलडी० ॥९४
देव शास्त्र गुरु धर्म तणी रे, निन्दा करे जे मूढ ।
तेहमा पाप तणो पार नही रे, जनमि जनमि दु.ख सहे मूढ, साहेलडी० ॥९५
इम जाणी तम्हो केह तणी रे, निन्दा करे जे मूढ ।
ते भक्ति विनय करो पर तणी रे, नही तो मध्यस्थ होय, साहेलड़ी० ॥९६

वृषभ सेना निज भव सुणी रे, उपज्यो मन वैराग ।
स्वजन सहु खिमावीयो रे, छोड्यो मोह घर-राग, साहेलडी० ॥९७
आर्यिका थयी ते निर्मली रे, करे ते जप तप ध्यान ।
मरण समाधे साधीयो रे, स्वर्गे हुओ गीर्वाण, साहेलडी० ॥९८

दोहा

आहार दान पुण्य वर्णव्यो, श्रीषेण पाम्यो सौख्य ।
शान्तिनाथ श्रीजिन हुआ, पाम्या अविचल मोक्ष ॥१
नागश्री नारी निर्मली, दीयो योग्य औषध दान ।
वृषभसेना कन्या ऊपजी, औषध रिद्धि निधान ॥२

जस महिमा गुण पामीने, सुख भोगवी ससार । जप तप सजम आचरी, पहुँची स्वर्ग-दुआर ॥३
इम जाणी तम्हो भविजनो, पात्रे देउ औषध दान । निरोग पणुं पामीइ, पामीइ अविचल थान ॥४
दातार ऋद्धि सफल कही, जे दे दान सुपात्र । चन्द्रकान्त मणि चन्द्रयोगे, अवर पाथर आदि ॥५
सुब थकी कूकर भलो, जे वहु मिलि खाइ ग्रास । सुंव सानि उडी ऋद्धि, महि मुकी जाइ निरास ॥६
कृपण धन मूकी मरे, साथ लेई दातार । दाता ते कृपण सही, मूके नही निज सार ॥७

अथ ढाल जसोधरनी

औषध दान कथा वर्णवी, हवे कहूँ कथा सार । ज्ञान दान तणी निर्मला, कुडेश तणी गुणधार ॥१
भरतक्षेत्र एह जाणीए, आर्य खंड विशाल । कूर्म नामे ग्राम इक कही, वसे गोविन्द गोपाल ॥२
एक वार वन माहे गयो, चारे बहु गोधन्न । तरु तणा कोटर माहे, लाधो पुस्तक मन्य ॥३
ते पुस्तक तिणे लेई दीयो, पद्मनन्दी मुनीश । पुस्तक वाची निर्मलो, दीयो धर्मोपदेश ॥४
भट्टारक आदेश हु मिली लीयो पुस्तक दान । सव सहु समक्ष पणे, पूजे श्रुत शुभ ज्ञान ॥५
पुस्तक पूजी विनय धरी, थाप्यो कोटर मांहि । वली वली पूजे ते गोविन्द, पुस्तक गुण चाहि ॥६
काल क्रमे मरण पामीउ, करी दोष निदान । तिण नगरे वसे ग्राम कूट, तस हुओ ते सन्तान ॥७
कुंडेश नाम ते पुत्र तणु मोटो थयो ते कुमार । पद्मनन्दी मुनि देखीया, वन गयो एक वार ॥८

जाति स्मरण ज्ञान ऊपज्यो, जाण्यो पूर्व भव विचार ।
पद्मनन्दी गुरु भेटीया, पहिला जन्म-सस्कार ॥९

तव कुडेश तणे मने उपज्यो वैराग । सयम लीयो निर्मलो करी मग परित्याग ॥१०
जप तप सजम आचरे, करे ते आतम काज । मरण समाधि साधीयो, पाम्यो ते देवराज्य ॥११
गोविन्द पहिले भव दीयो, दीयो पुस्तक दान । तेह फल तस ऊपनो, जाति स्मरण सुज्ञान ॥१२

इणि परि जे भविजन देइ दीये पुस्तक दान ।
लिखि लिखायी, उपदेश देइ, ते लहे केवल ज्ञान ॥१३

ज्ञान दान कथा कही ए, अवर कहूँ सुविचार । वसतिका दान कथा सुणो, संक्षेपे सावधान ॥१४
मालव देश मांहे वसे, घट नामे सुग्राम । देविल नामे कुभकार, नावी धर्मिल्ल नाम ॥१५
मित्राचार हुओ विहु, कीयो मनसु विचार । मठ एक करावीयो, पथी जन साधार ॥१६
एक दिन तणे देवलि, आव्या मुनि भवतार । ता मठ माहि ते राखीया, साहाय्य करे तिणि वार ॥१७

पछें धर्मिल्ल नावी तिणे, आण्यो संन्यासी एक दुष्ट ।
विहु मिलि झगडो करी, नीकाल्या मुनि ज्येष्ठ ॥१८

मुनि कोटर माहे जाय रह्या, स्वामी क्षमा भंडार। वात शीत उष्ण तणां, सहे परीषह-भार ॥१९
पछे ते देवलि जागीयो, कीयो पश्चात्ताप। माहो माहे जुद्ध करी, पाम्या अति दुख पाप ॥२०
आर्त्त ध्याने मरी ते हुओ, व्याघ्रने भय कृष्ट। कुम्भकार मरी वापडु, हुओ सूकर अशुष्ट ॥२१

गुफा द्वारे रहे सूअर, मुनि रहे गुफा मझार।
समाधिगुप्ति पेहलुं नाम, दूजो त्रिगुप्तिमें गुण धार ॥२२
मुनिवर जब देखीया, भणतां सुणी जिनवाणि।
तब सूकर मन ऊपज्यो, जातिस्मरण गुण जाण ॥२३

धर्मोपदेश ते साभली, सुअर हुओ धर्मवत। निज शक्ति व्रत ग्रही, हूओ ते अनि संत ॥२४
मनुष्य गंधे व्याघ्र आवीयो, साहामो सूकर थाय। परस्परे जुद्ध कीयो, वेगे मरण ते पाय ॥२५
व्याघ्र मरण ते पामीयो, पाम्यो नरक अवतार। छेदन भेदन मार-मार, सहे दु:ख पंच प्रकार ॥२६
कुम्भकार ते सुअर, देई वसतिका दान। महर्द्धिक देवपद पामीयो, कल्पवृक्ष विमान ॥२७

इम जाणी जति सहाय कीजे, देय मठ शुभ स्थान।
सुर नर वर गेह पामीइ, लहिये अविचल थान ॥२८

सक्षेपै मै वर्णवी, दान तणी कथा चार। जिन पूजा कथा सांभल्यो, भेद तणी भवतार ॥२९
जम्बूद्वीप पर लिया मणो, भरत क्षेत्र विशाल। आर्य खण्ड माहे मगध देश राजगृह गुण माल ॥३०
श्रेणिक राजा राज करे, चेलना तस राणी। सभा पुरी बैठो भूपत्ती, आव्यो माली एक बार ॥३१

अकाल पुष्प फल भेट लेई, विनय वहे वह वनपाल।
विपुलाचल जिन समोसर्या, श्री वीर सकोमाल ॥३२

तब राजा आणंदीयो, वीर वदण जाय। समोसरणमा जिन पूजो, श्री वद्या जिन पाय ॥३३
पूजि स्तवी जिन पय नमी, गौतम गुरु वद्या। नर सभा बैठो भूपती, धर्मवृद्धि आनद्या ॥३४
देव असुरो ए आवीयो, सुर गयो मडूक चिह्न। देव देखी आचभियो, भूप पूछे तव जिन्न ॥३५
गौतम गणधर (पूछियो) सुणो श्रेणिक राज। देव मोडो जे आवीयो, कारण कहो तस आज ॥३६
राजगृह पुर तुझ तणे, वसे श्रेष्ठी नागदत्त। भवदत्ता राणी तेहतणी, वहु ऋद्धिमो भासत्ति ॥३७
मूढमती साह भद्रक, वापी करावी निज वन्न। पद्म आच्छादी जल भरी, वि द्रव्यो वहु धन्न ॥३८
आर्त्तध्याने श्रेष्ठी मरी, तिर्यञ्च गति ऊपन्नो। वापी माहि मेढक हुओ, जातिस्मरण ते सम्पन्नो ॥३९
भवदत्ता पाणी भरे तिणि वापी तस नार। तल पिडे डकरिवाले चडे, नाखे नीर मझार ॥४०
भवदत्ताइ गुरु पूछिया, मुनि अवधि ज्ञानवन्त। कहो स्वामी कृपा करी, मडूक तणो वृत्तान्त ॥४१
सुवृत्त गुरु कहे साभलो, तम्ह तणो जे कन्त। आर्तध्यान थी अवतर्यो, मडूक भागदन्त ॥४२
जातिस्मरण ज्ञाने करी, तुझ ऊपर धरे स्नेह। तेह भणी खोले चढे, पेहली स्त्री मोही तेह ॥४३
तब नारी वापी आवीया, लीयो मेढक जाणी। घरि आणी कूडी ढव्यो, भरियो निर्मल पाणी ॥४४
तिणे समै वीर समोसर्या, चालो वन्दण राय। भवदत्ता ते संचरी, तव भेक मन ध्याय ॥४५
कमल-पत्र मुखे धरी, हलुऐ हलुए हरि जाय। पुर द्वारे जव आवीयो, तव चांप्यो गज पाय ॥४६
मरण पामी भावे चड़ रो, जिनपूजा परिणाम। सौधर्म स्वर्ग ते अवतर्यो, देव महर्द्धिक ठाम ॥४७
वैक्रियिक देव ते नीपनो, अन्तमुर्हूर्त्त मझार। अवधि ज्ञाने ते जाणीयो, पूरव भव ससार ॥४८
विमान वैसी सुर आवीयो, पूजवा श्री जिनदेव। गौतम कहे सुणो श्रेणिक, उपनो ए सुर हेव ॥४९
देव आवी जिनपूज-स्तवी, भावे करीय प्रणाम। पुण्य घणो पोते करी, वेठो सुर-सभा ठाम ॥५०

तव श्रेणिक आनन्दीयो, उपज्यो पूजा वहु भाव। धन्य धन्य पूजा तिण तणी, भव-सायर जे नाव ५१
जिन-चरणें पद्म तणी, पूजा अष्ट प्रकार। जल आदे फल पर्यन्त, अर्घदान अवतार ॥५२
इम जाणिय जिन पूजो स्तवो, जाप देउ नवकार। उपराज्यो पुण्य वहु भव्य, सफल करो अवतार।५३
सुर नर वर सुख भोगवी, पूज्य वर स्थान। मन वांछित सुख अनुभवी, अनुक्रमे केवलज्ञान ॥५४

वस्तु छन्द

जिनपूजा करो जिनपूजा करो, भविजन भावे करी।
जिनपूजा कल्पतरु समी, चिन्तामणि कामधेनु पूजा निर्भर।
मन वांछित फलदाय इन्द्र जिनेन्द्र पद देई जे मनोहर॥
अनुदिन जे जिनपूजसे, निर्मल करि परिणाम। जिनसेवक पदमो कहे, ते लहे अविचल ठाम ॥५५

ढाल मालंतडानी

व्रत द्वादश इम वर्णव्या ए सुण सुन्दरे, प्रतिमा सुणो हवे भेद। मालंतडा०
मन वचन कायाइ पालीये, ए, सुण सुन्दरे, व्रत प्रतिमा कर्म छेद, मालंतडा० ॥१
सामायिक प्रतिमा त्रीजी ए, सुण सुन्दरे, संक्षेपे कहु सविचार। मालतडा०
सामायिक समता पणु ए, सुण सुन्दरे, राग-द्वेष परिहार, मालतडा० ॥२
नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्र ए, सुण सुन्दरे काल भेद शुभ भाव। मालतडा०
षट् भेद सामायिक ए, सुण सुन्दरे भवसागर जे नाव, मालंतडा० ॥३
शुभ अशुभ नाम जे भणी ए, सुण सुन्दरे, राग द्वेष करो वश्य। मालंतडा०
नाम सामायिक लीजिए, सुण सुन्दरे, सम परिणाम समस्त, मालतडा० ॥४
स्थापना सामायिक साधिए, सुण सुन्दरे, सुख दु खकारी जे द्रव्य। मालंतडा०
ते ऊपर समता भावन ए. सुण सुन्दरे, स्थापना सामायिक दिव्य, मालतडा०॥५
जिनप्रासाद शून्य मठ ए, सुण सुन्दरे, गुफा भूवर उद्यान। मालतडा०
वाल पशू स्त्री वेगला ए, सुण सुन्दरे, निरजन क्षेत्र स्थान, मालतडा० ॥६
पूर्व मध्य अपराह्ण ए, सुण सुन्दरे. दो दो घड़ी त्रिण काल। मालंतडा०
वरखा शीत उष्ण हो ए, सुण सुन्दरे, समय सामायिक विशाल, मालंतडा० ॥७
राग द्वेष सहु परिहरो ए, सुण सुन्दरे, शत्रु मित्र समभाव। मालंतडा०
निर्मल मन निज कीजिए ए, सुण सुन्दरे, ते सामायिक सुभाव, मालंतडा० ॥८
प्रतिलेखी पृथिवी पीठ ए, सुण सुन्दरे, दृढ़ धरी पदमासन्न। मालतडा०
अथवा काउसग्ग ऊभा रही ए, सुण सुन्दरे, थीर करी निज मन्न, मालतडा० ॥९
पूरव उत्तर दिशा रही ए, सुण सुन्दरे, अथवा प्रतिमा सन्मुख। मालंतडा०
हस्त पाद मुख नेत्र-नी ए, सुण सुन्दरे, संज्ञा तजो पर दुःख, मालंतडा० ॥१०
सर्व प्राणी समता पणु ए, सुण सुन्दरे, भावना धरो य सयम। मालतडा०
आर्त्त रौद्र ध्यान तजो ए, सुण सुन्दरे, करो सामायिक उत्तम, मालंतडा० ॥११
आर्त्त ध्यान भेद चार ये, सुण सुन्दरे, इष्ट विरह अनिष्ट संयोग। मालंतडा०
त्रीजो पीडा चितन ए, सुण सुन्दरे, चौथो निदान करें भोग, मालंतडा० ॥१२

इष्ट वियोगे दु ख नही ए, सुण सुन्दरे, अनिष्ट संयोगे नही रोप । मालंतडा०
रोग पीडा चिंतन त्यजो ए, सुण सुन्दरे, निदान त्यजो धरो सत्तोष, मालतडा० ॥१३
आर्त्तं ध्याने पाप उपजे ए, सुण सुन्दरे, पापे पग्गुगत्ति होय । मालंतडा०
इम जाणिय आर्त्ति परिहरो ए, सुण सुन्दरे, धरो सामायिक सोय, मालतडा० ॥१४
रौद्र ध्यान चार सुणो ए, सुण सुन्दरे, हिंसा मृषा स्तेय आनन्द । मालतडा०
विषय सरक्षणा आनन्द ए, सुण सुन्दरे, रौद्र ध्याने पाप वृन्द, मालंतडा० ॥१५
जीव हिंसा झूठे वचन त्यजो ए, सुण सुन्दरे, चोरिये नही पर धन्न । मालतडा०
विषय भोग भावे त्यजो ए, सुण सुन्दरे, भजो सामायिक भविजन्न मालतडा० ॥१६
रौद्र ध्याने तीव्र पाप ए, सुण सुन्दरे, पापे नारक दु.ख होय । मालंतडा०
क्रूर परिणाम टालीइ ए, सुण सुन्दरे, पालीये समभाव सोय, मालतडा० ॥१७
दुर्ध्यान दूरे करो ए, सुण सुन्दरे, चारो धरो धर्म ध्यान । मालत्तडा०
आज्ञा उपाय विपाक विचय ए, सुण सुन्दरे, चौथो त्रिलोक सस्थान, मालतडा० ॥१८
आज्ञा मानो श्री जिन तणी ए, सुण सुन्दरे, चतु˙ कर्म-विनाश उपाय । मालतडा०
कर्म-विपाक फल चितवो ए, सुण सुन्दरे, लोक-सस्थान ते ध्याय, मालत्तडा० ॥१९
धर्मध्याने पुण्य उपजे ए, सुण सुन्दरे, पुण्ये नर-सुर-सौख्य । मालंतडा०
शुक्ल ध्यान धरो भावना ए, सुण सुन्दरे, भावनाए होइ मोक्ष, मालतडा० ॥२०
त्रिविध वैराग्य ते चिन्तवो ए सुण सुन्दरे, भवते भोग शरीर । मालत्तडा०
अनुप्रेक्षा वार चिन्तन ए, सुण सुन्दरे निश्चल करि मन धीर, मालंतडा० ॥२१
कुड्मल कर-युग कीजीइ ए, सुण सुन्दरे, नासा अग्रि निज दृष्टि ।
हीन दीर्घ स्वर नही ए, सुण सुन्दरे, छ राग भास नही धिष्ट, मालतडा० ॥२२
निज करणे सुणीइ जिह ए, सुण सुन्दरे, तिम भणो सामायिक सूत्र । मालंडा०
वचनें अक्षर उच्चरो ए, सुण सुन्दरे, निज मनि अर्थ पवित्र, मालंतडा० ॥२३
भणता पाठ जो आवे नही ए. सुण सुन्दरे, तो पच गुरु नमस्कार । मालंतडा०
पच शत ध्याओ जपो ए, सुण सुन्दरे सामायिक पुण्य साधार, मालत्तडा० ॥२४
मन वचन काया पवित्र करी ए, सुण सुन्दरे, पहरी निमल एक चीर । मालंतडा०
ईर्यापथ-शोधन करी ए, सुण सुन्दरे, कायोत्सर्ग धरि एक धीर, मालतडा० ॥२५
ॐ नम सिद्धेभ्यः इम कही ए, सुण सुन्दरे, भणीए सामायिक शास्त्र । मालतडा०
नव वन्दन देव करो ए, सुण सुन्दरे, तेह भेद सुणो छात्र, गालतडा० ॥२६
पच परमेष्ठी जिन गेह ए, सुण सुन्दरे, जिनप्रतिमा जिनधर्म ।
जिन-वयण ए नय देव ए, सुण सुन्दरे, वदना करो अनुकर्म, मालंतडा० ॥२७
चैत्य भक्ति पच गुरु भवित ए, सुण सुन्दरे शान्तिभक्ति जिनसार । मालंतडा०
त्रण भक्ति दडक तणो ए, सुण सुन्दरे, विधि कहूँ मुणो सजन्न, मालतडा० ॥२८
चैत्य भक्ति आदि पंचांग प्रणाम ए, सुण सुन्दरे, त्रण आवर्त गिर नुति । मालंनडा०
ऐक दडक मध्य कायोत्सर्ग आदि ए, सुण मुन्दरे, त्रण आवर्त गिर नति एक, माल०॥२९
कायोत्सर्गे नवकार नव ए, सुण सुन्दरे ए, नवकार-प्रति त्रणे उच्छ्वास । मालंतडा०
सत्तावीस शुभ दीजीइ ए, सुण सुन्दरे, हीन अधिक न वि श्वास, मालंतडा० ॥३०

कायोत्सर्ग अन्ते आवर्त्त त्रण ए, सुण सुन्दरे, एक शिर नमस्कार । मालंतडा०
दडक अन्ते पचांग प्रणाम ए, सुण सुन्दरे, त्रण आवर्त शिर नति सार, मालंतडा० ॥३१
एणी परे दडक प्रति ए, सुण सुन्दरे, दोइ पंचाग नमस्कार । मालंतडा०
वार आवर्त चार शिर नमी ए, सुण सुन्दरे, एक कायोत्सर्ग धार, मालंतडा० ॥३२
पछे चैत्य भक्ति भणों ए, सुण सुन्दरे, वली पंच गुरु तणी भक्ति । मालंतडा०
शान्ति भक्ति शुभ भणो ए, सुण सुन्दरे, करी सामायिक सदा युक्ति, मालंतडा० ॥३३
त्रण काल सदा कीजीइ ए, सुण सुन्दरे, पूर्व मध्य अपराह्‌ण । मालतडा०
चार घडी मांहे सही ए, सुण सुन्दरे, रखेउ लघे तमे मान, मालतडा० ॥३४
सागारी सामायिकवन्त ए, सुण सुन्दरे, सर्व सावद्य-रहित । मालंतडा०
वस्त्रे वेढ्यो जेहवु मुनिवरु ए, सुण सुन्दरे, तेर चारित्र सहित, मालंतडा० ॥३५
सागारी सामायिक वली ए, सुण सुन्दरे, सोल स्वर्ग-पर्यन्त । मालतडा० ।
सुर नर वर सुख भोगवी ए, सुण सुन्दरे, अनुक्रमे होइ मुक्तिकन्त, मालंतडा० ॥३६
जिनमुद्रा तप श्रुतवन्त ए, सुण सुन्दरे, सदा सामायिक धरे जेह । मालंतडा०
नव ग्रैवेयक लगें ऊपजे ए, सुण सुन्दरे, अभव्य प्राणी वली तेह, मालतडा० ॥३७
आसन्न भव्य जिनमुद्रा धरी ए, सुण सुन्दरे, लेइ सामायिक सार । मालतडा०
दुर्द्धर कर्म सहु निर्जरी ए, सुण सुन्दरे, होइ मुक्ति भवतार, मालंतडा० ॥३८
सामायिक महिमा घणी ए, सुण सुन्दरे, क्रूर जीव वश थाइ । मालतडा०
व्याघ्र सिंह सर्प आदि ए, सुण सुन्दरे, विषम विष तस जाइ, मालंतडा० ॥३९
सुर नर सहु सेवा करी ए, सुण सुन्दरे, शत्रु सवै मित्र होइ । मालंतडा०
मन वांछित फल पामीइ ए, सुण सुन्दरे, सामायिक प्रभावे जोइ, मालतडा० ॥४०
इमि जाणि सदा कीजिइ ए, सुण सुन्दरे, सामायिक गुणधार ।
निज शक्ति प्रगट करि ए, सुण सुन्दरे, घणुं सुं कहिये वारम्वार, मालंतडा० ॥४१
प्रमादपणे जे करे नही ए, सुण सुन्दरे, तृष्णा करि व्यापार । मालतडा०
अष्ट पहर पाप करि ए, सुण सुन्दरे, भमे ते वहु संसार, मालतडा० ॥४२
विषयारम्भ जे जीवडा ए, सुण सुन्दरे, गमें वृथा वहु काल । मालंतडा०
हा हा करतां हीडे सदा ए, सुण सुन्दरे, धर्म थी भूला ते वाल, मालतडा० ॥४३
धर्म-सामग्री दोहिली ए, सुण सुन्दरे, जिम चिन्तामणि रत्न । मालंतडा
विषय प्रमादें का गमो ए, सुण सुन्दरे, करो सामायिक यत्न, मालंतडा० ॥४४
काल कला घडी मुहूर्त्त लगे ए, सुण सुन्दरे, निज शक्ति अनुसार । मालंतडा०
धर्म ध्यान दिन जे गमि ए, सुण सुन्दरे, ते सार्थक अवतार, मालतडा० ॥४५
सामायिक विण नर जाण वा ए, सुण सुन्दरे, गेह रथ्यावेल समान । मालतडा०
जाव जीव ते भार वही ए, सुण सुन्दरे, पामे नरक अवतार, मालतडा० ॥४६
सामायिक पाठ आवे नही ए, सुण सुन्दरे, तो सदा गिणों नमोकार । मालंतडा०
पच परमेष्ठी पद निर्मला ए, सुण सुन्दरे, चौदह पूर्व मांहे सार, मालतडा० ॥४७
वाल नवे सूत सुतता ए, सुण सुन्दरे, मत्र जपो नमोकार । मालंतडा०
सर्व मंत्र तणों नायक ए, सुण सुन्दरे, भवोदधितारण हार, मालतडा० ॥४८

विकट संकट वैरी टले ए, सुण सुन्दरे, विषम विघ्न विनाश, मालंतडा०
नमोकार महिमापणे ए, सुण सुन्दरे, दुख दारिद्र मिटे अरु त्रास, मालतडा० ॥४९
डाकिमणी शाकिणी भुत प्रेत ए, सुण सुन्दरे, खवीस झोटिंग वेताल, मालतडा०
क्रूर ग्रह राक्षस टले ए, सुण सुन्दरे, वाघिन सिंह फणिटाल, मालतडा० ॥५०
विषम विष अमृत हुइ ए, सुण सुन्दरे, दुर्द्धर अग्नि जल थाइ, मालंतडा०
नमोकार प्रभाव घणुं ए, सुण सुन्दरे, जोभे कह्यो किम जाइ, मालंतडा० ॥५१
वाघ वानर श्यान चोर ए, सुण सुन्दरे, मरता लहे नमोकार, मालतडा०
देवतणा पद पामिया ए, सुण सुन्दरे, अनुक्रमें मोक्ष दुआर, मालंतडा० ॥५२
जापतणो विधि साभलो ए, सुण सुन्दरे, अक्षसूत्र लेइ पवित्र, मालंतडा०
मन वच काया निश्चल करी ए, सुण सुन्दरे, मत्र नमोकार विचित्र, मालंतडा० ॥५३
मोक्ष हेतु अंगुष्ठ जपि ए, सुण सुन्दरे, तर्जनी अगुली धर्म-काज, मालतडा०
मध्य अगुली शान्ति-हेतु ए, सुण सुन्दरे, अनामिका अर्थ-समाज, मालंतडा० ॥५४
कनिष्टका सर्व कार्य सिद्ध ए, सुण सुन्दरे, लक्षणइंस्यु जपो मत्र, मालतडा०
मत्र-प्रसादे पामीइ ए, सुण सुन्दरे, दुर्धर जे परतत्र, मालंतडा० ॥५५
अंगुली अग्र जे जप्यो ए, सुण सुन्दरे, जे जप्यो लघी मेर, मालतडा०
ते सहु नि फल जाणवो ए, सुण सुन्दरे, उपजे पुण्य नही भूर, मालतडा० ॥५६
इम जाणि जत्न करो ए, सुण सुन्दरे, मत्र जपो थई सावधान, मालतडा०
पुण्य घणो वली उपजे ए, सुण सुन्दरे, नासे विघ्न वितान, मालंतडा० ॥५७
सामायिक स्तव वंदन प्रतिक्रम ए, सुण सुन्दरे, कायोत्सर्ग प्रत्याख्यान, मालतडा०
अखड पणे सदा कीजिये ए, सुण सुन्दरे, आवश्यक अभिधान, मालतडा० ॥५८
समता सामायिक जाणीये ए, सुण सुन्दरे, जिन चोवीस स्तवन, मालतडा०
एक तणा जिण गुण ए, सुण सुन्दरे, ते वदन पावन्न, मालतडा ॥५९
दोषतणुं आलोचन ए, सुण सुन्दरे, ते कहीइ प्रतिक्रम, मालतडा०
निन्दा गर्हा निज कीजिये ए, सुण सुन्दरे, टालिये पाप कुकर्म, मालतडा० ॥६०
निजशक्ति कायोत्सर्ग धरो ए, सुण सुन्दरे, ऊभा अथवा पद्मासन्न, मालतडा०
वस्त्र परित्याग जे कीजिए, सुण सुन्दरे, ते प्रत्याल्यान यति जन्न, मालतडा० ॥६१
षट् आवश्यक नित पालीइ ए, सुण सुन्दरे, टालीये सकल प्रमाद, मालतडा०
पच इन्द्री मन वश करो ए, सुण सुन्दरे, हारी हरष विषाद, मालतडा० ॥६२
दत विना हस्ती जिम ए, सुण सुन्दरे, दष्ट्रथा विना जिम सिंघ, मालतडा०
आवश्यक विना जति तिम ए, सुण सुन्दरे, नवि सोहे व्रत्त प्रसग, मालतडा० ॥६३
सामायिकतणा दोष त्यजो ए, सुण सुन्दरे, त्यजीये पच अतिचार, मालतडा०
मनवचकाया दु प्रणिधान ए, सुण सुन्दरे, अनादर स्मृति अतर आधार, मालतडा० ॥६४
सामायिकपाठवचने भणो ए, सुण सुन्दरे, सकल्प विकल्प सन्तान, मालतडा०
आर्त्त रौद्र जे चिन्तन ए, सुण सुन्दरे, ते मनि दु प्रणिधान, मालतडा० ॥६५
सुन विना पाठ भणि ए, सुण सुन्दरे, मुखे करे हुकार, मालतडा०
पूर्वाक्य बोले वली ए, सुण सुन्दरे, ते वचन अतिचार, मालतडा० ॥६६

निजकाय चंचल करि ए, सुण सुन्दरे, चलण हस्त संचार, मालतडा०
मुखे नेत्र सज्ञा करि ए, सुण सुन्दरे, ते अंग दूषणकार, मालतडा० ॥६७
प्रमादपणे पाठ जे भणे ए, सुण सुन्दरे, अनादर दूषण तेह, मालतडा०
स्मृति तणो अन्तर करि ए, सुण सुन्दरे, संभारे पाठ नही जेह, मालतडा० ॥६८
इणि परे पच विधि ए, सुण सुन्दरे, त्यजो सामायिक अतीचार, मालतडा०
मन बचन काया ए करी ए, सुण सुन्दरे, धरो समता भवतार, मालतडा० ॥६९
सामायिक सूत्रतणा ए, सुण सुन्दरे, सुणो दोष बत्रीस नाम, मालतडा०
संक्षेपे कहू जुजुआ ए, सुण सुन्दरे, जे कह्या जिन स्वामि, मालतडा० ॥७०
अनादर स्तब्ध प्रविष्ट ए, सुण सुन्दरे, प्रतिपीडित दोलायित नाम, मालंतडा०
अंकुश कच्छपरिंगित ए, सुण सुन्दरे, मच्छ उद्वर्तं दोष भाम, मालतडा० ॥७१
मनोदुष्ट वेदिकावध ए, सुण सुन्दरे, भय दोष विभक्ति ऋद्धि होइ, मालतडा०
गारव स्तेनित प्रत्यनीक ए, सुण सुन्दरे, प्रदुष्ट तर्जित दोष जोइ, मालंतडा० ॥७२
शब्द हेलित त्रैवलित ए, सुण सुन्दरे, संकुचित दृष्ट अदृष्ट, मालतडा०
संघ कर मोचन आलब्ध ए, सुण सुन्दरे, अनालब्ध दोषते दुष्ट, मालतडा० ॥७३
हीन उत्तर चूलिका नाम ए, सुण सुन्दरे, मूक दर्दुर दोष जाणि, मालतडा०
चुल्ललित चरम नाम ए, सुण सुन्दरे, दोष बत्रीस पाप खाणि, मालंतडा० ॥७४
कृतकर्मज आलस करे ए, सुण सुन्दरे, अनादर नाम दोष, मालंतडा०
विद्या अहकार जे करे ए, सुण सुन्दरे, स्तब्ध आकारि ते सेस, मालंतडा० ॥७५
पच परमेष्ठी पासे भणी ए, सुण सुन्दरे, ते कहिये दोष प्रविष्ट, मालंतडा० ।
निज हस्ते जानु युग धरी ए, सुण सुन्दरे, ते पर पीडित निकृष्ट, मालतडा० ॥७६
निज तनु मन चचल करि ए, सुण सुन्दरे, दोष दोलायित तेह, मालंतडा० ।
निज निलाडे अगुष्ठ धरी ए, सुण सुन्दरे, वदनाकुश दोष एह, मालतडा० ॥७७
कटि चचल कच्छप नीयरे चंचल ए, सुण सुन्दरे, मच्छ उद्वर्तित ते भाम, मालतडा ।
.... , मालंतडा ॥७८
सूरी आदि संक्लेश पन ए, सुण सुन्दरे, ते दुष्ट मन दोष, मालतडा०
कर युग्ये जानु विहि जोडी ए, सुण सुन्दरे, वेदिका नाम ते दोप, मालतडा० ॥७९
भय पामी मरण तणो ए, सुण सुन्दरे, ते सामायिक भय होइ, मालंडता०
गुरु तणे भय जे भणि ए, सुण सुन्दरे, ते विभक्ति दोप नुं जोइ, मालतडा० ॥८०
पूजा वाछे जे संघतणी ए, सुण सुन्दरे, गौरव पणें ऋद्धि दोप, मालतडा०
माहात्म्य प्रकाशे जे आप तणो ए, सुण सुन्दरे, भणे गारव ते दोप, मालंतडा० ॥८१
गुरु थी प्रच्छन्न पणे भणे ए, सुण सुन्दरे, ते चोरी दोप वखाणि, मालतडा०
देव शास्त्र थी परान्मुख भणे ए, सुण सुन्दरे, ते प्रत्यनीक दोप जाणि, मालतडा० ॥८२
पर साथें द्वेप क्लेश करी ए, सुण सुन्दरे, वदना ते दोप प्रदुष्ट, मालतडा०
परने भय करतो जे भणी ए, सुण सुन्दरे, तर्जित दोप निकृष्ट, मालंतडा० ॥८३
मौन विना पाठ जे भणि ए, सुण सुन्दरे, ते कहिये वचन दूपण, मालतडा०
आचार्य आदे पराभव करि ए, सुण सुन्दरे ते हेलित दोप लक्षण, मालंतडा० ॥८४

त्रिवली भग अग जे करि ए, सुण सुन्दरे, भाले रेख त्रिवली तेह, मालतडा०
हस्ते स्पर्श संकोचे अग ए, सुग सुन्दरे, वदना दोष सकुचित, मालतडा० ।।८५
संघ सहु देखी भणि ए, सुण सुन्दरे, बाह्य पणे दोष दृष्ट, मालतडा०
सहि गुरु थो उलवी भणे ए, सुण सुन्दरे, पृष्ठतो वदना अदृष्ट, मालतडा० ।।८६
सघ रजि भक्ति वांछिए, सुण सुन्दरे, सघकर मोचन तेह, मालतडा०
पर थी द्रव्य पामी भणे ए, सुण सुन्दरे, आलब्ध नामे दोष एह, मालतडा० ।।८७
लोभे द्रव्य वाछे पर तणो ए, सुण सुन्दरे, ते अनालब्ध दोष नाम, मालतडा०
अर्थ व्यंजन काल हीण भणे ए, सुण सुन्दरे, ते हीन दोष उद्दाम, मालतडा० ।।८८
घुर्घुर नादे मोटे शब्दे भणे ए, सुण सुन्दरे, दर्दुर दोष ते होइ, मालतडा०
पचम रागे पर क्षोभ करे ए, सुण सुन्दरे, धूललित दोष इम जोइ, मालंतडा० ।।८९
इणि परे ब्रत्रीस दोष ए, सुण सुन्दरे, सक्षेपे कह्यो विचार, मालतडा०
विस्तार आगमे जाण जो ए, सुण सुन्दरे, हूँ नर अल्पमति धार, मालतडा० ।।९०
दोप बत्रीस दूरे करी ए, सुण सुन्दरे, परिहरि सयल अतिचार, मालतडा०
मन वच काया दृढ करी ए, सुण सुन्दरे, धरिये सामायिक सार, मालतडा० ।।९१
सदोष वन्दना जु कीजिये ए, सुण सुन्दरे, तो नो होइ पुण्य लगार, मालतडा०
केवल काय कष्टकारी ए, सुण सुन्दरे, श्रम तणो लाहे भार, मालतडा० ।।९२
इम जाणि दोष परिहरी ए, सुण सुन्दरे, धरो समता भवतार, मालतडा०
अखड आवश्यक पालिये ए, सुण सुन्दरे, टालिये दु:ख ससार, मालंतडा० ।।९३
कायोत्सर्ग वदना जे करे ए, सुण सुन्दरे, तेहना दोष बत्रीस, मालतडा०
जे जिन आगम जाणज्यो ए, सुण सुन्दरे, घोटक आदे निर्देश, मालतडा० ।।९४
चहु अगुल तणे अत्तरे ए, सुण सुन्दरे, भू पीठ धरी दोय पाय, मालतडा०
जानु लगे लव हस्त ए, सुण सुन्दरे, निश्चल करी निज काय, मालतडा० ।।९५
बिहु पासे पूठि मस्तकि ए, सुण सुन्दरे, अडकीये किसे नही आणि, मालतडा०
स्वनेत्र सज्ञा किसी ए, सुण सुन्दरे, मौन धरी निज वाणि, मालतडा० ।।९६
इणि परे पाठ जे भणी ए, सुण सुन्दरे, लेइ कायोत्सर्ग गुणधार, मालतडा०
इम दोष कोइ नही होइ ए, सुण सुन्दरे, जो रहे शास्त्र अनुसार, मालतडा० ।।९७
सदा सामायिक कीजिये ए, सुण सुन्दरे, निज शक्ति लेइ कायोत्सर्ग, मालतडा०
सुर नर वर सुख भोगवीइ ए, सुण सुन्दरे, इणि परे होइ अपवर्ग, मालतडा० ।।९८
जिम जिम समता कीजीइ ए, सुण सुन्दरे, तिम तिम दु कर्म हाणि, मालतडा०
पुण्य घणु वली ऊपजे ए, सुण सुन्दरे, पुण्ये स्वर्ग सुख खाणि, मालतडा० ।।९९
यत्ती अथवा गृहस्थ पणे ए, सुण सुन्दरे, समता धरि घड़ी दोय, मालतडा०
मनवांछित सुख ते लहे ए, सुण सुन्दरे, समता तोले नही कोय, मालतडा० ।।१००

वस्तु छन्द

धरो सामायिक, धरो सामायिक भविजन भावे करी ।
मन वचन काया दृढ पणे, करे सामायिक सार निर्मल,
इन्द्र नरेन्द्र पद पायिने, अनुक्रमे सुख देइ ते अविचल ।

अनुदिन जे जन पालसे, व्रत सामायिक सार, जिन सेवक पदमो कहे, ते जासे भव-पार ॥१०१

अथ ढाल सहेलीनी

कही सामायिकसार, भेद त्रीजी प्रतिमा तणो, साहेलड़ी०
कहूँ प्रोषध उपवास, प्रतिमा चतुर्थी सुणो, साहेलडी० ॥१
मास एक मझार, चार उपवास कीजिए, साहेलड़ी०
आठम चौदस पर्व, पोसासहित सदा लीजिए, साहेलड़ी० ॥२
सातमि तेरसे जाणि, अष्टविध जिन पूजा करी, साहेलड़ी०
पूजे जिनवर पाय, सुर पद पूजा अनुसरी, साहेलड़ी ॥३
त्रिविध मिले जो पात्र, प्रासुक आहार तस दीजिए, साहेलड़ी०
सफल करी निज गात्र, अतिथि संविभाग भाव कीजिए, साहेलडी० ॥४
निज स्वजन-सहित आपण पे, एक स्थान करीइए, साहेलडी०
तुष्टि तप एक भक्त, नीर-सहित नित्त पालीइए, साहेलड़ी ॥५
असन पान खादि स्वादि, चतुर्विध आहार करी, साहेलड़ी०
पछें करी मुखि-शुद्धि, वुद्धि निज आहार संचरी, साहेलड़ी ॥६
पछे जई जिनगेह, पाय पवित्र करी, साहेलडी०
सोधी ईर्यापन्थ, निसही निसही त्रणि उच्चरी, साहेलड़ी ॥७
देइ प्रदक्षिणा त्रण, जिन पूजि स्तवन भणी, साहेलड़ी०
करी साष्टांग प्रणाम, नीसरवा कही आवसही त्रणी, साहेलड़ी० ॥८
पूजी सहि गुरु वाणि, पचांग प्रणाम विनय करी, साहेलड़ी०
गुरु उपदेशे उपवास, विधि सहित पोसह धरी, साहेलड़ी० ॥९
रही निरन्तर स्थान, जिन प्रासाद शून्य गेह, साहेलड़ी०
गिरि-गुफा उद्यान, समसान भूमि रही तेह, साहेलडी ॥१०
छाडी घर व्यापार, आरम्भ षट्कर्म परिहरी, साहेलड़ी०
त्रण दिन ब्रह्मचर्य, धरे वस्त्र एक ऊजलो, साहेलड़ी० ॥११
वाली दृढ पद्मासन्न, अथवा कायोत्सर्ग धरी, साहेलड़ी०
कीजे शुभ धर्मध्यान, आर्त्तरौद्र दूरें करी, साहेलड़ी० ॥१२
क्रोध मान माया लोभ, राग द्वेष मद वेगलो, साहेलड़ी०
त्रण दिन ब्रह्मचर्य, धरे वस्त्र एक ऊजलो, साहेलड़ी० ॥१३
भणिये जिनवर-वाणि, विनय व्याख्यान करो, साहेलडी०
छोड़ी विकथावाद, धर्म चर्चा ते अनुसरो, साहेलड़ी० ॥१४
कीजे दोय प्रतिक्रमण, कीजे सामायिक त्रण काल, साहेलडी०
लीजे स्वाध्याय चार योग भक्ति वे गुणमाल, साहेलड़ी० ॥१५
यतितणों आचार, पोसह तणे दिन पालिये, साहेलडी०
जेहवो मुनिवर धीर, वीर विद्याग्रह सम्भालिये, साहेलड़ी० ॥१६
पच परमेष्ठी गुण, षट्द्रव्य पंचास्तिकाय, साहेलड़ी०
सप्त तत्त्व अष्टकर्म, नवपदार्थ विधि न्याय, साहेलड़ी० ॥१७

दशलक्षण जिनधर्म-चैत्य एकादश अंग, साहेलड़ी०
अनुप्रेक्षा वार सुतप, तेर क्रिया व्रत रग, साहेलड़ी० ॥१८
चितो चौद गुणस्थान, प्रमाद पनर प्रजालिये, साहेलडी०
भावना भावो शुभ सोल, सत्तर संजम पालिये, साहेलडी० ॥१९
प्रमाद साढा सात्रीस, लक्ष चौरासी मुनिगुण, साहेलडी०
चरचा कीजे माहो माहि, समता भावे मतिनिपुण, साहेलडी० ॥२०
अष्टमी तणों उपवास, अष्टकर्म तणु हारक, साहेलड़ी०
आपे सिद्धगुण अष्ट, अष्टमी भूमि सुखकारक, साहेलड़ी० ॥२१
चतुर्दशी उपवास, केवलज्ञान प्रकाशक, साहेलडी०
चौदमु देइ गुणस्थान, चतुर्गतिना दुखनाशक, साहेलडी० ॥२२
आठमि चौदसि उपवास, नीर विना सदा जे करे, साहेलडी०
ते पुण्य होइ अपार, पाप दुष्कर्म निर्जरे, साहेलडी० ॥२३
उष्ण लेइ जो नीर, तो आठमो भाग जाइ, साहेलडी०
कसाल्या द्रव्य जल मिश्रा, तो उपवास हीण थाइ, साहेलडी० ॥२४
आठम चौदस उपवास, अखंड पणे जे आचरे, साहेलडी०
सदा पोसा सहित, सदा पंच इन्द्री मन वसि करे, साहेलडी० ॥२५
सावद्य-सहित उपवास, लीपणो जिम धूल ऊपर, साहेलडी०
अथवा जिम गजस्नान, नाखे धूलि सूंढ भर, साहेलड़ी० ॥२६
सावद्य-रहित उपवास, पुण्यकारी कर्म-निर्जरे, साहेलड़ी०
सहित सावद्य उपवास, कष्टकारी कर्म अनुसरे, साहेलडी० ॥२७
निःपातन कुदाल, जालकर्म तरु मूल खणे, साहेलडी०
सो तप वज्र समान, कठिण कर्म पर्वत हणे, साहेलडी० ॥२८
सोल प्रहर नु मान, उत्तम पोसह जिण भण्यो, साहेलड़ी०
धारणा दिन मध्यान, पारणें मध्यान लगे सुणो, साहेलड़ी० ॥२९
धारणे पारणे एक बार, भोजन पानी साथे सही, साहेलडी०
वार पहर ते मध्य, एक दिन वे रात्रि कही, साहेलड़ी० ॥३०
दिन एक रात्रि एक, जघन्य पोसो ते कह्यो, साहेलड़ी०
पोसो नियम सहित, निजशक्ति मन आणीये, साहेलड़ी० ॥३१
पारणे कीजे जिनपूज, पात्रदान वली दीजिये, साहेलड़ी०
निज साधर्मी जिन साथ, भोजन सूं वाच्छल्य कीजिये, साहेलड़ी० ॥३२
निज पर्व उपवास, मूलव्रत जे आचरे, साहेलड़ी०
जीवितव्य तेह प्रमाण, अखंड नियम जे अनुसरे, साहेलड़ी० ॥३३
इम जाणिय तम्हो भव्य, मूलव्रत सदा धरो, साहेलडी०
निज शक्ति अनुसार, उत्तर तप बहु करो, साहेलड़ी० ॥३४
तप ए निर्मल नीर, पाप-कर्दम-प्रक्षालक, साहेलडी०
तप अग्नि जीव सुवर्ण, कर्म-कलक प्रजासक, साहेलड़ी० ॥३५

आठमि चौदसि जाण, जे मूढा मैथुन करे, साहेलडी०
ते नर पशु समान, पाप-फल नरके अवतरे, साहेलडी० ॥३६
आठमि चौदसि तिथि पर्व, निर्मल शील जे ध्याय, साहेलडी०
ते उत्तम गुणवत, पुण्य फले स्वर्गे जाय, साहेलड़ी० ॥३७
पोसा तणे दिन भव्य, शरीर-सिणगार न कीजिये, साहेलडी०
स्नान विलेपन आभरण, सुगध पुष्प न वि लीजिये, साहेलडी० ॥३८
उत्तम प्रतिमावत, पोसह धरो नियम-सहित, साहेलडी०
उत्तम मध्यम अंतर नही ए, अवर विधे जलव रहित, साहेलडी० ॥३९
शक्ति होय जेहनें हीन, ते करे काजी रूक्ष आहार, साहेलडी०
एक स्थान एक भक्त, जघन्य व्रत विधि धार, साहेलडी० ॥४०
करे नही जे उपवास, पंच इन्द्री अग जे पोसे, साहेलड़ी०
ते लपट करे पाप, भव-भव दुख ते सहे, साहेलडी० ॥४१
परवश पड़ियो जीव, लघन कष्ट करे घणु, साहेलडी०
स्वाधीन पणे धर्मकाज, करे नही ते मूढ पणु, साहेलडी० ॥४२
प्रगट करि निज शक्ति, तप व्रत शुभ आचरो, साहेलडो०
तप चिन्तामणि कल्पवृक्ष, सौख्य जिम मोक्ष वरो, साहेलड़ी० ॥४३
निर्दोष कीजे तप, पच अतीचार तजो, साहेलड़ी०
पोसह तणा अतिपात, पच पाप मन तजो, साहेलडी० ॥४४
जो या विणजे द्रव्य, इणी ववो भूमि ऊपर, साहेलडी०
नव लीजे उपकर्ण, विवण पूंजी जोइ, साहेलडी० ॥४५
सथारा कीजे यत्न, आदर करो आवश्यक तणो, साहेलडी०
मन वच करि सावधान, व्रत संभारो आपणों, साहेलड़ी० ॥४६
इणि परे दोष रहित, पोसा तणी विधि पालीइए, साहेलडी०
चौथी प्रतिमा उत्तुग, मन वचन कायाइ सभालीए, साहेलडी० ॥४७
सक्षेपे कह्यो विचार, पोसह तणो मै ऊजलो, साहेलडी०
पोसह तणे फल भव्य, सोलमे स्वर्गे जाइ निर्मलो, साहेलडी० ॥४८
इन्द्र नरेन्द्र पद होइ, मन वाछित सुख पामीये, साहेलडी०
लहे चक्री जिन पद, अनुक्रमे मोक्ष पामीये, साहेलड़ी० ॥४९
सचित्त वस्तुनो त्याग, पचम प्रतिमा साभलो, साहेलड़ी०
सक्षेपे कहुँ सार, कृपा कीजे भेद ऊजलो, साहेलडी ॥५०
हरित्त कद फल फूल, पत्र प्रवाल त्वक् सचित्त, साहेलड़ी०
अप्रासुक जल धान, तेह तणी कीजे निवृत्त, साहेलडी० ॥५१
आर्द्रक आदे कद, आम्र केल आदि फल, साहेलड़ी०
नागवल्ली आदि पत्र, अप्रासुक जल शीतल, साहेलडी० ॥५२
तरु तणी नीली छाल, नीलमा आदि जे कुसुम, साहेलडी०
गोधूम चणका ज्वार, बिरहाली आदि बीज उत्तम, साहेलड़ी० ॥५३

जे जे सचित्त वस्तु, ते ते भक्षण न वि कीजिये, साहेलडी०
अप्रासुक मिश्र प्रासुक, द्रव्य सचित्त सहु तजीजिये, साहेलडी० ॥५४
सूकू पाकू अग्नि, तस कसाल्या द्रव्य माहे भले, साहेलडी०
अथवा कीजे चूर्ण, पूर्ण प्रासुक जन्त्र-दले, साहेलड़ी० ॥५५
शुद्ध प्रासुक जे द्रव्य, स्परस रस गध वरण, साहेलड़ी०
जेह माने निज मन्न, ते प्रासुक वस्तु जोग्य करण, साहेलडी० ॥५६
पृथिवी अप तेज वायु, असंख्य जीव न वि बंधीये, साहेलड़ी०
वनस्पति अनतकाय, तेह जीव न विराधीये, साहेलडी० ॥५७
जो मिले प्रासुक द्रव्य, तो आपणे न विराधीये, साहेलडी०
कोमल करि परिणाम, जीव दया धर्म राखीये, साहेलडी० ॥५८
मन वच कायाइ जाणि, पचम प्रतिमा पालिये, साहेलडी०
जीव दया तेणे काज, जीव हिंसा हु टालिये, सालेहडी० ॥५९
दिवा मैथुन त्याग, रात्रे आहार चार त्यजो, साहेलडी०
छट्ठी प्रतिमा नेम, रात्रि भुक्ति विरति भजो, साहेलडी० ॥६०
अशन पान खादि स्वादिम, अन्न आदि अशन कही, साहेलडी०
जल आदि रस पान, दुग्ध घृत तेल सही, साहेलडी० ॥६१
खाजा मोदक पकवान, फल आदि खादु वस्त, साहेलडी०
लवग एलाची तलोल, स्वादकारी द्रव्य प्रशस्त, साहेलडी० ॥६२
ए चतुर्विध आहार, रात्रि समय न वि खाइए, साहेलड़ी०
थूल सूक्ष्म जीव घात, अन्धकारे न वि देखीए, साहेलडी० ॥६३
दिवस उदय सूर्यमान, घडी य दोय चार होइ जव, सालेहडी०
तव कीजे स भोजन्न, आहार चार भोकल्या तव, सालेहडी० ॥६४
मास एक पर्यन्त, निशा आहार जे नियम करे, सालेहडी०
लहे पुण्य विशाल, उपवास पन्नर फल लहे, सालेहडी० ॥६५
उपवासे होइ कष्ट, निशा आहारे सो हिल्यो त्यजो, सालेहडी०
इम जाणी भव्य लोक, उपवास पुण्य ते तेतलो, सालेहडी० ॥६६
मन वच काया ठाम, परिणामे पुण्य ऊपजे, सालेहडी०
निशाहार चार त्याग, सुख सन्तोष सपजे, सालेहडी० ॥६७
जाव जीव धरे जे नेम, रजनी चहु आहार तणो, सालेहडी०
ते फल बहु उपवास, काल गमे ऊर्ध आपणो, सालेहडी० ॥६८
निशाहार-नियमवन्त, जस पुण्य महिमा घणों, सालेहड़ी०
ऋद्धि वृद्धि लहे सौभाग्य, सुख पामे देव पदतणो, सालेहडी ॥६९
दिवा करे जे मैथुन, ते नर पशु समान, सालेहडी०
दिन अयोग्य यह कर्म, सूर्य साखे कीजे किम, सालेहडी० ॥७०
दिवा ब्रह्मचर्यवन्त, ते नर देव समो कहीइ, सालेहडी०
दिवा कीजे धर्मकाज, लाज काज कीजे नही, सालेहडी० ॥७१

इम जाणी भविजन्न, दिवस मैथुन ते परिहरो, सालेहडी०
राते आहार-परित्याग, छट्ठी प्रतिमा अनुसरो, सालेहडी० ॥७२

दोहा

दिवा ब्रह्मव्रत जे धरे ते नर देव समान । अयोग्य काज किम कीजिए, दिवस खास वदिमान ॥१
लाजे कापड पेहरीए, लाजे दीजे दान । लाजे काज सहू सरे, लाज करो गुणधार ॥२
मन वच कायाइ वश करी, दिने शील पालो सार । रात्रें आहार जे परिहरें, धन धन ते अवतार ॥३
लपट जे नर कामिनी, अयोग्य करे जे काज । निन्दा अपजस ते लहे, सहे ते दुक्ख समाज ॥४
इम जाणी सतोष धरि, म करो कर्म अयोग्य । शुभ सदाचार सचरो, करो मन मन सतोष ॥५
दर्शन आदि छै स्थान, अनुदिन पाले जे सार । जघन्य श्रावकते जाणिये, धरे जे शुभ आचार ॥६

अथढाल अंबिकानी

प्रतिमा छै विशाल, संक्षेपे भेद मै भण्यूं ए । हवे कहूँ शील भेद, प्रतिमा सातमी ते तणुं ए ॥१
सर्व नारी परिहार, देव मनुष्य पशु तणी ए । अचेतन जे नार, चार भेद सेवो झणी ए ॥२
मन वयण निज अग, कृत कारित अनुमोदना ए । नव भेदे त्यजो सग, नारी नरकते नोदना ए ॥३
दृढ धरो ब्रह्मचर्य, निज पर स्त्री दूरे त्यजो ए । व्रत सहु माहे ब्रह्मचर्य, शीलरत्न सदा भजो ए ॥४

स्त्री कथा स्त्री गोष्ठ, स्त्री-संगति दूरे करो ए ।
स्त्री तणी सेवा निकृष्ट, स्त्री-संगति तम्हो परिहरो ए ॥५

वृद्ध यौवन स्त्री बाल, माता वहिन पुत्री सम ए । चिंतवो ते सकोमाल, मन मर्कट गुण दमीइ ए ॥६
सुणो नारी निक्षेद, स्थूल दोष ते साभलो ए । जिम उपजे निर्वेद, सहज भाव ते कसमलु ए ॥७
मूर्खपणो बहु होइ, माया मिथ्यात जु बोलीइ ए । सहज अशुचि तजोइ, पाप-साहस घणु वली ए ॥

सहजें निर्दय परिणाम, लोभ तृष्णा करे घणी ए ।
कलंक तणुं ते ठाम, रामा रंग करो घरो घणी ए ॥९
कचपे जुं आवास, मुख अस्थि चरम पंचरो ए ।
दुर्गन्ध श्लेष्म कुसास, काम आस्वादे कूकरो ए ॥१०
स्तन ए मांस को पिंड, रस रुधिर पश्रु परु वहे ए ।
उदर वृष्टि घडे प्रचंड, कामी काक रागि रहे ए ॥११

कामिनी कलत्र कुस्थान, मूत्र रक्त सदा ए । नरक कुविलन समान, कामी कीट सेवा करे ए ॥१२

बाह्य देखि चाक चुव, जिम पतंग दीवे पडे ए ।
मरे सेवें रागी सुव, मदन विरी जीविने नडे ए ॥१३
अभ्यन्तर भाग अंग, रोग वसे बाहिर जो थाइ ए ।
तो उपजे वहु सुंग, काग माखी भक्षी जाइ ए ॥१४
एह वो अंग अपवित्र, रोगी नर रचे सदा एं ।
सप्त धातु भरयो विचित्र, डाहो नही सेवे सदा ए ॥१५

पुरुष-अंग संयोग, जीव अलब्ध वहु मरे ए । योनि स्थान-उत्पन्न, लिंग सघट्टि हिंसा घणी ए ॥१६

स्त्रीसेवंता एक वार, नव लक्ष जीव मरि ए ।
जिम तिल मरी वंसनाल, तातो जिम दड सचरि ए ॥१७

मैथुन करे जे मूढ, दिन प्रति बहुवार ए।
ते पामे पाव प्रौढ, सहे ते बहु दुख भार ए ॥१८
काम-अनल महादाह, स्त्री सेवे घणुं बले ए।
तेले जिम थाइ उछाह, सतोष नीर वेगे टले ए ॥१९
इम जाणि भव्य जीव, काम सेवा दूरे त्यजो ए।
मने धरो सतोष, दिव्य ब्रह्मव्रत सदा भजो ए ॥२०
दृष्टि विष नागिनि जिम्म, देखी वेगे मानव मरे ए।
देखी रागे नारि तिम्म, दूर थकी नर मन हरे ए ॥२१
नर तणो दृढ ब्रह्म व्रत, नारी संगे वेग जाइ ए।
अग्निताप-सयुक्त, पारो जिम दहु दिस थाइ ए ॥२२
जिन भवने एक वार, जिनदत्त श्रेष्ठि गयो ए।
देखी नारी चित्राकार, दृढ मन पण विह्वल थयो ए ॥२३
संच्यो सठे कालकूट, विष वेदना करे नही ए।
तिणे नारी जब दृष्ट, भ्रष्ट व्रत थयो सही ए ॥२४
सापणि समी विकराल, स्परशी दुख देइ घणु ए।
राग मूकी विष झाल, शील जीवी हरे नर तणु ए ॥२५
वाघ सिंघ तणे वासि, सर्प समीप वसो रूरू ए।
पापिणी नारी ताणे वास, साधु रहियो सदा दूरू ए ॥२६
तालगे नर मोटो होइ जालगे नारी थी वेगलो ए।
जद नारी नेडो सोइ, तब हीणो नार कसमलो ए ॥२७
जिम मागे रंक अन्न, दीन पणे याचना करे ए।
कामे व्याप्यो जब मन्न, तब नारी शील धन हरे ए ॥२८
सर्वथा नारी करो त्याग, रागदृष्टि दूरे करो ए।
जिणें न होइ तुम सो भाग, वैरागभावे परि हरो ए ॥२९
नारी अग सिणगार, रूप-निरीक्षण नवि कीजिए ए।
देखि स्त्रीरूप अगार, पुरुष पतग प्राणी त्यजो ए ॥३०
स्त्री आभरण झकार, रागकारी शब्द त्यजो ए।
मदन पामे विकार, महुअर नादे साप सज ए ॥३१
स्त्री-सयोगे हुइ राग, वीर्यहानि मल विस्तरि ए।
पाप तणो होइ भाग, पापे किम शिव संचरि ए ॥३२
स्त्री साथे हास्य विनोद, कौतुक क्रीडा जे करे ए।
पामे मदन प्रमोद, भाड वचन वली उचरे ए ॥३३
स्पर्श्ये छोडो नारी अग, नयणे रूप न देखीइ ए।
करणे त्यजो शब्द सग रग मन्न नवि पेखीइ ए ॥३४
जिम तिम करीय उपाय, नारी थकी दूरे रहो ए।
मन वच करी वश काम शील व्रत निर्मल लहो ए ॥३५

नारी तणां कटाक्ष-वाणे जे नवि भेदिया ए ।
ते सुभट माहे दक्ष, जिणे शील न छेदिया ए ॥३६
नारी तणा अगोपाग, तीक्ष्ण वाण जे नवि हण्यां ए ।
ते सुभट माहे उत्तुग, ते धन्य पुण्यवंत भण्यां ए ॥३७
दूरि गज वाघ सिंघ, निज हस्तें नर वश करे ए ।
ते हवा भूपति बलवत, विरला जे शील नवि हरे ए ॥३८
दुर्धर काम कहे वाय, पायी त्रैलोक्य माहे फिरे ए ।
इन्द्र फणीन्द्र नरराय, कामे सहु विह्वल कीया ए ॥३९
सबल शूर जे धीर, काम शत्रु जेणे जीतिया ए ।
ते नर गुण गंभीर, नारी रूपे नही छीपिया ए ॥४०
सुख शय्यासन चीर, ताम्बूल पुष्प माला गंध ए ।
दातुन स्नान शरीर, सरागें शीलदोष बधे ए ॥४१
निज अंग मजण जेह, वहु राग जेणे ऊपजे ए ।
चंदण धूपावास देह, सबल काम जेणे सपजे ए ॥४२
एह आदे जे जे वस्तु, तीव्र काम कारी कही ए ।
ते द्रव्य छोड़ो समस्त, शील यत्न करो सही ए ॥४३
कूबड़ी काली कुरूप, नेत्र नासिकाथी वेगली ए ।
बीभत्स दीसे वहुरूप, हस्त पाद छिन्न दूबली ए ॥४४
एहवी देखि कुनारि, स्त्री रागे मूढ नयर नडयो ए ।
पापी मदन विकार, कामी नर तिहां पडयो ए ॥४५
करे मास उपवास, पारणें केवल लेई नीर ए ।
पामी नारी तणो पास, तत्क्षण पडे ते धीर ए ॥४६
मणता जे अग इग्यार, ध्यानी मुनि वैरागिया ए ।
सहि नारी संग असार, शील वेगे तिणे त्यागिया ए ॥४७
हुआ रुद्र जे इग्यार, माता-पिता वली तेह तजा ए ।
थया भ्रष्ट चारित्र भार, विषम संग लही आपका ए ॥४८
एह आदें नर नार, काम रोगे जे घणु रुल्या ए ।
जिन आगम मझार, ते तम्हो सहु साभल्या ए ॥४९
शील तणे प्रभाव, सुर तणां आसन कंपिया ए ।
इन्द्र आदि देवराय, शील धारी गुण जंपिया ए ॥५०
क्रूर वाघ थाइ छाग, सिंघ थाइ भृग समो ए ।
पुष्पमाल थाइ नाग, दुर्धर गज भृगाल समो ए ॥५१
अग्नि फीटी जल होइ, विपम विप अमृत थाइ ए ।
शत्रु सहु होइ मित्र, समुद्र ते गोप्पद थाइ ए ॥५२
कामधेनु कल्प वृक्ष, शील चिन्ता मणि सम कही ए ।
मन वाछित ते लहे सौख्य, शील सोन्हे अवर को नहीं ए ॥५३

शील महिमा जस गुण, एक जीभे किम वर्णव्यूं ए ।
देइ सोलमो स्वर्ग, अनुक्रमे ते सिद्ध थाइ ए ॥५४
मन वच काया आणी ठामि, दृढ, ब्रह्मचर्य पालीइ ए ।
प्रतिमा सातमी ते नाम, पंच अतीचार टालीइ ए ॥५५
नारी अग निरीक्षण, नारी कथा न वि कीजिइ ए ।
पूर्व मुक्त अनुस्मरण, कामकारी रस न लीजिइ ए ॥५६
निज सरीर सिणगार, शील तणा त्यजो दूषण ए ।
अठार सहस्र प्रकार, पालो शील गुण भूषण ए ॥५७
प्रतिमा आठमी कहुँ भेद, एक मना मित्र साभलो ए ।
सर्व आरंभ निक्षेद, आरति निवृत्ति नाम निर्मलो ए ॥५८
पृथ्वी अप तेज वाय, चार थावर सत्त्व कही ए ।
सर्व वनस्पत्ति काय, भूत सत्ता जीव सही ए ॥५९
बे इन्द्री ते इन्द्री चौ इन्द्री, विकलत्रय प्राणि एह ए ।
असज्ञी सज्ञी पचेन्द्री जीव, जाति संज्ञा तेह ए ॥६०
सत्त्व भूत प्राणी जीव, थावर त्रस काय देखोइ ए ।
मन वच काय अतिचार, यत्न सहित दया पेखिये ए ॥६१
छाडि आरभ षट्कर्म, झूठ चोरी मैथुन त्यजो ए ।
परिग्रह थी होइ कर्म, बहु तृष्णा पाप वृक्ष ए ॥६२
छोडो दुर्व्यापार, हिंसा काज पाप कारी ए ।
क्रोध मान कपट असार, लोभ इन्द्री क्षोभ धारी ए ॥६३
कुविणज थी रुडु विष, एक भव दु ख ते देइ ए ।
पाप देइ बहु दुःख, अनेक जन्म कष्ट वेइ ए ॥६४
कुव्यापारे धन्न उपाय, पाप फल एक लो लहि ए ।
धन स्वजन सहु खाय, नरक कष्ट एक लो सहि ए ॥६५
तो किम कीजे ते पाप, दुर्व्यापार दूरे करी ए ।
उगारीइ निज आप, के किहने न वि उधरो ए ॥६६
जिम जिम छोडि पापारंभ, तिम तिम दुष्कर्म निर्झरि ए ।
आलिंगन देइ देव रभ, मुक्ति नारी वेगे वरि ए ॥६७
से नें खणो पृथिवी काय, नीर अग्नि न विराधिये ए ॥
से नें घालो बहु वाय, तरु त्रस जीव न विराधिये ए ॥६८
वापी कूप तडाग, नदी वेहला न खणाविये ए ।
घर हाट आरभ त्याग, गढ गोपुर न चिणाविये ए ॥६९
पर विवाह उपदेश, विषय आरभ न कराविये ए ।
पच पातक गणि वेश, मन इन्द्री निवारिये ए ॥७०
आरभ थी जीव हिंस, हिंसा थी पाप विस्तरे ए ।
पापे दुर्गति वास, विविध दु ख जीव अनुसरे ए ॥७१

इम जाणिय भव्य जीव, सर्व आरभ दूरे करो ए ।
संतोप घरी मन दिव्य प्रतिमा आठमी अनुसरो ए ॥७२
नवमी कहुँ प्रतिमाय, परिग्रह सख्या कीजिये ए । जिम उपजे वहु पुण्य, सतोषे लीजिये ए ॥७३
सग सख्या दग विध, तेह भेद पेहलां कह्या ए ।
कीजे मर्याद प्रसिद्ध, थूल पर्ण तम्हो सर दहो ए ॥७४
वली वली सु कहुँ मित्र, सर्वथा परिग्रह परिहरो ए ।
निज मन करिय पवित्र, सन्तोप सुख सदा धरो ए ॥७५
जिम जिम छाडे सग, तिम तिम वाप ते निस्तरे ए ।
देव-रभा धरे रग, मुक्ति नारी वेगे वरि ए ॥७६
मन वयण निज अंग, कृत्त कारित अनुमोदना ए ।
नव भेदे छांडो सग, नवमी चैत्य गुण नोदन ए ॥७७

दोहा

परिग्रह सव जे परिहरो, सन्तोष धरि निज मन्न ।
मन वच काया वश करो, जिम होइ निर्मल पुण्य ॥१
दर्शन चैत्य आदे करी, जे पाले नव शुभ स्थान ।
मध्यम श्रावक ते जाणिये, सदाचारी गुण निधान ॥२
इणि परे नव प्रतिमा धरे, संवरि दुर्व्यापार । सोलमे स्वर्गे ते ऊपजे, सौख्य तणो आधार ॥३
अनुदिन जे जन पालसी, मध्य भेद श्रावकाचार । जिनसेवक पदमो कहे, ते तिरसी ससार ॥४

ढाल गुणराजनी

नवमीए प्रतिमा भेद, वेदपणे इम उच्चरी ए ।
अनुमणां ए निवृत्त नाम, ठाम दगमी चैत्य वरी ए ॥१
घर हाट ए दुर्व्यापार, हिंसा पाप दूर करो ए ।
गृहस्थ ए षट् कर्मधार, ते अनुमोदना परिहरो ए ॥२
निज पर ए सजन परिवार; विवाह काज न कीजिइ ए ।
जेह थी ए पाप व्यापार, अणु मन चित्त न दीजिइ ए ॥३
अनुमोदना थी उपजे पाप, पापे दु.ख घणु होइ ए ।
गीयाल सावज ए मीन संताप, कष्ट सहे नरक तर्णो ए ॥४
सोपिये ए घर तणो भार, निज सहोदरे अथवा पुत्र ए ।
आपण पै थइए निश्चिन्त, भालवण देई घर सूत्र ए ॥५
जोग्य जाणि ए निज पुत्र जेह, ते घर भार ज परिहरि ए ।
मूढ जीव ए मोहे तेह, पापे अधोगति अवतरे ए ॥६
वहुभार ए जिम डूबे नाव, सर्व वस्तु विनागक ए ।
तिम जीव ए पाप प्रभाव, ससार-सागर वासक ए ॥७
इम जाणि ए छोड़ो घर भार, निज पुत्र पद आपीइ ए ।
दूमेहि ए करे परिहार, वैराग्ये मन व्यापीइ ए ॥८

रहीये ए श्री जिनगेह, गुरु सेवा सदा कीजिये ए।
निज पुत्र ए वन्धव गेह, प्रासुक आहार ते लीजिये ए ॥९
सरस विरस ए मिले जो आहार, हरष विषाद ते परिहरो ए।
छाडिये ए ममता असार, अनुमोदना रखे करो ए ॥१०
इष्ट अनिष्ट ए मिष्ट कडुवु अन्न, राग द्वेप न वि आणीये ए।
शुद्ध वस्तु ए ल्यो मानि मित्र, शुभ-अशुभ न वखाणीये ए ॥११
निज मनि ए धारिय सन्तोष, आहार लेइ•मुख शुद्धि करो ए।
उदर ए पूरी निर्दोष, जिह्वा स्वाद ते परिहरो ए ॥१२
मस्तक ए रोम शिखा मात्र, शिर विटणी अल्प घरो ए।
पे हरि ए उज्ज्वल वस्त्र अग आच्छादो वस्त्रे करी ए ॥१३
रहिये ए श्री जिनगेह, अग पाय पवित्र करी ए।
वदिये ए देव गुरु तेह, भक्ति वात्सल्य विनय धरी ए ॥१४
भणिये ए श्री जिनवाणि, कान सहित ते साभली ए।
कीजिये ए धर्म सु ध्यान, मान मोह थी वेग लो ए ॥१५
इणि परि ए गमा निज काल, साधर्मी सु चरचा करो ए।
गुणवन्त ए गुण विशाल, निज मुखे ते उच्चरो ए ।।१६
दान पूजा ए तप गुणधार, पुण्य काज सदा कीजिये ए।
पालिये ए शुभ आचार, धर्म अनुमोदना कीजिये ए ॥१७
जिणि जिणि ए उपजे पाप, ते ते काज न कीजिये ए।
मूकीये ए ममता ताप, पाप-अनुमति न दीजिये ए ॥१८
चिन्तवीये ए मनहब्भार, धर मोह पास थही ए।
छोड़िये ए जिम बेडी ए चोर गमार, चिन्ते पास किम मोडिये ए ॥१९
करीये आवश्ये ए काल सुलब्ध, जिनदीक्षा कहीये लीजिसी ए।
साधु केरी ए भिक्षा शुद्धि, कही ए पर घर कीजिसे ए ॥२०
इणि परि ए दशमी चैत्य, सक्षेपे मै वर्णवी ए।
इग्यारसी ए चैत्य सुणो मित्र तेह भेद हवे कहू ए ॥२१
वदीइ ए देव गुरु पाय, सजन सहु खमावीइ ए।
निर्मल ए वैराग्य ध्याय, मैत्री भाव धरे बहु ए ॥२२
भव अग ए भोग वैराग, निज मनमे चिन्तन करो ए।
दश विध ए करि सग त्याग, लीजे सजम क्षुल्लक तणो ए ॥२३
इग्यारसी ए प्रतिमा स्थान, प्रथम भेद ते सांभलो ए।
कौपीन ए तणो परिधान, अखण्ड वस्त्र एक निर्मलो ए ॥२४
निज शिर ए तणा जे रोम, कत्तर वा मुडण करे ए।
अथवा ए लोच उत्तम, वैराग्य दया हेतु धरे ए ॥२५
अल्प वित्त ए राखे जात्र, निन्दा शोक न उपजे ए।
निर्भय ए होइ निज गात्र, शील सन्तोष ते उपजे ए ॥२६

शौच तणों ए राखे पात्र, काष्ठ नालीयर लोह तणो ए ।
परिग्रह ए पुस्तक मात्र, ज्ञान अभ्यास कीजे घणो ए ॥२७
पर दीघू ए कौपीन वस्त्र, अखंड अग तिणे आचरि ए ।
प्रतिलेखणि ए लेई पवित्र, कोमल भाव हिये धरी ए ॥२८
चौद घडी ए चडया पछी दीस, पात्र पखाली करधरी ए ।
कीजिये ए नगर प्रवेश, भिक्षा काजे ते सचरे ए ॥२९
सोधतो ए ईर्यापन्थ, चार हस्त निरीक्षण करे ए ।
जेहवो ए चाले निर्ग्रन्थ, सन्नि सेरीए नीसरे ए ॥३०
कंहि साथे ए करे नही बात, वाटे ऊभो रहे नही ए ।
बोले नही ए निज पर क्षात, कपट माया ते नवि कहीइ ए ॥३१
धनवंत ए देखी धनक्षीण, ऊचा घर देखी करी ए ।
लोह हेम ए देखी रत्न, त्रण समता भावे करो ए ॥३२
श्रावक तणां ए देखी घर द्वार प्रथम धरे जइ रहीये ए ।
ऊभो ए अंगण द्वार, नमोकार नव गणो ए ॥३३
दातार ए देखे जब, प्रासुक जल जो लेइ करे ए ।
कर्मवशे ए नवि देखे जेम, तब तु अवर घर जइ ए ॥३४
उदर ए पूरण काज, पांच सात घरे फिरी ए ।
न वि कीजिए मान कुलाज, प्रासुक आहार ते लीजिये ए ॥३५
एक बे ए वासी अन्न, रात्रितणुं राध्युं परिहरो ए ।
स्वाद हीन ए माने नही मन्न, सदोष अन्न ते जाणिये ए ॥३६
तजिये ए सबल आहार, रागद्वेष जेणे होइ ए ।
पामे ए मदन विकार, विरुद्ध वस्तु व्रत खोइ ए ॥३७
श्रावक ए रही एक स्थान, हस्त पाप पखालिये ए ।
लीजिये ए प्रासुक नीर, ध्यान निज नियम सभालिये ए ॥३८
कीजिये ए तब सुभोजन्न, ममता स्वाद ते परिहरो ए ।
कीजिये ए एक आसन्न, पछे मुख शोधन करो ए ॥३९
पालिये ए सप्त मौन धीर, तेह नाम हवे साभलो ए ।
छोड़िये ए संज्ञा शरीर, हुकारादिक वेगलो ए ॥४०
भोजन ए वमन स्नान, मैथुन मल-मोचन तथा ए ।
पूजतां ए श्रीजिन भान, सामायिक मौन यथा ए ॥४१
मौन व्रते ए हुए बहुपुण्य, ज्ञान तणो विनय होइ ए ।
अज्ञाने ए होइ अंदीन, मान लाज ते गुण लही ए ॥४२
जे मूढ ए पाले नही मौन, ज्ञानावरणी कर्म बाधिए ।
मौन मूकीये ए होइ गुण शून्य, दुख दुर्गति ते साधि ए ॥४३
अन्तराय ए पालिये सात, रुधिर चर्म अस्थि देखिये ए ।
जीवतणों ए देखी घात, वस्तु नियम भग पेखिये ए ॥४४

मास तणों ए देखी दर्शन, मद्य गन्ध दूरे त्यजो ए।
सूकातणों ए लही स्पर्शन, आवतो देखी आहार त्यजो ए ॥४५
वहती ए रुधिरनी धार, चार अंगुल अंतर कही ए।
तजिये ए तव आहार, अवर वीभत्स देखी सही ए ॥४६
माजार ए गडक जाण, हिंसक पशु जीव-घात ए।
सांमली ए वयण चंडाल, पुष्पवती नार-दर्शन ए ॥४७
एह आदि ए जे देश रूढ, शास्त्र दूषण ते टालिये ए।
माने नही जे मन प्रौढ, तेह अन्तराय पालिये ए ॥४८
निरदोष ए आहार लेइ तेह, पात्र पखालि यत्नकरी ए।
आवीये ए की जिनगेह, देव गुरु विनय धरी ए ॥४९
आवीये ए सह गुरु पास, आहार-आलोचन कीजिये ए।
धरीये ए अंग उल्लास, अशन प्रत्याख्यान लीजिये ए ॥५०
रुचि नही ए जो विधि एह, तो गुरु गोहन विधि करो ए।
गुरु साथे ए श्रावक गेह-प्रासुक आहार ते अनुसरो ए ॥५१
इणि परि ए पेहलो भेद, अते उद्दिष्ट पालीइ ए।
सावद्य ए कीजे निरवद्य, मन वच काया सभालीइ ए ॥५२
उत्तम ए बीजो प्रकार, तेह भेद हवे सुणो ए।
भामरि ए लेई आहार, उदंड पणे गुण घणो ए ॥५३
परिग्रह ए कौपीन मात्र, कोमल पीछी करधरि ए।
भोजन ए करे करपात्र, एक वार ते पर घरि ए ॥५४
वे त्रण ए गये निज, मास, निज मस्तके लोच करे ए।
वैराग्य ए ज्ञान अभ्यास, निजवीर्य प्रगट धरे ए ॥५५
संथारो ए भूमि पवित्र, अथवा पाटि पाषाण तणी ए।
वैरागी ए त्रिविध विचित्र, दया क्षमा काजे भणी ए ॥५६
कोमल ए तुलिका गादि, सुख सेज्या सुर नर परिहरो ए।
इन्द्री ए करे उन्माद, तजो मदन विकार कारी ए ॥५७
अखड ए आवश्यक धार, अनुप्रेक्षा चिन्तन करो ए।
धर्मध्यान ए कीजे भवतार, आर्त रौद्र ने परिहरो ए ॥५८
मन वच काया जाणि, कृत कारित अनुमोदन ए।
उद्दिष्ट ए आहार दोष खाणि, नव भेदे ते तमे त्यजो ए ॥५९
छ काय ए जीव सघार, उद्दिष्ट पणे हिंसा उपजे ए।
तो किम ए ते लीजे आहार, बहु पाप जेणें सपजे ए ॥६०
षट् मास ए करें उपवास, जो उद्दिष्ट आहार लीजिये ए।
तो तेह ए तप विनास, वृथा श्रम गुण दीइ ए ॥६१
आधा कर्मी ए लेइ आहार, तो जति ते होइ नही ए।
केवल ए वेष आधार, भोजन काजे ते सही ए ॥६२

उद्दिष्ट ए अभक्ष ज जाणि, जिह्वा स्वादे जे ग्रही ए।
तेह थी ए डसुं विष, एक भव दुख ज लहे ए ॥६३
उद्दिष्ट थी ए बहुविध पाप, बहु जन्म ते दुख दीये ए।
पशु गति ए पामे संताप, कष्ट बहु पर ते लहे ए ॥६४
आधा कर्मि ए लेइ जे आहार, ते मूढा आप वंचिये ए।
परनी ए वाए गमार, पाप तणों भार सचिये ए ॥६५
जप तप ए करे जे ध्यान, सम दम सयम आचरे ए।
ते सहु ए थाइ अजान, जो उद्दिष्ट अनुसरे ए ॥६६
उद्दिष्ट ए अनासमो पाप, हुओ, हुइ छै, होसे नही ए।
ते यती ए सहेय सताप, व्रत भंग दूषण लहे ए ॥६७
जे मूढ ए जिह्वा स्वाद, आधा करमी आहार लीये ए।
ते प्राणी ए विषय प्रमाद, निज व्रत ने अंजलि दीइ ए ॥६८
जिणें आहारें ए जाइ चारित्र, निन्दा अपजस बहु विस्तरे ए।
ते अन्न ए छांड़ो मित्र, भव दुख किम निस्तरो ए ॥६९
गृही तणुं ए लेइ आहार, चार विकथा जे करे ए।
भोजन ए राजा चोर, नार, फोके पाप पिंड भरे ए ॥७०
छांडिये ए सहु परमाद, पंच इन्द्री मन संवरी ए।
तजिये ए हरख विषाद, समता भाव सदा धरो ए ॥७१
भणिये ए निर्मल ज्ञान, जप तप सजम आचरिये ए।
कीजिये ए धर्म सु ध्यान, आर्त्त रौद्र सहु परिहरो ए ॥७२
अहो रात्रि ए गमीये काल, धर्म ध्यान सदा रहीये ए।
आवश्यक ए विशाल, निज निज काले ते ग्रहीये ए ॥७३
कीजिये ए त्रण प्रतिक्रम, रात्रे गोचरि दिवस तणो ए।
त्रिकाल ए सामायिक परम योगभक्ति वे हि भणो ए ॥७४
लीजिये ए स्वाध्याय चार, स्तवन वन्दना सदा करो ए।
उत्तम ए कायोत्सर्ग धार, निज शक्ति ते अनुसरो ए ॥७५
अनुप्रेक्षा ए चिन्तविये वार, भावना सोल भावो भली ए।
दश लक्षण ए धर्म विचार, अट्ठावीस गुण बली ए ॥७६
सथारो ए चार हस्त मात्र, जोइ पूजी जत्न करी ए।
उपनो ए जे खेद गात्र, ते उपशान्ति निद्रा धरो ए ॥७७
मध्य रात्रि ए समये तुं जाण, एक मुहूर्त निद्रा कही ए।
वहु निद्रा ए करता हाणि, सावधान थई गुण ग्रही ए ॥७८
काल तणी ए कला निज एक, धर्म विना फोकट गमो ए।
इम जाणी ए धरिय विवेक, धरम ध्यान सदा रमो ए ॥७९
दुर्लभ ए मानुष जन्म, श्रावकाचार अति दुर्लभ ए।
जु लाधो ए तो गाथो परम, नि प्रमादे करो सुलभ ए ॥८०

उत्तम ए पालो आचार, दिन पर ति वृद्ध व्रत ए।
धरिये ए प्रतिमा इग्यार, उत्कृष्ट श्रावक होइ सत ए ।।८१

दोहा

इग्यार प्रतिमा इम कही, संक्षेपे सविचार। विस्तारें आगम जाण जो, जिनशासन अनुसार ।।१
पाक्षिक नैष्ठिक साधक, श्रावक त्रिहु भेद होय। जैन पक्ष सदा धरे, ते पाक्षिक नामे जोय ।।२
श्रावक आचार जे रहे, ते नैष्ठिक गुण नाम। आत्म काज साधे सदा, ते साधक गुण ग्राम ।।३
षट् प्रतिमा जे सदा धरे, जघन्य श्रावक ते जोय। मध्यम पणे प्रतिमा नव, उत्तम एकादश होय ।।४
निज शक्ति को प्रकट करि, प्रतिमा पालें इग्यार।
सोलमां स्वर्ग लगें सुख लहि, पछे पामें मोक्ष दुआर ।।५
सफल जन्म छैं तेहना, सफल जीवी जाणो तेह। जिनसेवक पदमो कहे, श्रावक आचार पालें जेह ।।६

अथ ढाल रसना देवीनी

प्रतिमा कही इग्यार तो, तप बारह हवे सुणो ए।
बाह्य तप षट् भेद तो, अभ्यन्तर षट् भेद भण्या ए ।।१
अणसण पेहलो नाम तो, अवमोदर्य बीजो कह्यो ए।
व्रत परिसख्या त्रीजो तो, चौथो रसत्याग सही ए ।।२
पंचम विविक्त सिज्यासन्न तो, छट्ठी कागा तणो क्लेश ए।
जुजुआ कहुँ तरु भेद तो, जिय गुरु उपदेशे सुण्या ए ।।३
अणसण विधि तप नाम तो, तिथि नक्षत्र वारि ए।
उपवास कीजें तेह तो, जिन शासन अनुसारि ए ।।४
नन्दीश्वर दिन अष्ट तो, आषाढ कातकी मास ए।
फाल्गुण विधि सहित तो, कीजिए पाप-नाश ए ।।५
पचमी श्वेत कृष्ण तो, रोहिणी नक्षत्र माल ए।
पार्श्वनाथ रविवार तो, आठम चौदस सदा करो ए ।।६
श्रावण सातमी मुक्ति तो, मुकुट जिन आगलि धरी ए।
श्वेत दशमी कुंभ नाम तो, पूजा जिन आगल करी ए ।।७
श्रावण मास कृष्ण पक्ष तो, प्रतिपद दिन आदि ए।
सोल कारण उपवास तो, एकान्तर कीजे सदा ए ।।८
मेघमाला श्रुत स्कन्ध तो, व्रत श्री जिन मुख ए।
दीप धूप फल जे द्रव्य तो, मास लगें कीजे दक्ष ए ।।९
चन्दन षष्ठी लब्धि विधि तो, त्रैलोक्य त्रीज कही ए।
आकाश पचमी सातमी निर्दोष तो, सुगंधे दशमी सही ए ।।१०
सरस्वती दिन इग्यार तो, पुष्पाजलि दिन पच ए।
दश लक्षणी दिव्य धर्म तो, कीजे विधि पुण्य सच ए ।।११
श्रावण द्वादशी व्रत तो, अनन्त चौदस चग ए। रत्नत्रय पवित्र तो, सदा कीजे मन रंग ए ।।१२
मुक्तावली इन्द्र विधान तो, कनकावली रत्नावली ए।
पल्य विधान पुण्यवन्त तो, कीजें एक द्विकावली ए ।।१३

त्रेपन क्रिया उपवास तो, जिन गुण संपत्ति धरो ए।
कल्याणक अष्ट कर्म चूर तो, दु ख हर सुख सपत्ति ए ॥१४
नन्दीश्वर लक्षण पक्ति तो, मेरु विमान पक्ति ए।
त्रैलोक्य सार मृजु मध्य तो, सिह नि क्रीडित मुक्त ए ॥१५
एह आदे वहु तप तो, श्री जिनशासन माहि ए।
शक्ति प्रगट करी निज तो, तप कीजे कर्म दाह ए ॥१६
एकेके तप प्रभाव तो, कर्म अनन्त हणि ए।
समकित वले भव्य जीव तो, हुआ मुक्ति नारी धणी ए ॥१७
अणसण कही उपवास तो, एक दोय त्रण आदि ए।
अष्ट पक्ष दिन मास तो, कीजे निज शक्ति सारू ए ॥१८
वत्रीस कवल तणो आहार तो, कवल सहस्र तन्दुल तणो ए।
अवमोदर्य वीजे तप तो, एक आदे एक जे ऊणो ए ॥१९
व्रत परिसंख्या तप तो, पुर घर सेरी भणी ए।
मन चिन्त्या वस्तु सख्य तो, कीजे ते दिन प्रति भणी ए ॥२०
षट रस तणो परित्याग तो, दिन प्रति एक को त्यजो ए।
वैराग्य सन्तोष काज तो, रस त्याग सदा भजो ए ॥२१
जुजुआ सेज्यासन्न तो, जीव तणी बाधा टालो ए।
एकाकी करो नित्य ध्यान तो, तप विविक्त पालो सदा ए ॥२२
परीषह सहो त्रण काल तो, वर्षा शीत उष्ण तणा ए।
सुभट पणे थई धीर तो, काय क्लेश तप घणा ए ॥२३
इणि परे वाह्य छ तप तो, कीजे मन इन्द्री दड ए।
इच्छा निरोधनी तप तो, ममतानें मोह खड ए ॥२४
अभ्यन्तर तणा तप तो, षट भेदे ते सांभलो ए।
मन परिणामे होय तो, शुद्ध भावे ते तप भलो ए ॥२५
प्रायश्चित्त तप पेहलो नाम तो, विनय तप बीजो कही ए।
वैयावृत्त त्रीजो होइ तो, चौथो ते स्वाध्याय लही ए ॥२६
पंचमो कायोत्सर्ग तो, छट्ठउ धर्म ध्यान तणो ए।
अभ्यन्तर भावे एह तो, तप करम हणे घणां ए ॥२७
पालतां सजम भार तो, पाप करम वसि ए।
उपजे दूषण व्रत तो, प्रायश्चित्त लीजे तस ए ॥२८
जे देव गुरु सानिध्यतो, दोस आलोचन करि ए।
प्रायश्चित्त लीजे व्रत योग तो, निज निन्दा गर्हा धरि ए ॥२९
आलोचन प्रतिक्रम तो, ते दोय विवेक पणु ए।
व्युत्सर्ग तप छेद तो, परिहार उपस्थापना घणु ए ॥३०
नव भेदे प्रायश्चित्त तो, लीजे निज मन शुद्ध सुं ए।
निर्मल पणे व्रत होय तो, इम कहे गुरु वुद्धि तो ए ॥३१

विनय चहुविध भेद तो, रत्नत्रय तप तणो ए । उपचार विनय तेह तो, ते तप गुणवन्त भण्यु ए ॥३२

निःशंक आदि अष्ट गुण ए. ए दर्शन गुण ऊजलो ए ।
व्यंजन अर्थ समग्र तो, ज्ञान अष्ट गुण निलो ए ॥३३
दर्शन ज्ञान चारित्र तो, ते विनय तप घणो ए ।
उपचार विनय बिहु भेद तो, प्रत्यक्ष परोक्ष सुणो ए ॥३४

व्रत समिति गुप्ति तो, तेर भेदे चारित्र ए । द्वादश भेदे तप तो, ए उपचार पवित्र ए ॥३५

प्रत्यक्ष गुरुतणी भक्ति तो, मन वच कायाइ कीजिये ए ।
प्रशस्त विनय मन तीज तो, दुर्ध्यान दूरे त्यजिये ए ॥३६
हित मित मीठो बोल भास तो, कठिण करकस टालिये ए ।
दुर्वाक्य दूरे छोड तो, वचन विनय ते पालिये ए ॥३७
गुरु देखि कीजे अभ्युत्थान तो, प्रणाम करि अजलि ए ।
आसन उपकरण दान तो, सह गुरु वली वीचल ए ॥३८
एह आदे विनय कीजे तो, मन वच काया पणे ए ।
गुरु आज्ञा वहे जेह तो, परोक्ष विनय ते भणी ए ॥३९
विनय कीधे बहु पुण्य तो, जस गुण अति विस्तरे ए ।
॥४०

वैयावृत्त्य दश भेद तो, आचार्य उपाध्याय तपस्वि ए ।
शैक्ष्य ग्लाण गण कुल तो, संघ साधु मनोज्ञ पद दश ए ॥४१
मनवचकायाइ भक्ति तो, कीजे श्रावक यति तणो ए ।
आहार औषध देइ दान तो, सुश्रूषा कीजे घणी ए ॥४२
जिम किम जाइ जती रोग तो, साम्हो उपाय करो घणो ए ।
कीजे साधु समाधि तो, सदा वैयावृत्त धरो ए ॥४३
वैयावृत्त्य फल नन्दिषेण तो, इन्द्री बहुगुण ठव्यो ए ।
दशमे जई देवलोक तो, पछे ते वसुदेव हुवो ए ॥४४
द्वारावतीइ श्री कृष्ण तो, मुनिने औषध करीइ ए ।
मतिवर टाल्यो रोग तो, तीर्थंकर पुण्य वरीइ ए ॥४५
इम जाणिय भव्य जीव तो, वैयावृत्त्य जे करी ए ।
भोगवी सुरनर सुक्ख तो, शिवपुरी ते सचरी ए ॥४६
स्वाध्याय पच भेद तो, वाचना पृच्छना आम्नाय ए ।
अनुप्रेक्षा धर्म उपदेश तो, सदा ते कीजे स्वाध्याय ए ॥४७
पुस्तक वाचो पूछो अर्थ तो, आम्नाय अनुक्रमे भणो ए ।
अर्थ चितन अनुप्रेक्ष तो, उपदेश धर्म जिनतणो ए ॥४८
इणि परिकीजे स्वाध्याय तो, इन्द्री मन वच सवरो ए ।
अध्ययन परम तप तो, सदा ज्ञान अभ्यास करो ए ॥४९
धरो बहुभेदे कायोत्सर्ग तो, ऊभाने आसन रही ए ।
मूकी ममता सग मोह तो, व्युत्सर्ग ति एते कही ए ॥५०

त्यजी दुर्ध्यान आर्त्त रौद्र तो, चहु भेदे आर्त्तध्यान ए।
इष्ट अनिष्ट विरह संयोग तो, पीडा चिन्ता निदान ए ॥५१
निज नारी पुत्र मित्र तो, सुखकारी वस्तु इष्ट ए।
वियोग थाइ ज्यारे तेह तो, परिणाम होइ क्लिष्ट ए ॥५२
दुष्ट नारी दुष्ट पुत्र तो, दुर्जन दुखकारी ए।
अनिष्ट संजोगे जीव तो, होए वहुकष्ट धारी ए ॥५३
वेदनी उदय असाता तो, बहुरोग ते उपजे ए।
पीडा चिंता टालो तेह तो, सवेगे सुख संपजे ए ॥५४
दान पूजा जप तप तो, ध्यान अध्ययन आचरि ए।
निदान वाछे दुर्भोग तो, रागने द्वेषे करी ए ॥५५
ए हवो त्यजो आर्त्तध्यान तो, पशुगतिने दुख देखि ए।
भूख तरस सहे बहुभार तो, मार ताड़ कष्ट सहे ए ॥५६
चहुभेदे रुद्रध्यान तो, हिंसा मृषा स्तेयानन्द ए। विषयसरक्षणानन्द तो, उपजे पाप वृन्द ए ॥५७
जीव-हिंस हिंसानन्द तो, झूठू वचन मृषानन्द ए।
पर-द्रव्य-चोरी स्तेयानन्द तो, इन्द्री भोग विषयानन्द ए ॥५८
क्रूर मन भावे बहु पाप तो, रौद्रध्याने नरक माहे ए।
छेदन भेदन मार मार तो, बहुविध दु ख सहे ए ॥५९
इम जाणि तजो आर्त रौद्रतो, आज्ञा उपाय विचय ए।
विपाक विचय त्रीजो ध्यान तो, चौथो सस्थान विचय ए ॥६०
निज गुरु मानो आण तो, उपाय कर्मनाश तणो ए।
कर्म उदय फल विपाक तो, त्रैलोक्य सस्थान भणो ए ॥६१
उत्तम चार धर्मध्यान तो, पदस्थ पिडस्थ कह्यो ए। रूपस्थ रूप-अतीत तो, मन विकल्प ग्रह्यो ए ॥६२
जे जिनवयन विशाल तो, आगम पुराण घणां ए।
चिंतो पद अक्षर मत्र तो, तेह परस्थ ध्यान भण्या ए ॥६३
पार्थिवी आग्नेयी मारुती तो, वारुणी तत्त्व रूपवती ए।
पच धारणा पिंडस्थ तो, ध्यान ध्यावो जिनपती ए ॥६४
पच परमेष्ठी रूप तो, अरिहन्त सिद्ध सूरी तणो ए।
उपाध्याय साधु सुगुण तो, रूपस्थ रूप आपणो ए ॥६५
विकल्प संकल्प रहित तो, रूप कहि तणुं नही ए।
केवल ज्योति स्वरूप तो, रूपातीत ध्यावो सही ए ॥६६
चहुं भेदे शुक्लध्यान तो, पृथक्त्व वितर्क विचार ए।
एकत्व वितर्क विचार तो, सूक्ष्म क्रिया अप्रतिपाति सार ए ॥६७
व्युपरत क्रिया निवृत्ति नाम तो, शुक्लध्यान सदा ध्याइ ए।
ज्ञान वैराग्ये होइ तो, शुभ भावना भावजो ए ॥६८
ध्यानतणो प्रकार तो, इहाँ संक्षेपें आण्यो ए।
ध्यानामृतरास मझार तो, विस्तारें तिहा जाण जो ए ॥६९

बाह्य अभ्यन्तर तप तो, द्वादश भेद कह्या ए।
संक्षेपे कह्यो सविचारतो, विस्तार आगमे लही ए ॥७०
तप ते बहुअ प्रभाव तो, महिम्ना जस घणो ए।
पंच इन्द्री चचल मन तो, वशकारी तप सुणो ए ॥७१
तप फले बहु रिद्धि तो, सिद्ध होइ मन तणी ए।
सप्त भेदे महाऋद्धि तो, लब्धि उपजे घणी ए ॥७२
वुद्धि नाम तप रिद्धि तो, विक्रिय ओषध ऋद्धि ए।
वल लब्धि रस रिद्धितो, अक्षीण मानस ऋद्धि ए ॥७३
एह आदे अड़तालीस रिद्धि तो, पच भेद शुभ ज्ञान ए।
कान्ति कला कोवाद तो, होइ गुण निधान ए ॥७४
इम जाणि भव्यजीव तो, तप सदा आचरो ए।
कठिण हणी कुकर्म तो, मुक्तिनारी वेगे वेरो ए ॥७५
तप तीव्र अग्निवाले तो, जीव हेम निर्मल थाइ ए।
ध्यान रसायण दीधतो, कर्म दूरे जाइ ए ॥७६
रागद्वेष कीजे दूर तो, हृदय धरि समभाव ए। ते तप साफल्य होइ तो, भव-सागर नाव ए ॥७७
रागद्वेषे करी जे तप तो, ते कष्टकारी काय ए।
रेणु-पीलन, जल-मन्थ तो, जिम श्रम निष्फल थाय ए ॥७८
तप चिन्तामणि कामधेनु तो, तप ते कल्पवृक्ष सम ए।
सुरनर वर सुख होइ तो, अनुक्रमे लहे मोक्ष ए ॥७९

दोहा

जिन गेहमा कीजे नही, विकथा विनोद विलास।
खेल सिंहाणय मलमूत्र आदि व्यापार व्यसन उपहास ॥१
काम क्रीडा कोप कलि, त्यजो चतुर्विध आहार।
अवर आसादना सहु तजो, जिन प्रासाद मझार ॥२
रीति करी न वि भेटीइ देव, जिनवाणी गुरु धर्म।
विवेक गुण हृदय धरि, विवेकें होइ पुण्य परम ॥३
दिनकर उदये अस्त हते, दिवस घडी छो विशाल।
धर्मव्रत काजि ग्रही, अवर नही हीन काल ॥४
तिथि पूरी जा लगि मिले, ता न वि कीजे काल।
हीन घड़ी छो माहि कीजे नही, इम कहे श्रीजिनभान ॥५
देव शास्त्र गुरु पूजा तणो, जे जन खाइ निर्माल्य।
वश छेद रोग पामी ने, नरके दु.ख सहे बाल ॥६
निर्माल्य खाइ जे जीव घणु तेहथी रुडु विष भक्ष्य।
एक भवे विष दुख देसे, निर्माल्य वहु भव दु ख ॥७
भेदज्ञान भवि मन धरी, सदा धरो आचार। जिन सेवक पदमो कहे, सफल करो संसार ॥८

ढाल नरेसुआनी

तप द्वादश इम वर्णवीए, नरेसुआ, हवे कहुँ त्रिरत्न ।
दर्शन ज्ञान चारित्र मय ए, नरेसुआ. सदा कीजे तस यत्न ॥१
त्रिहु भेदे ते साभलो ए, नरेसुआ, विधान भेद विवहार ।
निश्चय रत्नत्रय निर्मलो ए, नरेसुआ, ते उतारे भवपार ॥२
भाद्रव माघ चैत्र मास ए, नरेसुआ, श्वेत द्वादशो त्रस दीस ।
देव पूजो जात्रा दान देई ए, नरेसुआ, प्रासुक शुद्ध लीजे अन्न ॥३
एक भक्त धारण करी ए, नरेसुआ, लीजे त्रण उपवास ।
गुरु साक्षे पोसा सहित ए, नरेसुआ, कीजो जागरण उल्हास ॥४
दर्शन ज्ञान चारित्रतणा ए, नरेसुआ, हेम आदि त्रण जंत्र ।
विधि अनुक्रमें मंडाविए, नरेसुआ, लिखी ते निज निज मन्त ॥५
नि.शंक आदि अष्ट अंग ए नरेसुआ, संवेग गुण पवित्र ।
अष्ट मन्त्र तिहां लिखीइ ए, नरेसुआ, पूजो दर्शन जन्त्र ॥६
व्यंजनोर्जित आदि अष्ट गुण ए, नरेसुआ, पूजो निर्मल ज्ञान ।
तेर भेद चारित्र गुण ए, नरेसुआ, पूजो यन्त्र अभिधान ॥७
देव आगम गुरु पूजी ने ए, नरेसुआ, स्नपन करी वर जंत्र ।
विधि सहित विवेक पणे ए, नरेसुआ, अष्ट द्रव्य पवित्र ॥८
जल गंध अक्षत पुष्प वर ए, नरेसुआ, दीप धूप फल सार ।
अर्घ उतारी जाप स्तवन भणी ए, नरेसुआ, जयमाल भक्ति नमस्कार ॥९
तेरसि चौदसि पूनम दिन ए, नरेसुआ, दिन प्रति त्रण काल ।
वहु भव्य जन सु परिवर्या ए, नरेसुआ, जंत्र पूजो गुण माल ॥१०
प्रभाते दर्शन पूजा करो ए, नरेसुआ, मध्याह्न समय पूजो ज्ञान ।
अपराह्न वेला चारित्र पूजो ए, नरेसुआ, कीजे वाजित्र नृत्य गान ॥११
त्रण दिन इम पूजीइ ए, नरेसुआ, सुणो, कथा जिनवाणि ।
पारणें स्नपन पूजा करी ए. नरेसुआ. खमावी देव गुरु जाणि ॥१२
साधर्मी साथे जिन घर आवी ए, नरेसुआ, पात्र दीजे शुभ दान ।
पछें पारणुं कीजिइ ए, नरेसुआ, रत्नत्रय कीजे विधान ॥१३
त्रणवार इस कीजिइ ए, नरेसुआ, वरस त्रण पर्यन्त ।
अथवा निज शक्ति करी ए, नरेसुआ, सदा पाक्षिक जन सन्त ॥१४
नैष्ठिक श्रावक तम्हो सुणो ए, नरेसुआ, भावना भावो व्यवहार ।
रत्नत्रय तणी निर्मली ए नरेसुआ, भावना पुण्य भवतार ॥१५
वैश्रमण भूपें कीयो ए, नरेसुआ, रत्नत्रय विधान ।
त्रीजे भवे तीर्थंकर हुओ ए, नरेसुआ, मल्लिनाथ जिन भान ॥१६
निःशंकित नि.कक्षित अंग ए, नरेसुआ, निर्विचिकित्सा अमूढ ।
उपगूहन स्थिति करण ए. नरेसुआ, वात्सल्य प्रभावना प्रौढ ॥१७

नि शंक आदे अष्ट अग ए, नरेसुआ, सवेंग आदे आठ गुण ।
उपशम वेदक क्षायिक ए, नरेसुआ, दर्शन पालो निपुण ॥१८
कुज्ञान त्रण दूरे करी ए, नरेसुआ, पालो पच शुभ ज्ञान ।
मतिश्रुत अवधि मन पर्यंय ए, नरेसुआ, केवल बोध निधान ॥१९
त्रण सै छत्रीस भेद ए नरेसुआ, मतिज्ञान तणा होय ।
पंचवीस भेदे श्रुत ज्ञान ए नरेसुआ, पटविध अवधि जोय ॥२०
ऋजु विपुल मति नाम ए, नरेसुआ, मनपर्यय भेद दोय ।
केवल ज्ञान एक निर्मलो ए, नरेसुआ, ज्ञान तो ले नही कोय ॥२१
पच महाव्रत समिति पच ए, नरेसुआ, तीन गुपति पवित्र ।
यतीवर ते सदा धरे ए, नरेसुआ, तेरे भेदे चारित्र ॥२२
सर्वथा जीव दया पालो ए, नरेसुआ, सर्वदा सत्य विशाल ।
सर्वदा अचौर्य व्रत भलो ए, नरेसुआ, ब्रह्मचर्य गुणमाल ॥२३
आकिंचन नि स्पृहपणें ए, नरेसुआ, पच महाव्रत जेह ।
ईर्या भापा एपणा समिति ए, नरेसुआ, आदान निक्षेप प्रतिष्ठापन तेह ॥२४
ईर्या समिति जुगमात्र जोइ ए, नरेसुआ, भापा समिति वोले सत्य ।
दोप त्राणु थी वेगला ए, नरेसुआ, एपणा समिति जीव हित ॥२५
आदान निक्षेपण यत्ने करो ए, नरेसुआ, लेओ मूको यत्ने वस्तु ।
जीव जोइ मल नीत चव्यो ए, नरेसुआ, प्रतिष्ठापना ते प्रशस्त ॥२५
मन वचन काया तणी ए, नरेसुआ, परिहरो दुर्व्यापार ।
त्रण गुप्ति सदा धरि ए, नरेसुआ, चारित्र तेर प्रकार ॥२७
दर्शन ज्ञान चारित्र रत्न ए, नरेसुआ, पालो मुनि व्यवहार ।
भक्ति सुश्रूपा तेहनो करो ए, नरेसुआ, भावना भावे ब्रह्मचार ॥२८
निज योग्य जे दर्शन ए, नरेसुआ, आपण जोग्य जे ज्ञान ।
जेह निज योग्य होवे व्रत ए, नरेसुआ, जत्न करो सदा तेह ॥२९
शुद्ध बुद्धमय निर्मलो ए, नरेसुआ, आत्म रुचि दर्शन ।
आपे आप सदा धरो रुचि ए, नरेसुआ, ते निश्चय दृष्टि गुण ॥३०
निर्विकल्प निज वेदन ए, नरेसुआ, निश्चय ज्ञान गुण होय ।
आपे आप वेदे सदा ए, नरेसुआ, अवर न वेदे कोय ॥३१
सर्व परिग्रह थी वेगलो ए, नरेसुआ, उज्ज्वल सहज स्वरूप ।
आपे आप स्थिति जे करि ए, नरेसुआ, ते निश्चय चारित्र रूप ॥३२
निश्चय रत्नत्रय कारण ए, नरेसुआ, पेहलो कह्यो विवहार ।
विवहार विना निश्चय नही ए, नरेसुआ, व्यवहार निश्चय साधार ॥३३
निश्चय रत्नत्रय होइ ए, नरेसुआ, जो होइ समता भाव ।
तेह भणी समता धरो ए, नरेसुआ, भव-सागर जे नाव ॥३४
राग द्वेष सहु परिहरि ए, नरेसुआ, शत्रु मित्र सम जोय ।
हेम लोह त्रण रत्न ए, नरेसुआ, सुख-दुख सम जोय ॥३५

क्रोध मान माया लोभ ए, नरेसुआ, छोडो कषाय ते चार।
कषाय त्यजे नही जा लगे ए, नरेसुआ, त्या नही समता भाव ॥३६
क्रोध मान माया टालीये ए, नरेसुआ, आपण परने करे रोष।
गुण तो अंश न उपजे ए, नरेसुआ, अवगुण उपजे लाख ॥३७
माने निधाने ए दुःख तो ए, नरेसुआ, मान लोपे जीव सान।
माने केह ने माने नही ए, नरेसुआ, जिम मतवालो अज्ञान ॥३८
माया पिशाची परिहरो ए, नरेसुआ, माया ते दु ख दातार।
कपटें कूडे घणु नड्या ए, नरेसुआ, रड्या ते भव मझार ॥३९
लोभ क्षोभ करे धर्म तणुं ए, नरेसुआ, लोभी नही किही सुक्ख।
गुण दोष जाणे नही ए, नरेसुआ, लोभी देखे सदा दुक्ख ॥४०
कोपे द्वीपायन दुर्गति गयो ए, नरेसुआ, वशिष्ट मुनि तप भ्रष्ट।
मधुपिंगल देव दुर्गति गयो ए, नरेसुआ, वाहु दडक देश नष्ट ॥४१
माने रावण दुर्गति गयो ए, नरेसुआ, केशव कौरव पीर।
माया करि मरीचि मुओ ए, नरेसुआ, दुर्गति पाम्यो, दु ख भीर ॥४२
लोभे लुब्भदत्त मुओ ए, नरेसुआ, कूप माहे मधु बिन्दु काज।
नवनीते श्मश्रु वली मूओ ए, नरेसुआ, लोभ करी बहु राज ॥४३
एकेक कषाय वशि बापडा ए, नरेसुआ, भमे ते बहु संसार।
चार कषाए जे करे ए, नरेसुआ, तेहना दु ख नो नही पार ॥४४
राग राक्षस रल्या घणुं ए, नरेसुआ, गल्या ते रागी बहु जीव।
हित अहित ऊ लखे नही ए, नरेसुआ, भव-दुख सहे अतीव ॥४५
द्वेष धूतार धूते घणू ए, नरेसुआ, जीव ने द्ये बहु दुक्ख।
चहुं गति मांहे प्राणिआ ए, नरेसुआ, द्वेषे नही किहां सुक्ख ॥४६
राग द्वेष अग्नि वले ए, नरेसुआ, देह पोला काष्ठ मझार।
समता जल विण जीव कीट ए, नरेसुआ, कष्ट सहे ते गमार ॥४७
इम जाणी राग द्वेष त्यजो ए, नरेसुआ, भजो समता परिणाम।
क्रूर भाव सहु परिहरी ए, नरेसुआ, प्रशस्त करो मन ठाम ॥४८
समता भाव कीजे सदा ए, नरेसुआ, भावना भावो वली चार।
मैत्री प्रमोद करुणापणां ए, नरेसुआ, मध्यस्थ भाव भवतार ॥४९
सर्व प्राणी मैत्री भाव ए, नरेसुआ, प्रमोद करो गुणवन्त।
क्लिष्ट जीव कृपापणु ए, नरेसुआ, विपरीत देखि मध्यस्थ सन्त ॥५०
सम परिणामनि कारण ए, नरेसुआ, चितो त्रिविध वैराग।
संसार भोग शरीर संपन ए, नरेसुआ, मोक्ष तणु जसु माग ॥५१
संसार सागर दु:खे भर्यो ए, नरेसुआ, दु ख ते पच प्रकार।
द्रव्य क्षेत्र काल भव भाव ए, नरेसुआ, परावर्त अनन्ती वार ॥५२
भोग रोग सम जाणिये ए, नरेसुआ, जिम चचल सन्ध्या-राग।
लव-सम सुख देय करी ए, नरेसुआ, दुख देह मेरु-सम भाग ॥५३

शुक्र शोणित थी उपज्यो ए, नरेसुआ, सात धातु मय देह ।
सर्व अशुचिनों पोटलु ए, नरेसुआ, डाह्वो किम करेय सनेह ।।५४
चपल मन गज वाधवा ए, नरेसुआ, वैराग स्तम्भ समान ।
सुमति संकल स्युं साकल्यो ए, नरेसुआ, अकुश देय भेदज्ञान ।।५५
पचइन्द्री विषय सवरो ए, नरेसुआ, स्पर्शन रसननि घ्राण ।
चक्षु करण इन्द्री तणा ए, नरेसुआ, विषय रसना विष-समान ।।५६
शरीर-विषय गज वाधिया ए, नरेसुआ, जिह्वा-रसे मच्छ एह ।
कमल स्कन्वे भ्रमर मुआ ए, नरेसुआ, वर्ण पतगज देह ।।५७
कर्णँ-विषय मृग वाधियो ए, नरेसुआ, एक एक सेवे इन्द्री जीव ।
पंच इन्द्री-भोग जे सेवसे ए, नरेसुआ, ते सहसी दु ख अनन्त ।।५८
पच इन्द्री मन तणा ए, नरेसुआ, विषय छोड़ो अट्ठावीस ।
सन्तोप धरि समता भावे ए, नरेसुआ, परिहरि राग ने द्वेष ।।५९
जिम जिम मन भ्रान्ति समि ए, नरेसुआ, तिम तिम उपशम भाव ।
शुद्ध परिणामे ऊपजे ए, नरेसुआ, नीपजे सहज स्वभाव ।।६०
सम परिणामे तप जप ए, नरेसुआ, समता भावे शुभ ज्ञान ।
सुमति संजम सिद्ध करे ए, नरेसुआ, समता सर्व प्रधान ।। ६१
साधक श्रावक साधे सही ए, नरेसुआ, अन्त सलेखण जेह ।
वृद्ध पणें सन्यास ग्रहो ए, नरेसुआ, क्षीण इन्द्री आयु देह ।।६२
उपसर्ग दुर्भिक्ष आवा पड़े ए, नरेसुआ, अति रोग जु असाध्य ।
व्रत-भग हो तो जाणीने ए, नरेसुआ, अनशन विधि तब साध ।।६३
सर्व प्राणी क्षमा करी ए, नरेसुआ, आवी गुरु सान्निध्य ।
दोष आलोचि वालक परि ए, नरेसुआ, नि शल्य थई निज बुद्धि ।।६४
हलु हलु आहार हीनु करो ए, नरेसुआ, निजशक्ति अनुसार ।
आहार त्यजी पय वस्तु भजो ए, नरेसुआ, दुग्ध घोल तक्र सार ।।६५
क्रमि क्रमि तक्र छोडीये ए, नरेसुआ, केवल पछे लीजे नीर ।
पछे नर समता मू कीये ए, नरेसुआ, सुभट थई मन धीर ।।६६
प्रासुक भूमि शिला पर ए, नरेसुआ, कीजे सथारो सार ।
कठिण कोमल समता भावि ए, नरेसुआ, कीजे नही खेद विकार ।।६७
वरपा शीत उष्णतणा ए, नरेसुआ, सहो परीषह भार ।
क्षुधा तृषा भय रोग नही, नरेसुआ, रहे गुफा गढमझार ।।६८
चार आराधना आराधिए ए, नरेसुआ, दर्शन ज्ञान चारित्र ।
व्यवहार निश्चय भेद ज ए, नरेसुआ, तप तपो ते पवित्र ।।६९
मरण-समय मुनि होइ ए, नरेसुआ, भावलिंगी अवतार ।
त्रिधा त्रिविध वैराग्य चित्त ए, नरेसुआ, अनुप्रेक्षा चिंतो बार ।।७०
शरीर नही जो आपणो ए, नरेसुआ, तो आपणो किम होय ।
अति शुद्ध चिद्रूपक चिंतवो ए, नरेसुआ जासे भव-छेद होय ।।७१

जिनवाणी निज मुखे भणो ए, नरेसुआ, करे धर्मध्यान अभ्यास।
नमोकार मंत्र जपि ए नरेसुआ, क्षपें ते पापनी रासि ॥७२
संन्यास तणां जे साधक ए, नरेसुआ, धर्म सखाई रहे पास।
सावधान होइ सुभट पणो ए, नरेसुआ, करे ते ध्यान उल्हास ॥७३
निज मुखे जाप जपि ए, नरेसुआ, जाप तणो नही शक्ति।
अन्तर जल्प तव चिंतवी ए, नरेसुआ, परमेष्ठी गुण-भक्ति ॥७४
शुद्ध बुद्ध हुं चिद्रूप ए, नरेसुआ, कर्म-कलंक रहित।
सिद्ध सरीखो निज मन हवि ए, नरेसुआ, आपें आप गुण-सहित ॥७५
धर्म ध्यानने निज मन जड़ो ए, नरेसुआ, धर्म सखाई जेह।
जिन वाणी भणतां सुणी ए, नरेसुआ, नवकार मंत्र वली तेह ॥७६
जिम जिम धर्मध्यान करे ए, नरेसुआ, तिम तिम होइ पाप-हाणि।
क्रूर कर्म सहु निर्जरी ए, नरेसुआ, उपराजो पुण्य गुण-खाणि ॥७७
मरण समाधि साधीउ ए, नरेसुआ, परिहरि निज देश प्राण।
संन्यास तणें फल ऊपजे ए, नरेसुआ, सोलमे स्वर्गे गीर्वाण ॥७८
इन्द्र अथवा महर्धिक देव ए, नरेसुआ, संपुट सेज्या मझार।
अन्तर्मुहूर्त मांहे सही ए, नरेसुआ, नव यौवन अवतार ॥७९
सलावकसो वैठो थई ए, नरेसुआ, देखे ते स्वर्ण विमान।
विस्मय पामी जव चिंतवे ए, नरेसुआ, तव आवे अवधि सुज्ञान ॥८०
पेहला भव वृत्तान्त सही ए, नरेसुआ, जाणे सयल विचार।
धर्म फले इहाँ उपनो ए, नरेसुआ, धन धन श्रावक धर्म सार ॥८१
देव मन्त्री आवे वीनवे ए, नरेसुआ, स्वर्ग विमान ते एह।
देव देवी सहु तम तणो ए, नरेसुआ, पुण्य फले वहु तेह ॥८२
सहज वस्त्र आभरणे लंकर्यो ए, नरेसुआ, निर्मल वैक्रिय देह।
सात धातुथी वेगलो ए, नरेसुआ, आँख मेष दुख नही तेह ॥८३
निज परिवार सुं लंकर्यो ए, नरेसुआ, जाइ श्री जिनगेह।
वापि अकृत्रिम स्नान करी ए, नरेसुआ, धौतवस्त्र पहरी देह ॥८४
अष्ट प्रकारी पूजा लेइ ए, नरेसुआ, पूजे श्री जिनदेव।
गीत नृत्य वाजित्र करी ए, नरेसुआ, विविध भक्ति स्तव सेव ॥८५
पुण्य घणो पोते करी ए, नरेसुआ, आवी ते निज ठामि।
धर्म तणा फल भोगवी ए, नरेसुआ, थाइ ते सयल ऋद्धि स्वामि ॥८६

दोहा

चरमांगी जे मुनि होय, उत्कृष्ट फल संन्यास। कर्म हणी केवल लही, पामे अविचल वास ॥१
चरमांग विण जे गृही लहे, संलेखण फल तेह। ग्रैवेयक नव पंचोत्तर, अहमिन्द्र पद लहे तेह ॥२
उत्तम सावक श्रावक, पाले संन्यास विधि जेह। सोलमां स्वर्ग लगे ते जाइ, पामे इन्द्र पद तेह ॥३
उत्कृष्ट पणें त्रण भव ग्रही, जघन्य पणे भव सात।
सुर नर वर पदवी लही, मन वांछित सुख व्रात ॥४

उत्तम नर पदवी लहि, ग्रही जिन दीक्षा सार । ध्यान बले कर्म निर्जरी, पामे मोक्ष दुआर ॥५
अष्ट कर्म थो वेगला, अष्ट गुण अनन्त । ज्ञानाकार ते निर्मला, मुक्ति वधूवर कन्त ॥६

इन्द्र आदे जे भोगिया, हुओ हुई छे छसे जेह तेह ।
सो सुख थी अनन्तगुण, एक समय लहे, सिद्ध तेह ॥७
बन्धन बन्ध्यो चोर जिम, बन्ध गये जिम सौख्य ।
कर्म-बन्ध गये तिम, सौख्य लहे सिद्ध मोक्ष ॥८
श्रावकाचार-महिमा घणी, जस गुण कह्यो किम जाय ।
जिन सेवक **पदमो** कहे, मन वाछित सुख दाय ॥९

इति श्री पदम विरचित श्रावकाचार-रास सम्पूर्ण ।

ग्रन्थकार-प्रशस्ति । अथ ढाल आनन्दानी

त्रेपन क्रिया इम वर्णवी, आनन्दा, सक्षेपे सविचार तो ।
विस्तारे आगम जाण जो आनन्दा, जिनशासन अतिसार तो ॥१
चार ज्ञान सम रिद्धी घणी आनन्दा, गौतम गुण विशाल तो ।
श्रेणिक भूप जे पूछियो आनन्दा ते कह्यो गुण पाल तो ॥२
गौतम स्वामी जे अग कह्यो आनन्दा, सातमो उपासकाचार तो ।
प्रमाण पद भेदे करी आनन्दा, तेह तणो नही पार तो ॥३
ते अनुक्रमे सुधर्म सूरी आनन्दा, केवली जम्बुकुमार तो ।
पछे पच श्रुतकेवली हुआ आनन्दा, वली अग पूरब दशधार तो ॥४
काल दोषे पूर्व हीन थया, आनन्दा, हीन थया अग इग्यार तो ।
अग पूरव अश रहिया, आनन्दा, मुनिवर तणे आधार तो ॥५
ते अनुक्रमे परम्परा आनन्दा, श्रीजिन तणो उपदेश तो ।
शास्त्रतणी रचना रची, आनन्दा, सहु गुरु कियो निवेश तो ॥६
श्रीमूल सघ सरस्वती गच्छ, आनन्दा, बलात्कार गण विशाल तो ।
कुन्दकुन्दाचार्य हुआ, आनन्दा, अनुक्रमे गुरु गुणमाल तो ॥७
श्रीजिनसेन गुणभद्र सूरी आनन्दा, अकलक अमृतचन्द्र तो ।
ज्ञानी ध्यानी दिगम्बर जती आनन्दा, परम्परा सूरी प्रभाचन्द्र तो ॥८
श्रीपद्मनन्दी पटि हुआ आनन्दा, सकलकीर्त्ति भवतार तो ।
भुवनकीर्त्ति तपमूर्त्ति, आनन्दा, ज्ञानभूषण गुण धार तो ॥९
श्रीविजय कीर्त्ति पाटे उपना, आनन्दा, भट्टारक श्रीशुभचन्द्र तो ।
भव्य कुमुदचन्द्र जसु हुआ आनन्दा, कुवादीगज मृगेन्द्र तो ॥१०
तस चरण कमल नमी आनन्दा, प्रणमी निज गुरु पाय तो ।
जस पसाइ मति निर्मली आनन्दा, धर्म कवित वृद्धि थाय तो ॥११॥
आम्नाय गुरु श्रीशुभचन्द्र, आनन्दा, आगम गुरु विनयचन्द्र तो ।
अध्यात्म गुरु कर्मश्रीब्रह्म, आनन्दा, शिक्षा गुरु हीर ब्रह्मेन्द्र तो ॥१२

अवर शास्त्र कवित्त गुरु, आनन्दा, ब्रह्मचारि श्रीजिनदास तो ।
॥१३
जेणे धर्म उपदेश दियो आनन्दा, शास्त्र भणो बली जेह तो ।
कोमल अल्पमति छै जेहनी आनन्दा, ते भणो रास भास एह तो ॥१४
ते सहु गुरु हुवा मुझ तणा, आनन्दा, कर जोडी करूँअ प्रणाम तो ।
गुरु गुण न विलोपिये आनन्दा, लोपे गुरु लोपी पापी नाम तो ॥१५
मुझ हृदय कमल माहे आनन्दा, गुरु भानु वाणी किरण तो ।
मोह तिमिर दूरे हरे आनन्दा, ते गुरु तारण तरण तो ॥१६
समन्तभद्र सूरी कृत आनन्दा, वसुनन्दी श्रावकाचार तो ।
आशाधर पंडितकृत आनन्दा, सकल कीर्त्ति कृत सार तो ॥१७
ते काव्य गाथा श्लोकरूप आनन्दा, कवि न रचना जाणी तेह तो ।
ते शास्त्रमे साभल्या आनन्दा, सहगुरु उपदेशे एह तो ॥१८
मे रचना जाणी बहु आनन्दा, उपनो मन उल्हास तो ।
ते शास्त्र अनुक्रमे कियो आनन्दा, रासरूप देखी भार तो ॥१९
ते ग्रन्थ माहे जे कह्यो आनन्दा, ते कह्यो रास मझार तो ।
ओ कठिण ऊ कोमल आनन्दा, अवर अन्तर नही सार तो ॥२०
बहु बुद्धी ते वहु पढें, आनन्दा, शास्त्र माहे विस्तार तो ।
ते संक्षेपे ए वर्णव्यु आनन्दा, रासरूपे सारोद्धार तो ॥२१
बहु बुद्धि होइ जेहनी आनन्दा, शास्त्र भणो बली तेह तो ।
कोमल अल्पमति छै जेहनी, आनन्दा ते भणे रास भास एह तो ॥२२
श्रावकाचार समुद्र तणो, आनन्दा, गुणरत्न नही पार तो ।
ते भेद जाइ कह्यं किम आनन्दा, हुँ अल्पमति श्रुतसार तो ॥२३
पूरब सूरी जे नर कह्या, आनन्दा, ते किम लाभे पारतो ।
सक्षेपेमे वर्णव्यो आनन्दा, श्रावक तणो आचार तो ॥२४
देव गुरुमे वदिया आनन्दा, तेह थी उपनो पुण्य तो ।
पुण्य पसाइमे भेद रच्यो आनन्दा, त्रेपन क्रिया तणो धन्य तो ॥२५
बुद्धिवत्त कवि जे हुआ, आनन्दा, तेणे कियो वहुअ प्रकाश तो ।
गुरु वाटे मुझ जाइती आनन्दा, उपजे नही आलस तो ॥२६
गुरु भावे वाटे जाता आनन्दा, उपजे नही क्लेश तो ।
जिम विधे हीरा मोती आनन्दा, सहजे सूत्र प्रवेश तो ॥२७
जिणी वाटे गजा सचरे आनन्दा, तिहा मृगत्ति नही दु:ख तो ।
गगने जिहा गरुड गमे, आनन्दा, तिहा हँसनें होइ सुख तो ॥२८
वन माहे वहु जीव रहे, आनन्दा, आनन्दा, सवल सिंघ होइ तो ।
तिहां हरणा हरखी रहो आनन्दा, प्रगट शक्ति करी जोइ तो ॥२९
विन्ध्यावन माहे गज रहे आनन्दा, दीर्घ पणे करे नाद तो ।
देडक निजशक्ति करी, आनन्दा, किम न करे वहु साद तो ॥३०

जिन शासन मांहे तिम आनन्दा, बहु भेदे कवि होइ तो ।
हीन अधिक बुद्धि पणे आनन्दा, बुद्धि कर्म सारु जोइ तो ॥३१
रास भास एह साभलो, आनन्दा, मुझ स्यू म करस्यो रोष तो ।
जाण होइ ते गुण ग्रह ज्यो आनन्दा, अजाण सहे बहु दोष तो ॥३२
सज्जन गुण सदा ग्रहे आनन्दा, जिम नीर थी क्षीर हँस तो ।
दुर्जन पर-दूषण लाए, आनन्दा, जलो रक्त देइ दस तो ॥३३
श्रावकाचार सागर तणु आनन्दा, बहु भेदे विस्तार तो ।
बलहीन हस्ते बिहु, आनन्दा, किम करी उतरे पार तो ॥३४
शारदा माय मुझ निर्मली आनन्दा, ज्ञान धन दातार तो ।
तुझ पसाये मे वर्णव्यू आनन्दा, रूअडो श्रावकाचार तो ॥३५
पद अक्षर अर्थ बहु, आनन्दा, शब्द गुण चूको छद तो ।
प्रमाद पणे जे बोलियो आनन्दा, हूँ मानवी मतिमन्द तो ॥३६
हीन अधिक जे मे कर्यु आनन्दा, जिन आगम विरोध तो ।
ते मुझ खमियो शारदा, आनन्दा, हूँ तुझ बोलु मन्द बुद्धि तो ॥३७
विद्वान्स होइ तो सोधज्यो आनन्दा, मुझ सूँ करी कृपा भाव तो ।
जिम हेम अग्नि सोधिये आनन्दा, उपनो जे शुभ ग्राम तो ॥३८
पडित जे सोधे नही आनन्दा, मन धरि जे अहकार तो ।
ते वृथा तस जाण तो, आनन्दा, जस बाजे वस निसार तो ॥३५
सरोवरे जिम कमल ऊँगे, आनन्दा, सुगन्ध विस्तारे पवन्न तो ।
तिम कविसु कवित्त रच्यो आनन्दा, विस्तार पमाडे सज्जन्न तो ॥४०
मूल नदी थोडी जिम, आनन्दा, वाधे सागर लगे जाण तो ।
सज्जन मेह गुण नीर, आनन्दा, जिन शासन प्रमाण तो ॥४१
सज्जन विना ना पुस सदा, आनन्दा, उत्तम श्रावकाचार तो ।
ज्या लगे चन्द्र सूर्य तारा, आनन्दा, त्या लगे शासन उद्धार तो ॥४२
कोमल पणे सहुँ प्रीछवा आनन्दा, निज पर तणो उपकार तो ।
केवल धर्म वृद्धि कीजे आनन्दा, रच्यो मे श्रावकाचार तो ॥४३
श्रावकाचार ते रत्नदीप आनन्दा, त्रेपन क्रिया चिन्तारत्न तो ।
सुगुण रत्न मूल्य नही, आनन्दा, दया करो तस जत्न तो ॥४४
एक चिन्तामणि जे लहे, आनन्दा, जाव जीव सुख होय तो ।
एका क्रिया गुण जो पाले, आनन्दा, तो स्वर्ग सुख लहे तेह तो ॥४५
इम जाणी भव्य सदा पाले आनन्दा, सर्व क्रिया रत्न जेह तो ।
सोलमा स्वर्ग लगे सुख लहे, आनन्दा, पक्षे मोक्षश्री वरे तेह तो ॥४६
जेणे पाल्यो, पाले छै, पालसे आनन्दा, निश्चल श्रावक धर्म तो ।
मन वच काया दृढ करी आनन्दा, ते पामे शिव शर्म तो ॥४७
नर नारी भावे करी, आनन्दा, इणि परे पाले आचार तो ।
दुष्कर्म सहु हरे करो आनन्दा, ते तरसी ससार तो ॥४८

वाग्वर देश सुहामणो, आनन्दा, सापुर नयर मझार तो।
हाट हारे मन्दिर साली, आनन्दा, प्रजा वसे वर्ण चार तो ॥४९
श्री आदिनाथे तीर्थ तणो आनन्दा, सोहे जिन प्रासाद तो।
शिखर मडप कलश दीपे आनन्दा, दड ध्वजा लहिके चग तो ॥५०
मुनिवर आर्यिका रहे आनन्दा, श्रावक श्राविका गुणधार तो।
दान पूजा जप तप करे आनन्दा, नन्दी संघ विचार तो ॥५१
हरखवत हुँवड न्याती, आनन्दा, निज वंश सरोज हस तो।
खदिर गोत्रीत गुण निलो आनन्दा, विरीत कुल अवतंस तो ॥५२
आगम अध्यात्मवेदी, आनन्दा, शास्त्रवेदी बहु शुद्ध तो।
निज शक्ते स व्रतधारी, आनन्दा, ते थया रास प्रशस्त तो ॥५३
जेहनी शक्ति जेहवी होइ, आनन्दा, कवित्त करे तेहवा तेह तो।
सुगमपणे मे रास कीयो, आनन्दा, श्रावक धर्म तणो एह तो ॥५४
निज-पर-हित उपकार हित, आनन्दा, कीयो शासन प्रभाव तो।
ज्ञान उपयोग विस्तारियो आनन्दा, कृपा बुद्धि स्वभाव तो ॥५५
पर उपकार जे नहि करे, आनन्दा, वृथा जीव्यो नर सोइ तो।
अजाकण्ठे पयोधर, आनन्दा, क्षीर नीर नवि होइ तो ॥५६
इम जाणी पर हित कीजिए आनन्दा, निज शक्ति अनुसार तो।
छती शक्ति हित जे करे नही आनन्दा, ते नर कहिये गमार तो ॥५७
छव्वीस भेद भासे भण्यो आनन्दा, श्लोक शत सत्तावीस तो।
पचास अधिक सही आनन्दा, ग्रन्थ संख्या अशेष तो ॥५८
लिखो लिखावो भावे करी आनन्दा, श्रावकाचार शुभ रास तो।
जिनवाणी विस्तारिये आनन्दा, उपजे पुण्य प्रकाश तो ॥५९
सवत सख्या जिनभाव[१६]ना, आनन्दा, संवच्छर सख्या प्रमाद[१५] तो। (१६१५)
मास माहु सोहामणो आनन्दा, भाइ वा सुत मर्याद तो ॥६०
तिथि संख्या चारित्र भेदे, आनन्दा, रस सख्या शुभवार तो।
शुभ नक्षत्रे शुभयोगे, आनन्दा, कीयो मे श्रावकाचार तो ॥६१
आपणे पर हितकारी, आनन्दा, गुणकारी गुणवत तो।
आ रास कियो मे सत आनन्दा, हित मित सुगम पणे तो ॥६२
निर्गुण नर थी वृक्ष भला आनन्दा, जे करे पर उपकार तो।
आपणे गरमी दाहिये आनन्दा, छाँह देय फलसार तो ॥६३
पुरुष चिन्तामणि कामधेनु, आनन्दा, कल्प तरु मेघ धार तो।
गुरु आसे हे जे गुण करे, आनन्दा, निज पर करे उपकार तो ॥६४
गुण केडे सहु गुण करे, आनन्दा, एहवो लोक विवहार तो।
अवगुण केडे गुण करे, आनन्दा, एते उत्तम आचार तो ॥६५
निज शक्ति उद्यम करी, आनन्दा, पालो शुभ आचार तो।
जेतलु पले, तेतलु सही, आनन्दा, नही तो श्रद्धा भवतार तो ॥६६

जे समकित पाले सदा, आनन्दा, शक्ति नही तो करो भाव तो।
श्रद्धा भावे पुण्य उपजे, आनन्दा, श्रद्धा भवोदधि नाव तो ॥६७

दोहा

अष्टमूल गुण जल गालण, निश भोजन परिहार। बार व्रत चैत्य एकादश, तप द्वादश दान चार ॥१
दर्शन ज्ञान चारित्र गुण, शुभ समता परिणाम। त्रेपन क्रिया मन निर्मली, पालो ते अभिराम ॥२
श्रावकाचार जे आदरे, हृदय थई सावधान। इन्द्र महर्धिक पद लही, अष्टऋद्धि त्रण ज्ञान ॥३
उत्तम नर पदवी लही, राजाधिराज महाराज। मडलीक महामडलीक, काम केशव बलराज ॥४
चक्रवर्त्ति षटखड धणी, तीर्थंकर पद सार। पच कल्याण नायक, भोगवी सुख ससार ॥५
दीक्षा लेय तप आचरी, करी कर्म विनाश। केवलज्ञान प्रकट करी पामे ते अविचल वास ॥६

वस्तु छन्द

श्रावकाचार तणो श्रावकाचार तणो, मे रास कियो मे इणि परे।
भविजन मन रजन, भजन कर्म कठोर निर्भर।
पंच परमेष्ठी मन धरी, सुमरी शारदा गुरु निर्ग्रन्थ मनोहर।
अनुदिन जे धर्म पालसी, टाली सर्व अतिचार।
जिन सेवक **पदमो** कहे, ते पामसे भाव पार ॥१

इति श्रावकाचार रास सम्पूर्णम्।

ग्रन्थाग्र २७५० श्लोक सख्या। सवत्सर १८५३ कार्तिक सुदि ९ दीतवार
भीलोडा चैत्यालयस्थाने श्री चन्द्रप्रभ पार्श्वनाथ प्रसादात्। श्रीरस्तु।

●

श्री किशन सिंह कृत क्रियाकोष

मंगलाचरण

दोहा

समवशरण लक्ष्मी सहित, वर्धमान जिनराय। नमो विबुध वन्दित चरण, भविजन को सुखदाय ॥१
जाके ज्ञान प्रकाश मे, लोक अनन्त समाव। जिम समुद्र ढिग गाय-खुर, यथा नीर दरसाव ॥२
वृषभनाथ जिन आदि दे, पारसलो तेईस। मन, वच, काया, भाव धर, बन्दो कर धर सीस ॥३
नमो सकल परमातमा, रहित अठारा दोष, छियालीस गुण आदि दे, है अनन्त गुण कोष ॥४
वसु गुण समकित आदि जुत, प्रणमों सिद्ध महन्त। काल अनंतानंत तिथि, लोक शिखर निवसत ॥५
आचारज, उवझाय, गुरु, साधु त्रिविध निग्रंथ। भवि वनवासी जननिको, दरसावे शिवपन्थ ॥६
जिनवाणी दिव्यध्वनि खिरी, द्वादशाग मय सोय। ता सरस्वतिको नमतहूँ, मन, वच, क्रम जिन सोय ॥७
देव, सुगुरु, श्रुत को नमू, त्रेपन किरया सार। श्रावक की वरणन करूँ, संक्षेपहि निरधार ॥८

चौपाई

जम्बूद्वीप द्वीपसिर जान, मेरु सुदरशन मध्य बखान।
ताको दक्षिण दिस शुभ लसै, भरतक्षेत्र अति सु वसही बसै ॥९
तामै मगध देश परधान, नगर मटव द्रोणपुर थान।
वन उपवन जुत शोभा लहै, ताको वरणन कवि को कहै ॥१०
राजगृही नगरी अति वनी, इन्द्रपुरी मानों दिव तनी।
जिनवर भवन शोभ अति लहै, तस उपमा वरणन को कहै ॥११
श्रावक उत्सव सहित अनेक, जिन पूजै अति धर सुविवेक।
मन्दिर पकति शोभै भली, गीतादिक पूरवै मन रली ॥१२
धरमी जन तामे बहु बसै, दान चार दे चितळ लसै।
चहूँ फेर तासके कोट, गोपुर जुत अति वनो निघोट ॥१३
वाडी वाग विराजें हरे, सघन दाख दाम्यु द्रम फुरे।
और विविध के पादप जिते, फल फुल्लित दीसत है तिते ॥१४
तिह नगरी को भूप महन्त, श्रेणिक नाम महागुणवन्त।
क्षायिक समकित धारी सोय, तासम भूप अवर नहिं कोय ॥१५
मण्डलीक भूपति सिरदार, वहुत तासु सेवैं दरवार।
परजा पालन को अति दक्ष, नीतवान धरमी परतक्ष ॥१६
तास चेलना है पटनार, रूपवन्त रम्भा उनहार।
समकित दृष्टि सुअति गुणवती, पतिवरती सीता सम सती ॥१७

देव, शास्त्र, गुरुभक्ति धरेय, वसुविध नित सो पूज करेय।
विधिसो देय सुपात्रे दान, जिम चहुँ विध भाषो भगवान ॥१८
तीन दीन जन करुणा करी, पोखै नित्त प्रति ला सुन्दरी।
भूपत्ति चित मनुहारी सोय, तासम त्रिया अवर नहिं कोय ॥१९
दम्पति सुख नानाविध जिते, पुण्य उदै भोगत है तिते।
जिम सुरपत्ति इन्द्रानी जान, तिम श्रेणिक चेलना बखान ॥२०
महामंडलेश्वर को राज, आसन चामर छतर समानु।
भूप चिह्न धरि सभा जु राय, बैठो अब सुनिये जो थाय ॥२१

ढाल चाल

एक दिवस मध्य बन मांही, भ्रमतो बनपालक आंही।
निज सम्बन्धी पर जाय, जिय वैर विरुद्ध जु थाय ॥२२
ते एक क्षेत्र के माही, ढिगे बैठे केलि कराही।
घोटक महिष इक जागा, बैठे धरि चित्त अनुरागा ॥२३
मूषा को हरष बिलावै, हिय में गहि प्रीत खिलावै।
अहि नकुल दुहु इकठा ही, मैत्रीपन अधिक करांही ॥२४
इत्यादिक जीव अनेरा, निज वैर छाडि ह्वै मेरा।
बैठे लखि कै बनपाला, अचरज चिन्ता धरि हाला ॥२५
मन मांहि विचारै एमे, एह अ शुभ कीधो खेमे।
इम चिन्तत भ्रमण कराही, बनपालक बन के माही ॥२६
विपुलाचल गिरि के ऊपर, धरणेश सुरेश मही पर।
बहुविध जुतदेव अपारा, जय जय वच करत उचारा ॥२७
दसहूँ दिश पूरित धाई, अपने चित अति हरखाई।
अन्तिम तीर्थंकर एवा, श्री वर्द्धमान जिनदेवा ॥२८
समवादि शरण लखि हरषित, धारो विचार इम चिन्तित।
इह परस्परे जु चिरकाला, परजाय वैर दरहाला ॥२९
सब मिल बैठे इकठाना, देखे मे ऐ अभिरामा।
इस महापुरुष को जानी, माहातम मन मे आनी ॥३०

सवैया इकतीसा

मृगी सुत बुद्धिते खिलावै सिंह बाल को, वघेरा को सुपुत्र गाय सुत जान परसै।
हंस सूनक बिलाव हित धारकै खिलाव, मोरनी सरप परसत मन हरषै ॥
इन सब जन्तुन को जन्मजात वैर सदा, भए मद गलित उखारो दोष जरसै।
सम भाव रूप भए कलुष प्रशमि गए, क्षीण मोह बर्धमान स्वामी सभा दरसै ॥३१

दोहा

जय जय रव को कान सुन, बनपालक तत्काल। षट्रितु के फल फूल ले, कर धर भेट रसाल ॥३२
चल्यौ नृपति दरवार को, मन मे धरत उछाव। जा पहुचे तिसही धरा, जहँ बैठो नरराव ॥३३
सिंहासन नग जडित पर, तिष्ठे श्री भूपाल। महामंडलेश्वर करहिं, फलदीने वनपाल ॥३४

चौपाई

वनपति भाषै सुनिहो देव, तुम शुभ पुन्य उदयते एव।
विपुलाचल पर सनमति जान, समोशरन आयो भगवान ॥३५
ऐसैं सुन आसनतें राय, उठ तिहि दिशि सनमुख सो जाय।
सात पेड़ अष्टांग नवाय, नमस्कार कीनो हरषाय ॥३६
परम प्रीति पूर्वक मन आन, जिन आगम को उत्सव ठान।
भूषन वसन भूप तिहिं जिते, वनपालक को दीने तिते ॥३७
ह्वै खुशाल वनपालक जवै, मनमांही इम चिन्तवै तबै।
इतने सौ कर रीते जान, कवहुं न मिलिवे सांची मान ॥३८
देवथान अरु राज दुवार, विद्या गुरु निजमित्र विचार।
निमित वैद्य ज्योतिषी जान, फल दीये फल प्रापति मान ॥३९
आनन्द भेरि नगर मे थाय, सुन पुरवासी जन हरषाय।
नगर लोक परिजन जन सवै, नृप श्रेणिक ले चाल्यो तबै ॥४०
विपुलाचल ऊपर शुभ ध्यान, समोशरण तिष्ठे भगवान।
पहुँचो भूपति हरख लहाय, जिनपद नमि थुति करहि विनाय ॥४१
नयन जुगुल मुझ सफल जु थयो, चरण कमल तुम देखत भयो।
भो तिहु लोक तिलक मम आन, प्रतिभास्यो ऐसो महाराज ॥४२
इह ससार जलधि यो जान, आय रह्यो इक चुलुक प्रमान।
जै जै स्वामी त्रिभुवननाथ, कृपा करो मोहि जान अनाथ ॥४३
मैं अनादि भटको संसार, भ्रमते कवहु न पायो पार।
चहुं गति मांहि लहे दुख जिते, ज्ञान मांहि दरगत है तिते ॥४४
ताते चरण आइयो सेव, मुझ दुख दूर करो जगदेव।
जै जै रहित अठारा दोष, जै जै भविजन दायक मोष ॥४५
जै जै छियालीस गुणपूर, जैं मिथ्यातम नासक सूर।
जै जै केवल ज्ञान प्रकाश, लोकालोक करन प्रतिभास ॥४६
जै भविकुमुद विकासन चद, जै जै सेवितमुनिवर वृंद।
जै जै निरावाध भगवान, भगतिवंत दायक शिवथान ॥४७
जैं जै निराभरण जगदीश, जैं जै वंदित त्रिभुवन ईश।
ज्ञानगम्य गुण लियो अपार, जै जै रत्नत्रय भंडार ॥४८
जै जै सुखसमुद्र गभीर, करम शत्रु नाशन वर वीर।
आजहि सीस सफल मो भयो, जव जिन तुम चरणनको नयो ॥४९
नेत्र युगल आनंदे जवैं, पादकमल तुम देखे तवैं।
श्रवण सफल भये सुन धुनी, रसना सफल अवे थुति भनी ॥५०
ध्यान धरत हिरदे धन भयो, करयुग सफल पूजते थयो।
कर पयान तुमलो आइयो, पदयुग सफलपनो पाइयो ॥५१

उत्तम बार आज जानियो, वासर धन्य इहै मानियो ।
जनम धन्य अबही मो भयो, पाप कलक सबे भगि गयो ।।५२
भो करुणाकर जिनवर देव, भव भव मे पाऊं तुम सेव ।
जब लों शिव पाऊँ जगनाथ, तब लो पकरो मेरे हाथ ।।५३
इत्यादिक थुति विविध प्रकार, गद्य पद्य सत सहस अपार ।
मुनि गौतम गणधर नमि पाय, अवर सकल मुनिको सिर नाय ।।५४
जिके अजिका सभा मझार, श्रावक जनहि जु बुद्धि विचार ।
यथा योग्य सबको नृप कही, मुनि नर-कोठै बैठो सही ।।५५
जाके देव भगति उत्कृष्ट, तासो ताके गुरु को इष्ट ।
जिन भाषी वाणी सरधान, महा विवेकी अति परधान ।।५६
तास महातम को अधिकार, अरु ताके गुण को निरधार ।
वरणन को कवि समरथ नाहि, बुध जन जानहु निज चितमाहि ।।५७
ता पीछे अवसर को पाय, गौतम प्रति नृप प्रश्न कराय ।
देश व्रती श्रावक की जान, त्रेपन क्रिया कहहुँ बखान ।।५८

दोहा

होनहार तीर्थेश सुन, इम भाषै भगवत । त्रेपन किरया तुझ प्रते, कहू विशेष विरतत ।।५९
इह त्रेपन किरया थकी, सुरग मुक्ति सुख थाय ।
भविजन मन वच काय शुध, पाव्रहु चित्त हरषाय ।।६०

त्रेपन क्रिया नाम । उक्त च गाथा—

गुण वय तव सम पडिमा दान जलगालणं च अणत्थमिय ।
दंसणणाणचरित्तं किरिया तेवण्ण सावया भणिया ।।

सवैया इकतीसा

मूल गुण आठ अणुव्रत पंच परकार, शिक्षाव्रत चार तीन गुण व्रत जानिए ।
तप विधि बारह और एक सम्यग्भाव ग्यारा प्रतिमा विशेष चार भेद दान मानिए ।।
एक जल गालण अणथमिय एक विध्रि, दृग ज्ञान चरण त्रिभेद मन आनिए ।
सफल क्रिया को जोर त्रेपन जिनेश कहे, अव याको कथन प्रत्येकतें बखानिए ।।६२

आठ मूल गुण । चौपाई

इस त्रेपन किरया मे जान, प्रथम मूल गुण आठ बखान ।
पीपर, बर, ऊंबर फल तीन, पाकर फल रु कटुबर हीन ।।६३
मद्य मास मधु तीन मकार, इन आठो को कर परिहार ।
अतीचार जुत तज अणचार, आठ मूल गुण धारी सार ।।६४
त्रस अनेक उपजै इन माहि, जिन भाष्यो कछु सशय नाहि ।
अरु जे हैं बाईस अभक्ष, इनको दोष लगै परतक्ष ।।६५

अथ बाईस अभक्ष दोष वर्णन । चौपाई

वोरा नाम गडालख जान, अनछाना जलको वंवान ।
घोर वरा कौं विदल कहत, खाता पचेंद्री उपजत ॥६६
निशि भोजन खाये जो रात, अरु वासी भखिए परभात ।
वहु वीजा जामे कण घणा कहिए प्रगट विजारा तणा ॥६७
जिहि फल वीजनकै घर नाहिं, सो फल वहु वीजो कहवाहि ।
वेगण महापाप को मूर, जै खावै ते पापी क्रूर ॥६८
संघाणे की विधि सुन एह, जिम जिनमारग भाषी जेह ।
राई लूण आदि वहु दर्व, फल फूलादिक मे धर सर्व ॥६९
नांखे तेल मांहि जै सही, नाम अथाणौ तासौं कही ।
तामैं उपजे जीव अपार, जिह्वा लंपट खाय गंवार ॥७०
पाप धर्म नहि जाने भेद, ता वसि नरक लहै वहु खेद ।
नीवू लूण मांहि साधिये, वाड़िरा वड़ी अरु रांधिए ॥७१
लूण वाछि जल में फलमार, कैराविक जो खाय संवार ।
उपजै जीव तासमे घणे, कवि तस पाप कहां लो भणे ॥७२
मरजादा बीतै पकवान, सो लखि संघाणे मतिमान ।
त्याग करत नहि ढील करैहु, मन वच क्रम जिन वचहि फलेहु ॥७३
जो मरजादा की विधि धार, भाष्यो जिन आगम अनुसार ।
जिह मे जल सरदी नहि रहै, तिस मरजादा लखि भवि इहै ॥७४
सीतकाल माहे दिन तीस, पन्द्रह ग्रीषम विस्वावीस ।
वरषारितु भाषे दिन सात, यो सुनियो जिनवाणी भ्रात ॥७५

उक्तं च गाथा—हीमते तीस दिणा, गिम्हे पणरस दिणाणि पक्कवणं ।
वासासु य सत्त दिणा, इय भणिय सूय जंगेहि ॥७६

चौपाई—तल्यी तेल घृत मे पकवान, मीठे मिलियो ह्वै जो धांन ।
अथवा अन्नतणो ही होय, जल सरदी तामैं कछु जोय ॥७७
आठ पहर मरज्याद वखान, पाछे संधाणा सम जान ।
भुजिया वड़ा कचौरी पुवा, मालपुवा घृततल जु हुवा ॥७८
जुमक वड़ी लूचई जान, सीरो लापसी पुरी वखान ।
कीए पीछे सांझलो खाहि, रात वसै तिन राखे नाहि ॥७९
इनमे उपजै जीव अनेक, तिनही तजो सु धार विवेक ।
तरकारी पाटो खीचडी, इन मरजाद सुसोला घड़ी ॥८०
रोटी प्रात थकीलो सांज, खइये भवि मरजादा माज ।
पीठे सीला वासी दोष, तजो भव्य जे शुभ वृष पोष ॥८१

छन्द चाल

केते नर ऐसे भाषैं, हम नही अयाणो चाषैं ।
कैरी नीवू के मांही, नानाविध वस्तु मिलाही ॥८२

सरसों को तेल मंगावै, सब लेकर अगनि चढावै ।
ल्योजी तस नाम कहाई, जोभ्या लंपट अधिकाई ।।८३
ताको निरदूषण भाषै, निरबुद्धी बहु दिन राखै ।
ताके अघको नही पारा, सुनिये कछु इक निरधारा ।।८४
सब बिधि छोडी नही जाही, खइये तत्काल कराही ।
अथवा सबेर लो माजे, भखिये चहु पहर हि माजे ।।८५
पाछे अथाणा के दोषा, जानो त्रस जीवनि कोषा ।
अथाणा को जो त्यागी, याको छोडै बड़भागी ।।८६

दोहा

किसनसिह विनती करै, सुनो महा मति मान । याहि तजै सुख परम लहि, भुजै दुख परधान ।।८७

चौपाई

पच उदबर को फल त्याग, करइ पुरुष सोई बडभाग ।
अरु अजाण फल दोष अपार, मास दोष खाये अधिकार ।।८८
कन्दमूल मैं जीव अनन्त, ईखू अग्रभाग लखि सत ।
माटा माहि असखित जीव, भविजन तजिए ताहि सदीव ।।८९
मुहरो आफू आदिक और, खाए प्राण तजै तिहि ठौर ।
जिहि आहार कर जो मर जाय, सोऊ विष दूषण को थाय ।।९०
आमिष महापाप को मूर, जीव घात तें उपजो क्रूर ।
मन वच काय तजै इह सदा, सुर शिव सुख पावै जिन बदा ।।९१
मधुमाखी उच्छिष्ट अपार, जीव अनन्त तास निरधार ।
ताको खावै धीवर भील, सोई हीन नर पाप कुशील ।।९१
सत पुरुष नहि भेटे वाहि, एक कणाते धरम नसाहि ।
लूण्यो दोष महा अधिकार, ताहि भखे नहि भवि सुखकार ।।९३
मदिरा पान किए बेहाल, मात भगनि तियसम तिहिकाल ।
मादिक वस्तु भागि दे आदि, खात जमारो ताको वादि ।।२४
फल अतितुच्छ दन्त तलि देय, ताको दूषण अधिक कहेय ।
पालो राति जमावे कोय, अरु ताको खाबे बुधि खोय ।।९५
तामे पडै अधिक त्रस जीव, भविजन छाडो ताहि सदीव ।
केला आब पालमे देह, नीबू आदिक फल गनि लेह ।।९६
जाके खाये दोष अपार, बुध जन तजै न लावै बार ।
ए बावीस अभक्ष जिनदेव, भाषै सो भविजन सुनि येव ।।९७
इनहि त्याग कर मन वच काय, ज्यो सुर शिवसुख निहचै थाय ।
फूलो धान अवर सब फूल, त्रस जीवन को जानो मूल ।।९८
शाक पत्र सब निंद्य बखान, कुंथादिक करि भरिया जान ।
मास त्यजन व्रत राखो चहै, तो इन सवको कवहु न गहै ।।९९

बेदल वर्णन

भोजन विदल तणी विधि सुनो, जिनवर भाषो निहचै मुनो।
दोय प्रकार विदल की रीति, सो भविजन आनो प्रीति ॥१००
प्रथम आ धान तणी विधि एह, श्रावक होय तजै धरनेह।
सुनहु आ काष्ट तणी विधि जान, मूंग मटर अरहर अरु धान ॥१
मोठ मसूर उड़द अरु चणा, चौला कुलथ आदि गिन घणा।
इतने नाज तणी ह्वै दाल, उपजै बेलि थकीसा नाल ॥२
खरबूजा काकड़ी तोरई, टीडसी पेठो पलवल लई।
सेम करेला खीरा तणा, बीजा विधि फल कीजे घणा ॥३
तिनको दालथकी मिलवाय, दही, छाछि सो विदल कहाय।
मुखमें देत लाला मिलि जाय, उतरत गलै पचेन्द्री थाय ॥४
नाज वेलि तो ऊपजै जोय, सो आ काष्ट गनियो भवि लोय।
छाछ तणो फल बीजह जान, तिनको दाल होय सो मान ॥५
छाछ दही मिल विदल हवन्त, यों निहचै भाष्यो भगवन्त।
चारोली पिसता बादाम, बोल्यो बीज सांगरी नाम ॥६
इत्यादिक तरु फल के माहि, बीज दुफारा मीजी थाहि।
छाछ दही सो मेलि रु खाय, विदल दोष तामे उपजाय ॥७
गलै उतरता मिलि है लाल, पचेन्द्री उपजै ततकाल।
ऐसो दोष जान भविजीव, तजिए भोजन विदल सदीव ॥८
सांगर पिठोर तोरई तणा, मूरख करै राइता घणा।
तिहका अघ को पार न कोय, जो खाहै सो पापी होय ॥९
तजिहै विदल दोय परकार, सो निहचै श्रावक निरधार।
ककड़ी पेठो अरु खेलरा, इनको छाछ दही मै धरा ॥१०
राई लूण मेंल जिहि माहि, करे रायता मूरख खाहिं।
राई लूण परै निरधार, उपजै जीव सिताव अपार ॥११
राई लूण मिलो जो द्रव्य, ताहि सरवथा तजिहै भव्य।
कपड़े बांध दही को धरै, मीठो मेल शिखरणी करै ॥१२
खारिख दाख घोल दधिमाहि, मीठो मेल रायता खाहि।
मीठो जव दधिमाहि मिलाहि, अन्तर्मुहूर्तमे त्रस उपजाहि ॥१३
यामे मीठा जुत जो दही, अन्तर मुहूर्त्त माहे सही।
खावे भविजन को हित दाय, पोछै सम्मूर्छन उपजाय ॥१४

उक्तं च गाथा—इक्खुदहीसजुत्त, भवति सम्मुच्छिमा जीवा।
अन्तोमुहूत्त मज्झे, तम्हा भणंति जिणणाहा ॥१५

दोहा—कांजी कर जे खात हैं, जिह्वा लपट मूढ। पाप भेद जाने नही, रहित विवेक अगूढ ॥१६
अव ताको विधि कहत हों, मुणी जिनागम जेह। ताहि सुणत भविजन तजो, मनका सकल संदेह ॥१७

चौपाई—तातौ जल अरु छाछ मिलाय, तामे सौले लूण उराय।
भुजिया बडा नाख तिहि माहि, खावै बुद्धिहीन सो ताहि ॥१८
प्रथम छाछ कांजी के जाहि, तात्तो जल तामाहि पराय।
अवर नाज को कारन थाय, उपजै जीव न पार लहाय ॥१९
याकी मरयादा अतिहीण, ताते तुरत तजो परवीण।
ठंडी छाछ तास मै जाण, ताते विदलहु दोष बखाण ॥२०
प्रथम ही छाछ उष्ण अति करै, अरु वैसे ही जल कर धरै।
जब दोऊ अति सीतल थाय, तब दुहुअन को देय मिलाय ॥२१
अगिन चढाय गरम फिरि करै, जब वह सीतलता को धरै।
भुजियादिक तामे दे डार, तसु सर्यादा को इम पार ॥२२

उक्तं च गाथा—चउएइंदी विणिछह-अठ्ठह तिणिणि भणति दह।
चौरिंदी जीवडा वार बारह पच भणंति ॥२३

छन्द चाल की ढाल

जब चार महूरत मांही, एकेंद्री जीव उपजाही। बारा घटिका जब जाये, वे इन्द्री तामें थाये ॥२४
बीते तब ही दुय जामा, तब होवै ते इन्द्री धामा।
दुय अर्धपहर गति जानी, उपजै चउ इन्द्री प्राणी ॥२५
गमिया दश दोय मुहूरत, पंचेन्द्री जिय करि पूरत।
है है नहि संसै आणी, यां भाषै जिनवर वाणी ॥२६
बुध जन ऐसो लखि दोषा, जिय तत्क्षण अघ को कोषा।
कोई ऐसे कहिवे चाही, खाये विन जन्म गवाही ॥२७
मर्याद न संधि है मूला, तजिये व्रत अनुकूला।
खाय को पाप अपारा, छोडो शुभ गति है सारा ॥२८

सवैया—मूढ सुहै कुजिय, भेद गहै मनि खेद धरो विकलाई।
खात सवाद लहै अहलाद महा उनमाद रु लपट ताई।
पातक जार महा दुख घोर सहै लखि ऐसिय भव्य तजाई
जे मतिवन्त विवेकी सन्त महा गुणवन्त जिनन्द दुहाई ॥२९

इति कांजी निषेध वर्णनम् ॥

●

अथ गोरस मर्यादा कथन

अब गोरस विधि सुन एवा, भाषो श्री जिनवर देवा।
दोहत महिषी जब गाये, तबते मर्याद गहाये ॥३०
इक अन्तर मुहूरत ताई, जीव न तामे उपजाई। राखे जाको जो खीरा, वैसे ही जीव गहीरा ॥३१
उपजै सम्मूर्च्छन जासे, कर जतन दया धर तासे।
दोहे पीछे ततकाला, धर अगनि उपरि ततकाला ॥३२

फिर तामें जावण दीजे, तब तै वसु पहर गणीजे।
जब लों दधि खायो सारा, पीछै तजिये निरधारा ॥३३
दधिको धरिकै जे मथाणी, मथि है जो वणिता खाणी।
मथितै ही जल जामाही, डारै फिरि ताहि मथाही ॥३४
वह तक्र पहर चहुताई, खाने को जोग कहाई।
मथिय पीछे जल नाखे, वहु वार लगे तिहि राखे ॥३५
विन छाणो जल जिम जाणो, तैसी ही ताहि वखाणों।
तातें जे करुणाधारी, खावें दधि तक्र विचारी ॥३६
मरयादा उलघ जु खाही, मदिरा दूषण शक नाही।
निज उदर-भरण को जेहा, वेचै दधि तक्र जु तेहा ॥३७
वे पाप महा उपजाही, या मै संशय कुछ नाही।
तिनको जु तक्र दधि लेई, खावे मतिमंद धरेई ॥३८
अर करहि रसोई जाते, भाजन मध्यम ह्वै ताते।
मरयादाहीण जो खावे, दूषण को पार न लावे ॥३९
इह दही तक्र विधि सारी, सुनिये जो भवि व्रत धारी।
किरया अरु जो व्रत राखे, दधि तक्र न पर को चाखे ॥४०
अब जावण की विधि सारी, सुनिये भवि चित्त अवधारी।
जब दूध दुहाय घर लावे, तब ही तिहि अगनि चढावे ॥४१
अवटाये उतार जु लीजे, रुपया तव गरम करीजे।
डारै पयमाहे जेहा, जमिहै दधि नहि सन्देहा ॥४२
वांधै कपड़ा के मांही, जब नीरन बुन्द रहाही। तिहकी दे वड़ी सुकाई, राखे सो जतन कराई ॥४३
जल मांही घोल सो लीजे, पयमांहे जांवण दीजे।
मरयादा भाषी जेहा, इह जावण मुं लखि लेहा ॥४४

इति गौरस मर्यादा सम्पूर्णम्।

■

अथ चर्माश्रि वस्तु दोष-वर्णनम्

दोहा—चरम मध्य की वस्तु को, खात दोप जो होय।
ताको संक्षेपहि कथन, कहुं सुनो भविलोय ॥४५

चौपाई—मूये पशु को चरम जु होय, भीटै नर चंडाल जु कोय।
ता चंडालहि परसत जबै, छोति गिने मगरे नर तबै ॥४६
घर आये जल स्नान करेय, एती संख्या चित्तहि वरेय।
पशू खाल के कूपा मांहि, घिरत तेल भंडसाल कराहि ॥४७
अथवा सिर पर धर कर ल्याय, वेचै सो वाजारहि जाय।
नाहि खरीद लेय घर मांहि, खावै सबै संकु कछु नाहि ॥४८

तामे उपजें जीव अपार, जिनवाणी भाष्यो निरधार।
जैसें पशू चाम के मांहि, घृत जल तेल डार है ताहि ॥४९
ताही कुल के जीव उपजन्त, सख्यातीत कहै भगवन्त।
ऐसो दोप जाणिकै सत, चरम वस्तु तुम तजहु तुरन्त ॥५०
कोई मिथ्याती कहै एम, जिय उतपत्ती भाषो केम।
जीव तेल घृत मे कहुँ नाहि, चरम धरें कर उपजे काहि ॥५१
ताके समझावण को कथा, कही जिनेश्वर भापूं यथा।
दे दृष्टान्त सुदृढता धरी, मिथ्यादृष्टी सशय हरी ॥५२
घृत जल तेल जोगते जोव, चरम वस्तु मे धरत अतीव।
उपजै जैसें जाको चाम, सो दृष्टान्त कहूँ अभिराम ॥५३
सूरज सन्मुख दरपण धरै, रूई ताके आगे करै।
रवि दरपण को तेज मिलाय, अगनि उपजै रूई बलि जाय ॥५४
नही अगनि इकली रूमाहि, दरपन मध्य कहुँहै नाहि।
दुहुयनि की संयोग मिलाय, उपजै अगनि न सशै थाय ॥५५
तेई चाम के वासन मांहि, घृत जल तेल धरै सक नाहि।
उपजै जीव मिलैं दुहूँ थकी, इह कथनी जिनमारग बकी ॥५६
ऐसैं लख कै भील चमार, धीवर रैगर आदि चडार।
तिनके घर के भाजन तणो, भोजन भखे दोष तिम तणो ॥५७
तैसो चरम वस्तु मे दोप, दुरगति दायक दुख को कोष।
चरम वस्तु भक्षण करि जेह, मास भखी सादृश है तेह ॥५८
तुरत पशू मूए की चाम, करिकै तास भाथडी ताम।
भरै हीग तामे मिल जाय, खातो मास दोष अधिकाय ॥५९
जाके मास त्याग व्रत होय, हीग भव्य नहि खावे कोय।
हीग परै जहि भाजन माहि, सो चमार वासण सम जाहि ॥६०

सवैया

चामडे के मध्य वस्तु ताको जो आहार होय, अति ही अशुद्ध ताहि मिथ्यादृष्टी खाय है।
दातार के दीए विन जिन इच्छा होय एसो, असन लहाय नाम जत्ती को कहाय है ॥
तिन वहिरात्त मासो कहा कहै और सुनो, वणियो सो भोजन क्रियातै हीण थाय है।
हरित्त अनेक जुत मारग धरमवन्त, शुद्धता कहाय भखै धरै या गहाय है ॥६१

दोहा

जीमत भोजन के विषे, मूवो जनाबर देख। तजै नही वह असन को, पुरजन दुष्ट विशेष ॥६२
ए चाख्यों इक से कहे, यामें फेर न सार। अति लम्पट जिह्वा तणो, लोलुप चित्त अपार ॥६३

चौपाई– हटवा तणो चून अरु दाल, व्रतधर इनको खावो टाल।
बीघो अन्न पीस दल ताहि, दया रहित बेचत है जाहि ॥६४
जीव कलेवर थानक सोय, चलतेहु तामाहे होय।
परम विवेकी हैं जो मही, मास दोप लख त्यागै सही ॥६५

नीच लोक घर को घृत दुग्ध, तजहु विवेक जाणि अशुद्ध ।
सांढि दूध दोहत तैं लेय, तातो होय तहा सो देय ॥६६
निन्द्य वस्तु उपमा इसी, कहिये मांस बराबर जिसी ।
आमिषकी उपमा इह वीर, जैसी साढि तणी है खीर ॥६७
याते सांढि दूध को तजो, मांस तजन व्रत निहचै भजो ।
संख तणो चूनो गौमूत्र, महानिन्द भाषो जिन सूत्र ॥६८
कालिगडा घिया तोरई, कद्दू वीलरु जामानिई ।
इत्यादिक फलकाय अनन्त, तिनको तजिये तुरत महन्त ॥६९
फलीय कवांरि कली कचनार, फूल सुहजणा आदि अपार ।
महानिन्द जीवनि का धाम, तजिये तुरत विवेकोराम ॥७०

दोहा

त्रेपन किरिया के विषै, प्रथम मूलगुण आठ । तिन वर्णन संक्षेपते, कह्यो पूर्व ही पाठ ॥७१
जिनवानी जैसी कही, कथा संस्कृत तेह । भाषा तिह अनुसारते, बन्ध चोपाई एह ॥७२
पंच उदम्बर फल त्यजन, मकारादि पुनि तीन । महादोषकर जानके, तुरत तजहु परवीन ॥७३

सवैया

पीपर और वड़फल उंवर कटुम्बरहु पाक परिपांच उदुंवर फल जानियें,
मद्य मांस मधु तीन मकरादि अतिहीन सुनहु परवीन सबै आठए वखानियें ।
इनही के दोष जेते तामे पाप दोष तेते लहै न सन्तोष तेते नर खात मानिये,
इनिके तजे जो मन वच क्रम भव्य जीव आठ मूलगुण के सधैया मन आनियें ॥७४

चौपाई

जा घरमाहि रसोई दोय, तहाँ तानिये चन्दवो लोय ।
अवर परहिंडा ऊपर जान, उंखल चाकी है जिहि थान ॥७५
फटकै नाज रु वीणै जहाँ, चून छानिवो थानक तहाँ ।
जिस जागह जीमन नित होय, सयन करण जागा अवलोय ॥७६
सामायिक कीजै जिहि धीर, ए नव थानक लख वर वीर ।
ऊपर वसन जहाँ ताणियें, श्रावक चलण तहाँ जाणिये ॥७७
चाकी ऊखल कै परिणाम, ढकणा कीजै परम सुजान ।
स्वान बिलाई चाटै नाय, कीजै जतन इसी विधि भाय ॥७८
खोट लिये मूसलतें नाज, धोय इकान्त धरो विन काज ।
छाज चालणा चालणी तीन, चामतणा तजिये परवीण ॥७९
चरम वस्तु को त्यागी होय, इनको कवहुँ न भेटे सोय ।
दिन में कूटे पीसे नाज, सो खाना किरिया सिरताज ॥८०
नाज नजर ते सोध्यो परै, तातें करुणा अति विस्तरै ।
निसिको जो पीसै अरु दलै, जाते करुणा कवहूं न पलै ॥८१

चाकी गालै चून रहाय, चीटी अधिक लगै तसु आय ।
निसिको पीस्यो नजर न परै, ताके दोष केम ऊचरै ॥८२
नाजमाँहि ऊपरि ते कोय, प्राणी आय रहे जो होय ।
सोई नजर न आवे जीव, याते दूषण लगै अतीव ॥८३
एते निशि पीसण के दोष, जान लेहु भवि अध के कोष ।
ताके निशि पीस्यो नहि भलो, त्यागो ते किरिया जुत चलो ॥८४
चूनतणी मरयादा कहू, जिनमारग मे जैसे लहू ।
शीतकाल दिन सात बखान, पाच दिवस ग्रीषम ऋतु जान ॥८५
बरसाकाल माहि तिन तीन, ए मरयादा गहौ प्रवीन ।
इन उपरान्त जानिये इसो, दोष चलितरस भाष्यो तिसो ॥८६
निसिको नाज भेय जो खाय, अकूरा तिन मे निकसाय ।
जोव निगोद तणो भण्डार, कन्दमूल सब दोष अपार ॥८७
ताते जिते विवेकी जीव, दोष जाणके तजहु सदीव ।
श्रावक की है घर जो त्रिया, किरियामाँहि निपुण तसु हिया ॥८८
इँधन सोघ रसोई माँहि, लावे तासो असन कराहि ।
ताते पुण्य लहै उत्कृष्ट, भव भव मे सुख सहै गरिष्ट ॥८९

चौपाई

कोई मान बडाई काजै, अरु जिह्वा लोलुपता साजे ।
खाड तणी चासणी कराय, दाख छुहारा माँहि डराय ॥९०
नाना भाँति अवर भी जान, करइ मुरब्बा नाम बखान ।
कैरो अगनि ऊपरि चढवाय, खाण्ड पातमाहे नखवाय ॥९१
कहै नाम तसु कैरी पाक, करवावै तस अशुभ विपाक ।
तिनकी मरजादा वसु जाम, व्रत धरकै पीछे नहि काम ॥९२
जेती ऊष्ण नीरकी वार, तेती इन सख्या निरधार ।
रहित विवेक मूढता जान, राखे घर मे बहु दिन आन ॥९३
मास दुमास छमास न ठीक, वरस अधिक दिन लो तहकीक ।
काहू मे तो पेस करेय, मागै तिनको मागा देय ॥९४
जाते लखै बडाई आप, तिस समान कछु अवर न पाप ।
मदिरा दोष लगै सक नाहि, ताते भवि तजिये हित जाहि ॥९५
जो मन मे खाने को चाव, खावे जीमत वार कराब ।
अथवा कीए पाछे ताम, लैनो जोग आठहो जाम ॥९६
साठोका रसको अवटाहि, राखे नरम चासणी ताहि ।
घागर मटकी भरके राख, ताको बहुदिन पीछे चाख ॥९७
ताहूँ मे मदिरा को दोष, महानन्त जीवनिको कोष ।
अधिको कहा करौ आलाप, अहो रात्रि खोये बहुपाप ॥९८

याको षटरस नाम जु कहै, पुन्यवान कबहु न गहै ।
मन वच तन इनको जो तजै, मदिरा त्याग वरत सो भजै ॥९९

दोहा

जे विशुद्ध मदिरा त्यजन, पालै वरत महन्त । मरजादा ऊपर गये, तुरत त्यागिये सन्त ॥२००

चौपाई

होत रसोई थानक जहाँ, खिचडो रोटी भोजन तहाँ ।
चावल और विविध परकार, निपजै श्रावक के घर सार ॥१
जीमण थानक जो परमाण, तहाँ जीमिये परम सुजाण ।
रांधण के भाजन है जेह, चौका वाहिर काढि न तेह ॥२
जो काढै तो माहि न लेह, किरियावन्त सो नाहि सनेह ।
असन रसोई बाहिर जाय, सो बटबोयी नाम कहाय ॥३
अन्य जाति जो भीटै कोय, जिय भोजन को जीमे सोय ।
शूद्रनि मेले जीमे जिसो, दोष वखान्यो है वह तिसो ॥४
अन्य जातिके मेले कोई, असन करै निरबुद्धि होई ।
याते दूषण लगै अपार, जिमि परजूठि भखै मतिछार ॥५
निजसुत पिता व भ्राता जान, सांचो मित्रादिक जो मान ।
मेलै तितकै जीमण जदा, किरियामती वरणो नहि कदा ॥६
तो पर जात तणी कहा वात, क्रिया काण्ड ग्रन्थनि विख्यात ।
भाजन निज जीमन को जेह, माग्यो परको कबहूँ न देह ॥७
अरु परको वासण मे आप, जीमेते अति बाढै पाप ।
ग्रामान्तर जो गमन कराय, वसिहै ग्राम सराया जाय ॥८
मांगे वासन खावे वाहि, जो सीधो घरहूँ को आहि ।
खाये दोष लगै अधिकार, मास वरावर फेर न सार ॥९
गूजर मीणा जाट अहीर, भील, चमार तुरक बहु कीर ।
इत्यादिक जे हीण कहात, तिन बासन मे भोजन खात ॥१०.
ताके घर को बासण होय, ताते तजौ विवेकी लोय ।
श्रावक कुल अति लह्यो गरिष्ठ, क्रिया विना जो जानहु भ्रष्ट ॥११
जे वुध क्रिया विषै परवीन, अन्य तणो वासण गहि हीण ।
तामे भोजन कवहु न करै, अधिको कष्ट आय जो परै ॥१२
जैन धरम जाके नहिं होय, अन्यमती कहिये नर सोय ।
निपज्यो असन तास घरमाहि, जीमण योग वखाणो नाहि ॥१३
अरु तिनके घरहु को कीयो, खानो जिनमत मे वरजीयो ।
पाणी छाणि न जाणे सोय, सोधण नाज विवेक न होय ॥१४
ईंधण देख न वालो जिके, दया रहित नर जाणो तिके ।
जीव दया पटमत मे सार, दया विना करणी सत्र छार ॥१५

याते जे करुणा प्रतिपाल, असन आन घरि कर तजि चाल ।
निजव्रत रक्षक है नर जेह, यो जिनवर भाष्यौ सन्देह ॥१६

छन्द चाल

जे आठ मूल गुण पालै, इतने दोषनि को टालै ।
दीजे जिम मन्दिर नीव, गहिरी चौढी अति सीव ॥१७
तापर जो काम चढावै, बहु दिन लो डिगणे न पावै ।
तिम श्रावक व्रत ग्रह केरी, इनि बिनि ही नीव अनेरी ॥१८
दरशन जुत ए पलि आवै, व्रत मन्दिर अडिग रहावै ।
याते जे भविजन प्राणी, निहचै एह मन मै आणी ॥१९
प्रतिमा ग्यारा जो भेद, आगे कहि हो तजि खेद ॥२०

अडिल्ल छन्द

किसनसिंह यह अरज करे भविजन सुनो, पालो वसु गुण मूल निजातम को गुणो ।
दरशन जुत व्रत त्रिविध शुद्ध मनलाई हो, सुरग सम्पदा भुजि मोक्ष सुख पाय हो ॥२१

अथ रजस्वला स्त्री की क्रिया लिख्यते

चौपाई

अवर कथन इक कहनो जोग, सो सुन लीज्यो जे भविलोग ।
अबै क्रिया प्रगटी बहु हीण, याते भाषू लखहु प्रवीन ॥२२
ग्रथ त्रिवर्णाचार जु माहि, वरणन कीयो है अधिकाहि ।
मतलब सो तामे इक जान, मै सक्षेप कहूँ सुखदान ॥२३
रितुवती वनिता जब थाय, चलण महा विपरीत चलाय ।
प्रथम दिवस ते ही ग्रह काम, देय बुहारी सिगरे धाम ॥२४
अवर हाथ माही ले छाज, फटके सोधै वोणै नाज ।
बालक कपडा पहिरा होय, बाहि खिलावै सगरे लोय ॥२५
आपस मे तिय हूजे सबै, न करे शका भीटत जबै ।
माजै सब हँडवाई सही, जीमण की थाली हू गही ॥२६
जिह थाली मे सिगरे खाहि, ताही मे वा असन कराहि ।
जल पीवे को कलस्यो एक, सब ही पीबै रहित विवेक ॥२७
क्रिया कोष ग्रन्थन मे कही, रितुवंती जो भाजन लही ।
ग्रह चडार तणा को जिसो, वोहू भाजन जाणो तिसो ॥२८
और कहा कहिए अधिकाय, वह वासण मांहे जो खाय ।
ताके दोष तणो नहि पार, क्रिया हीण बहु जाणि निवार ॥२९
निसिकों पति सोवत है जहा, वाहू मयन करत है तहा ।
दुहु आपस मे परसत वेह, यामे मति जाणो संदेह ॥३०
कोऊ विकल महा कुमतिया, दुय तीजे दिन सेवै तिया ।
महापाप उपजावै जोर, यासम अवर न क्रिया अघोर ॥३१

महाग्लानि उपजै तिहि वार, चमारणिहूँ ते अधिकार ।
जाको फल वे तुरत लहाय, जी कहु उस दिन गरभ रहाय ॥३२
भाग्य हीण सुत बेटी होय, पर तिय नर सेवे बुधि खोय ।
क्रोधित ह्वै कह अति बच ठीक, जद्वा तद्वा कहै अलीक ॥३३
रितुवंती तिय किरिया जिसी, भाषो भपि सुणि करिए तिसी ।
वनिता धर्मं होत जव बाल, सकल काम तजिके तत्काल ॥३४
ठाम एकांत बैठि है, जाय, भूमि तृणा सथारो कराय ।
निसि दिन तिह पर थिरता धरै, निद्रा आये सयन जु करै ॥३५
इह विधि निवसे वासर तीन, तव लो एती क्रिया प्रवीन ।
प्रथम ही असन गरिष्ठ न करै, पातल अथवा कर में धरै ॥३६
माटी बासण जल का साज, फिरि वे हैं आवे नहि काज ।
इह भोजन जल पीवन रीति, अवर क्रिया सुनिये घर प्रीति ॥३७

छंदचाल

दिन में नहिं सयन कराही, हासि न कोतूहल थाही ।
तनि तेल फुलेल न लावे, काजल नयना न अजावें ॥३८
नख को नही दूर करावे, गीतादिक कवहु न गावे ॥
तिलक न वे रोली केशर, कर पय नख दे न महावर ॥३९
एक दिवस तीन ली भोग, रितुवंती न करीवो जोग ।
पुरुषनि कों नजर न धारे, निज पतिहुं को न निहारे ॥४०
वनिता ह्वै धरम जु निसिको, दिन गिण लीजे नहि तिसको ।
सूरज नजरों जो आवे, वह दिन गिणती में लावें ॥४१
दूजे दिन स्थान कराही, धोबी कपडा ले जाही ।
सकोच थको नखवाई, औरन की नजर न आई ॥४२
तीजे दिन जलसें न्हावे, तनु वसन ऊजले लावें ।
चउथे दिन स्नान करती, मन में आनंद धरती ॥४३
तन वसन ऊजले, धारे, प्रथमहि पति नयन निहारे ।
निसि धरै गरभ जो वाम, पति सूरन सो अभिराम ॥४४
निपजावै उत्तम वालक, वडभाग जनहिं प्रतिपालक ।
ताते इह निहचै जानी, चौथे दिन स्नान जु ठानी ॥४५
पतिवरत त्रिया जो पारे, निज पति को नयन निहारे ।
नर अवर नजर जो आवे, तस सूरत सम सुत धावे ॥४६
शीलहि कलक को लावे, अपजस लग पटह वजावे ।
यातें सुभ वनिता जें हैं, किरिया जुत चाले ते हैं ॥४७
निजपति विन अवर न देखे, सासू ने नाहिं मुख पेखे ।
ताके घर मांही जाणो, लछमी को वाल वखाणो ॥४८

अति सुजस होय जगमाहीं, तासम वनिता कहुँ नाहीं।
इह कथन लखो बुध ठीका, भाषो नहि कछू अलीका ॥४९

दोहा

क्षत्री ब्राह्मण वैश्य की, क्रिया विशेष वखान। ग्रन्थ त्रिवर्णाचार मे, देख लेहु मति मान ॥५०

इति रजस्वला स्त्री क्रिया वर्णनम्।

●

अथ द्वादश व्रत कथन लिख्यते

दोहा

कियो मूल गुण आठ को, वर्णन बुधि अनुसार।
अब द्वादश व्रत्त को कथन, सुनहु भविक ब्रतधार ॥५१
बारा व्रत्त मांही प्रथम, पांच अणुव्रत सार। तीन गुणव्रत्त चार पुनि, शिक्षाव्रत सुखकार ॥५२

छन्द चाल।

इह ब्रत पालै फल ताको, भाषो प्रत्येक सु जाको।
जे अव्रत दोष अपारा कहि हो तिन को निरधारा ॥५३
समकित्त जुत व्रत फल दाई, तिहकी उपमा न कराई।
बिनु दरशन जे व्रत धारी, तुष खडन सम फलकारी ॥५४

अडिल्ल

जो नर व्रत को धरैं सहित समकित्त सही, सुर नर और फणिंद्र सपदा को लही।
केवल विभव प्रकाश समवश्रुत लहि सदा, सिद्ध-वधू कुचकुभ पाय क्रीडत सदा ॥५५

दोहा

भाग्य हीन ज्यो चहत गुण, धन धान्यादिक नाहि।
भीत मूर्ति नित ही दुखी, वरत-रहित नर थांहि ॥५६

गीता छन्द

जो शुद्ध समकित धार अति ही नरभव सुखकर कौन है।
संसार मे जे सार सारहि भोग सो मुनि व्रत गहैं ॥
सो मुक्ति वनिता के पयोधर हार सम जे रति करै।
तहँ जनम मरण न लहै कवही सुख अनता अनुसरैं ॥५७

दोहा

कुबुद्धि भव संसार मे, भ्रमत चतुर गति थान। जिन आगम तत्त्वार्थ को, विकल होय सरधान ॥५८

अथ अहिंसा अणुव्रत लिख्यते। चौपाई

त्रस की घात कवहुँ नहि जाण, जो कदाचि छूटै निज प्राण।
थावर दोष लगै तिह थकी, प्रथम अणुव्रत जिनवर वकी ॥५९

थावर हिंसा इतनी तजै, त्रस के घात दोष कौ भजै।
सो धरमी सो परम सुजान, जीवदया पालक प्रतिजान ॥६०

छन्द नाराच

करोति जीव की दया नरोत्तमो मही सही, सुबैर वर्ग वर्जितो निरामयो तनु लही।
तिलोक हर्म्य मध्यरत्न दीप सो बखानिए, वरै विमोक्ष लक्ष्मी प्रसिद्ध शिव को जानिए ॥६१

दोहा

खाद्य अखाद्य न भेद कछु, हिंसा करत न ढील। महा पाप की मूल नर, ज्यो चडाल अरु भील ॥६२

अडिल्ल छन्द

जीवबध कर पाप उपार्जित पाक ते, घोर भवोदधि माहि परै निज आपते।
नरक तणा दुख सबै बहुत विधिते सहै, फिर-फिर दुर्गति माहि सदा फिरते रहै ॥६३

दोहा

करुणा अरु हिंसा तणो, प्रगट कह्यो फल भेद। वह उपजावे सुख महा, अदया ते ह्वै खेद ॥६४
ऐसे लखि भविजन सदा, धरो दया चित राग। सुपने हूँ अदया करत, भाव तजहु बडभाग ॥६५

सवैया

पूरव ही मुनिराय दया पालो षट्काय महा सुखदाय शिव थानज लह्यो है,
प्रतिमा धरैया के उपसमकादि केतेहूँ करुणा सहाय जाय देवलोक पायो है।
अजहूँ जीवनि की रक्षा के करैया भवि सुर शिव लहै जिनराज यो वतायो है,
या तें हिंसा टार क्रिया पार चित्त धार जिन आगम प्रमाण कृष्णसिंह ऐसे गायो है ॥६६

अथ हिंसा अतिचार। चाल छन्द

बाधे नर पशुयन केई, रज्जू बधन दृढ देई।
लकुटादिक ते अति मारै, पाहन मूठी अधिकारै।
नासा करणादिक छेदै, परवेदन को नहिं वेदे।
पशुवन को भाड़ो करिहै, इतनो हम वोझ जो धरिहै ॥६७
पीछै लादे वहु भार, जाके अघ को नहि पार।
खर बैल ऊँट अरु गाडो, मरयाद जितो करि भाडो ॥६८
हासिल को भय कर जानी, वोझि भरन अधिक वगानी।
घोटक रथ ह्वै असवारे, चालै निस साज सवारे ॥६९
तसु भूख त्रिषा नहिं छूजे, ताको पर दुख नहिं सूजे।
काहू नर के सिर दाम, जाको रोकै निजधाम ॥७०
तिहि खान पान नहिं देई, क्रोधादिक अधिक करेई।
ए अतीचार भनि पांच, अदया को कारण सांच ॥७१
करुणा व्रत पालक जेह, टालैं मन में धर नेह।
विन अतिचार फल सारा, सुखदायक ह्वो अधिकारा ॥७२
वे धन्य पुरुष जगमाही, ते करुणा भाव धराही।
करुणा सव विधि सुखदायक, पदवी पावै सुखनायक ॥७३

अथवा चक्री धरणेश, देव नृपहुँ हो श्रेणिक बेश ।
इन पदवी कर कहा बडाई, संसार तणा सुखदाई ।।७४
याते तीर्थंकर होई, सदेह न आणों कोई ।
ताते सुनिये भवि जीव, करुणा चित धार सदीव ।।७५

अथ सत्य अणुव्रत कथन । चौपाई

झूठ थूल वच ना मुख कहै, संकट पडै मौन को गहै ।
त्यागें असत्य सर्वथा नही, याते लघु खिर है मुखि कही ।।७६
जीवदया पलिहै नहिं तदा, झूठ बचन बोले है जदा ।
वह असत्य साच ही जांण, जहाँ जीव के बचि है प्राण ।।७७

छन्द नाराच ।

सदीव सत्य भावते अलध्यते न तास को, पएवि वाच-सिद्धि चार नाद होय जासको ।
समृद्धि रिद्धि वृद्धि तीन लोक की लहै इको, त्रिया जु मोक्ष गेह माहि तिष्ठ है सुजायको ।।७८

दोहा

वचन न जाको ठीक कछु, अति लवार मति क्रूर ।
ताते फल अति कटुक सुन, महापाप को भूर ।।७९

अडिल्ल छन्द

नष्ट जीभ बच परतें निंदित मानिए, गर्दभ ऊँट बिलाव काक सुर जानिए ।
जड़ विवेक ते रहित मूकता को धरै, झूठ वचन ते मनुज इते दुख अनुसरै ।।८०

दोहा

सांच झूठ फल है जिसो, तिसो कह्यो भगवान । सत्य कहो झूठहि तजो, इहै सीख मन आन ।।८१

अथ सत्य वचन अतीचार । छन्द चाल

नित झूठ वचन बहु भाषै, अवरनि उपदेश जु आपै ।
परगुप्त बात जो थाही, ताकों ते प्रगट कराही ।।८२
पत्री झूठी नित माडे, केलवणी हिय नही छाडे ।
लेखी पुनि मांडै झूठी, खतहू लिख है जु अपूठी ।।८३
तासो कर्म जु रूठो, अघ अधिक महा करि तूठो ।
को धरि है धरो कडि आई, जासो जो मुकरि सुजाई ।।८४
साक्षी दस पाँच बुलावै, बस झूठो करि ठहरावै ।
इस पाप तणो नहि पारा, कहिए कहुँलो निरधारा ।।८५
दुहुँ पुरुष जुदे बतलावै, तिन मिलती हिए अणावै ।
दुहुँ सुख आकार लखाई, परसो सो प्रगट कराई ।।८६
दूखै उनके परिणाम, अघ-दायक है इक काम ।
लख अतिचार दूई तीन, व्रत सत्य तणा परवीन ।।८७

इनको त्यागै जे जीव, शुभ गति लहै अतीव ।
ए अतिचार पण भाखे, व्रत सत्य जमे जिन आखे ॥८८
शिवभूति भयो द्विज एक, पापी धर मन अविवेक ।
नग पाच सेठ सुत धरिके, पाछे सो गयो मुकर के ॥८९
सत्य घोष प्रगट तसु नाम, नृपतिय झूठा लखि ताम ।
जूआ रमि करे चतुराई, तसु तिय ते रत्न मगाई ॥९०
तिह्न सेठ परीक्षा कारी, जिह्न लिये निज नग टारी ।
द्विज मरिकै पन्नग थायो, तत्क्षण असत्य फल पायो ॥९१

अदत्त त्याग अणुव्रत कथन । चौपाई

धरो परायो अरु वीसरो, लेखा मैं भोलो जो करो ।
मही परो नहि लेहै सोय, जो अदत्त त्यागी नर होय ॥९२
चोरी प्रगट अदत्ता सर्व, अणुव्रत धारी तजि है भव्य ।
लगै व्यापारादिक मे दोष, एक देश पलि है शुभ कोप ॥९३

छन्द नाराच

तजेहि द्रव्य पारको सुसर्निधि निरंतरं, भवन्ति भूमि-नाथ भोगभूमि पाय हैं पर ।
लहेवि सर्व बोध सिद्ध कातया सुनैन को, अतीव मूर्ति तासकी सहाय चैन दैन को ॥९४

दोहा

जाकी कीरति जगत में, फैले अति विस्तार ।
उज्ज्वल शशि किरणा जिसी, जो अदत्त व्रतधार ॥९५
सदा हरै पर द्रव्य को, महापाप मति जोर ।
पड्यो रह्यो भोले धर्यो, गहै सुनिहचै चोर ॥९६

उडिल्ल छन्द

सदा दरिद्री शोक रोग भयजुत रहै, पाप मूर्ति अति क्षुधा त्रिषा वेदन सहै ।
पुत्र कलत्र रु मित्र नही कोउ जा सके, चोरी अर्जित पाप उदै भो तासके ॥९७

दोहा

त्यजन अदत्त सुवरत को, अरु चोरी फल ताहि ।
सुनवि गहौ व्रत को सुधी, चोरी भाव लजाहि ॥९८

अदत्तादान का अतीचार वर्णन । छन्द चाल

चोरी करने की वात, सिखवावै औरनि घात ।
जावो परधन के काज, लावो इस बुधि दलि माज ॥९९
कोऊ चोरी कर ल्यावे, बहु मोली वस्तु दिगावै ।
ताको तुच्छ मोल जु देई, बहु धन की वस्तु सु लेई ॥१००

कपडो मीठो अरुधान, लावे बेचै ले आन। तिनको हासिल नहिं देई, नृप आज्ञा एम हनेई ॥१
जो कहु नरपति सुन पावै, तिहि बाध बेग मगवावे।
घर लूट लेई सब ताको, फल इह आज्ञा हणिबाको ॥२
गज हाथ पंसेरी बाट, जाणो इह मान निराट। चौपाई पाई देवाणी, सोई माणी परमाणी ॥३
इनको लखिये उन मान, तुलिहै मपि है बहु वान।
ओछो दे अधिको लेई, अपनो शुभ ताको देई ॥४
उपजावै बहुते पाप, दुरगति मे लहै सताप। केसर कस्तूरी कपूर, नानाविधि अवर जकूर ॥५
घृत हीग लूण बहुगाज, तदुल गुड खाड समाज।
इन माही भेल कराही, हियरे अति लोभ धराही ॥६
कपड़ो बहु मोलो लावै, कोऊ कहै आण गहावै। ताके बदले धरि वैसो, अगिला रग हौवै जेसो ॥७
व्रत दान अदत्ता कीजै, पण अतिचार ए लीजे।
ताते सुनिये भवि प्राणी, दुरगति दुखदायक जाणी ॥८
तजिए इनको अब वेग, भवि जीवनि को इह नेग।
त्यागै सुधरै इहलोक, परभव सुख पावै थोक ॥९

अथ ब्रह्मचर्य अणुव्रत कथन। चौपाई

नारि पराई को सर्वथा, त्याग करै मन वच क्रम यथा।
निज बयते लघु देखे ताहि, पुत्री सम सो गिनिए जाहि ॥१०
आप बराबर जोबन धरै, निज भगिनी सम लख परिहरे।
आप थकी वय अधिकी होय, ताहि मात सम जाण हि जोय ॥११
इम परतिय को गनिहै भव्य, सो सुख सुर-नर के लहि सर्व।
निज बनिता माहिं सतोष, करिये इस विध सुणि शुभ कोष ॥१२
आप व्रती तियको व्रत जबै, दोऊ दिन सील गहै बुध तबै।
आठै चौदस परवी पाँच, शील व्रत पालै मन साँच ॥१३
भादों मास अठाई पर्व, महा पूज्य दिन लखिये सर्व।
ब्रह्मचर्य पाले इन माहि, सुर सुख लहियत सशय नाहिं ॥१४

अथ शीलकी नव वाड़ि प्रारम्भ । चौपाई

पुनि व्रत धर इतनी विधि धरे, ताहि शीलव्रत त्रिविध सु परे।
जेहि वनिता को जूथ महन्त, तहा वास नहि करिये सत ॥१५
रुचि धर प्रेम न निरखे त्रिया, ताको सफल जनम अरु जिया।
पडदा के अन्दर तिय ताहि, मधुर वचन भाषै नहि जाहि ॥१६
पूरब भोग केलि की जीत, तिनहि न याद करे शुभ मीत।
लेइ नही आहार गरिष्ठ, तुरत शील को करे जु भ्रष्ट ॥१७
कर शुचितन शृंगार वनाय, किये शीलको दोष लगाय।
जिह पलग मे सोवै नार, सो सेज्या तज वुध व्रतधार ॥१८
मनमथ कथा होय जिहि थान, तह क्षण रहै नही मतिमान।
निज मुखते कवहूँ नहि कहै, ब्रह्मचर्य व्रत को जो गहै ॥१९

उदर भरो भोजन नहि करे, ताते इन्द्री बहु बल धरे।
ए नव वाडि पालिये जबै, शील शुद्ध व्रत पलिहै तवै ॥२०
इति नववाडि सपूर्णम्

शील चरित्र कथन। सवैया

ब्राह्मी सुन्दरनि आदि देके सोला सती भई शील परभाव लिंगछेद सोतेई भई।
तिन मांहे केऊ नृप सोई शिवध्यान लह्यो केऊ मोक्ष जैहै भूप होय तहाँ ते चई॥
अनन्तमती तु कारीने आदि कैती कहूँ महा कष्ट पाय शील दिठता मई ठई।
शीलते अनन्त सुख लहै कछु सशय नाहि भग भ्रमै नरक महा पई ॥२१

दोहा

सेठ सुदर्शन आदि दे, शीलतणै परभाव। लहै अनन्ते मोक्ष सुख, कहालो करो वढाव ॥२२

नाराच छन्द

सुनो वि सन्त ब्रह्मचर्य पाल वाँधका इसौ, अतीव रूपवान धाय काम को जिसौ।
मनोज्ञ खोजता लहाय पुत्र पौत्र सोभितो, अनेक भूषणादि द्रव्य और पै नही इतो ॥२३
गहै वि दीक्षया लहै विज्ञान को प्रकार ही, अनन्त सुख बोध दर्शनादि बीर्य भासही।
सुमोक्ष सिद्ध थाय काल बीच है अपार सो, सुसिद्ध खोजता मुखावलोक ने नगारसो ॥२४

दोहा

लंपट विषयी पुरुषके, निजपर ठीक न होय। दुरगति दुख फल सो लहै, भ्रमिहै भव दधि सोय ॥२५

अडिल्ल छन्द

ह्वै कुरूप दुर्गन्ध निंदि निरधन महा, वेद नपुसक दुर्ग व्याधि कुष्टहि गहा।
अङ्ग विकल अति होय ग्रथिल जिमि भासही, परतिय सग-विपाक लही ह्वै इम सही ॥२६

दोहा

व्रत परवनिता त्यजनको, कथन कह्यो सुखकार।
अरु लम्पट विषयी तणो, भाष्यो सहु निरधार ॥२७
शील थकी सुर नर विमल, सुख लहि शिवपुर जाहि।
दुरगति दुख भव-भ्रमणको, विषयी लम्पट पाहि। ॥२८

अथ ब्रह्मचर्य अणुव्रत अतीचार। छन्द चाल

परकी जो करै सगाई, बतलावे जोग मिलाई।
अरु व्याह उपाय वतावै, निज व्रतको दोष लगावै ॥२९
विभिचारिणी जैहै नारी, परिगृहीत नाम उचारी।
जिनको वेश्यादिक कहिये, तिन को सगम नही गहिये ॥३०
हास्यादि कौतूहल कीजै, शीले तव मलिन करीजै।
अपरिगृहीत सुनि नाम, पति परणी है जो वाम ॥३१
तसु महा कुशीला जाणी, जसु संगति करै जु प्राणी।
हास्यादिक वचन सुभाखै, सो शील मलिन अति राखै ॥३२

जे लम्पट विषयी क्रूर, ते पावै भव दुख पूर। अतीचार तीसरो एह, सुनिये अब चौथो जेह ॥३३
क्रीडा अनग विधि एह, हस्त सुपरसत तिय देह।
विकल्प मन मै ही आने, परतक्ष ते शीलहि भाने ॥३४
इह अतीचार चौथो ही, बुध करै न कबहू यो ही।
पंचम भनिये अतीचार, सुपने मे मदन विकार ॥३५
उपजै तिय सेवन काम, विकलपता अति दुख धाम।
औषध के पाक बनावे, बहु विध रस धातु मिलावै ॥३६
अति विकल होय निज तियको, सेवे हरखावे जियको।
बुध जन इह रीति न जोग, पण अतीचार इस भोग ॥३७

दोहा

इनही टाल व्रत शीलको, पालो मन वच काय।
इह भवतै सुर पद लहै, फिरि नृप ह्वै शिव जाय ॥३८

अथ परिग्रह प्रमाण अणुव्रत कथन। चौपाई

क्षेत्र वास्तु आदिक दस जाण, परिग्रह तणो करै परिमाण।
इनको दोष लगावे नही, वहै देश व्रत पचम कही ॥३९

छन्द नाराच

करोति मूढना प्रमाण कर्ण सेवनां विषै, त्रिलोक वेदज्ञान पाय श्री जिनेश यौ अपै।
भवन्ति सौख्य सागरो अनन्त शक्ति कौ गहै, त्रिलोक वल्लभो सदा भवन्तरे सिव तहे ॥४०

दोहा

मन विकल्प सरै अधिक, विभव परिग्रह माहि। लहै नही अघके उदै, फल नरकादि लहाहि ॥४१

अडिल्ल

जन्म जरा पुनि मरण सदा दुखकौ सहै, बहु दूषणको थान रोग अतिही लहै।
भ्रमै जगतके माहि कुगति दुखमे परै, विषयनि मूर्च्छा माहि न सवर जे करै ॥४२

दोहा

व्रत परिग्रह प्रमाण नर, कीये लहै फल सार। मनु मुकलावैं ठीक तजि, दुख भुगतै नहि पार ॥४३
याते व्रत धरि भव्य जे, मन विकल्प विस्तार। ताहि तजै सुख भोगवे, यामे फेर न सार ॥४४
जे सन्तोष न आदरै, ते भव भ्रमै सदीव। दुख-कर याको जानिकै, त्यागै उत्तम जीव ॥४५
दोष लगै या समझ कै, अतीचार पणि जाणि। तिनकौ वरणन भेद कछु, आगै कहो बखाणि ॥४६

अथ परिग्रह प्रमाणका अतीचार वर्णन। चौपाई

क्षेत्र कहावे धरती माहि, हल खैडन की जो विधि आहि।
वास्तु कहावे रहवातणा, मन्दिर हाट नोहोरा तणा ॥४७
हिरण्य रूपाको परमाण, करै जितो राखै बुधिमाण।
सुवरण सोनो ही जाणिये, ताकी मरज्यादा ठाणिये ॥४८
धन महिषी घोटक अरु गाय, हस्ती वैल ऊँट न थाय।
इत्यादिक चौपद जे सही, तिन सिगरे की सख्या कही ॥४९

सालि मूग गोधूम अर चिणा, नाज विविध के जे है घणा।
इन सबकी मरज्यादा गहो, बहुत जतन तें राखै सही ॥५०
खरच जितो घर माही होय, तितनो जान खरीदे सोय।
विणज निमित्त जेतो परमाण, जीव पड़ै नही वैसे जाण ॥५१
बहु उपाय करिकै राखि है, ऐसे जिनवाणी भाषि है।
वरस एकमे बीकै नही, दूनो वरस आइ है सही ॥५२
मरयादा माफिक थी जितो, अधिक लेय नहि राखै तितो।
दुपद परिग्रहमें एक है, वनिता दासी दासहू लहै ॥५३
कुप्य परिग्रहमे ये जाण, चावा चन्दन अतर वखाण।
रेसम सूत ऊनका जिता, कपड़ा होय कहा है तिता ॥५४
तिनहूं की मरज्यादा गहै, यो नायक श्री जिनवर कहैं।
रुपया भूषण रतन भडार, बहुरि सोनइया अरु दीनार ॥५५
इनकी मरयादा करि लेहु, हुंडवाई वासण पुनि एहु।
बहु विधि तणा किराणा भणी, अवर खांड गुड़ मिश्री तणी ॥५६
मरयादा ले सो निरवहै, भंग कीये दूषण को लहै।
मन वच काया पाले जेह, भव भव सुख पावे नर तेह ॥५७

सवैया ३१

वरत करैया ग्यारा प्रतिमा धरैया जे जे दोष के टरैया मनमाही ऐसे आनिकै,
जैसो है जिह थान जोग तैसो भोग उपभोग चरम तिजोग मांहि कह्यो है वखानिकै।
आदरेति तोही बाकी सहै छांडितेह ग्रथसंख्या व्रत एह श्रावक को जानिकै,
तद्भव सुरथाय राज ऋद्धि को लहाय पावै शिवथान दुखदानि भव भानिकै ॥५८

मरहटा छन्द

जो परिग्रह राखै दोष न भाखैं चित अभिलाषै हीन,
विकल्प मुकुलावे विषय वढ़ावे आठ न पावै तीन।
बहु पाप उपावै जो मन भावै आवै वात कहीन,
मूर्च्छा को धारी हीणाचारी नरक लहै सुख छीन ॥५९

छन्दभुजंग प्रयात

कह्यो मूर्च्छना दोष भारी अवपारी, लहै श्वभ्र संसै न जानैं लगारो।
तजै सर्वथा मोक्ष सौख्यं लहंती, यहैं जान भव्या न याको गहन्ती ॥६०

इति परिग्रह परिमाण पंचम अणुव्रत सम्पूर्ण।

अथ प्रथम दिग्गुणव्रत कथन लिख्यते। चौपाई

चार दिशा विदिशा पुनि चार, ऊर्ध्व अधो दुहुँ मिलि दस धार।
दिग व्रत पालन नर परवीन, मरयादा लंघै न कदी न ॥६१
जिते कोसलो फिरियो चहै, दिसा विदिसा की संख्या गहै।
अधिक लोभ को कारिज वणै, व्रत घर मरयादा नहि हणै ॥६२

जिम मरयादा की आखदी, तहँ लो जाय काम वसि पडी ।
घरि बैठा निति धारै ठीक, पाले कबहु न चले अलीक ॥६३

दोहा

दिगव्रत को पाले थकी, उपजै पुण्य अपार । सुरगादिक फल भोगवै, यामे फेर न सार ॥६४
मरयादा लीये बिना, फल उत्कृष्ट न होय । हमे पले नहिं इम कहै, बहै विकल मति जोय ॥६५

अब दिग्व्रत के अतिचार पांच लिख्यते । छन्द चाल

मन्दिर निज पर की आड, चडियो पुनि कोई पहाड ।
ऊरध सख्या सो कहिये, टालै ते दोषहि महिये ॥६५
तहखाना कूप रु वाय, गिरि गुफा माहि जो जाय ।
इह अधो भूमि मरयाद, टालै दूषण परमाद ॥६६
दिसि विदिसि सोह जे लीनी, तिरछो चलवै मति दीनि ।
सो तिरयग गमन कहाई, अतीचार तृतीय इह थाई ॥६७
निज खेत भूमि जो थाय, सीमातें अधिक बधाय ।
सो खेत बृद्धि तुम जाणो, चौथो अतीचार वखाणो ॥६८
जिह वस्तु तणो परमाण, प्रथम ही कीयो जो जाण ।
तिहिकौ वीसरि सो जाई, विस्मृति जु अतीचार कहाई ॥६९

इति दिग्गुणव्रत सम्पूर्ण ।

अथ देशव्रत लिख्यते । चौपाई

दिशि विदिशा के जे जे देश, जिह पुरलौ जो करिय प्रवेश ।
हरै नही मरयादा कोई, तिनको पलै देशव्रत सोई ॥७०
मन सैन्य वारण के हेत, मन वच कर मरयादा लेत ।
आप जहा दिसि कबहु न जाय, तहातणो बडती नही खाय ॥७१

दोहा

सो लहिये बिन बरत को, नेम न मूल कहाय ।
याते गहिये आखडी, ज्यो फल विस्तर थाय ॥७२

अथ देशव्रत अतीचार पांच लिख्यते । छन्दचाल

कीयो जे देश प्रमाण, तिह पार थकी सास जाण ।
कोई नही वस्तु मगावै, कबहूँ न लोभ बढावै ॥७३
जहलो मरयादा ठानी, भाजै नही उत्तम प्राणी ।
भांजे मरयादा जास, अतीचार कहावै तास ॥७४
मरयादा वारै कोई, नरको न बुलावै जोई ।
अरु आप नही वतलावै, बतलाए दोष लगावै ॥७५
निजरूपहि सो हँसिवाई, काहू जो देइ दिखाई ।
इह अतीचार चोथो ही, जिनदेव बखानो यो ही ॥७६

मरयाद जिको जिहि धारी, तिह वारे करतें डारी।
ककरी कपडो कछु और, पाहण लकडी तिहि ठौर ॥७७
इत्यादिक वस्तु बहु नाम, बरनन कहाँ लो ताम।
ऐसी मति समझो कोई, देसातर ठीक दुहोई ॥७८
चैत्यालय वा घर माही, अथवा देसातर ताही।
धरिहै जिम जो मरयाद, पालै तिम तजि परमाद ॥७९
इह देश वरत तुम जाणो, दूजो गुणव्रत परमाणो।
अव अनरथ दडज तीजो, बहु विधि तसु कथन सुणीजो ॥८०

इति द्वितीय गुणव्रत।

अथ अनर्थ दंड तृतीय गुणव्रत कथन। चौपाई

अनरथ दंड पच परकार, प्रथम पाप-उपदेश असार।
हिंसादान दूसरो जाण, तीजो खोटो पाप बखाण ॥८१
तुरिय कुशास्त्र कहै मन लाय, पचम प्रमाद चर्या थाय।
निज घर कारज विनु ते और, तिनके पाप तणी जे ठौर ॥८२
पसू विणज करवावै जाय, अरु तिह बीच दलाली खाय।
हिंसा को आरभ जु होय, ताको उपदेसै जु कोय ॥८३
मीठो लूण तेल घृत नाज, मादिक वस्तु मोम विनु काज।
घोलि धाहस्या हरडे लाख, आलकमूभा को अभिलाख ॥८४
नील हीग आफू मोहरो, भांग तमाखू सावण खरो।
तिल दाणासिण लोह असार, इन उपदेश देहि अविचार ॥८५
कूवा तलाब हवेली वाय, बाडी बाग कराय उपाय।
कपड़ा वेगि धवावेहु मीत, निज ग्रह कारज राखहु चीत ॥८६
परधन हरण वणी जे बात, सिखवावै बहुतेरी घात।
इतने पाप तणै उपदेश, कीये होय दुरगति परवेश ॥८७
चाकी ऊखल मूसल जिते, कुसी कुदाल फाहुडी तिते।
तवो कडाही अरु दातलो, ए मागा देवो नही भलो ॥८८
धनुष कृपाण तीर तरवार, जम घर छुरी कुहाड्या टार।
सिल लोढो दातण धोवणो, वाण जेवडा वेडी गणो ॥८९
रथ गाडी बाहण अधिकार, अगनि ऊपलादिक निरधार।
इत्यादिक कारण जे पाप, मागे दिये बढै सताप ॥९०
याते व्रत धारी जे जीव, माग्या कवहु न देय सदीव।
द्वेष भाव करि वैर लखाय, वध बँधण मारण चित थाय ॥९१
परतिय देखि रूप अधिकार, ऐसो चितवन अति दुखकार।
खोटे शास्त्र बखाणे जदा, सुणत दोष रागी ह्वै तदा ॥९२

हिंसा अरु आरंभ बढाय, मिथ्याभाव उपरि चित थाय।
जामें एते कहै बखाण, सो कुशास्त्र अघकारण जाण ॥९३
बिनही कारण गमन कराय, जल-क्रीडा औरनि ले जाय।
वाले अगनि काम बिनु सोय, छेदै तरु अति उद्धत होय ॥९४
मेला देखण चलिये यार, असवारी यह खडी तयार।
गोठि करै निज खरचै दाम, ए सब जाणि पाप के काम ॥९५
वहुजन तणो मन लावै भलो, होला डेहगी खावे चलो।
सिरा वाजरा अर जुवारि, फलही भाजी सबनि पचारि ॥९६
चले सीधी लैजे है खेत, वस्त खबावन को मन हेत।
अनरथ दंड न जाणै भेद, पाप उपाय लहै बहु खेद ॥९७
सुवो कवूतर मैना जाण, तूती बुलबुल अघ की खाण।
पखिया और जनावर पालि, राखै बन्दि पींजरै घालि ॥९८
इनि पाले को पाप महत्त, अनरथ दड जाणिये सत।
कूकर बांदर हिरण बिलाव, मीढादिक रखिये घरि चाव ॥९९
पालि खिलावे हरखि धरेय, अनरथ दंड पाप फल लेय।
मन हुलसे चित्राम कराय, त्रस जीवन सूरत मडवाय ॥१००
हस्ती घोटक मीडुक मोर, हिरण चौपद पंखी और।
कपड़ा लकडी माटी तणा, पाखाणादिक करिहै घणा ॥१
जीव मिठाई करि आकार, करै विविध केहीण गवार।
तिणिकौ मोल लेई जण घणा, बाँटै घर घर मे लाहणा ॥२
इह प्रमाद चर्या विधि कही, अनरथ दंड पाप की मही।
जो न लगावै इनको दोष, सो धरमी अघ करिहै सोष ॥३

दोहा

जो इस व्रत को पालि है, मन बच काय सुजाण। सो निहचै सुर पद लहै, यामे फेर न जाण ॥४
बिनु कारज ही सबनि को, दोष लगावै कोय। जाके अघ के कथन को, कवि समरथ नहि होय ॥५
अघते नरकादिक लहै, इह जानो तहकीक। अतीचार या वरत को, सुनों पाँच यह ठीक ॥६

छन्द चाल। अथ अतीचार अनरथ दंड का लिख्यते

अती हास कोतूहल कार, मन माही सोच विचार।
इह अतीचार एक जानी, जिन आगम कह्यो बखानी ॥७
क्रीडा उपजावन काम, बहु कला करै दुख धाम।
नृत्यादिक देखण चाव, वादीगर लखि येह दाव ॥८
मुखते बहु गाली देई, बच ज्यो त्यो ही भाखेई।
इह अतीचार भणि तीजो, बुधि त्यागहु ढील न कीजो ॥९
मनमे चितै को काम, इतनो करस्यो अभिराम।
ताते अधिको जु कराई, दूषण इह चौथो थाई ॥१०

जेती सामग्री भोग, अथवा उपभोग नियोग ।
पर वरजो मोल यहाँ ही, निज अधिको मोल चढाही ॥११
लोलुपता अति ही ठानै, हठ करिस्यो अपनो आने ।
इह पचम दोष सुठीक, यामे कछु नाहिं अलीक ॥१२
भणिया ए पण अतीचार, बुधजन मन धरि सुविचार ।
निति ही इनको जो टालै, मन वच क्रम व्रत सो पाले ॥१३
इह कथन सबै ही भाख्यो जिन वाणी माफिक आख्यो ।
जो परम विवेकी जीव, इनको करि जतन सदीव ॥१४
जे अनरथ दण्ड लगावे, ते अघको पार न पावै ।
अघ महा जगतको दाई, भव भांवर अन्त न थाई ॥१५
बच भापै लागो पाप, ऐसे हु न करेहु अलाप ।
मन बच तन व्रत जे पालै, ते सुरगादिक सुख भालै ॥१६
अनुक्रमि शिवथानक पावै, कवहूँ नहिं भवमे आवै ।
सुख सिद्ध तणा जु अनन्त, भुगतै जो परम महन्त ॥१७

दोहा

गुणव्रत लखि इह तीसरो, अनरथ दण्ड सुजाणि ।
कथन कह्यो संक्षेपतैं, किशनसिंह मनि आणि ॥१८
इति गुणव्रत कथन सम्पूर्ण ।

अथ प्रथम सामायिक शिक्षाव्रत लिख्यते । चौपाई

सव जीवनिमे समता भाव, संयममे शुभ भावन चाव ।
आरति रुद्र ध्यान विहूँ त्याग, सामायिक व्रत जुत अनुराग ॥१९
प्राणी सकल थकी मुझ क्षाति, वेऊ क्षम मुझ परि करि सांति ।
मेरो वैर नही उन परी, वै मुझ तैं कुछ दोप न करी ॥२०
इत्यादिक वच करि वि उचार, जो नर सामायिकको धार ।
परजिकासन गाढो तथा, शक्ति प्रमाण थापि है यथा ॥२१
पूर्वाह्णिक मध्याह्णिक चाल, अपराह्णिक ए तीनो काल ।
मरयादा जेती उच्चरै, तेती वार पाठ सो करै ॥२२
दुहूँ आसनके दोपज जिते, सामायक जुत तजि है तिते ।
जो विशेप सुणि वाको चाव, ग्रन्थ श्रावकाचार लखाव ॥२३
हूँ एकाकी अवर न कोई, जुद्ध बुद्ध अविचल मय जोग ।
करमाने वेढ्यो न उ जाणि, मैं न्यानो निहँकाल वपाणि ॥२४
इस संसार मुझको नाहि, मै न किसीको इह जगमाहि ।
बन्ध्यो अनादि करमतै सही, निहचै बन्धन मेरे नहीं ॥२५
राग दोष करि मेल्यो जदा, तिन कुलनतें मिलन न तदा ।
देह वर्गे तो रहत सरीर, चेतन ज्ञान महा मत धीर ॥२६

चिंता आठौ मद आरम्भ, चितवन मदन कषाय रु दभ ।
इनिकौ जिस विरिया परिहार, कर यो सुबुध सामायिक धार ।।२७
सीत वसन वरषा पुनि वात, दंसादिक उपजत उतपात ।
जिनवर वचन विषै अतिधीर, सहिहै जिके महा वरवीर ।।२८
पूर्वाचार्यनि के अनुसार, जैसु विचक्षन करई विचार ।
तीन मुहूरत दो इक जाण, उत्तम मध्यम जघन्य बखाण ।।२९
जैसी शक्ति होय जिहि पास, करिए ह्वै भव-भ्रमण विनास ।
भव्य जीव इहि विधि जै करै, तिनकी महिमा कविको करै ।।३०

दोहा

इह व्रतपालै जे सुनर, मन वच क्रम धरि ठीक । सुरनर के सुख भुंजकर, शिव पावै तहतीक ।।३१
जे कुमती जिन नाम को, लैन करै परमाद । सो दुरगति जैहै सही, लहि है दुख विषवाद ।।३२

अथ सामायिक के अतीचार लिख्यते । छंद चाल

मन वचन क्रम के ए जोग, परमादी होय प्रयोग ।
परिणाम दुष्टता भारी, राखे नही ठीक लगारी ।।३३
सामायिक पाठ करंत, वतलावै परसौ मत । वोलै फुनि बारवार, जानो य दूजो अतीचार ।।३४
सामायिक करत अनादर, मनमैं न उच्छाह धरै पर ।
विनु लगन भावहू पोट, किनि सिर पर दीजिय मोट ।।३५
आसण को करै चलाचल, तनकु जु हलावै पल पल ।
फैरै मुख चहु दिसि भारी, तिजहु अतीचार बिचारी ।।३६
सामायिक पाठ करतो, चितमाहे एम धरंतो ।
मै इह पाठ पट्यो अक नाही, पुनि-पुनि छण बीसरि जाही ।।३७
ए अतीचार पण भाखे, जिन बाणी मै जिम आखे ।
जे भवि सामायिक धारी, प्रथम ही है दोष निवारी ।।३८
तिहु काल करे सामयिक, सब जीवनि कौ सुखदायक ।
सामायिक करता प्रानी, उपचार मुनी-सम जानी ।।३९
सामायिक दृगजुत करि है, उत्कृष्ट देव पद धरि है ।
अनुक्रम पावै निरवाण, यामैं कछु फेर न जाण ।।४०
मुनि द्रव्यलिंग को धारी, सामायिक बल अनुसारी ।
कहा लौ करियै जु बडाई, नवग्रीवा लग सो जाई ।।४१
यातै भविजन तिहु काल, धरिये सामायिक चाल ।
जातै फल पावै मोटो, जसि जाय करम अति खोटो ।।४२

अथ द्वितीय शिक्षाव्रत प्रोषधोपवास लिख्यते । चौपाई

सामायिक व्रत कर्यो बखानि, अब प्रोषध व्रत की सुनि वानि ।
एक मास मे परब जु चार, दुइ आठे दुइ चौदस धार ।।४३
इन मे प्रोषध विधि विस्तरै, ते वसु कर्म निर्जरा करै ।
वै जिनधर्म विषै अतिलीन, वे श्रावक आचार प्रवीन ।।४४

अब प्रोषध की विधि सुनि लेह, भाष्यो जिन आगम मे जेह।
सातें तेरसि के दिन जानि, जिनश्रुत गुरु पूजा को ठानि ॥४५
पूजा विधि करि श्रावक सोई, भोजन वेला मुनि अवलोई।
जिन मन्दिर ते तब निज गेह, एक ठाम अण पानी लेह ॥४६
मध्याह्नक समये को धार, करे प्रतिज्ञा सुविधि विचार।
षोड़स पहर लेह मरयाद, चौविहार छोड मरयाद ॥४७
खादि स्वाद लेह अरु पेह, अतीचार ते सबहि तजेय।
टटुपट्टी धोवति विधिवत्त लेह, और वस्त्र तन सो तज देह ॥४८
स्नानादि भूषण परिहरै, अंजन तिलक व्रती नहि करै।
जिन मदिर उपवन बन ठाहि, अथवा भूमि मसानहि जाहि ॥४९
षोड़स जाम ध्यान जो धरै, धरम कथाजुत तह अनुसरै।
पंच पाप मन वच क्रम तजै, श्री जिन आज्ञा हिरदे भजै ॥५०
धरम-कथा गुरु मुखते सुनै, आप कहै निज आतम मुनै।
निद्रा अल्प पाछिली रात, ह्वै नौमी पून्यौ परभात ॥५१
मरयादा पूर्वक गुणधार, जिनमन्दिर आवै निज द्वार।
द्वारापेषण परि चित धार, खड़ो रहै निज घरके वार ॥५२
पात्रदान दे अति हरषाई, एकाभुक्त करै सुखदाई।
पारणदिन पिछली छै-जाम, च्यारु अहार तजै अभिराम ॥५३
इह उत्कृष्ट कह्यो उपवास, करे कर्मगण को अतिनाश।
सुर-सुख लहि अनुक्रम शिव लहै, सत्यवाइक इह जिनवर कहै ॥५४
कहूँ मध्यम उपवास विचार, षट्कर्मोपदेश अनुसार।
प्रथम दिवस एकान्त करेय, घरी दोय दिनतें जल लेय ॥५५
जिनमन्दिर अथवा निज गेह, पोषह द्वादश पहर धरेय।
धर्मध्यान मे बारा जाम, गमि है घर के तजि सब काम ॥५६
जाविधि दिवस धारणै जानि, सोही दिन पारणै बखान।
तीन दिवस लौं पालै शील, सो सुर के सुख पावे लील ॥५७
जघन्य वास भवि विधि सौं करौ, प्रथम दिवस इह संख्या धरौ।
पछिली दिवस घड़ी दो रहै, ता पीछे पाणी नहि गहै ॥५८
निशि को शील व्रत पालिये, प्रात समय पोषो ही धारिये।
आठ पहर ताकी मरयाद, धरम ध्यान जुत तजि परमाद ॥५९
दिवस पारणे निशि जल तजै, वासर तीन शील व्रत भजै।
प्रोपध तो उत्कृष्टहि जानि, मध्यम जघन उपवास बखानि ॥६०
त्रिविधि वासको जो निरवहै, सो प्राणी सुर के सुख लहै।
अब याको जो है अतीचार, कहूँ जिनागम जे निरधार ॥६१

अथ प्रोषधोपवास अतीचार । छन्द चाल

पोसो धरिहै जिहि भूपरि, देखे नहिं ताहि नजर भरि।
इह अतीचार इक जानी, दूजे को सुनो बखानी ॥६२
जेती पोषह की ठाम, प्रतिलेखै नाहि ताम।
दूषण लागै है जाको, मुनि अतिचारती जाको ॥६३
पोषो धरणे की बार, मोचै न मल-मूत्र विकार।
मरजादा बिन सौ डारैं, संथारो जो विसतारैं ॥६४
वैठ उठै तजि ठामे, तीजे दूषण को पामे। पोसो धरता मन माही, उच्छवको धारें नाही ॥६५
बिनु आदरही सो ठानैं, मरज्यादा मन मै आनैं।
चौथो इह है अतीचार, अब पंचम सुनि निरधार ॥६६
पढि है जो पाठ प्रमाण, ठीक न ताको कछु जाण।
इह पाठ पढयो इक नाही, अब पढिहो एम कहा ही ॥६७
ए अतीचार भणि पच, भाषै जिन आगम मंच।
पोसो जो भविजन धरिहै, इनको टालो सो करिहै ॥६८
फल लहैं यथारथ सोई, यामे कछु फेर न जोई।
प्रोषध व्रत की यह लीक, माफिक जिन आगम ठीक ॥६९
अरु सकलकीर्ति कृत सार, ग्रन्थहु श्रावक आचार।
तामाहै भाष्यो ऐसे, सुनिये ज्ञाता विधि जैसे ॥७०
उपवास दिवस तजि वीर, छान्यो सचित्त जो नीर।
लेंते दूषण बहु थाई, उपवास वृथा सो जाई ॥७१
पीवे सो प्रासुक करिकै, दुतियो जु द्रव्य मधि धरिकै।
वैहू विरथा उपवास, लेनो नहिं भविजन तास ॥७२
अरु सकत्ति हीन जो थाई, जलते तन हू थिरताई।
तौ अधिक उसन इम वीर, बिन हु कम किये जो नीर ॥७३
अन्नादिक भाजन केरो, दूषण नहिं लागै अनेरो।
ऐसो आवै जे पाणी, ताकी विधि एम बखाणी ॥७४
उपबास आठमो बॉटौ, वहि है इम जाणि निराटौ।
इनमे आछी विधि जाणी, करिये सो भविजन प्राणी ॥७५
सशय मन इहै न कीजै, प्रोषध मे कबहुँ न लीजै।
पोषह बिन जो उपवासे, तामे ऐसी विधि भासै ॥७६
उत्तम फलको जे चाहै, ते इह विधि नेम निबाहै।
उपवास दिवस मे नीर, सकटहू मे तजि बीर ॥७७
अब सुनहु कथन इक नीको, अति सुख करि व्रत धरि जीको।
एकान्त दिवस की साझ, धरिहु तिय दरब जल भांझ ॥७८
प्रासुक करि पीवै नीर, तामै, अति दोष गहीर।
एकासण जब सु कराहि, जल असन लेई एक ठाहि ॥७९

जिन आगम की इह रीत, उपरान्त चलण विपरीत।
जल लेन साक्ष ठहरायो, सबही मनि यो ही भायो ॥८०
तो दूजो दरब मिलाई, लैनो नहिं योग्य कहाही।
ताको दूषण इह जानो, भोजन दूजा जिम छानौ ॥८१
भोजन जिहि बिरियाँ कीजै, पानी तब उसन धरीजै।
वै प्रासुक पानी लीजै, नही शक्ति जानि तजि दीजै ॥८२
कुमति ढुंढ्यादिक पापी, जिन मत ते उलटी थापी।
हाडी को धोवण लेई, चावल धोवै जल लेई ॥८३
तिनकौ प्रासुक जल भाखै, ले जाय साझ कौ राखै।
एक तो जल काचौ जानी, अन्नादिक मिलि तसु आनी ॥८४
तामै घटिका दोय माही, प्राणी निगोदिया थाही।
ताके अघको नहिं पार, मिथ्यामत भाव विकार ॥८५

उक्तं च गाथा—अन्न जल किंचि ठिई, पच्चक्खाण न भुजए भिक्खू।
घडी दोय अंतरीया, णिगोइया हुँति बहु जीवा ॥८६

दोहा

जो पोसह विधि आदरै, ते सुख पावै धीर। प्रमाद सेवै ते मुगध, किम लहिहै भवतीर ॥८७

इति प्रोषधोपवास त्रिविध वा सामान्य वर्णन सम्पूर्ण ॥

●

अथ तृतीय भोगोपभोग शिक्षाव्रत कथन लिख्यते।

चौपाई

व्रत भोगोपभोग जे धरै, दोय प्रकार आखडी करै।
जिम मरयाद मरण परयन्त, नियम सकति माफिक धरि सन्त ॥८८
अन्न पान आदिक तबोल, अजन तिलक कुकुमा रोल।
अतर अरगका तेल फुलेल, ते सहु वस्तु भोग के खेल ॥८९
एक बार हो आवे काम, वहुरि न दीसै ताकौ नाम।
ते सब भोग वस्तु जानिये, ग्रन्थ कथन लखि इम मानिये ॥९०
वस्त्र सकल पहिरन के जिते, निज घरमै आभूषण तिते।
रथ वाहन डोली सुख पाल, वृषभकूंभ हय गय सुविसाल ॥९१
वनिता अरु सेज्या को साज, भाजन आदिक वस्तु समाज।
वार वार उपभोगवि जेह, सो उपभोग नही सदेह ॥९२
तिन दोन्यूँ मे शकत्ति प्रमाण, जम वा नियम करै जो जान।
जनम पर्यन्त त्याग यम जानि, वरस मास पखि नियम बखानि ॥९३
दिन की पाँच घडी मरयाद, करै सदैव तजै परमाद।
किये प्रमाण महाफल सार, बिन सख्या फल नही लगार ॥९४

दोहा

सुनहु भोग उपभोग के, अतीचार प्रणतेह। इनहिं टालि व्रत पालि है, वरती श्रावक जेह ।।९५

छन्द चाल

मीलै जु सचित जो आही, भोगनि की वस्तु जु माही।
उपभोग वसन भूषण मे, कमलादि गहै दूषण में ।।९६
एह अतीचार भणि एक, दूजो सुनि धरि सुविवेक।
भोजन पातरि परि आवे, अरु सचित थकी ढकि ल्यावै ।।९७
अथवा वस्त्रादिक जानी, धरि ढकि अर आणै प्राणी।
वह दूजो दोष गणीजैं, तीजो अब भवि सुणि लीजै ।।९८
जे सचित अचित बहु वस्त, मेलै मिलि जाल समस्त।
जाको लेकै भोगीजै, इह अतीचार गणि लीजै ।।९९
मरयाद भोग उपभोग, कीनो जो वस्तु नियोग।
तिहतै जो लेय सिवाय, चौथो यह दूषण थाय ।।१००
कछु कोरो कछुयक सीजै, अथवा आस्या गह लीजै।
लघु भख लेईं अधिकाई, अति दुषकारी असन पचाई ।।१०१
दुहु पक्व अहार सु जानी, पचम अतीचार बखानी।
भोगोपभोग व्रत पारी, टालौ इनकौ हितधारी ।।१०२

दोहा

कथन भोग उपभोग कौ, कीयो यथावत सार।
आगै अतिथि विभाग कौ, सुनियो भवि निरधार ।।१

इति भोगोपभोग शिक्षव्रत।

●

अथ चतुर्थ शिक्षाव्रत अतिथि संविभाग कथन। चौपाई

प्रथम आहार दान जानिये, दुतीय दान औषध मानिये।
तीजो शास्त्र दान है सही, अभय दान फुनि चौथो कही ।।२
लहै अहार थकी वहु भोग, औषध तै तनु होय निरोग।
अभय थकी निरभय पद पाय, शास्त्र दान तै ज्ञानी थाय ।।३
अब पातर कौ सुनहु विचार, जैसो जिन आगम विस्तार।
पात्र कुपात्र अपात्र हु जाण, दीजै जिम तिम करहु वखाण ।।४
पात्र प्रकार तीन जानिए, उत्तम मध्यम जघन्य मानिये।
मुनिवर श्रावक दरशन धार, कहै सुपात्र तीन विधि सार ।।५
तीन तीन तिहुँ भेद प्रमान, सुनहु विवेकी तास वखान।
उत्तम मे उत्तम तीर्थेश, उत्तम मे मध्यम है गणेश ।।६

मुनि सामान्य अवर है जिते, उत्तम मध्यम जघन्य है तिते।
मध्यम पात्र तीन परकार, तिह मांहे उत्तम मुनि सार ।।७
छुल्लक अहिलक दुहु ब्रह्मचार, अरु दसमी प्रतिमा व्रतधार।
मध्यम मांहि उत्तम जानि, मध्यम मांहि मध्यम कहूँ बखानि ।।८
सात आठ नव प्रतिमाधार, मध्यम मे मध्यम पातर सार।
पहिली से षष्ठी पर्यन्त, मध्यम मे पात्र जघन्य भणि सन्त ।।९
दरसनधारी जघन्य मझार, उत्तम क्षायिक समकित धार।
क्षयोपशमी मध्यम गनि लेहु, जघन्य उपशमी जानौ एहु ।।१०

दोहा

उत्तम पात्र सु तीन विधि, तिनही भेद नव जान।
पुनि कुपात्र तिहुँ भेद को, वरणन कहों बखान ।।११

छन्द चाल

गुन मूल अठाइस धार, चारित्त तेरह प्ररकार।
मुनिवर पद को प्रतिपाल, तप करे कठिन दरहाल ।।१२
समकित शिव बीज न जाकौ, मिथ्यात उदै है ताको।
ऐसो कुपात्र त्रिक माही, उत्कृष्ट कुपात्र कहाही ।।१३
व्रत धर श्रावक है जेह, मध्यम कुपात्र भनि तेह।
गुरु देव शास्त्र मनि आनै, आपापर कबहु न जानै ।।१४
बाहिज कहै मेरे ठाक, अन्तर गति सदा अलीक।
ते जघन्य कुपात्र सु जानों, सरधानी मन में आनो ।।१५

दोहा

कह्यो कुपात्र विशेष इह, जिन वायक परमान।
अव अपात्र के भेद तिहुं, सो सुनि लेहु सुजान ।।१६

छन्द चाल

अन्तर समकित नहिं जाके, बाहिर मुनि क्रिया नहिं ताके।
विपरीत रूप नहि धारी, जिह्वादिक लंपट भारी ।।१७
उतकृष्ट अपात्र के लच्छन, परखै अति परम विचच्छन।
ऐसे ही मध्यम जानो, समकित बिनु व्रत मनि आनो ।।१८
तनु स्वेत बसन के धारी, मानै हम है ब्रह्मचारी।
दुजो अपात्र लखि योही, सुनि जघन्य अपातर जो ही ।।१९
गृहपति सम वसन धराही, मिथ्या मारग चलवाही।
नर नारिन को निज पाय, पाड़ै अति नवन कराय ।।२०
वचन आप चिरंजी भाखै, मन में निज गुरु पद राखै।
मिथ्यात महाघट व्यापी, ए जघन्य अपात्र जे पापी ।।२१

बाहिज अभ्यन्तर खोटै, नित पाप उपावैं मोटे।
श्रुत देव विनय नहिं जानैं, नव रसयुत ग्रन्थ बखानैं ॥२२
रुलि है भवसागर माही, यामे कछु सशय नाही।
इनके बन्दक के जीव, दुरगति महि भ्रमहि सदीव ॥२३

दोहा

पात्र कुपात्र अपात्र के, भेद भने सब पाँच। तिनकी साखा पच दस, विहन कहे सब साच ॥२४
अब इनको आहार जू, श्रावक जिहि विधि देय। सो वर्णन सक्षेप ते, भवि चित धरि सुनि लेय ॥२५
दोष छियालिस टालिकैं, श्रावक के घर माहिं। वरती जनि पै जो असन, सुखकारी सक नाहिं ॥२६

छन्द चाल

दिनपति की घटिका सात, चढिया श्रावक हरषात।
द्वाराप्रेक्षण की वार, फासू जल निज कर धार ॥२७
मुनिवर आयो पडिगाहै, अति भक्तिवन्त उरमाहै। दातार तने गुण सात, ता माहे है विख्यात ॥२८
पुनि नवधा भक्ति करेई, अति पुण्य महा सचेई।
निज जनम सफल करि जानै, बहुविधि मुनि स्तुनि वखानै ॥२९
मुनिबर वन गमन कराई, पीछे अति ही सुखदायी।
भोजन शाला मे जाई, जीमे श्रावक सुचि पाई ॥३०
जो द्वारापेक्षण माही, मुनिवर नहिं जोग मिलाई।
तो निज अलाभ करि जानैं, चिन्ता मन मे अति आने ॥३१
हिय मे ऐसी ठहराय, हम अशुभ उदै अधिकाय।
करिहै श्रावक उपवास, अथवा रसत्याग प्रकास ॥३२

सोरठा।

दान थकी फल होय, जो उत्कृष्ट सुपात्र को। सो सुनियो भवि लोय, अति सुखकारो है सदा ॥३३

सवैया।

तोर्थङ्कर देवन को प्रथम आहार देय, वह दानपति तद्भव मोक्ष जाय है,
पीछे दान देनहार दृग को धरैया सार, श्रावक सुव्रतधार ऐसो नर थाय है ॥
जो पै मोक्ष जाय तो तोमनै न कहाय, पहुँ निश्चय हूँ नाहिं देव लोक को सिवाय है।
पाय के अनेक रिद्धि नर सुर को, समृद्ध निकट सुभव्य निर्वाण पद पाय है ॥३४
उत्कृष्ट पात्रनिमे उत्कृष्ट तोर्थङ्कर, तिनि दान को तो फल प्रथम वखानियो।
अब उत्कृष्ट त्रिकमाहिं रहै मध्य पुनि, जयनि मुनीस दानफल ऐसो जानियो ॥
दानी दृगव्रतधारी तिनही असन दिये, कलप वसे या सुर ह्वै है सही मानियो।
अवर विशेष कछु कहनो जरूर इह, तेऊ सुनो भव्य सुखदाई मनि आनियो ॥३५
प्रथम मिथ्यात भावमध्य बन्ध मानव के, परयो पीछै दृगपाय व्रत्त धारी लयो है।
पुनि मुनिराजनिको त्रिविधि सुविविजत, दोष अन्तराय टालि असन सुदीयो है ॥
ताहि बध सेती उत्कृष्ट भोग भूमि जाय, जुगल्या मनुज थाय पुण्य उदै कीयो है।
तहा आयु पूरी कर देवपद पाय अहो, मुनिन को दान देति ताको धनि जोयो है ॥३६

सुख उत्कृष्ट भोग भूमि के कछुक ओजो, कहूँ तीन पल्ल तहाँ आयु परमानिये।
कोमल सरल चित्त पाइये कलप निति, दस परकार नानाविधि भोग विधि दानिये॥
जुगल जनम थाय, मातापिता खिर जाय, छीक औ जमाही पाय ऐसी विधि मानिये।
निज अगूठा को सुधारस पान करि, दिन इकीस माझ तनु पूरनता ठानिये॥३७

दोहा

तीन दिवस बीते पेछै, लघु बदरी परिमाण। लेय अहार सुखी महा, अरु निहार नहिं जाण॥३७
उत्तम पात्र आहार को, दाता फल अति सार। पावै अचरज कछु नही, अब सुनियो निरधार॥३८
कृत कारित अनुमोदन, तीनहु सम सुखदैन। कही भली ताकी कथा, कहो यथा जिन वैन॥३९

छप्पय छन्द

वज्रजघ श्रीमती सर्प, सरवर कै ऊर्पार। चारण जुगल सुमुनिहि, भक्त जुत्त दियो असनि परि,
तहाँ सिंह अरु शूर, नकुल बानर चहुँ जीवहि। करि अनुमोदन बध लियो, सुख युगल अतीवहि॥
सुरहोई भुगति नर सुर सुखह पुत्र वृषभ तीर्थेश के।
हुई धरि उग्र तप को भए सिवतिय पति नव वेस के॥४०
वज्रजंघ नृप आप अवर, श्रीमती त्रिया भनि,
भोग भूमि ह्वै जुगल, भुगति सुर सुखहि विविध नी।
पुनि दिववासी देव नरपति, रिधि भुगति सुखदायक,
दशमै भव नृप जीव तीर्थंकर बृषभ सुखदायक॥
श्रीमतीय जीव श्रेयासहु, ऋषभनाथ को दान दिय।
दुहु पात्र दान पतित पवि मल करि, होय सिद्ध सुख अमित लिय॥४१

दोहा

कृत कारित अनुमोदि की, कही सुनी हित धारि।
अति विशेष इच्छा सुनन, महापुराण मझारि॥४२
इहाँ प्रसन कोऊ करै, मिथ्या दृष्टी लोय। बाहिज श्रावक पद क्रिया, कही यथावत होय॥४३
भाव लिंग मुनि तास धरि, जुगत आहारक नाहि।
सो मुझकू समझाय कहु, जिम संशय मिटि जाहि॥४४
अथवा श्रावक दृग सहित, किरिया पात्रै सार। द्रव्य लिंग मुनिराज कौ, देय कै नही आहार॥४५

छन्द चाल

ताके मेटन सन्देह, अब सुनिये कथन सु एह। जैसे सुनियो जिन वानी, तैसे मै कहूँ बखानी॥४६
श्रावक की किरिया सार, मिथ्यात न छाडी लार।
चरिया दिरियां मुनि राई, आई जो लेइ घटाई॥४७
मुनि ज्ञानवान जो थोय, निरदोष आहार गहोय।
द्रव्य श्रावक को जानि, ताको नहिं दूषन मानि॥४८
मुनि असन नियम नहिं एह, दृग व्रत्त धारिहि कै लेह।
किरिया सुध जाकौ होई, तहाँ लेई आहार सक खोई॥४९
दरसन जुत श्रावक होई, द्रव्य मुनि आवै कोई।
जानै बिनु देय अहार, ताकौ नही दोप लगार॥५०

श्रावक जाने जो तेह, मिथ्यादृष्टी मुनि एह ।
जाको मूल न पडिगाही, समकित गुण तामैं नाही ।।५१
निज दरशन को भवि प्राणी, दूपण न लगावैं जाणी ।
जिनके नित इह व्यापार, चालैं निज बुद्धि विचार ।।५२
कोऊ बूझैं फिर ऐसे, विनु ज्ञान सरावग कैसे ।
मुनि केम परीक्षा जानी, यम हिरदै यान समानी ।।५३
ऊतर सुनि अत्र अति ठीक, यामैं कछु नाहि अलीक ।
प्रथमहि श्रावक गुण पालै, पातर लखि ले ततकालै ।।५४
अथवा ज्ञानी मुनि पास, सुनि है तिनको परकास ।
श्रावक श्रावक निज माही, लखि पात्र कुपात्र वताही ।।५५

छप्पय

अणागार उत्कृष्ट पात्र की जो विधि सारी । कही यथारथ ताहि धार चित्त मैं अति प्यारी ।।
सुन भवि अवधारि करहु अनुमोदन जाको । निश्चय तसु श्रद्धान किये सुरपद है ताको ।।
अव मध्य जघन्य दुहु पात्र को, कहो दान अरु फल यथा ।
जिन आगम मध्य कह्यो, तिसो सुनो भवि इह कथा ।।५६

चौपाई

मध्यम पात्र सरावग जान, व्योरो पूरव कह्यो वखान ।
इनमे भेद कहे हैं तीन, उत्तम मध्यम जघन्य प्रवीन ।।५७
श्रावक मध्यम पात्र मझार, भेद एकादश सुनहु विचार ।
जाहि यथा विधि जोग अहार, त्यो श्रावक देहैं सुखकार ।।५८
इनको दान तणो फल जान, मध्यम भोग भूमि सुख खान ।
जनमत मात पिता मरि जाँय, जुगल्या छीक जभाही पाय ।।५९
तनु निज अमृत अगुठा थकी, तीस पाँच दिन पूरण वकी ।
उंचित्त कोस दु दुदिन जाय, करैं आहार निहार न थाय ।।६०
कल्पवृक्ष दशविधि के जास, नाना विधि दे भोग विलास ।
दुयपल आयु भुंजि सुर होय, मध्य पात्र फल जानो लोय ।।६१
अरु इह कथन महा सुख कार, ग्यारा प्रतिमा मे निरधार ।
आगे कहिये प्रथम-सुजान, पुनरुक्त को दोष वखान ।।६२

दोहा

मध्य पात्र आहार फल, कह्यो यथावत् सार ।
अव जघन्य की पात्र विधि सुनहु दान फल कार ।।६३
क्षायिक क्षय-उपशम तृत्तिय, उपशम तीन प्रकार ।
इनही गृही आहार दे, यथा योग्य सुखकार ।।६४

चौपाई

जघन्य पात्र के दाता जान, जघन्य युगलिया होत प्रमाण ।
छीक जभाई ते पितु माय, मरैं आप पूरण तनु पाय ।।६५

दिन गुण चासे कोस प्रमाण, आयु पल्य इक भुगते जाण ।
एक दिवस वीतैं आहार, लेई वहेडा सम न निहार ॥६६
कल्पवृक्ष दश विधि सुखकार, नाना विधि दे भोग अपार ।
पूरण आयु करिवि सुर थाय, नाना सुख भुगतैं अधिकाय ॥६७

दोहा

जघन्य सुपात्र आहार फल, कह्यो जेम जिन वानि ।
अवै कुपात्र आहार फल, सुन लो भवि निज कान ॥६८

चौपाई

द्रव्य मुनि श्रावक हू एह, विनु समकित किरिया हूँ तजेह ।
वाहर समकित कीसी रीत, दरशन विनु सरधा विपरीत ॥६९
इन तीनहु कुपात्र को दान, देंहि तास फल सुनहु सुजान ।
जाय कुभोग भूमि के माहिं, उपजै मनुष्य हीन अधिकाहिं ॥७०
अवर सकल मानव की देह, मुख तिरयंच समान है जेह ।
हाथी घोड़ा, वैल वराह, कपि गर्दभ कूकर मृग आह ॥७१
लंव करण अरु इक टंगीया, उपजैं युगल वरावर भिया ।
एक पल्य आयुर्वल पूर, माटी मीठा तृण अकूर ॥७२
तिनहि खाहि निज उदर भरेय, अहै नगन ही मन्दिर केह ।
मरि विन्तर भावन जोतिसी, हो भुगतैं सुख सुरावधि जिसी ॥७३

दोहा

अव अपात्र के दान ते, जैसो फल लहवाय । तैसो कछु वरनन करुँ, सुनहु चतुर मन लाय ॥७४
जो अपात्र को चिह्न हैं, पूरव कह्यो वनाय । दोष लगै पुनरुक्त को, यातें अव न कहाय ॥७५

सोरठा

जो अपात्र को दान, मूढ़ भक्ति कर देय है । सो अतीव अघ थान, भव भ्रमि हैं संसार मे ॥७६

छन्द चाल

जैसे ऊखर मे नाज, वाहै विन उपज न काज ।
मिहनत सव जावैं यों ही, कण नाज न उपजै क्योंही ॥७७
तिम भूमि अपातर खोटी, पावे विपदादिक मोटी ।
दुरगति दुख कारण जाणी, तिन दान न कवहूं ठानी ॥७८
वेनु ने तृण चरवावैं, तामें तो दूधहि पावै ।
अति मिष्ठ पुष्ठ कर भारी, वहुते जिय को सुखकारी ॥७९
तिम पात्रहि दान जो दीजे, ताको फल मोटो लीजे ।
सुरगति में संशय नाहीं, अनुक्रम शिवथान तहांही ॥८०
सरपहिं जो दूध पियावें, नापे तो विष को खावैं ।
सो हरे प्राण तत्काल, परगट जानो इह चाल ॥८१

जिम दान अपात्रहि देई, वह भवते नरक लहेहि ।
फिरि भव मे पंच प्रकार, प्रावर्त्तन करे अपार ॥८२
लखि एक जाति गुण न्यारे, ताबो दुय भांति करारे ।
इकतो गोलो बनवावै, दूजे पातर घडवावै ॥८३
गोलो डालै जल माही, ततकाल रसातल जाही ।
पातर जलतर है पारे, औरन को पार उतारे ॥८४
तिम भोजन तो इकसाही, निपजैं गृहस्थ घर माही ।
दीजे अपात्र को जेह, ताते नरकादि पडेह ॥८५
वह उत्तम पात्रहिं दीजे, सरधा रुचि भक्ति करीजे ।
इह भवते ह्वै दिववासी अनुक्रम ते शिवगति पासी ॥८६
इक वाय नीर चलवाई, नीम रु साठा सिंचवाई ।
सो नीम कटुकता थाई, साठा रस मधुर गहाई ॥८७
तिम दान अपात्र जो केरो, दुखदाई नरक वसेरो ।
भोजन उत्तम पातरको, दीपक सुर शिवगति घर को ॥८८
इह पात्र अपात्रहि दान- भाष्यो दुहुर्वानि को मान ।
सुखदायक ताहि गहीजे, बुध जन अब ढील न कीजे ॥८९
दुख दायक जाण अपार, तत खिण तजिये निरधार ।
फल पात्र अपात्तर ठीक, इनमे कछु नाहिं अलीक ॥९०
जो धन घर मे बहु तेरो, खरचन को मन है तेरों ।
तो अध कूप के माही, नाखै नहिं दोष लहाही ॥९१
दीयो अपात्र को सोई, भव भव दुखदायक होई ।
सरपहिं पकडै नर कोई, काटे ताको अहि बोई ॥९२
इक बार तजै वहि प्राण, वाको दुख फेर न जाण ।
अरु भक्ति अपातर केरी, तातें फिर है भव फेरी ॥९३
याते अहि गहिवो नीको, खोटे गुरुतें दुख जीको ।
तातें खोटे परहरिये, नित सुगुरु भक्ति उर धरिये ॥९४

अडिल्ल छन्द

जो पात्तर के ताई दान दे मानते, अरु अपात्र को कबहु न दे निज जानते ।
पात्र दान फल सुरग क्रमाहिं शिवपद लहै, भोजन दिये अपात्र नरक दुख अति सहै ॥९५
दया जान मन आन दुखित जन देखिकै, रोग ग्रसित तन जानि सकति न विशेषकै ।
मन मे करुणा भाव विशेष अनाइकै, यथा योग जिह चाहे सुदेह बनाकै ॥९६

फल वर्णन । चौपाई

लहै सम्पदा भूपति तणी । नाना भोग कहा लो भणी ।
उत्तम जाति लहै कुल सार, इह फल पातर दान अहार ॥९७
अति नीरोग होय तन जास, हरै और को व्याधि प्रकास ।
अति सरूपता औषध जान, दियो पात्रको तस फल जान ॥९८

दीरघ आयु लहै सो सदा, जगत मान तिहकी शुभ मदा ।
सुर नर सुख की कितियक बात, अभय थकी तद्भव शिव पात ।।९९
शास्त्रदान देवाते सही, भवि अनक्रमते केवल लही ।
समवशरण विभवो अविकार, पावै तीर्थंकर पद सार ।।६००
दया दान ते कीरति लहै, सगरे भले भले यो कहै ।
निज भावां माफिक गति थाय, दान दियो अहलो नहिं जाय ।।१

दोहा

पात्र कुपात्र अपात्र को, पूरो भयो विशेष । अबै अन्य मत दान दस, कहो कथन अवशेष ।।२

सवैया

गऊ हेम गज गेह वाजि भूमि तिल जेह, क्रिया दासी रथ इह दस दान थाय है ।
इनको कथन करै याहि सठ जानि लेह, दान को दिवाय नरकादिक लहाय है ।
हिंसादिक कारण अनेक पापरूप जाणि, अवर लिवैया दुरगति को सिधाय है ।
अति ही कलक निंद्यधाम पुण्य को न लेस, मतिमान लेन देन दुह को तजाय है ।।३

दोहा

दसौ दान अनमति तणा, जैनी जन जो देह । अघ हिंसादि बढायकै, कुगति तणा फल लेह ।।४

इति चतुर्थ शिक्षाव्रत अतिथि सविभाग कथन सम्पूर्ण ।

अथ आहार दान के दोष का ब्योरा । छन्द चाल

निपज्यो गृहमध्य आहार, तिह लेय सचित परिहार ।
अथवा सचित मिल जाई, इह अतीचार कहवाई ।।५
प्राशुक धरियो जो दर्व, ढाके सचित्तसों सर्व ।
दूजो गनिये अतीचार, याह कू बुधजन टार ।।६
आपण नहिं देय अहार, औरन को कहै एम विचार ।
ये है आहार दो भाई, तीजो दूषण इह थाई ।।७
मुनिको कोई देई आहार, चित मे ईर्षा इह धार ।
हम ऊपर ह्वै क्यो देई, चौथो इह दोष गनेई ।।८
द्वारापेषण के कालै, गृह काज करत तहां हालै ।
लघि गए गेह मे आवै, पचम अतीचार कहावै ।।९

दोहा

इह अतिथि-संविभाग के, अतीचार भनि पाच । इनहिं टाल भविजन सदा, जिनवच भाखे साच ।।१०
व्रत द्वादश पूरण भये, पांच अणुव्रत सार । तीन गुणव्रत सार पुनि, शिक्षाव्रत निरधार ।।११
जैसी मति अवकाश मुझ, कियो ग्रन्थ अनुसार ।
किसनसिंह कहि अब सुनो कथन विविध परकार ।।१२
इति अतिथि सविभाग सम्पूर्ण ।

अथ सतरा नेमोका ब्योरा । दोहा

जे श्रावक आचार जुन, तिन प्रतिपालै नेम । [illegible] ।।१३

श्लोक

भोजने षट्रसे पाने कुकुमादि विलेपने, पुष्पताम्बूलगीतेषु नृत्यादौ ब्रह्मचर्यके ॥१४
स्नानभूषणवस्त्रादौ वाहने शयनासने, सचित्तवस्तुसख्यादौ प्रमाणं भज प्रत्यहम् ॥१५

चौपाई

भोजन की मरयादा गहै, राखै जेती बारहिं लहै ।
पर के घर को जीमण जोई, प्रात्त समय मे राख्यो होई ॥१६
अन्न अवर मीठादिक वस्तु भोजन माहे जान समस्त ।
असन चबीनी अर पकवान, गिनती माफिक खाय सुजान ॥१७
पट्रस मे जो राखै तजै, तिहि अनुसार सुनिति प्रति सजै ।
पानी सर वत दूध रु मही, दरब जिते पीने के सही ॥१८
ता मधि बुध राखे जे दर्व, ता बिनु सकल त्यागिये भव्य ।
चोवा चन्दन कुंकुम तेल, मुख धोबो रु अरगजा मेल ॥१९
औषध आदि लेप है जेह, सख्या राख भोगिए तेह ।
पुष्प गंध सूघियै तैह, जाप समै जे राखे जेह ॥२०
कर मुकती जो फल हेतनी, सचित्त मध्य तेऊ राखनी ।
सचित्त माहि राखी नहिं जाय, जिह दिन मूल न करहिं गहाय ॥२१
पान सुपारी डोडा गही, लौंगादिक मुख सोध जु कही ।
दाल चानी जावत्री जान, जाती फल तबोल बखान ॥२२
पान आदि सचित्त जु थाय, सचित्त माहि राखे तो खाय ।
सचित्त माहि राखत बीसरै, तो वह दिन खानी नहि परै ॥२३
गीत्त नाद कोतूहल जहां, जैवो राख्यौ जैहै तहा ।
मरयादा न उलघै कदा, जो उपसर्ग आय ह्वै जदा ॥२४
एक भेद यामे है और, आप आपनी बैठे ठोर ।
गावत्त गीत तिया नीकली, सुनकर हरष्यौ चित्त घर रली ॥२५
तामे दोष लगै अधिकाय, मध्यस्थ भाव रहै तिहिं ठाय ।
पात्तर नृत्य अखारे मांहि, नटवा नट जिहि नृत्य कराहिं ॥२६
वादीगर विद्या जे वीर, मुकति राखे जावै धीर ।
परवनिता को तो परिहार, निज नियमे जिम कर निरधार ॥२७
पाँचो परबी मे तो सोह, अवर दिवस जैसी चित्त गोह ।
तजै सरवथा तो परहरै, राखै अगीकार सु करै ॥२८
सेवत्त विषय जीव की घात्त, उपजै पाप महा उतपात्त ।
जिह जागै राखै मरयाद, सो निर वाहै तजि परमाद ॥२९
स्नान करण राखै तो करै, सोह थकी कबहूँ नहि टरै ।
आभूषण पहिरे है जिते, घर मे और धरे हौ तिते ॥३०
पहरन की इच्छा जो होई, सो पहरै सिवाय नहिं कोई ।
भूषण अन्य तने की रीत्त, राखै माग पहर कर प्रीत्ति ॥३१

कपडे अगले पहरे होई, वे ही मुखते राखे सोई।
अथवा नये ऊजरे होई, राखे सो पहरे मन दोई ॥३२
सुसुरादिक मित्रन के दिये, नृप आदिक जे वकसीस किये।
मुकते राखे ह्वे सो गहै, निज मरयादा को निर वहै ॥३३
पहरण पावतणी पाहणो, तेलमस्तुनि माहे गणी।
नई पुराणो निज परतणी, राखै सो पहरै इम भणी ॥३४
इत्यादिक वाहन जे होई, जो असवारी मुकती जोई।
काम परै चढि है तिह परी, और न काम नेम जो धरी ॥३५
सोवे को पलग जो जान, सोड तुलाई तकियो मान।
जेतो सयन करन को साज, व्रत धर सख्या धर सिरताज ॥३६
खाट पराई इक दुय चार, काम पड़े बैठे सुविचार।
विनु राखै बैठे सो मही, यह जिन आगम सांची कही ॥३७
गादी गाऊ तकियो जाण, चौको चौकी माटी आण।
सिंहासन आदिक हैं जिते, आसन माहि कहावें तिते ॥३८
गिलम दुलीचा सतरंजणी, जाजम सादी रुई तणी।
इनहि आदि विछोणा होय, आसन मे गिन लीजे सोय ॥३९
निज घर के अघवारे ठाम, मुकते राखे जे जे धाम।
तिनपर बैठे वाकी त्याग, जाको व्रत ऊपर अनुराग ॥४०
सचित्त वस्तु की संख्या जान, धान बीज फल फूल बखान।
पाणी पात्र आदि लख जेह, मिरच सोपारी डोढा एह ॥४१
सारे फल सगरे है जिते, सचित्त माहिं भाखे हैं तिते।
मरजादा मुकती जे माहि, बाकी सबको भेटै नाहिं ॥४२
संख्या वस्तु तणी जे धरे, सकल दरव को गिणती करै।
खिचड़ी लाडू खाठो खीर, औषध रस चूरण गिन धीर ॥४३
बहुत दरब मिल जो निपजेह, गिणती माहि एक गणि लेह।
राखे दरब जिते उनमाल, साझ लग गिणि ले वुधिमान ॥४४
सांझ करै सामायिक जबै, सतरह नेम सभारै तबै।
अतीचार लागै जो कोय, शक्ति प्रमाण दंड ले सोय ॥४५
वहुरि आखड़ी जे निशि जोग, धार निवाह करै भवि लोग।
इह विधि नित्य नियम मरयाद, पालै धरि भवि चित्त अहलाद ॥४६
महा पुण्यको कारण सही, इह भवते शुभ सुरगति लही।
अनुक्रम ते ह्वै है निरवाण, वुध जन-मन संशय नहि आण ॥४७

दोहा

नित्य नेम सत्रह तणो, कथन कियो सुखदाय।
अन्तराय श्रावक तणा, अव भवि सुनि मन लाय ॥४८

इति सत्रह नेम सम्पूर्ण।

अथ सात अन्तरायका कथन । चौपाई

जिनमत अन्तराय जे सात, श्रावकका भाषा विख्यात ।
रुधिर देखिवो नाम सुनेइ, तब बुध जन आहार तजेइ ॥४९
मास नजर देख सुन नाम, भोजन तजै विवेकी राम ।
नैनन देखे आलो चर्म, असन तजे उपजै बहु घर्म ॥५०
हाड राध अरु मूवो जीव, नजर निहार श्रवण सुन लीव ।
ततक्षिण अन्न छाडि सो देइ, अन्तराय पालक जन जेइ ॥५१

दोहा

सोह करे जिह वस्तुको, प्रथमहि सो फिर कोइ । सो ले थालीमे धरे, अन्तराय जो होय ॥५२
श्लोक एकमे सात ए, कह्यो सवनको भेव । तिह सिवाय भासे अवर, मो व्योरो सुनि लेव ॥५३
चडालादिक नर जिते, हीन करम करम करतार ।
तिनहि लखित वचनहि सुनत, अन्तराय निरधार ॥५४
मल देखत पुनि नाम सुनि, असन तुरत तजि देह ।
सो व्रतधारी श्रावक सही, अन्य दुष्टता गेह ॥५५
जिन प्रतिमा अरु गुरुनको, कष्ट उपद्रव थाय ।
सुनि श्रावक जन असन तज, उपवासादि कराय ॥५६
पुस्तकादि जल अगनिको, उपसर्ग हूवो जान ।
भोजन तज पुनि करयि भवि, उपवासादि वखान ॥५७
नित प्रति श्रावक को कहै, अन्तराय तहकीक ।
पाले वे शुभ गति लहैं, यह जिन मारग ठीक ॥५८
इति अन्तराय समाप्त ।

अथ सात प्रकार मौन । दोहा

मौन जिनागम मे कहो, सात प्रकार बखान ।
तिनको वरनन भविक जन, सुन मन वच क्रम ठान ॥५९

चौपाई

प्रथम मौन जल स्नान करन्त, दूजी पूजा श्री अरहन्त ।
भोजन करता वोले नही, चौथी सतवन पढते कही ॥६०
सेवत काम मौन को गहै, यही वचन जिन आगम कहैं ।
मल मूत्रहि क्षेपै जिहि वार, ए लखि सात मौन निरधार ॥६१

अडिल्ल छन्द

द्वादशाग मय अक सकल जानो सदा, असन स्थान मल मूत्र अवर तिय सग सदा ।
वरण उचार करण न भाष्यो जैन मैं, याते गहियै मौन सप्त विरिया समै ॥६२

चौपाई

मौन वरतके धारक जीव, चेष्टा इतनी न करि सदीव ।
भौह चढाइ नेत्र टिमकारि, करै जु सैन्या काम विचारि ॥६३

सीस हिलाय करै हुकार, खासै खखारे अधिकार।
कर अगुलते सैन वताय, अथवा अंकोमे लिखवाय ॥६४
इतनी किरिया करि है सोय, मौन वरतु तसु मेलो होय।
अर जो सैन समस्या करी, मतलब सम जैनहि तिहि धरी ॥६५
मन मै अकुलाय रहै क्रोध, क्रोध थकी नासै शुभ वोध।
याते जे भवि जन मतिमान, मौन धरौ आगम परवान ॥६६
अरु तिह समय करै सुभाव, ताते कहै पुण्य वढ़ाव।
पुण्य थकी लहि है सुरथान, यामैं कछु ससै नही आन ॥६७

अन्तराय सम्पूर्ण।

अथ संन्यास मरण की विधि। सवैया

दृगधारी श्रावक व्रत पालै पीछे ही, संन्यास सहित अन्तकाल तजै निज प्राण ही।
संन्यास प्रकार दोइ ए कहै कषाय नाम, दुतिय आहार त्याग प्रगट बखान ही ॥
आराधना च्यारि, भावै दरसन प्रथम दूजी, ज्ञान तीजो चरण विशेष तप जान ही।
जैसी विधि कषाय सन्यासको विचार जैसे, कहूँ भव्य सुनि मनमांहि ठीक आनही ॥६८

दोहा

सकल स्वजन पर जननिते, मन वच काय विशुद्ध।
शल्य त्यागि किय है क्षमा, करि परिणाम विशुद्ध ॥६९
अति नजीक निज मरन लखि, अनुक्रम तजिय अहार।
पाछै अनसन लेय कै, नियम असन बहुकार ॥७०
चार आराधन कौ तवै, आराधै भवि सार। दर्शन ज्ञान चारित्र पुनि, तप द्वादश विधि सार ॥७१
देव शास्त्र गुरु ठीकता, तत्त्वारथ सरधान।
निरुकादि गुण जो सहित, लखि दर्शन मति मान ॥७२

सवैया। ३१

धरम मे सका नाहि निसकित नाम ताहि वाछातै रहित निकाक्षित गुण जानियै।
ग्लान त्याग निरविचिकित्स देव गुरु श्रुत मूढता तजै यासौं अमोढ्यवान मानियै ॥
परदोष ढाकै उपगूहन धरैया सोई भ्रष्टको स्थापै स्थिति करण वखानियै।
मुनि गृही धर्म को जु कष्ट टारै वात्सल्य है मारग प्रभावना प्रभावत प्रमानियै ॥७३

सन्यास भरण सपूर्ण।

अथ अष्ट प्रकार ज्ञान को आराधना। दोहा

आठ प्रकार सुज्ञान को, आराधै मति मान। तस वरणन सक्षेपते, कहूं ग्रन्थ परमान ॥७४
प्रगट वरण लघु दीर्घ जुत, करि विशुद्ध उपचार। पाठ करे सिद्धान्त को, व्यजन ऊर्जित सार ॥७५
आगम अरथ सुजाणि कैं, सुद्ध उचार करेहि। अरथ समस्त संदेह विनु, जो सिद्धान्त पढेहि ॥७६
अर्थ समग्र सुनाम तसु. जानि लेहु निरधार। शब्दार्थोभय पूरण को, आगे सुनहु विचार ॥७७
व्याकरणादि ग्रन्थको, लब्धि नाम अभिधान। अग पूर्व श्रुत सकल को करे पाठ ते ज्ञान। ॥७८

पूर्वाह्निक मध्याह्न पुनि, अपराह्निक तिहु काल ।
विनु आगम पढिये नही, कालाध्ययन विसाल ॥७९
सरस गरिष्ठ अहार को, तज करि आगम पाठ । गुण उपथान समृद्ध इह, महा पुण्य को पाठ ॥८०
प्रथम पूज्य श्रुत भक्ति युत, पढि है आगम सार ।
सुखकर जानो नाम तसु, प्रगट विनय आचार ॥८१
गुरु पाठक श्रुत भक्ति युत, पठत बिना सदेह । गुर्वोद्यत पह्नव प्रगट, सत्यनाम सुसदेह ॥८२
पूजा आसन मान बहु, चित धरि भक्ति प्रसिद्ध ।
श्रुत अभ्यास सुकीजिये, सो बहु मान समृद्ध ॥८३
इति अष्ट प्रकार ज्ञान को आराधन सपूर्ण ।

अथ पंच महाव्रत तीन गुप्त पाँच सुमिति ये तेरह विध चारित्र का वर्णन । अडिल्ल

वरत अहिसा अनृत अचौर्य तीसरो, ब्रह्मचर्य व्रत पचम आकिचन खरी ।
मन वच तन तिहु गुपति पच सुमिति जु सही, ए साधन आराधन तेरा विधि कही ॥८४
अनसन आमोदर्य वस्तु सख्या गनी, रस परित्यागी रु विविक्त शय्यासन भनी ।
काय क्लेश मिलि छह तप बाहिज के भये, षट् प्रकार अभ्यन्तर आगम वरणये ॥८५
प्रायश्चित्त अरु विनय वैयावृत जानिये, स्वाध्याय रु व्युत्सर्ग ध्यान परमाणिये ।
मिलि बाहिज अभ्यन्तर बारा विधि लिखी, तप आराधन एह जिनागम मे अखी ॥८६

दोहा

दरसन ज्ञान चारित्र तप, आराधन व्यवहार । अति समय भावे व्रती, सुर-सुख शिव-दातार ॥८७
इति तप १२ चारित्र १३ संपूर्ण ॥ व्यवहार आराधना सपूर्ण ॥

निश्चय आराधना लिख्यते । दोहा

अब निश्चय आराधना, वरणी चार प्रकार । आराधक शिव पद लहै, यामें फेर न सार ॥८८

सवैया ॥ ३१

आतम के ज्ञान करि अष्ट महागुण धर, दरशन ज्ञान सुख बीरज अनन्त हैं ।
निश्चय नयेन आठ करमनि सो विमुक्त ऐसी आत्मा को जानि कहिये महंत है ॥
ताहि सुधी चेन उपरि श्रद्धा रुचि परतीत चित अचल करत जे वे सन्त हैं ।
निश्चय आराधना कही है दरशन याहि भावै अन्त समय सुकेवल लहत है ॥८९
निज भेद ज्ञान कारि शुद्धातम तत्त्वनिको चेतन अचेतन स्वकीय परमाणी है ।
सप्त तत्त्व नव पदारथ षट् द्रव्य पचासति काय उत्तर प्रकृति मूल जानी है ॥
इनको विचार बारबार चित अवधार ज्ञानवान सुध चेतना को उरि आनि है ।
सन्यास समये अन्तकाल ऐसे भाई ऐतो निश्चय आराधना सुबोध यो बखान है ॥९०
पुन. प्रथमहि अठाईस मूलगुण धार पच प्रकार निरग्रन्थ गुण हिय धारिये ।
सताईस पच इन्द्रिन के विषयोको त्याग बाहिज अभ्यन्तर परिग्रहको टारिये ॥
सकल्प विकल्प मनते सकल तजि आत्मीक ध्यानते शुद्धात्मा यो धारिये ।
पर करमादि सेती जुदो यासो कर्म जुदो निश्चय चारित्र यो आराधना विचारिये ९१

अडिल्ल

जो कोऊ नर मन मे इच्छा धरतु है, फिरि परिणाम सकोच निरोधहि करतु है ।
सो आराधन निश्चय नय परमानिये, तप इच्छादि निरोध यही मन आनियो ॥९२

दोहा

निश्चय चहु आराधना, ग्रन्थ प्रमाण वखान । किसनसिंह धरिहैं सूधी, सो शिव लहैं निदान ॥९३
ए चहु विधि आराधना, धरै कौन प्रस्ताव ।
सो भविजन सुन लीजिए, मन वच वुध करि भाव ॥९४

अहिल्ल छन्द

जो कोऊ उपसर्ग मरण सम आया है, कै दुरभिक्ष पड़े कछु कारण पाय है ।
जरा अधिक बल जर-जर सक्ति न सहै तबै, कै तनु रोष अपार मृत्यु सम दुख जबै ॥९५
इतने जोग मिलाय उपाय न कछु वहै, मरण निकट निज जानि विचारै मन तहै ।
ध्याय आराधन धर्मं निमित तिनको तजै, सो नर परम सुजान स्वर्ग शिव सुख भजै ॥९६

आराधना के अतीचार । छंद चाल

सलेषण की जो वारे, जीवन की आसा धारे ।
लोगनि कै मुख अधिकाई, निज महिमा लखि हरपाई ॥९७
निजको लखि दुख अर लोक, करिहै न प्रतिष्ठा थोक ।
महिमा कछु सुनय न कांनि, मरसी जब ही मन आनि ॥९८
मित्रनि सो करि अति नेह, पूरव क्रीडा की जेह ।
करि यादि मित्र जुत रागै, अतिचार तृतीय सु लागै ॥९९
भुगत्या सुख इह भवमाही, निज मन ही याद कराही ।
चौथो अतीचार सुजानी, पचम सुनिये भवि प्रानी ॥७००
संलेखण धारि जान, मन मे इम करिय निदान ।
हू इद्र तणो पद पाऊँ, मस्तक किनही न नवाऊँ ॥१
चक्रवर्ती संपदा जेती, त्रिय सुत जुत ह्वै मुझ तेती ।
ऐसो जो करिय निदान, तप सुरतरु देही दान ॥२
सलेषण पण अतिचार, भाष्या इनको निरधार ।
ए टालि सलेषण कीजे, ताकी फल सुर शिव लीजे ॥३

सवैया । ३१

अनसन तप नाम उपवास कार्जे जाको आमोदर्य तप लघु भोजन लहीजिए ।
वस्तु परिसंख्या जे ते द्रव्यनि की संख्या कीजे रस परित्याग तेरस आदि दीजिए ॥
विविक्त शय्यासन व्रत धारि भवि मुनि काय क्लेश उपना मन को गहीजिए ।
एई षट्तप कहे बाहिज के आगम मे सुर शिव सुख दाई भवि वेग कीजिए ॥४
प्रायश्चित्त कहै दोष गुरु पासधार तव विनय तप गुण वृद्धि को नायनो दीजिए ।
वैयावृत तप गुण धारी वय्यावृत कीजे स्वाध्याय जिनागम [illegible] मे [illegible] ।

व्युत्सर्ग खडा होय ध्यान धरिवे को नाम ध्यान निज आतमीक गुण निरखीजिये।
बाहिज अभ्यन्तर के तप भेद जानि पालि अनुक्रमनि यातै गुणथानक चढीजिये ।।५

दोहा

द्वादश तप वरनन कियो, जिनवर भाष्यो जेम। कछु विशेष सम भावको, कहू यथा मति तेम ।।६

इति द्वादश तप ।

•

अथ सम भाव कथन। सवैया

अनंतानुबधी क्रोध पाषाण की रेखा सम, मान थभ पाहन समान दुख दाय है।
बस विडावत माया, लोभ-लाख रग जानि, इनके उदैतै जीव नरक लहाय है।
जब लग अनंतानुबधी चौकडीको धरै जनम पर्यंत जाको सग न तजाय है।
याके जोर सेती जीव दर्शन सुधताकौ लहै नाही ऐसे जिनराज जी बताय है ।।७
क्रोध जो अप्रत्याख्यान हल रेखावत जानि मान आस्थथभ माँनि दुष्टत्ता गहाय है,
माया अजा शृंग जानि लोभ है मजीठ रग इनके उदैतै जीव तिरयच थाय है।
जब ही अप्रत्याख्यान चौकडी को उदै होय जाकै एक बरस लो थिरता रहाय है,
तो लो याको वल जोलों श्रावक के व्रतनिको धर सकै नाहि जिनराज जी वताय है ।।८
प्रत्याख्यान क्रोध धूलि रेखा परमान कह्यो, मान काठ थंभ माया गोमूत्र समान है,
लोभ कसुम्भको रग ए ई चार यौ प्रत्याख्यान, इनके उदैतै पावै मनुज पद थान है।
प्रत्याख्यान कषाय प्रगट उदै होत सतै च्यारि मास परजत रहै जानो जान है,
याही को विपाक सो न सकति प्रकट होत मुनि राज व्रत धरि सकै न प्रमान है ।।९
संज्वलन क्रोध जल रेखावत कह्यौ जिन, मान बेतलता किसी नवनि प्रधान है,
माया है चमर जैसी लोभ हरदी को रग इनके उदैते पावै सुरग विमान है।
चौथोहु कषाय चौकरी को उदै पाय ताकै च्यार पक्ष ताँऊ जाकै प्रबल महान है,
यथाख्यात चारित्र को धरि सकै नाहिं मुनि तीर्थंकर गोत्रहू जो बाधै यौ वखान है ।।१०

चौपाई

सोलह कषाय चोकरी च्यार, नौ कषाय नव नाम विचार।
हासि अरति रति सोक वखान, भय जुगुप्सा ए षट् जान ।।११
वनिता पुरुष नपुंसक वेद, ए नव मिले पचीस जु भेद।
इनको उपसम करिहै जबै, समकित हियै सुभ किरिया तबै ।।१२

इति समभाव सपूर्ण।

•

अथ एकादश प्रतिमा वर्णन लिख्यते। चौपाई

अब एकादश प्रतिमा सार, जुदो जुदो तिनको निरधार।
सो भाष्यौ आगम परवान, सुनि चित धारो मरम सुजान ।।१३

दर्शन व्रत सामयिक कही, पोसह सचित्त त्याग विध गही।
रयनि-असन त्यागी ब्रह्मचार, अष्टम आरभ को परिहार ॥१४
नवमी परिग्रह को परिमान, दशमी आद्य उपदेश न दान।
एकादशमी दोय परकार, क्षुल्लक दुतिय ऐलक व्रत धार ॥१५
श्रेणिक पूछै गौतम तणी, दरसन प्रतिमा की विधि भणी।
गौतम भाष्यो श्रेणिक भूप, दरशन प्रतिमा आदि सरूप ॥१६
एकादश की जो विध सार, जुदी जुदी कहिहो निरधार।
याहै सुनि करि धरि है जोय, श्रावक व्रत धारी हैं सोय ॥१७
प्रथमहि दरशन प्रतिमा सुनो, लगो निज आतम सहजै मुनो।
दरशन मोक्ष बीज है सही, इह विधि जिन आगम में कही ॥१८
दरशन सहित मूल गुण धरे, सात विसन मन वचन परिहरे।
दरशन प्रतिमा को सुविचार, कछु इक कहौं सुनो सुखकार ॥१९
देव न मानै विनु अरहन्त, दस विधि धर्म दयाजुत सन्त।
तपधर मानै गुरु निर्ग्रन्थ, प्रथम सुद्ध यह दरशन पथ ॥२०
संवेगादिक गुण जुत सोय, ताकी महिमा कहि है कोय।
धरम धरम के फल को लखै, सो सवेग जिनागम अखै ॥२१
जो वैराग भाव निरवेद, गरहा निन्दा के दुइ भेद।
निज चित निंदै निंदा सोय, गरहा गुरुठिग जा आलोय ॥२२
उपसम जे समता परिणाम, भक्ति पंच गुरु करिए नाम।
धरम रु धरमी सो अतिनेह, सो वाछल्ल महा गुण गेह ॥२३
अनुकपा नित ही चित रहै, ए वसु गुण जो समकित गहै।
दरशन दोप लगै पणवीस, सुनिये जो कहिया गणईश ॥२४
तीन मूढता मद वसु जान, अर अनायतन पट्विधि ठान।
आठ दोष शंकादिक कही, दोप इते तजि दरशन गही ॥२५
भो श्रेणिक सुन इस संसार, जीव अनत अनंती बार।
सीस मुडाय कुतप बहु कीयो, केस लोच अरु मुनि पद लीयो ॥२६
कीये अनन्तकाल बहु खेद, आतम तत्त्व न जानेउ भेद।
जब लो दरशन प्रतिमा तणी, प्राप्ति भई न जिनवर भणी ॥२७
तातै फिरियो चतुर्गति माँहि पुनि भवदधि भ्रमिहै शक नाहि।
प्रावर्त्तन कीये बहु बार, फिर करिहै जिसके नहि पार ॥२८
आठ मूल गुण प्रथम ही सार, वरनन कीयो विविध प्रकार।
ताते कथन कियो अब नाहि, कहै दोप पुनरुक्त लगाहि ॥२९
कुविसन सात कह्यो विस्तार, जूआ मांस भखिवो अविचार।
सुरापान चोरी आखेट, अरु वेश्या सो करियो भेट ॥३०
इनमे मगन होइ करि पाप, फल भुगतै लहि अति सन्ताप।
तिनके नाम सुनो मतिमान, कहिहो यथा ग्रन्थ परिमान ॥३१

पाण्डु-पुत्र जे खेले जुआ, पाँचो राज्य-भ्रष्ट ते हुआ।
बारह वरष फिरे वनमाँहि, असन-वसन दुख भुगते ताँहि ॥३२
मास-लुब्ध राजा बक भयो, राजभ्रष्ट ह्वै नरकहि गयो।
तहाँ लहे दुख पच प्रकार, कवि ते न कहि सकै विसतार ॥३३
प्रगट दोष मदिरा ते जान, नाग भयो यदुवग वखान।
तपधर अरु हरि-बलि नीकले, बाकी अगनि द्वारिका जले ॥३४
वेश्या लगन केरि हित लाय, चारुदत्त श्रेष्ठी अधिकाय।
कोडि बत्तीस खोई दीनार, द्रव्य-हीन दुख सहै अपार ॥३५
षट्‌खडी सुभूमि मतिहीन, विसन अहेडा मे अतिलीन।
पाप उपाय नरक सो गयो, दुख नानाविधि सहतो भयो ॥३६
पर-वनिता की चोरी करी, रावण मति हरि निज मति हरी।
राम रु हरि सो करि सग्राम, मरि करि लह्यो नरक दुख धाम ॥३७
पर-युवत्ती को दोष महन्त, द्रुपदसुता सो हास्य करंत।
कीचक फल पायो तत्काल, रावणनेहु गनिये इह चाल ॥३८
आठ मूल गुण पालै तेह, विसन सात को त्यागी जेह।
अरु सम्यक्त जु दृढता धरै, पहिली प्रतिमा तासो परै ॥३९

दोहा

प्रथम प्रतिज्ञा इह कही, श्रावक के मुख जान।
अब दूजी प्रतिमा कथन, कछु इक कहो बखानि ॥४०

छंद चाल

तह पाँच अणुव्रत जानो, गुणव्रत्त पुनि तीन वखानो।
शिक्षाव्रत मिलि कै च्यारी, दूजी प्रतिमा को धारी ॥४१
बारा व्रत बरनन आगे, कीनो चित धरि अनुरागे।
पुनरुक्त दोष तै जानी, दूजा नहि कथन कथानी ॥४२
तीजी प्रतिमा सामायिक, भविजन को सुर शिवदायक।
आगे बारा व्रत माही, वरनन कीनो सक नाही ॥४३
चौथी प्रतिमा तिहि जानो, प्रोषध तसु नाम वखानो।
वरनन सुनिवे को चाव, द्वादश व्रत मधि दरसाव ॥४४
पचम प्रतिमा वडभाग, सुनि सचित करो परित्याग।
काचो जल कोरो नाज, फल हरित सकल नही काज ॥४५
सब पत्र शाक तरु पान, नागर बेलि अघ थान। सहु कद मूल हैं जेते, सूके फल सारे तेते ॥४६
अरु वीज जानिये सारे, माटी अरु लूण विचारे।
करि त्याग सचित व्रत धारी पचम प्रतिमा तिहि पारी ॥४७
दिन चढे घडी दोय सार, पछिलो दिन वाकी धार।
इतने मधि भोजन करिहै, छट्टी प्रतिमा सो धरि है ॥४८

मरयादा धरवि आहार, चारो को करि परिहार।
तियको सेवे दिन नाही, छट्ठी प्रतिमा सो धराँही ॥४९
प्रतिमा छह तो जो जीव, समकित जुत धरै सदीव।
तिह श्रावक जघन्य सुजाणि, भापै इम जिनवर वाणि ॥५०
श्रेणिक नृप प्रसन कराही, श्री गौतम गणधर पाही।
ब्रह्मचर्य नाम प्रतिमा की, कहिये प्रभु कथन सु ताको ॥५१
सुनिये अब श्रेणिक भूप, सप्तम प्रतिमा को सरूप।
मन वच क्रम धारि त्रिशुद्ध, नव विधि जो शील विशुद्ध ॥५२
निज पर बनित्ता सब जानी, आजनम पर्यन्त तजानी।
अव नव विधि शील सुनीजे नित ही तसु हृदय गणीजे ॥५३
मानवणी सुर-तिय जाणी, तिरयचणी त्रितय बखाणी।
ये तीनो चेतन वाम, मन वच क्रम तजि दुख धाम ॥५४
पाषाण काठ चित्राम, तजिये मन वच परिणाम।
नव विधि ब्रह्मचर्य धरीजे, सप्तम प्रतिमा आचरीजे ॥५५
निज घर आरम्भ तजेई, परको उपदेश न देई।
भोजन निज पर घर माही, उपदेश्यो कवहु न खाही ॥५६
व्यापार सकल तजि देई, सो स्वर्गादिक सुख लेई।
प्रतिमा इह अष्टम नाम, आरम्भ-त्याग अभिराम ॥५७
नवमी प्रतिमा सुनि जान, नाम जु परिगह परिमान।
निज तनपै वसन धराही, पठने को पुस्तक ठाही ॥५८
इन बिन सब परिग्रह त्याग, मध्यम श्रावक बड़ भाग।
दिव लातब अर कापिष्ठ, तह लो सुख लहै गरिष्ठ ॥५९
प्रतिमा अनुमति तस नाम, दशमी दायक सुख धाम।
उपदेश न निज घरि परि-गेह, ले जाय असन को जेह ॥६०
तिनके सो भोजन लेहैं, उपदेश्यो कबहु न खै है।
निज जन अरु परजन सारे, उपदेश न पाप उचारे ॥६१
जाको परिग्रह मुनि लेई, पीछी कमंडल सु धरेई।
कोपीन कणगती जाके, छह हाथ वसन पुनि ताके ॥६२
एती परिगह मरजाद, गहि है न अवर परमाद।
एकादश प्रतिमा धारै, भाखैं जिन दुय परकारै ॥६३
प्रथमहि क्षुल्लक ब्रह्मचार, उत्कृष्ट ऐलक निरधार।
क्षुल्लक सख्या परमाण, कपडो षट हाथ सुजाण ॥६४
इकपटो न सीयो जाकै, कोपीन कणगती ताकै।
कोमल पीछी कर धारै, प्रति लेखि रु भूमि निहारै ॥६५
शौचादि निमित्त के काजै, कमडल ताकै ढिग वाजै।
आहार निमित्त तसु जानी, मुकते घर पच वखानो ॥६६

उत्कृष्ट ऐलक ब्रत धारी, जिनकी विधि भाष्यो सारी।
मठ मंडप बन के माही, निश दिन थिरता ठहराही ।।६७
कोपीन कणगती जाके, पीछे कमडल है ताके।
परिगह एतो ही राखै, इम कथन जिनागम भाखै ।।६८
भोजन सो करिय उदड, घर पच तणी थिती मड।
चित धरम ध्यान मे राखै, आतम चितवन रस चाखे ।।६९
सुनिये श्रेणिक भूपाल, दशन प्रतिमान विसाल।
तिह बिनु दस प्रतिमा जानी, निरफल भाषी जिन वाणी ।।७०
वासन की बोलि करीजे, उपरा उपरीज धरीजे।
नीचे हुई जर जर वासन, ऊपर ले भाजन की आसन ।।७१
सब फूट जाय छिन माही, समरथ बिनु कवन रखाही।
प्रथमहिं दर्शन दिढ कीजे, पीछे व्रत और धरी जे ।।७२
एकादश प्रतिमा सारी, ताकी गति सुन सुखकारी।
जावे षोडशमे स्वर्ग, भव दुइ तिहुँ लहि अपवर्ग ।।७३
दशमो प्रतिमा को धारी, क्षुल्लक अरु ऐलक विचार।
उत्कृष्ट सरावक एह, भाषे जिनमारग तेह ।।७४

दोहा

प्रतिमा ग्यारा को कथन, जिन आगम परमाण।
परि पूरण कीनो सबै, किसन सिंघ हित जाण ।।७५

इति प्रतिमा ग्यारा को कथन।

●

अथ दानादिकार। दोहा

आहार औषध अभय पुनि, शास्त्रदान ये चार। श्रावक जन नित दीजिये, पात्र-कुपात्र विचार ।।७६
आगे अतिथि विभाग मे, वरनन कीनो सार। इहाँ विशेष कीनो नही, दूषण लगै दुवार ।।७७
जो इच्छा चित सुननिकी, पूरब कह्यो वृत्तन्त। देखि लेहि अनुराग धरि, ताते मन हरखन्त ।।७८

अथ जल-गालन-कथन। दोहा

अब जल-गालण विधि प्रगट, कही जिनागम जेम।
भाषो भविजन साभलो, धारो चित धरि पेम ।।७९
दोय घडी के आतरै, जो जल पीवै छान। परम विवेकी जुत दया, उत्तम श्रावक जान ।।८०

छन्द चाल

नौतन वस्तर के माही, छानो जल जतन कराही।
गालन जल जिहिं वारै, इक बूँद मही नहिं डारै ।।८१
कोहू मतिहीन पुराने, वस्तर माही जल छाने।
अर बूद भूमि पर नाखैं, उपजै अघ जिनवर भाखै ।।८२

तिन माही जीव अपार, मरि हैं संसै नहिं धार ।
जाके करुणा न विचार, श्रावक नहिं जानि गंवार ॥८३
धीवर सम गिनिये ताहि, जल को न जतन जिहि पाहि ।
द्वय द्वय घटिका में नीर, छाणै मतिवंत गहीर ॥८४
अथवा प्रासुक जल करि के, राखै भाजन मे धरि के ।
गृह-काज रसोई माहै, प्रासुक जल ही वरता है ॥८५
अनछाण्यौ वरतै नीर, ताकौ सुनि पाप गहीर ।
इक वरषि लगे जो पाप, धीवर कहि है सो आप ॥८६
अरु भील महा अविवेक, दी अगनि देय दस एक ।
दौवनि को अघ इक वार, कीये ह्वै जो विस्तार ॥८७
अनछाण्यौ वरतै पानी, इस सम जो पाप वखानी ।
ऐसो डर धरि मन धीर, विनु गाले वरते न नीर ॥८८

उक्तं च—

संवत्सरेण मेकत्वं चैवर्तकस्य हिंसक । एकादश दवादाहे अपूत-जल मग्रही ॥८९
लूतास्यतन्तुगलिते ये विन्दौ सन्ति जन्तवः । सूक्ष्मा भ्रमरमानापि, नैव मान्ति त्रिविष्टपे ॥९०

अडिल्ल

मकडी का मुख थकी तंत निकसै जिसौ, तिहि समान जलविन्दु तणौ सुनि एक सौ ।
तामें जीव असख उड़ै ह्वै भ्रमर ही, जम्वृद्वीप न माय, जिनेश्वर इम कही ॥९१

तथा चोक्तम्

षट्त्रिंशदङ्गुलं वस्त्रं चतुर्विशतिविस्तृतम् । तद्वस्त्रं द्विगुणीकृत्य तोय तेन तु गालयेत् ॥९२
तस्मिन्मध्यस्थिताञ्जीवान् जलमध्ये तु स्थाप्यते । एव कृत्वा पिवेत्तोयं, स याति परमा गतिम् ॥९३

अडिल्ल

वस्तर अगुल छत्तीस सुलीजिये, चौड़ाई चौईस प्रमाण गहीजिये ।
गुढी विना अतिगाढ़ौ दोवड कीजिये । इसे नातणै छांणि सदा जल पीजिये ॥९४
तामें हैं जे जीव जतनि करिकै सही, छाणा जलतें अवर नीर मे खेपही ।
करुणा धरि चित्त नीर एम पीवे जिके, सुर पद सशय नाहिं, लहै शिवगति तिके ॥९५

चौपाई

ऐसी विधि जल छाण्या तणी, मर्यादा घटिका दुइ भणी ।
प्रासुक कियो पहर दुय जाणि, अधिक उष्ण वसु जाम वखाणि ॥९६
मिरच इलायची लौंग कपूर, दरव कषाय करे लौं चूर ।
इन तें प्रासुक जल कर वाय, ताको भाजन जुदो रहाय ॥९७
इतनौ प्रासुक कीजे नीत, जाम दोय मध्य होइ व्यतीत ।
मर्यादा उपर जो रहाय, तामें सम्मूर्छन उपजाय ॥९८

अरु वे फिरि छान्यो नहिं परै, वांके जीव कहा लौ धरै ।
प्रासुक जलके भाजन मांहि, जो कहु नीर अगालत आहि ॥९९
ताके जीव मरै सब सही, उनकौ पाप कोई न इच्छही ।
ताते बहुत जतन मन आनि, प्रासुक करि वरतौ सुख दानि ॥८००
छाण्यौ जल घटिका द्वय माहिं, सम्मूर्च्छन उपजै सक नाहिं ।
आज उसन की विधि सबठौर, व्यापि रहो अति अधकी दौर ॥१
व्यालू निमित असन करि धरे, ता पीछै खीरा ऊबरै ।
तिनमें जल तातौ करवाय, निसि सवार लौ सो निरवाहि ॥२
मरयादा माफिक नहिं सोय, ताकों वरतो मति भवि लोय ।
कीजे उसन इसी विधि नीर, जो जिन-आज्ञा-पालन वीर ॥३
भात बोरिये जिह जल माहि, वैसो जल जो उसन कराहि ।
आठ पहर मरयादा तास, सम्मूर्च्छन पीछे ह्वै जास ॥४
जो श्रावक-व्रत को प्रतिपाल, तिहको निसि जलकी इह चाल ।
छाण्यौ प्रासुक तातौ नीर, मर्यादा मे वरतो नोर ॥५

छन्द चाल

वीछे कपडे जो नीर, छाने श्रावक नही कीर ।
मरयाद जिती कपडा की, तासो विधि जल छणवाकी ॥६
याते सुनिये भवि प्राणी, जलकी विधि मनमे आनी ।
बहु धरि विवेक जल गालै, मन वच तन करुणा पालै ॥७
पंचनिमे सो अति लाजै, अर जिन-आज्ञा सो त्याजै ।
सो पाप उपावै भारी, जाणौ तसु हीणाचारी ॥८
याते ल्यो वसन सुफेद, छानो जल किरिया वेद ।
औरनि उपदेश जु दीजे, बिनु छाणे कबहूँ नहिं पीजे ॥९
श्रावक-वनिता घर माही, किरिया जुत सदा रहाही ।
वह जतन थकी जल छानै, ताको जस सकल बखानै ॥१०
लघु त्रिया प्रमाद प्रवीन, जलकी किरियामे हीन ।
तापै न छणावै पानी, वनिता सो जाण्यो स्यानी ॥११
तजि आलस अरु परमाद, गालै जल धरि अहलाद ।
औरनिसो न हिं बतरावै, जल-कण नहिं पड़िवा पावै ॥१२
जल बूद जु तनुमे परि है, अपनी निन्दा बहु करि है ।
ले दड सकति-परमाण, पालै हिरदै जिन-आण ॥१३

दोहा

जिह निवाण को नीर भरि, घरमे आवे ताहि ।
छानि जिवाणी भेजियो, वाहि निवाणजि माहि ॥१४

इह जल-छालण विधि कही, जिन-आगम-अनुसार ।
कहि हों कथा अणथमी, सुनियो भवि चितधार ॥१५

इति जल-गालण-विधि ।

•

अथ अणथमी-कथन । दोहा

घड़ी दोय जब दिन चढ़ै, पछिलो घटिका दोय ।
इतने मध्य भोजन करै, निश्चय श्रावक सोय ॥१६

सोरठा

सुनिये श्रेणिक भूप, निशि-भोजन त्यागी पुरुष ।
सुर-सुख भुगति अनूप, अनुक्रमि शिव पावं सही ॥१७
दिवस अस्त जब होय, ता पीछे भोजन करै ।
वे नर ऐसे होय, कहूँ सुनों श्रेणिक नृपति ॥१८

नाराच छन्द

उलूक काक औ विलाव, गृद्ध पक्षि जानिये,
वघेरु डोडु सर्प सर सांवरौ वखानिये.
हवंति गोहरो अतीव पाप रूप थाइये,
निशी आहार दोष तें कुजोनिकों लहाइये ॥१९

दोहा

निशि वासरको भेद विन, खात नृपति नहिं होय । सींग पूंछते रहित ही, पशु जानिये सोय ॥२०
दिन तजि निशि भोजन करै, महापापि मति मूढ ।
वहु मोल्यो माणिक तजै, काच गहै धरि रूढ ॥२१

छन्द चाल

निशि माहे असन कराही, सो इतने दोष लहाही ।
भोजनमे कीड़ी खाय, तसु बुद्धि-नाश हो जाय ॥२२
जूँ उदर-मांहि जो जाय, तिह रोग जलोदर थाय ।
माखी भोजनमें खैहै, तलछिण सो वमन करै है ॥२३
मकड़ी आवे भोजनमें, तो कुष्ट रोग ह्वै तन में ।
कंटक रु काठ को खंड, फंसि है सो गले प्रचण्ड ॥२४
तसु कंठ विथा विसतारै, ह्वै है नहिं ढील लगारै ।
भोजनमें खैहै वाल, सुर-भंग होय ततकाल ॥२५
अरु अशन करत निशि मांही, वज्जादिकमें उपजाही ।
इनि आदि अशन निशि दोष, सवही हो है अघकोष ॥२६

सोरठा

निशि भोजनमे जीव, अति विरूप मूरति सही।
तिनमे विकल अतीव, अलप आयु अर रोग-युत ॥२७

दोहा

भाग्य-हीन आदर-रहित, नीच-कुलहि उपजाहि।
दुख अनेक लहै है सही, जो निशि भोजन खाहि ॥२८

चाल छन्द

एक हस्तिनागपुर ठाम, तस जसोभद्र नृप नाम।
रानी जसभद्रा जानो, श्रेष्ठी श्रीचन्द बखानो ॥२९
तिय लिखमी मति तसु एह, नृप-प्रोहित नाम सुनेह।
द्विज रुद्रदत्त तसु तीया, रुद्रदत्ता नाम जु दीया ॥३०
हरदत्त पुत्र द्विज नाम, तिन चरित सुनो दुख-धाम।
बीतो भादोको मास, आसोज प्रथम तिथि जास ॥३१
निज पितृ-श्राद्ध दिन पाय, द्विज पुरका सकल बुलाय।
बाह्मण जीमणको आये, बहु अशन थकी जुअ थाये ॥३२
द्विज पिता नृपतिके ताई, पोषै वहु विनो धराई।
पीछे नृप-मन्दिर आयो, राजा वहु काम करायो ॥३३
तसु राज-काजके माही, भोजन की सुधि न रहाही।
वहु क्षुधा थकी दुख पायो, निशि अर्ध गया घरि आयो ॥३४
निशि पहर गई जब एक, तसु वनिता धरि अविवेक।
रोटी जीमन कूँ कीनी, वेंगण करणे मन दीनी ॥३५
हाडी चूल्हे जु चढाई, पाडोसी हीगको जाई।
इतनेमे हाडी माही, मीढक पडियो उछलाही ॥३६
तिम वेंगणा छौकै आय, मीढक मूवो दुख पाय।
तब हाडी लई उतारी, रोटी ढकणो परि धारी ॥३७
कीड़ी रोटीमे आई, घृत सनमधित्ते अधिकाई।
निशि बीत गई दो जाम, जीमण बैठो द्विज ताम ॥३८

दोहा

निशि अँधियारी दीप बिनु, पीड़ित भूख अपार।
जो निशि भोजी पुरुष है, तिनके नही विचार ॥३९
रोटी मुखमे देत ही, चींटी लगी अनेक।
विप्र होठ चटकौ लियो, बडो दोष अविवेक ॥४०
बैगण को लखि मीढकौ, विस्मय आण्यो जोर।
ताते अघ उपज्यो अधिक, महा मिथ्यात अघोर ॥४१

अडिल्ल

कालान्तर तजि प्राण भयौ घूघू जवैं, तहाँ मरण लहि सोई नरक गयो तवै।
पंच प्रकार अपार लहै दुख ते सही, निकलि काक मर जाय ठई दुख की गही ॥४२
तिह वायस चउपद अनेक जु सताइया, विष्टादिक जे जीव चित्त ते पाइया।
प्रचुर आयुतें पाप उपाय मूवो जदा, नरकि जाय बहु आयु समुद भुगतैं तदा ॥४३
तिहतैं निकसि बिलाव भयौ पापी घनौ, मूंसा मीढक आदि भखै कहलो गनौं।
नरक जाय दुख भुंजि ग्रद्ध पक्षी भयौ, प्राणी भखे अनेक नरक फिर सो गयौ ॥४४
निकसि नरकतें पाप उदै सवर भयौ, तिहँ भखो जोव अपार नरक पचम गयौ।
निकलि सूर है जीव भखै तिनको गिनै, अघ उपाय मरि नरक जाय सहि दुख घनै ॥४५
अजगर लहि परजाय मनुष तिरयग ग्रसे, नरक जाय दुख लहैं कहे वाणी इसे।
निकलि वघेरो थाय जीव वहु खाइया, पाप उपाय लहाय नरक दुख पाइया ॥४६
गोधा तिरयग जमति निकसि तहँते भयो, बहुत जंतुको भखि नरक पुनि सो गयो।
मच्छ तणी परजाय लई दुख की मही, लघु मच्छादिक खाय उपाये अघ सही ॥४७
सो पापी मरि नरक गयो अतिघोर मे, स्वासति निमिष न लहै कहू निशि भोर में।
तहं भुगते दुख जीव याद जो आवही, निशि न नीद दिन नीर अशन नहि भावही ॥४८

चौपाई

निशि-भोजन-लंपट द्विज भयो, महापाप को भाजन थयो।
दस भव तिरयग गति दुख लह्यो, तिम दस भव दुख नरक निसर्यो ॥४९
नरक थकी नीकलिकै सोई, देस नाम करहाट सुजोई।
कौसल्या नगरो नरपाल, है सग्रामसूर गुणमाल ॥५०
तसु पटतिया वल्लभा नाम, राजा-सेठ श्रीधर है ताम।
श्रीदत्ता भार्या तिह तणी, राजपुरोहित लोमस भणी ॥५१
प्रोहित-वनिता लाभा नाम, महोदत्त सुत उपज्यो ताम।
सात विसन लपट अधिकानी, रुद्रदत्त द्विज कोवर मानी ॥५२
महोदत्त कुविसनतैं जास, पिता लक्ष्मी सव कियौ विनास।
जूवा वेश्या रमि अधिकाय, राजदंड दे निरधन थाय ॥५३
घर में इतो रह्यो नहिं कोय, भोजन मिलिये हू नहिं जोय।
तव द्विज काढ़ि दियो घर थकी, गयो सोपि मामा घर तकी ॥५४
मामैं तसु आदर नहिं दियो, वहु अपमान तास कौ कियो।
भाग्य हीन नर जहँ,जहं जाय, तहँ-तहँ मान हीनता थाय ॥५५

सवैया

जा नरके सिर टाट सदा रवि-ताय थकी दुख जोरी लहै हैं,
पादप चील तणी तकि छांइ गये सिर चीलकी चोट सहै है।
ता फलतें तसु फाटि है सीस वेदनि पाप उदै जु गहै है,
भाग्य विना नर जाय जहाँ, तहँ आपद थानक भरिही रहै है ॥५६

मातुल तास महीदत्त सीस नवाय दियो अब ही ।
पूरव पाप किये मै कौन सुभाषिये नाथ वहै सब ही ॥५७

दोहा

कौन पापते दुख लह्यो, सो कहिये मुनि नाह । सुख पाऊ कैसे अबै, उहै बतावो राह ॥५८

सवैया तेईसा

सो मुनिराज कह्यो भो वत्स सुपूर बे पाप कहा तज याही,
प्रोहित नाम यो रुद्रदत्त महीपति के हथनापुर माही ।
सो निशि-भोजन लपट जोर पिपीलक कीट भखै अधिकाही,
सो जन रात-समय इक मीढक बैगण साथ दियो मुख माही ॥५९

अडिल्ल

तास पाप के उदय मरिवि घूघू भयो, नरक जाय पुनि काग होय नरकहि गयो ।
ह्वै विलाप लहि नरक जाय सवर भयो, नरक जाय ह्वै ग्रद्धपक्षि नरकहि लह्यो ॥६०
निकलि सूकरो होय नरक पद पाइयो, ह्वै अजगर लहि नरक वघेरो थाइयो ।
श्वभ्र जाय फिर गोधा तिरयग गति पाई, नरक जाय हो मच्छ नरक पृथिवी लई ॥६१
नरक महीतें निकल महीदत्त थाइयो, उलूकादि दस तिरयग भव दुख पाइयो ।
नरक वार दस जाय महा दुख ते सह्यो, निसि भोजन के भखै श्वभ्र दुख अति लह्यो ॥६२

दोहा

महीदत्त फिर पूछवे, निसि भोजनते देव । नरभवमे दुख किम लहे, सो कहिये मुझ भेव ॥६३
मुनि भाषै द्विज-पुत्र सुण, निसि मे भोजन खात । जीव उदरि जैहै तबै, बहुविधि है उत्पात ॥६४

सवैया इकतीसा

माखीते वमन होय, चीटी बुद्धि नाश करे, जूकाते जलोदर होय, कोडी लूत करि है,
काठ फास कंटकते गलेमेव धावै विथा, बाल सुर-भग करै कठ हीन परि है ।
भ्रमरीते सूना होय, कसारीते कम्पवाय, विन्तर अनेक भाति छल उर धरि हैं,
इन आदिक कथन कहाँ लौ कीजे वत्स, सुन नरक तियँच थाम कहे जो ऊर्पार है ॥६५

दोहा

जो कदाचि मर मनुष ह्वै विकल अग बिनु रूप ।
अलप आयु दुर्भग अकुल, विविध रोग दुख कूप ॥६६
इत्यादिक निशि-अशन ते, लहि है दोष अपार ।
सुनवि महोदत्त मुनि प्रते, कहै देहु व्रत सार ॥६७
मुनि भाषै मिथ्यात्व तजि, भजि सम्यक्त्व रसाल ।
पूरव श्रावक व्रत कहे, द्वादश धरि गुणमाल ॥६८
दर्शन व्रत विधि भाषिये, करुणा करि मुनिराज ।
मुझ अनन्त भव-उदधिते, तारणहार जहाज ॥६९

सोरठा

दोष पच्चीस न जास, संवेगादिक गुण-सहित । सप्त तत्त्व अभ्यास, कहै मुनीश्वर विप्र सुन ॥७०

दोहा

इस दरशन सरधान करि, निश्चै अरु व्यवहार । पूरब कथन विशेषतें, कह्यौ ग्रन्थ अनुसार ॥७१
सात व्यसन निशि-अशन तजि, पालो वसु गुण मूल ।
चरम वस्तु जल विनु छण्यो, त्यागै व्रत अनुकूल ॥७२

चौपाई

इत्यादिक मुनि-वचन सुनेइ, उपदेश्यो व्रत विधिवत लेइ ।
हरषित आयो निजघर माहि, तासु क्रिया लखि सब विसमाहि ॥७३
अहो सात विसनी इह जोर, अरु मिथ्याती महा अघोर ।
ताको चलन देखिये इसो, श्रीजिन आगम भाष्यो तिसो ॥७४
मात-पिता तसु नेह करेइ, भूपति ताको आदर देइ ।
नगरमांहि मानै सब लोग, विविध तणे बहु भुंजै भोग ॥७५
पुण्य थकी सब ही सुख लहै, पाप उदै नाना दुख सहै ।
ऐसो जान पुण्य भवि करो, अघतै डरपि सबै परिहरो ॥७६
महीदत्त बहुधन पाइयो, ततछिन पुण्य उदै आइयो ।
पूजा करै जपै अरहत, मुनि श्रावक को दान करंत ॥७७
जिनमन्दिर जिनबिम्ब कराय, करी प्रतिष्ठा पुण्य उपाय ।
सिद्ध क्षेत्र वदे बहु भाय, जिन आगम सिद्धान्त लिखाय ॥७८
आप पढ़ै औरनिको देय, सप्त क्षेत्र धन खरच करेय ।
निशि-दिन चालै व्रत अनुसार, पुण्य उपायो अति सुखकार ॥७९
कितेक काल गया इह भांति, अन्त समय धारी उपशांति ।
दरशन ज्ञान चरण तप चार, आराधन मनमाहि विचार ॥८०
भाई निश्चै अरु व्यवहार, धारि संन्यास अन्तकी वार ।
शुभ भावनितै छाडे प्रान, पायो षोड़श स्वर्ग विमान ॥८१
सिद्धि आठ अणिमादिक लही, आयु बीस द्वय सागर भई ।
पांचो इन्द्री के सुख जिते, उदै प्रमाण भोगिये तिते ॥८२
समकित धरम ध्यान जुत होय, पूरण आयु करइ सुर लोय ।
देश अवन्ती मालव जाण, उज्जैनी नगरी सुवखाण ॥८३
पृथ्वी तल तसु राज करेह, प्रेमकारिणी तिय गुण गेह ।
समकित दृष्टी दपति सही, जिन-आज्ञा हिरदै तिन गही ॥८४
स्वर्ग सोलमे ते सुर चयो, प्रेमकारिणी के सुत भयो ।
नाम सुधारस ताको दियो, मात-पिता अति आनन्द कियो ॥८५
दियो दान जाचक जन जितौ, मापै कथन होय नहिं तितौ ।
विधिसों पूजै जिनवर देव, श्रुत-गुरु वदन करि बहु सेव ॥८६

अधिक महोत्सव कीनो सार, जैसो श्रावक को आचार।
वस्त्रादिक आभरण अपार, सब परिजन संतोषे सार ॥८७
अनुक्रम बरस सातको भयो, पंडित पास पठन को दयो।
शास्त्र कलामे भयो प्रवीन, श्रावक व्रत जुत समकित लीन ॥८८
जोवनवंत भयो सुकुमार, व्याहन कीनो धरम विचार।
एक दिवस वन क्रीडा गयो, वड तरु बिजरीतें क्षय भयो ॥८९
देख कुमर उपजो वैराग, अनुप्रेक्षा भाई बड़ भाग।
चन्द्रकीर्ति मुनि के ढिग जाय, दीक्षा लीनी तब सुखदाय ॥९०
बाहिर आभ्यन्तर चौबीस, तजे ग्रन्थ मुनि नाये सीस।
पच महाव्रत गुपति जु तीन, पंच समिति धारी परवीन ॥९१
इम तेरा विध चारित सजे, निश्चय रत्नत्रय सु भजे।
सुकल ध्यान-बल मोह विनास, केवल ज्ञान ऊपज्यो तास ॥९२
भवि उपदेशे बहुविधि जहा, आयु करम पूरण भयो तहां।
शेष अघातिय को करि नास, पायो मोक्षपुरी सुख वास ॥९३

सवैया

मोह कर्म नास भये प्रसमत्त गुण थये, ज्ञानावर्ण नास भये ज्ञान गुण लयो है,
दसण आवरण नास भयो दसण, सु अन्तराय नासते अनन्तवीर्य थयो है।
नाम कर्म नास भये प्रगटयो सुहुमत्त गुण, आयु नास भये अवगाहण जु पायो है,
गोत्रकर्म नास किये भयो है अगुरुलघु, वेदनीके नासे अव्याबाघ परिणयो है ॥९४

दोहा

विवहारे वसु गुण कहे, निश्चै सुगुण अनन्त। काल अनन्तानन्त तिते, निवसै सिद्ध महन्त ॥९५

चौपाई

इह विधि भवि दर्शन जुत सार, पालै श्रावक व्रत-आचार।
अर मुनिवरके व्रत जो धरै, सुर नर सुख लहि शिव-तिय वरै ॥९६
निशि-भोजनतें जे दुख लये, अरु त्यागे सुख ते अनुभये।
तिनके फलको वरनन भरी, कथा अणथमी पूरण करी ॥९७

छप्पय

दिवस उदय द्वय घडी चढत पीछे ते लेकर,
अस्त होत द्वय घडी रहै पिछलौ एते पर।
भोजन जे भवि कर तजै निशि चार अहार ही,
खादिम स्वादिम लेप पान मन वच कर वारही ॥
सो निशि भोजन तजन वरत नित प्रति जो जिनराज बखानियो।
इह विधि नित प्रति चित्त धरि श्रावक मन जिहि मानियो ॥९८
चित्रकूत्र गिरि निकट ग्राम मातंग वसै तहै,
नाम जागरी जान क्रूरग चंडार तिया तहै।

तिहि निसि-भोजन तजन वरत सेठणि पै लियो,
मन वच क्रम व्रत पालि मरण शुभ भावनि कियो ॥
वह सेठ तिया उरि ऊपनि सुता नागश्रिय जानिये।
जिन कथित-धर्म विधि जुत गहिवि सरग तणा सुख तिन लिये ॥९९
तिरयग एक सियाल सुणिचि मुनि-कथित धरम पर,
रख निसि-भोजन तजन वरत दियो लखि भविवर।
त्रिविध शुद्ध व्रत पालि सेठ सुत ह्वै प्रीतिकर,
विविध भोग भोगए नृपत्ति-पुत्री परणवि वर ॥
मुनिराज पास दीक्षा लई, उग्र घोर तप ध्यान सजि।
वसु कर्म क्षेपि पहुचे मुकति, सुख अनन्त लहि जगत महि ॥१००
याही व्रतको धारि पूर्व ही बहुत पुरुष तिय,
तद्-भव सुर पद लहै त्रिविध पालिउ हरषित हिय।
अनुक्रमि मोक्षहि गये धरिसु दीक्षा जिनि धारी,
सुख अनन्त नहि पार, सिद्ध पदके जे धारी ॥
नर-नारी अजहु व्रत पालि है मन वच काय त्रिशुद्धि कर।
लहि धर्म देवगतिका अधिक, क्रम तै पहूँचैं मुकति वर ॥१

इति अणथमी कथन।

अथ दर्शन-ज्ञान-चारित्र-कथन

दोहा

त्रेपन किरिया के विषें, दरसण ज्ञान प्रमाण।
अवर त्रितय चारित तणो, कछु इक कहो बखाण ॥२
निज आतम अवलोकिये, इह दर्शन परधान। तस गुण जाणपणो विविध, वहै ज्ञान परवान ॥३
तामे थिरता रूप रहै सु चारित होय। रत्नत्रय निश्चय यहै, मुकति-बीज है सोय ॥४
अब विवहार बखाणिये, सप्त तत्त्व परधान। नि शकादिक आठ गुण, जुत दर्शन सुख-दान ॥५
ज्ञान अष्ट विध भाषियो, व्यजन ऊजिति आदि।
जिन आगम को पाठ बहु, करै त्रिविध अहलादि ॥६
पच महाव्रत गुप्ति त्रय, समिति पंच मिलि सोय। विध तेरा चारित्र है, जाणो भविजन लोय ॥७
इनको वर्णन पूर्व ही, निश्चय अरु व्यवहार। मति-प्रमाण संक्षेपते, कियो ग्रन्थ अनुसार ॥८

चौपाई

त्रेपन किरिया की विधि सार, पालो भवि मन वच तन धार।
सो सुर-नर-सुख लहि शिव लहै, इम गणधार गौतम जी कहै ॥९

इति त्रेपन क्रिया-कथन सम्पूर्ण।

अथ और वस्तु हैं तिनकी उत्पत्ति वगैरे कथन । अथ गोंद की उत्पत्ति

दोहा

गूंद हलद अरु आँवला, निपजन विधि जे थाहि ।
क्रियावान पुरुषनि प्रते, कहूँ सकल समझाहि ॥१०

चौपाई

गूंद खैरकें लागो होय, भील उतार लेतु है सोय ।
अरु अंगुलीके लार लगाय, इह विधि गू द उतारत जाय ॥११
कीडी माछर आहि अतीव, लागा रहै गू द के जीव ।
भील विवेक हीन अति दुष्ट, करुणा-रहित उतारै भ्रष्ट ॥१२
दूना मे धरते सो जाय, जीव कलेवर तामे आय ।
इह विधि जाण लेहु जन दक्ष, नर-नारी सब खात प्रतक्ष ॥१३
भील-जूठ यह जाणो सही, क्रियावान नर खावै नही ।
जो खैहै सो क्रिया नसाय, अवर वरतको दोष लगाय ॥१४

अथ अफीम की उत्पत्ति

अरु उतपत्ति अफीम जु तणी, जूठी दोष गू दहि जिम भणी ।
इह अफीम मे दोष अपार, खाये प्राण तजै निरधार ॥१५

अथ हल्दी की उत्पत्ति

हलद भील निज भाजन-माहि, अपने जलते ते औटाहि ।
ता पीछे सो देय सुखाय, हलद बिकै ते सब ही खाय ॥१६
कन्दमूलते उपज्यो सोय, भाजन भील नीरमे जोय ।
यामे हैं इतनौ लखि दोष, धरम भ्रष्ट शुभ क्रिया न पोष ॥१७

आँवला की उत्पत्ति

वरडि माझ आँवला अपार, हीण क्रिया तामे अधिकार ।
हरयो आँबला भील लहाय, अपने भाजन माहि डराय ॥१८
निज पाणीमे ले लौटाय, जमी माहि फिर डारै जाय ।
पहरि पाहनी तिन पर फिरै, फूटत तिन गुठरी नीसरै ॥१९
अरु भीलन के बालक ताम, तिनकी गुठली बीनत जाय ।
लूण साथि ले खाते जाहि, झूठ होत तामे सक नाहि ॥२०
जल भाजनको दोष लहन्त, पाटा पाहनी से खूदन्त ।
ऐसी उत्पत्ति बुध जन जान, धर्म फलै सोई मन आन ॥२१

अथ पान की उत्पत्ति

काथ खात हैं पानहि माहि, तिसके दोष कहे ना जाँहि ।
प्रथम पान साधारण जान, राखै मास वरसलो आन ॥२२

सरद रहै तिनमे अति सदा, त्रस उपजैं जिनवर यो वदा ।
हिन्दु तुरक तंबोली जान, नीर निरन्तर जिन छिटकान ॥२३
जल भाजन अशुद्ध अति जान, सारा नर मूते तिह थान ।
पूँगी लौग गरु गिरी बिदाम, डोड़ादिक पुनि लावै ताम ॥२४
चूनौ क्वाथ इत्यादि मिलाहि, सबै मसालो पाननि माहि ।
धरकै बीडा बाँधै सोय, सब जन खात खुशी मन होय ॥२५
धरम पाप नहि भेद लहन्त, ते ऐसे बीड़ा जुग हन्त ।
अरु उत्पत्ति क्वाथ की सुनो, अघ-दायक अति है तिम गुणो ॥२६

क्वाथ (कत्था) की उत्पत्ति

विन्ध्याचल तहँ भील रहन्त, खैर रूख की छाल गहन्त ।
औटावें निज पानो डार, अरुण होय तब लेय उतार ॥२७
तामे चून जु मडवा तणो, तन्दुल ज्वार सिघाड़ा तणो ।
नाख खैर जल-मांही जोय, रांध रावड़ी गाढी सोय ॥२८
ताहि सुखावै कुडा माहिं, उत्पति क्वाथ कहि सकै नाहिं ।
कहूँ कहा लौ वारवार, होय पाप लख करि निरधार ॥२९
सुख-दायक सिख गहिये नीर, दुखद पापकी छाड्यो धीर ।
छांडे मन वच सुख सो लहै, बिनु छाडें दुर्गति को गहै ॥३०
तातै सब वरणन इह कियो, सुनहु भविक जन दे निज हियो ।
जिह्वा-लंपटता दुखकार, संवरते सुरपद है सार ॥३१

दोहा

व्रत धारी जे पुरुष है, अवर क्रिया-धर जेह ।
तजहु वस्तु जो हीण हैं, त्यो सुख लहो अछेह ॥३२

अथ वरनोडी खीचला कूरेडी फली हरी वर्णन

चौपाई

क्रियावान श्रावक है जेह, वस्तु इती नहि खेहैं तेह ।
राधै चून वाजरा तणो, और ज्वारि चावलकों भणो ॥३३
वरनोडी रु खीचला करै, कूरेडी फूलै हरि घरै ।
भाटैं शुद्र सुखावैं खाट, सीला वट वायौं सुनि राट ॥३४
इह विधि वस्तु नीपजै सोई, ताहि तजो व्रत धरि अव लोई ।
अरु ले जाइ रसोई मांहि, सेकै तलै क्रिया तस जाहिं ॥३५

अथ भड़भूंज्यां के चबैणों सिकावें ताका कथन

भड़भूंज्यो सेकै जो धान, तास क्रिया सुनिये मतिमान ।
राधा चावल देय सुखाय, तस चिवड़ा मुरमुरा वनाय ॥३६

गेहूँ वाजरा की घूघरी, राध मुरमुरा सेकै घरी ।
मका जवार उकालै जाण, फूला कर वेचै मन आण ॥३७
कर भूगडा रीर्क चणा, मूंग मोठ चौलालिक घणा ।
इत्यादिक नाजहि सिकवाय, विकै चवैणो सब जन खाय ॥३८
शूद्र तुरक भुजगा न्हालि, तिनके भाजन मे जल घालि ।
करै चवैणा ताजा जानि, सर्व खाय मन भ्रान्ति न आनि ॥३९
जो मन होय चवैणो परै, तो खइये इतनी विधि करै ।
निज घरतै लीजे जल नाज, तिनहि सिकावै व्रत धरि साज ॥४०
पीतल लोह चालणी माहि, छानि लेय वालू कडवाहि ।
इह किरिया नीकी लखि रीति खाहु चवैणो मन धर प्रीति ॥४१

अथ चौला की फली, कैर करेली सांगली आदि को कथन

चौल हरी चौला की फली, आवै गाव गाव ते चली ।
तिनको शूद्र सिजाय सुखाय, वेचे सो सगरे जन खाय ॥४२
जल-भाजन शूद्रन को दोप, वासी वटवोयो अघ कोप ।
वहु दिन राखे जिम उपजाय, तिनहि विवेकी कवहूँ न खाय ॥४३
कैर करेली अरु सागरी, शूद्र उकालै ते निज घरी ।
पड़ै कुंथवा वरपा काल, यह खैवो मति-हीनी चाल ॥४४
अंवहलि कैरी की जो करै, जतन थकी राखै निज धरै ।
जल वरसै अरु नाही मेह, तब लो जोग खायवो तेह ॥४५
वरपा काल माहि निरधार, उपजैं लट कुंथवा अपार ।
इन परि चौमासो जब जात, ताहि विवेकी कवहु न खात ॥४६
नई तिली तिल नीपजे जबै, फागुण लो खाइये सबै ।
सो मरजाद तेल परमाण, होली पीछै तजहु सुजान ॥४७
होली पछिली ह्वै जो तेल, तिनमे जीव-कलेवर-मेल ।
यातैं होली पहिलो गही, ले राखै श्रावक घर मही ॥४८
सो वरते कातिक लो तेल, तिन भवि सुनके लखिवो मेल ।
चरमतणी जो ह्वै ताखड़ी, वुधजन घर राखै नहिं घड़ी ॥४९
तामे तोलै चून रु नाज, चरम वस्तु है दोप समाज ।
कागद काठ वास अर धात, राखै किरियावन्त विख्यात ॥५०
सिंघाडा अति कोमल आहि, होली गये जीव उपजाहि ।
ताकी होय मिठाई जिती, खैवो जोग न भाखी तिती ॥५१
केऊ करिवि घूघरी खाय, केउक सीरो पुडी वनाय ।
होली पहिली तो सव भली, खैवो जोग कही मनरली ॥५२
पीछै उपजै जीव अपार, क्रिया दया पालक नर सार ।
तव इनको तो भीटै नाहि, कही धर्म साधै तिन खाहि ॥५३

दूध गिदौड़ी कै गूजरी, दोहै पीछै जाय वहु धरी ।
निज वासण मे धर ले जाहि, करै गिदौडी मावो ताहि ॥५४
दोष अधिक काचा पयतणो, ताको कथन कहालो भणो ।
अविवेकी समझै नहि ताहि, समझाये हम तिन ही आहि ॥५५
इतनी तो निजस्या लखि लेहु, मावो करता पयमे तेहु ।
पडै जीव उसमे लघु जाय, अरु फिर रात तणीका बात ॥५६
ताहू मे पुनि वरषा काल, पडै जीव तिहि निसि दर हाल ।
माँछर डास पतगा आदि, मावो इसो खात शुभवादि ॥५७
सदा पाप-दायक है सही, पाप-थकी दुरगति-दुख लही ।
लपट भख छूटै नहिं जदा, निसिको कियो न खइये कदा ॥५८
जो खैवो विनु रह्यो न जाय, तो पय जतन थकी घर ल्याय ।
मरयादा वीते नहि जास, क्रिया-सहित मावो करि तास ॥५९
जिह्वा-लपटता वशि थाय, तो ऐसी विधि करि कै खाय ।
कोऊ छलप करैगो एम, उपदेश्यो आरभ वहु केम ॥६०
वामे काचा पयको दोष, अरु त्रस जीव-कलेवर-कोप ।
याते जतन थकी जो करै, जतन साधि भाष्यो है सिरै ॥६१
जतन थकी किरिया हूँ पलै, जतन थकी अदया हूँ घटै ।
जतन थकी सधि है विधि धर्म, जतन मुख्य लखि श्रावक-कर्म ॥६२

शोध के घृत की मर्यादा

दोहा

मरयादा सव शोध की, कही मूल गुण-माहि ।
जिहि व्रत मे भोजन करै, धिरत शोध को खाहि ॥६३

छन्द चाल

घर मे तो निपजै नांही, विकलपता लखि मोल गहाही ।
तिह शोध वखाणै कूर, शुभ क्रिया न तिनके मूर ॥६४
वास्या लघु ग्रामावास, जल आदि क्रिया नहि तास ।
तिनके घर को जो घीव, धर भाजन मलिन अतीव ॥६५
ले आवै शहर मझार, वैचेउ लोभ विचार ।
ड्योढ़ा दुगुणा ले दाम, लखि लाभ खुशी ह्वै ताम ॥६६
तोलत परिहैं तहँ माखी, करतै काढै दे नाखी ।
जीवत मूई अहि जानै, तिहि जतन न कवहू ठानै ॥६७
परगांव तणी इह रीति, सुन शहर तणी विपरीति ।
वेचै दधि छाछ विनाणी, तिनके घरको घृत आणी ॥६८
खावत है जे मति-हीण, तसु सकल क्रिया व्रत क्षीण ।
निसि सो तिय दूध मगावै, तुरतहि नहि अगनि चढावै ॥६९

इह तें अघ उपजै भारी, पुनि तिह महि घृत बहु डारी।
दे जामण दही जमावै, दधि मथि कै घीव कढावै ॥७०
लूणी बहु वेला राखै, उपजौ अघ वाणी भाखै।
वेचे ले वहुत पईसा, पुनि पाप जिही नहिं दीसा ॥७१
जो घिरत शोध को मानै, व्रत मे जो खैचो ठानै।
दूषण ऐसो लखि ताम, जैसो घृत धरिये चाम ॥७२
सुनिये अव अघकर वात, जानत जन सकल विख्यात।
निरमाय लखे है माली, भो जग सुनि लेहु विचारी ॥७३
तिन पास मंगावे घीव, अरु शोध गिनै जे जीव।
तिनकी छुई जो वस्त, दोषीक गिणो जु समस्त ॥७४
आचार कहो शुभ भाय, तिनको जो वस्तु मिटाय।
आचरिये कवहूँ नाही, जिनवर भाष्यो श्रुत माही ॥७५
लघु ग्राम कोस दस वास, निज समधी तहा निवास।
किंकर भेजै तापाई, व्रत जोग घिरत मंगवाई ॥७६
जाता आता वहु जीव, विनसै मारगमे अतीव।
त्रस घात मगावत होई, सो शोध कहो किम जोई ॥७७
कोई प्रश्न करै इह जागै, श्रावक होते जे आगै।
घृत खाते अक कछु नाही, हम मन इह शका आही ॥७८
ताके समझावन लायक, भाखै अति ही सुखदायक।
श्रावक जु हुते व्रत धारी, तिन घृत विधि सुनि यह सारी ॥७९

चौपाई

जाके घर महिषी या गाय, पके ठाम तिन ही बधवाय।
सरद रहै न हिं ठाम मझार, वालू रेत तहा दे डार ॥८०
किंकर एक रहै तिन परै, सो तिन की इम रक्षा करै।
देय वुहारी साझ-सवार, उपजै नही जीव तिन ठार ॥८१
दोय-तीन दिन वीतें जवै, प्रासुक जलहिं न्हवावै तवै।
परनाली राखै तिह ठाहिं, वहै मूत्र तिनके ढिग नाहि ॥८२
वासन धर राखै तिहि तले, तामे परै मूत्र जा टले।
सूके ठाम नाखि है जाय, जहाँ सरद कवहूँ न रहाय ॥८३
गोवर तिनको ल्है नित सोय, आप गेह थापै नहि कोय।
औरनिको माग्यो न हिं देय, त्रस सिताव तामे उपजेय ॥८४
वालू रेत नाखी जा माहि, करडो करि सो देय सुखाहि।
चरवे को रोन[1] न खिदाय, जल पीवे निवाण नहिं जाय ॥८५

---

१ अरण्य जगल।

घरि बांधे राखै तिन सही, हरयो घास तिन नीरे नही ।
सूको घास करब खाखलो, पालो इत्यादिक जो भलो ॥८६
ले राखै इतनो घर मांहि, दोप-रहित नहिं जिय उपजाहिं ।
नीरे झाडि उपरि जो चीर, अरु विधि ते जो छांण्यो नीर ॥८७
पीवै वासन धातु-मझार, सरद न राखै माजे मार ।
इंधन कुंडि वाल तो जाय, रांधि काकडा खली जु मिलाय ॥८८
खीर चरमूं विरिया जेह, देव खवाय जतन ते तेह ।
स्यालै तापर जूठ डराय, जतन करै जिम जीव न थाय ॥८९

छन्द चाल

जव महिषी गाय दुहावै, जल तैं कर थर्नाहि धुवावैं ।
कपड़ौ चरई-मुख राखैं, दोहत पय तापर नाखैं ॥९०
ततकाल सु अगनि चढावै, लकड़ी वालिर औटावैं ।
सखरौ जामण जहँ होई, तहँ दधि करै नहि सोई ॥९१
पय करणे की जो ठाम, सीलौ करि है पय ताम ।
भाजन जु भरत का मांही, जामन दे वेग जमाही ॥९२
जामण की जु विधि सारी, भाखी गुण-मूल मझारी ।
वैसे ही जामण दीजै, वहै टालि न और गहीजै ॥९३
इह प्रात तणी विधि जाणूं, अव सांझ तणी सु वखानूं ।
सव किरिया जानो वाही, इह विवि सुध दही जमाही ॥९४
जांवणीय वरणे की जागैं, तहँ हाथ न सखरो लागैं ।
सो भी विधि कहहूँ वखाणी, सुणिज्यो सव भविजन प्राणी ॥९५
खिडकी इक जुदी रहाही, तिह धारि किवाड जड़ाही ।
ह्वै प्रात जवै दधि आनी, मथि है सो मेलि मथानी ॥९६
सो सगली किरिया भाखी, गोरस-विधि आगे आखी ।
लूण्यो निकलै ततकाल, औटावैं सो दरहाल ॥९७
वासण में छानि धराही, ह्वै खरच जितौ ढकवाही ।
कहां वरत, कहां सुद्ध भाय, घृत गृही सोधि को खाय ॥९८
ऐसो घृत लीवे वालो, अन्तराय सुनीति प्रतिपालो ।
यह कथन कियो सव सांच, यामें न अलीकी वाँच ॥९९
ऐसी विधि निपजैं नाही, गांवन तें हूँ न मंगाही ।
माखन लूणी वह राई, घृत खाय सु देय दताई ॥१०००
विधि वाही जेम सुल्यावैं, किरिया जुत ताहि जमावैं ।
दवि छांछ घिरत पय लूनी, विधि कही करिय न वि ऊनी ॥१
निज घर जो घृत निपजाही, व्रत धरि श्रावक सो खाही ।
कर छुवै न माली व्यास, हिंसा त्रस ह्वै नहि तास ॥२

प्राणी न परै जिह् माही, सो तो घृत सोधि कहाही।
घृत सो निज घर निपजइये, घृत धरि सो व्रतमें पइये ॥३
निज घर घृत विधि न मिलाही, व्रत धरि तब लूखौ खाही।
अरु घिरत सोधिको खावैं, व्रतमे बहु हरी मगावैं ॥४
इह सोधि न कहिये भाई, जामे करुणा न पलाही।
करुणा-जुत कारज नीको, सुखदाई भवि सब ही को ॥५

दोहा

घिरत सोधिका की सुविधि, कही यथारथ सार।
अच्छी जाणि गहीजिये, बुरी तजहु निरधार ॥६

चौपाई

अब कछु क्रिया-हीन अति जोर, प्रगटयो महा मिथ्यात अघोर।
श्रावक सो कबहूँ नहिं करै, आनमती हरषित विस्तरै ॥७
जैनधर्म कुल-केरे जीव, करे क्रिया जो हीण सदीव।
तिन के संचय अघ की जान, कहै तासकी चाल बखाण ॥८
तिहको तजैं विवेकी जीव, करवें ते भव भ्रमे अतीव।
अब सुनियो बुधिवंत विचार, क्रिया हीन वरणन विस्तार ॥९

इति सोधिका घृत-मर्यादा कथन सम्पूर्ण।

●

अथ मिथ्यामत कथन। दोहा

मिथ्यामति विपरीत अति, ढूंढा प्रकटा जेम। तिनि वरन सक्षेपते, कहो सुनौ हो नेम ॥१०

चौपाई

स्वामी भद्रबाहु मुनिराय, पचम श्रुतकेवलि सुखदाय।
मुनिवर अवर सहस चौबीस, चउ प्रकार सघ है गणईश ॥११
उज्जयनी मे जिनदत सार, ताके भद्रबाहु मुनि तार।
चारिया कौ पहुचै तहँ गणी, झूलत बालक बच इम भणी ॥१२
गच्छ-गच्छ विधि नही आहार, वारे वरष लगै निरधार।
अतराय मुनिवर मनि आन, पहुँचे सघ जहा वन थान ॥१३
स्वामी निमित लख्यी ततकाल, पडिहै बारा वरष दुकाल।
मुनिवर-धर्म सधै नबि सही, अब इहा रहनो जुगतौ नही ॥१४
कितेक मुनि दक्षिण को गये, कितेक उज्जैनी थिर रहे।
तहाँ काल पडियो अति घोर, मुनिवर क्रिया-भ्रष्ट ह्वै जोर ॥१५
मत श्वेतांबर थापियो जान, गही रीत उलटी जिन वान।
तिनको गच्छ बध्यो अधिकार, हुडाकार दोष निरधार ॥१६
तिन अति हीण चलन जो गह्यो, चरित जु भद्रबाहु मे कह्यो।
ता पीछे पनरासे साल, कितेक वरष गए इह चाल ॥१७

लुंकामत प्रगट्यो अति घोर, पाप रूप जाको नहिं ओर।
तिन ते ढूँढा मत थाप्यो, काल दोष गाढ़ो ह्वै वाढ्यो ॥१८

छन्द चाल

पापी नहिं प्रतिमा माने, ताकी अति निन्दा ठाने।
जिनगेह करन की वात, तिनको नहिं मूल सुहात ॥१९
जात्रा करवो न वखानैं, पूजा करिवो अवगानैं।
जिन-विम्ब प्रतिष्ठा भारी, करिवो नहिं कहै जगारी ॥२०
जिन भाष्यो तिम अनुसारी, रचिया मुनि ग्रन्थ विचारी।
तिनकौं निंदै अधिकाई, गौतम वच ए न कहाई ॥२१
ऐसे निरबुद्धी भापै, कलपित झूठे श्रुत आपै।
सवको विपरीत गहावै, निज षोटे मारग लावे ॥२२
जिय उत्पत्ति भेद न जाने, समकितहू कों न पिछाने।
गुरु देव शास्त्र नहिं ठीक, किरिया अति चलै अलीक ॥२३
निजको मानैं नहिं गुणथान, छट्ठो मुनि पद सरधान।
जामैं मुनि गुण नहिं एक, मिथ्या निज मति की टेक ॥२४
मुनि नगन रूप को धारै, चारित तेरह विधि पारै।
षटकाय दयाव्रत राखे, नित वचन सत्य जुत भाखै ॥२५
आदान अदत्तहि टारे, सीलांग भेद विधि पारे।
त्यागे परिग्रह चौवीस, गोपे तिहुँ गुपति मुनीस ॥२६
ईर्यापथ सोधत चालै, हित मित भाषाहि संभालै।
श्रावक घरि असन जु होई, विधि जोग जेम निपजोई ॥२७
भोजन के दोप छियाली, निपजावे श्रावक टाली।
चरिया को मुनिवर आही, श्रावक तिन ले पडिगाही ॥२८
मुनि अंतराय चालीस, ऊपर छह टालीज तीस।
पावे तो लेहि अहार, इम एषणा समिति विचार ॥२९
आदान निक्षेपण धारे, पंचम समिति विव पारे।
इम चारित्त तेरह भापे, जैसे जिन-वानी आपे ॥३०
गुण मूल अट्ठाइस धारी, उत्तर गुण लख असि चारी।
गिरि शिखर कंदरा थान, निरजन वरिय सुध्यान ॥३१
ग्रीषम गिरि सिर रवि-ताप, सिलाऊ परि ठाडे आप।
वरपा रितु तरु-तल ठाडे, उपसर्ग सहै अति गाडे ॥३२
हिम नदी तलाव नजीक, मुनि सहहि परीषह ठीक।
निज आतम सौं लव लागी, पर वस्तु सकल परित्यागी ॥३३
पूजक निंदक सम जावे, तृण कनक समान जु ताके।
इत्यादिक मुनि गुणधार कहतैं लहिये नहिं पार ॥३४

इनतें उलटी जे रीत, धारै ढूँढिया विपरीत । आहार जु सीलो वासी, रोटी राबडी सगरासी ॥३५
कांजी दुय तिय दिन केरी, बहु त्रस जीवनि की बैरी ।
तरकारी हरित अनेक, ले पापी धरि अविवेक ॥३६

आदो कंदो अर सूरण, मूला त्रस थावर पूरण । ए लेय अहार मझारी, बहु केम दया बिन पारी ॥३७
आथाणो त्रस जिसधाम, फासू गिनि लेहे ताम । फुनि काचो दूध महाई, बहु बार लगै रखवाई ॥३८
दुय घड़ी गए तिह माही, पचेंद्री जिय उपजाही ।
महिषी गौतणो-जु खीर, तैसे ह्वै जीव गहीर ॥३९

इह भेद मूढ़ नहिं जाने, अघ-वाल अघ न बखाने । पचेंद्री तामे थाई, सुलो फासु गणवाई ॥४०
जिय अन्नतणी दुय दाल, दधि छाछि माहि दे डाल ।
सो भोजन बिदल कहाही, खाये ते पाप बढाही ॥४१
अन्न दाल छाछि दधि जेह, मुख-लाल मिले तब तेह ।
उतरता गला मंझारी, पचेन्द्री जिय निरधारी ॥४२
उपजै तामाहे जानो, मन मे सशय नहिं आनो ।
सो खैहै ढूढ्यो पापी, करुणा तिन निश्चै कापी ॥४३
कब खादि अखादि विचारी, उठ्या समझे न गवारी ।
अघ उपजे वस्तु जु माही, भाष्यो मुनि लेहु तहाही ॥४४

ऐसो पापी मुख देखे, ह्वै पाप महा सुविशेखै । ऐसे कर अघ आचार, तिन माने मूढ गवार ॥४५
धोवण चावल हाडी को, तिन ले गिन फासू नीको ।
सीलै जल अन्न मिलाई, तामे बहु जीव उपजाई ॥४६
रवि उदय होत तिह बार, धरि धरि भटकै निरधार ।
जल ल्यावे फासू भाखै, तिह साझ लगे धरि राखै ॥४७
उपजै ता माहे जीव, घटिका दुइ माहि अतीव ।
सो बरतै पीवे पानी, करुणा न तहा ठहरानी ॥४८
घृत जल धरि तेल सुचाम, सो बहु जीवन को धाम ।
तिनते निपज्यो जु अहार, सो मास-दोष निरधार ॥४९

ऐसो दोष न मन आने, तिनको हो नरक पयाने । ढूढा अघकेरी मूरत, इन माने पापी धूरत ॥५०
झूठी को साच बखानै, उपदेश सु झूठो ठाणै । झूठो मारग जु गहावै, सो झूठ दोष को पावै ॥५१
शीलाग हजार अठारा, लागै तिन दोष अपारा ।
परिग्रह को ठीक न कोई, कपडा पात्रादिक होई ॥५२
ऐसो धरि भेष जु हीन, मानें तिन मूरख दीन ।
ग्यारा प्रतिमा प्रतिपालक, कोपीन कमण्डल धारक ॥५३
कोमल पीछे हैं जाके, श्रावक व्रत गिनिये ताके ।
परिग्रह तिल तुस सम होई, मुनिराज धरै जो कोई ॥५४
वह जाय निगोद मझारी, जिन वाणी एक उचारी ।
सो कपडा की कहा रीत, चौथो पात्र विपरीत ॥५५

ए भ्रमैं जगत्त के माही, दुख को नहिं अन्त गहाही ।
तिन कहैं महाव्रत धारी, ते पापी हीणाचारी ॥५६
इन माने ते ससार, भ्रमिहै न लहै कहुँ पार ।
मन वच तन गुपति न गौपै, पापी मुनि धरमहि लोपै ॥५७

पिरथी जिम प्रान लहाही, चालैं तिम भागे जाही ।
ईर्या समिति जु किम पाली, प्राणौ हिंसा किम टाली ॥५८
हित मित वच कवहूँ न भाखै, जिन मत मे उलटी आखैं ।
सम जिन भाषा न पलै है, अदया कवहूँ न टलै है ॥५९

किम एषण समिति सधै है, जिनके इम पाप वंधै है ।
जो दोष रहित आहार, नवि जानं वसु विध सार ॥६०
मुनि अन्तराय जे होई, तिन नाम न समझै कोई ।
कुल ऊँच नीच नहि जाणे, शूद्रन के असन जु आणे ॥६१

तंबोली जाट कलाल, गूजर अहीर वनपाल ।
खलरी रजपूत रु नाई, परजापति असन गहाई ॥६२
तेली दरजी अर खाती, छिपादिक जाति वहु भांती ।
मदिरा हू को जो पीवे, आमिष हु भखे सदीव ॥६३

भोजन मित्त भाजन केरो, ल्यावे अतिदोष घनेरो ।
तिन भीटो भोजन खैहै, ते मांस दोष को पैहै ॥६४
तो भोजन की कह वात, जाने सव जगत विख्यात ।
जिहं भाजन अशन कराही, आमिष तिह माझ धाराही ॥६५

जिन मारग एम कहाही, वासन जिह मांस धराही ।
सो शुद्ध न ह्वै चिरकाल, गहिहै सो भील चंडाल ॥६६
तिनके घर को जु आहार, पापी ल्यावे अविचार ।
अरु मुनिवर नाम धरावे, सो घोर पाप उपजावे ॥६७

ते नरक निगोद मझारी, भ्रमिहै ससार अपारी ।
अपने श्रावक तिन भनि हैं, कुल ऊँच नीच नवि गिनिहै ॥६८
तिनको कुछ एक आचार, कहिए विपरीत विचार ।
निजको मानै गुणथान, पचम श्रावक परधान ॥६९

दोहा

खत्री, ब्राह्मण, वैश्य, फुनि, अवर, पौण वहत्तीस । धरम गहै ढूंढा निको, अरु तिन नावे सीस ॥७०
ढूंढा तिन श्रावक गिने, आप साधु पद मान । छहों काय रक्षा सवनि, उपदेसे इह वान ॥७१
ढुढने दया छह काय की पलै नही तहकीक । जीव थान फासू गिनैं, वस्तु गहै तहकीक ॥७२
कथन कियो ऊपर सवै, लखहु विवेकी ताहि । ढुढन चलन ह्वै एक से, इहि मारग नहि आहि ॥७३
शुद्र करम करता जिके, निज-निज कुल अनुसार । पेट-भरन उद्यम सफल, करे दया किम धार ॥७४

चौपाई

गूजर, जाट, अहीर, किसान, खैती सीचे निर निरवान।
हलबाहै त्रस को ह्वै घात, कहु वह श्रावक पद किम पात ॥७५
पवे अहाव प्रजापति गेह, अगनि निरतर बालत तेह।
होत घात सब जीवनि तनी, तिनको कैसे श्रावक भनी ॥७६
अवर हीन कुल है अवतार, ढूढ्या मत चाले निरधार।
मदिरा पीवे आमिष भखे, धरम पलति तिनके किम अखे ॥७७
विण्या बिन बीधो जो नाज, घृत गुल लूण तेल बहु साज।
होय घात त्रस जीव अपार, तिनको श्रावक कहै गँवार ॥७८
हीन करम करि पेट जु भरे, तिनपे कहु करुणा किम परे।
जैसी जात हीन निज तणी, मानै आप साध पद भणी ॥७९
तैसे ही श्रावक तिन तणे, कुकरम पाप उपावे घणे।
ऐसे मत को साचो गिणे, ते पापी इम आगम भणे ॥८०

दोहा

साचे झूठे मत तणी, करिवि परीक्षा सार। साचो लखि हिरदय धरो, झूटो दीजे टार ॥८१

अथ श्री प्रतिमा जी की महिमा वर्णन

दोहा

श्री जिनवर प्रतिमा तणी, महिमा जो अतिसार।
सुन्यो जिनागम मे कथन, मति वरण्यो निरधार ॥८२

चौपाई

मिथ्यादृष्टी एक हजार, तिनकी जो महिमा निरधार।
एक मिथ्याती जैनाभास, सबही सरभर करै न तास ॥८३
जैनाभास सहस इक जोई, तिन सबही की प्रभुता होई।
सम्यक दृष्टी एक प्रमाण, तिसहि बराबर ते नहि जान ॥८४
सम्यग्दृष्टी गिनहु हजार, एक अणु-व्रत धारी सार।
महिमा गिनहु बराबर सही, इह जिन मारग माहे कही ॥८५
देशव्रती इक सहस सुजान, मुनि प्रमत्त गुणथान प्रमाण।
एक बराबर महिमा धार, आगे सुनहु कथन विस्तार ॥८६
मुनि प्रमत्तधर एक हजार, तिनको जो प्रभुत्व विस्तार।
इक सामान केवली सही, होय बरावर संशय नही ॥८७
ह्वै सामान्य केवली तेह, महिमा एक सहस्र की जेह।
समवसरन धारी जिन देव, तीर्थंकर इकसम गिणि एव ॥८८
परतखि समवसरण जुत होय, तीर्थंकर पद धारी सोय।
एक हजार प्रमाण वखान, एक प्रतिमा समानता ठान ॥८९

कोई प्रश्न करै इह जाण, तीर्थंकर इक सहस प्रमाण।
प्रतिमा एक बरावर कही, इह महिरहै छहरत नही ।।९०
ताके सम ज्ञावन को बैन, कहिये है अति हो सुखदैन।
त्यो प्रतिमा पूजन सरधान, अति गाढ़ौ राखो प्रतिमान ।।९१

छन्द चाल

जिन समवसरण जुत राजै, मूरत उत्कृष्ट सुछाजै।
निरखत उपजै वैराग, ह्वै शान्त चित्त अनुराग ।।९२
परतक्ष तिष्ट भगवान, समवादि सरन-जुत थान।
पेखत हुलास बढावै, भविजन हिरदय न समावै ।।९३
तिनकी वाणी सुनि जीव, तरिहै भव उदधि अतीव।
जिनवर जव मोक्ष लहाई, तब जिन प्रतिमा ठहराई ।।९४
निरखत प्रतिमा को ध्यान, बुधजन हिय उपजै ज्ञान।
तिनको निमित्त भविजीव, जग मे लहिहैं जु सदीव ।।९५
प्रतिमा आकृति लखि धीर, उपजे वैराग गहीर।
मन वीतरागता आनै, तप व्रत संयम को ठानै ।।९६
दरसन प्रतिमा निरधार, भविजन को नित उपगार।
जिन मारग धरम वढावै, महिमा नहि पार न पावे ।।९७
जे प्रतिमा दरशन करिहै, पूरव सचित अव हरिहै।
कहिये का अधिक बखान, दायक भविजन सिरथान ।।९८
ऐसी प्रतिमा जुत होई, भविजन निश्चै चित सोई।
मन वच क्रम धरिहै ध्यान, ज्यो ह्वै सव विधि कल्यान ।।९९
कोऊ पूछै फिर येह, कहु साखि ग्रन्थ की जेह।
तिनको उत्तर ये जानी, सुनियो तुम कहूँ वखानी ।।११००
साधर्मी द्विज सुखधाम, सहदेव नाम अभिराम।
पूरब दिशि सेती आयो, सो सागानेर कहायो ।।१
पढियो जो ग्रन्थ अनेक, जिन मत्त धरे चतुर विवेक।
गाथावध सततरि हजार, महाधवल ग्रन्थ अतिसार ।२
तिहकी टीका सुखदाई, लख साढा तीन कहाई।
ते श्लोक संस्कृत सारै, तिन कठ भलीविधि धारै ।।३
तिह कथन कियो सव पाही, महाधवल थकी मुकहाही।
ताकी लखि वा परतीत, पूछो जिनमत्त वहुरीत ।।४
जिहनी साकरी विधि सेती, आगम प्रमाण कहि तेती।
जैनी पडित जु वखानी, परतखि ए भवि प्रानी ।।५
प्रतिमा दरसन मम लोक-मधि अवर न दूजो थोक।
प्रतिमा पूजा जे कारक, ते होइ करम ते फारक ।।६

प्रतिमा की निन्दा करिहै. ते नरक निगोदे परि है।
प्रावर्त्तन पंच प्रकार, पूरण करिहै नहि पार ॥७
श्रावक मत जैन दिगम्बर, कुलधर्मं कह्यो जिम जिनवर।
मन वच क्रम ताहि गहै है, सुर ह्वै अनुक्रम शिव पैहै ॥८
पूजा जिन प्रतिमा कीजे, पात्रनि चहुँ दान जु दीजे।
तप शील भाव-जुत पारै, अरु कुगुरु कुदेवहि टारै ॥९
बिनु जैन अवर मतवारे, वातुल सम गनिए सारे।
गहलौ नर जिस तिम भाखै, कुमती जिम झूठी आखै ॥१०
श्रावक कुल जिहि अवतार, जिन धर्महि तजहि गंवार।
ढूढ्या मतको जौलैहै, ते नरक निगोद परै है ॥११
साचो झूठो न पिछाणै, अविवेक हिये मे आणे।
प्रतिमा-निंदक जे जीव, तिनको उपदेश गहीव ॥१२
ताके पोतै ससार, बाकी कुछ वार न पार।
चहुँ गति दुख विविध भरन्तो, रुलिहै बहु जोनि धरन्तो ॥१३
याते जे भविजन धीर, ढूढामत पाप गहीर।
छांडौ लखि अति दुखदाई, निहचै जिनराज दुहाई ॥१४
जिनमत हिरदय अवधारो, जप तप सयम व्रत पारो।
तातें सुख लहौ अपार, थामे कछु फेर न सार ॥१५

इति श्री प्रतिमाजी की वर्णन तथा ढूंढ्या को मत निषेधन संपूर्ण।

चौपाई

अब कछु क्रिया-हीन अति जोर, प्रगट्यो महा मिथ्यात अघोर।
श्रावक लां कबहूँ नहिं करै, आन मती हरषित विस्तरैं ॥१६
जैन धरम प्रतिपालक जीव, कर क्रिया जे हीन सदीव।
तिनके सम्बोधन को जान, कहौ क्रियाते हीन बखान ॥१७
तिनको तजै विवेकी जीव, कर तन भव भ्रमै अतीव।
अब सुनियो बुधिवन्त विचार, क्रियाहीन वरणन विस्तार ॥१८

अथ मिथ्यामत निषेध। चौपाई

भादव गए लगै आसोज, पडिवा दिवसतणी सुनि मौज।
लडकी बहुमिलि गोबर आनि, साझी माडै अति हित ठानि ॥१९
पहर आठ लौ राखै जाहि, फिर दूजे दिन माडै ताहि।
माडै दिन नव नव रीति, तेरसका दिन लौ धरि प्रीति ॥२०
चौदस अमावस दस दिन जाहिं, सांझी बडी जु नाम धराहिं।
मिलैं पाच दस प्रौढा नारी, माडै ताहि विचारि विचारी ॥२१
हाथ पाव मुख करि आकार, गोवर का गहना तनवार।
उपर चिरमी जल पोस लगाय, कौड़ी फूल लगावै जाय ॥२२

इम विपरीत करै अधिकाय, तास पापको कहैं बनाय।
खोड्यो बाभण साझी लेन, आयो भावै वनिता वैन ॥२३
राति जगावै गावै गीत, ऐसी महा रचै विपरीत।
करि गुलधाणी दे लाहणा, आवै सो राखै पर तणा ॥२४
सुदि पडिवा को ताहि उतारि, नदी ताल माहे दे डारि।
ऐसी प्रभुता देखौ जास, देव मान पूजत है तास ॥२५
अरु साझी किसकी है धिया, को षोड्यो द्विज कुण की तिया।
गोवर की माडै किम तिया, वरसा वरसी कहु समजिया ॥२६
परगट लखि निज रा इह रीति, माने ताहि धरै बहु प्रीति।
पापी भेद लहे तसु नाहि, गोवर सरद रहै जा मांहि ॥२७
घटिका दोय वीत है जवै, तामे त्रस उपजत हैं तवै।
तिनके पाप तणौ नहि पार, भव भव मे दुख को दातार ॥२८
महा मिथ्यात तणो जे गेह, नरक तणौ दायक है जेह।
छेदन भेदन तापन जहाँ, ताडन सूलारोहण तहा ॥२९
दुख भुगतै तह पंच प्रकार, इस मिथ्यात थकी निरधार।
जिन मत के धारी हैं जेह, सो मेरी विनती सुनि एह ॥३०
नही माडि मत पूजि लगार, इह ससार बढ़ावन हार।
आन मती पूजन मन लाय, तिनसौ कछु कहनो न वसाय ॥३१

सोरठा

दिन पनरे के माहि, मरण दिवस पित-मात को। श्रावक जे हरषांहि, ते जिन मारगतें विमुख ॥३२

छंद चाल

पित मात तृपत्ति के हेत, भोजन बहुजन को देत। कैसे तृपति ह्वैं, तेह जिन आगम भाख्यो एह ॥३३

मुए हुए वरष घनेरे, सुख दुख भुगतै भव केरे।
तहां ते वहुरि केम वह आवै, जिन मत मे इह न समावै ॥३४
सुत असन करैं पितु देखे, तृपति न ह्वै परतछ पेखै।
तौ आन जनम कहा वात, जानो ए भाव मिथ्यात ॥३५
दुय कोस थकी निज वाग, सीचैं चित धरि अनुराग।
रूख न वढ़वारी पावै, परभव किम तृपति लहावै ॥३६
तातैं जिनमत मे सार, ऐसो कह्यो न आचार।
इह घोर मिथ्यात मुजाणी, तजिए भवि उत्तम प्राणी ॥३७

आठे आसोज उजारी, अरु पूजै चेत दिहारी। करि कै घूघरी कमार, वांटै तमु घर घर वार ॥३८
गुड घिरत सुपारी रोक, नाल्ेर धरै दे ढोक। निज वहिन भुवा कौ देहै, धरि लोभ हिए वे लेहै ॥३९
लेने देने को पाप, मिथ्यात वढै सन्ताप। तातैं जैनी है जेह, पूजौ न चढ्यौ कछु लेह ॥४०

सतियन की राति जगावैं, पित्रनहूं को जु मनावैं।
बीजामण सोकि आगावैं, जागरण करैं हिन गावैं ॥४१

संजोडा अवर कंवारा. गोरणीय जिमावै सारा ।
तिनके करि तिलक लिलाट, पायनिदे ढोक निराट ॥४२
पैसादिक तिनको देई, वे हरषि हरषि चित लेई ।
इह किरिया अति विपरीति, छांडौ बुध जांणि अनीति ॥४३

अडिल्ल

बीजासण को कर बिझालरो डरि धरे, सो किउ घडत घडाल पातरी हिय परे ।
मूढ मान तिन पूजे घर लछमी जबै, उदै असाता भयै वेचि खाहै तबै ॥४४

दोहा

सकलाई तिन में इसी, अविवेकीन लखांहि । मुरभख मे बहु मानता, उर बख सो बिक जांहि ॥४५
खेत पालकी थापना, एम बनावे कूर । जिसा तिसा पाषाण परि, डारे तेल सिंदूर ॥४६

छन्द चाल

वैशाख मे घर के बारे, पूजे दे जात विचारे ।
तेल वटरुवा कला तेल, ऐसे पूजा विधि मेल ॥४७
दस बीस त्रिया धरि प्रीति, गावे जु गीत विपरीति ।
सेवे तिह माने हेव, सो जान मिथ्याती एव ॥४८
बहुते खेडा पुर गाम, इकसे न कही तसु नाम ।
ताते सकलाई माने, सुखदाता एम बखाने ॥४९
दीया सुत जो उपजाही, सुत बिन तिय कोनि रहांही ।
इह झूठ थापणो जांणी, तजिये भवि उत्तम प्राणी ॥५०
पाहण लघु धरे इक ठाही, पथवारी नाम कहाही ।
तिनको पूजत धरि नेह, कबहु न सुखदाता तेह ॥५१
मिथ्यात तणौ अधिकार, नरकादिक दुख दातार ।
जिन-भाषित परचित दीजै, खोटी लखि तुरत तजीजे ॥५२
आसौज है आठे स्वेत, घोटक पूजे धरि हेत ।
जिन राज एम बखानी, तिरयच है पूजे प्रानी ॥५३
सो पाप अधिक उपजावे, कहते कछु और न आवे ।
तातै जैनी जो होय, पसु पूजि न नरभव खोय ॥५४
दुसरा हाकादिन माही, लाडू पीहर ले जाही ।
इह रीति तजो भवि जीव, जिन-वच धरि हृदय सदीव ॥५५
जिन चैत्यन वन कें माही, पून्यो दिन सरद कराही ।
आगम मे कहुँ न बखानी, विपरीत तजौ तिह जानी ॥५६
मंगल तेरसि दिन न्हावैं, वसतर तन उजले ल्यावैं ।
आवे जब दिवस दिवाली, दीवा भरे तेल हवाली ॥५७

निज मन्दिर ऊपर धरि है, अति ही शोभा सो करि है।
तिन में वहु त्रस को घात, अघ घोर महा उतपात ।।५८
दीवा थाली में धरिकैं, मिल है तसु घर घर फिर कैं।
तिन में कछु नांहि वडाई, प्राणी मरिहैं अधिकाई ।।५९
पापी कछु भेद न जानें, मन मे उच्छव अति टानैं।
सो पापी महा दुख पावे, भव भामरि अन्त न आवे ।।६०
भरि तेल काकडा वाले, वालक हीडहि कर वाले।
घर-घर लीये सो डोले, वालक हीडहि वच वोले ।।६१
वो देय पईसा रोक, ढिग करे एकसा थोक।
मरयाद भटे ता माही, ताकी तो कहा चलाही ।।६२
वहु हीडमांहि त्रस जीव, जलि हैं नहि सख्या कीव।
इह पाप न मन में आवे, सुत लखि दम्पति सुख पावे ।।६३
ते पापी जानो जोर, पडिहै जो नरक अघोर।
भविजन जो निज हितदाई, किरिया इह हीण तजाई ।।६४
काती सुदि एकैं जानी, गोधन को गोवर आनी।
सांथ्यो निज वार करावें, गोर्धन तसु नाम धरावे ।।६५
जव सांझ वैल घर आवे, पूजै तिन अति हरषावे।
सांथ्यो निज पाय खुदावें, मिथ्यात महा उपजावे ।।६६
इन हीन क्रिया को धारी, जैहै सो नरक मंझारी।
पकवान दिवाली केरो, करिहैं धरि हरख घनेरो ।।६७
दुय चार पुत्र जे थाई, तिनको दे जुदी वनाई।
हांडीय भरे पकवान, पितु मात हरख चित आन ।।६८
पुत्रन सिर तिलक करावे, तिनपैं तो हाट पुजावें।
सिर नाय तवें दे धोक, किरिया इह अघ की कोक ।।६९
व्यापारी वही वणावै, पूठा चमड़ा का ल्यावै।
तिनको पूजत है जेह, लखि लोभ नही तसु एह ।।७०
तिथि चौथि महावदि मानी, व्रत पाप उदय को ठानी।
दिन मे नहि लेय अहार, निशि शशि ऊगे तिहि वार ।।७१
ले मेवो दूध मिठाई, देखों विपरीत वढ़ाई।
जे चौथ मास सुदि होई, करिहै जे विवेकहि खोई ।।७२
इम पाप थकी अधिकाई, दुरगति मे वहु भटकाई।
पदरह तिथि मे इह जानो, तसु कहि सकट की रानो ।।७३
पद देव मान करि पूजै, सो अति मूरखता हूजै।
जैनी जन को नहि काम, मिथ्यात महा दुख धाम ।।७४
सकरांति मकर जव आवे, तव दान देय हरषावे।
तिल घाणी मांहि भराई, द्विज जनकों देय लुटाई ।।७५

मूला का पिंड मँगावे, ब्राह्मण के घरहि खिनावै।
खीचड़ी बाँट हरसावे, गिन है हम पुन्य बढावै ॥७६
जहँ त्रस थावर ह्वै नाश, तहँ किम ह्वै शुभ परकाश।
अति घोर महा मिथ्यात्त, जैनी न करै ए बात ॥७७
फागुण वदि चौदस दिन को, बारह मासन मै है तिनको।
शिवरात तनो उपवास, कीए मिथ्या परकास ॥७८
होली जालै जिहि बारै, पूजै सब भाग निवारै।
जाको देखन नहिं जइये, कर जाप मौन ले रहिये ॥७९
पीछै बहु छार उडावे, जल ते खेले मन भावे।
छाण्या अणछाण्या की नही ठीक, लपट न गिने तहकोक ॥८०
करि चरम पोटली डोल, राखै मन करत किलोल।
यदवा तदवा मुख भाखे, लघु बृद्ध न शंका राखे ॥८१
जल नाखै आपस माही, नर तिय नही लाज गहाही।
न्हावण के दिन सब न्हावै, कपड़ा उजरे तन भावै ॥८२
सनबधी गेह जुहार, करिहै फिरिहै हित धार।
विपरीत लवण लखि एह, तामै कछु नहिं सदेह ॥८३
मिथ्यात तणी परि पाटी, क्रिया लागे जिन वाटी।
सो भव-भव की दुखदाई, मानो जिनराज दुहाई ॥८४

दोहा

चैत्र-सित आठै दिवस, जाय सीतला थान।
गीत विविध बादित्र जुत, पूजै मूढ अयान ॥८५
भाष्यो रोग मसूरिया, जिन श्रुत वैद्यक माँहि।
करनि काकरा एकठा, धरी थापना आहि ॥८६

सोरठा

लखौ बडाई एह, वाहन गदहो तासको।
लहै हीन पद जेह, जो लघु नर हि चढाइये ॥८७

दोहा

बालक याही रोग ते, मरै आव जिह छीन।
जाकी दीरघ आयु है, सो सारै नकि सीन ॥८८

सोरठा

प्रगट भई कलिकाल, इह मिथ्यात कि थापना। जे जैनी सुविशाल, याहि न मानै सर्वथा ॥८९
मेलै जे नर जाँहि, नही गीत सुनिकै खुसी। टका गाठि का खाहि, पाप उपावे अधिक वे ॥९०

गीताछन्द

जे चैत वदि-पडवा थकी गण-गौरि की पूजा सजै।
परभाति लड़की होय भेली गीत गावै मन रुचै ॥

मालीतणी-बाड़ी पहूँचरु फूल दो बहलै करी ।
हरषाय मन उछाह करती आसह ते निज घरी ॥९१
पूजे तहाँ तिह दिवस सो ले फूल दोय चढ़ाय के ।
पाछे बनावे हेत धरि गण-गोरि गोरि अणायके ॥
ईश्वर महेसुर करे मूरति आँखि कोंडी की करे ।
देखो बड़ाई नजर इमहो चित्र की थापना धरे ॥९२

नाराच छन्द

वणाय तीज कों गुणो चढाई पूजि कै सही । बडी तियारु कन्यकाइ कंत व्रत्त को गही ॥
करें मिठान्न भोजना अनेक हर्ष मानि है । सुहाग भाव वर्त्त नाम जोषिता बखानि है ॥९३

गीता छन्द

गणगोरि की पूजा किए जो, आयु, पति की विस्तरै ।
तो लखहु परतछि आयु छोटी प्राय मानव क्यो मरै ॥
कन्या कुँवारीपणा ही ते तास पूजा आ चहै ।
वारह वरष की होय विधवा क्यो न तसुकी रक्षा करै ॥९४
साहिब तणी जा करै, सेवा दिवसि निशि मन लायकै ।
धिक्कार तसु साहब पणो, कछु दिना सेव कराय कै ।
दायक सुहागनि विरद को गहि, सकति तसु अति हीनता ।
सेवा करती वाल विधवा होय लहि पद-हीनता ॥९५

तोटक छन्द

सिगरी नर नारि इहै दर से, धरि मूरखता फिरि कै पर से ।
कछु सिद्ध लहैं नहिं तास थकी, तिहतै तजिए तनु पूजन की ॥९६

गीता छन्द

भूपन वसन पहिराय, वहुविधि अधिक तिय मिलिकै गही ।
लें जाइ पुर से निकसि वाहर पहुचि है जल तोर ही ॥
गावे विनोद अनेक विनरी नीर मे तसु डारही ।
अति हरष धरती हरप करती आय गेह सिधारही ॥९७

दोहा

इह प्रभुता सह देखि कै, गौरी ईश महेश । वाकू जल मे खेयते, डर न कियो लव-लेश ॥९८
रहत सकत तिह देखिये, करिविथापना मूढ । महा मिथ्याती जान तिन, धारे दोप अगूढ ॥९९

सोरठा

इत पूजे फल येह, कुगति अधिक फल भोगवे । यामे नहिं सन्देह, जैनी को इह योग्य नहिं ॥१२००
दुर्लभ नर भव पाय, जैन धरम आचार जुत । ताको चित जिनराय, पूज करै गण-गोरिको ॥१

सो मिथ्यात को मूल, त्रिविधि तजौ तिन सुखद लखि।
होय धरम अनुकूल, ताते भव-भव सुख लहै ॥२

सवैया ३१

चांबड़ा बराही खेतपाल दुरगा भवानी पंथवार देव ईंट थापना बखानिये।
सत्तनामी नाभिग ललितदास पथी आदि नाना परकार भव प्रगट जानिये ॥
झाझाकलवानी डाल भेव दीप वो मुपा की मत्र ते उतारै भूत डाकिनी प्रमानिये।
एती विपरीत घोर थापना मिथ्यात्त जोर अहो जैनी इन्हे कष्ट आए हू न मानिये ॥३

सोरठा

पीपर तुरसी जान, एकेंद्री परजाय प्रति। इन्हे देव पद ठान, पूजै मिथ्या दृष्टि जे ॥४

सवैया

ख्वाजे मीर साह अजमेर जाकी जाति बोलै पुत्र के गले मे बाँधी घालै चाम पाटकी।
मेरे सुत जीवै नाहिं याते तुम पाय अहो सात वर्ष भए नीत पायनते वाटकी ॥
जलालदीय पंच पीर और बड़ी परिरतै जाय करे चूरिमो कुबुद्धि जिनराटकी।
फातिहा पढ़वावै जिंदा दरवेश को जिमावै इह कलिकाल रीति मिथ्यात के थाट की ॥५

दोहा

तुरक आन के देव को, मानत नाहिं लमार। हिन्दू जैनी मूढमती, सेवै बारम्बार ॥६
या समान मिथ्यात जग, और नही है कोय। दुखदायक लखि त्यागिहै, महाविवेकी सोय ॥७

सवैया ३१

भादो बदि नौमी दिन गारिको बनाय घोडो तापरि चढावै चहुँ वाण गोगो नाम ही।
बावड़ी मे मेलि कुम्भकारि तिय कर धर लोभते पुजावत्त फिरै हैं धाम धाम ही ॥
ताको सुखदाई जानि मूढमती मानि ठानि देत दान पाय नमि सेवे गाम गाम ही।
मिथ्यात्व की रीति एह करै निरबुद्धी जेह कुगति लहै है जेह वाका दुख पावही ॥८
भादो बदि बारस दिवस पूजै बछ गाय राति को भिजोवे नाज लाहण के काम ही।
निकसै अंकूरा तिनि माहिं जे निगोदरासि हरष अधिक बाँटै ठाम ठामही।
जीवनि को नाश होय मानत तिवहार लोय कैसे सुख पावे सोय पशू पूजे नाम ही।
महा अविचारी मिथ्याबुद्धीचारी नर नारी ऐसी क्रिया करे श्वभ्र लहै दुख धाम ही ॥९

दोहा

हलद माहिं रग सूत को, गाज लेत है तेह। सुणै कहानी खोलते रोट करत है तेह ॥१०
धोक देय पूजै तिसे, कहि सुखदाई एह। नाम ठाम नहिं देवकौ, भव भव मे दुख देह ॥११

चाल छन्द

नारी जो गर्भ धरे है, वालक परसूत करे है।
जनमे वालक जिहि वार, तसु औतिह लेत उतार ॥१२

केउन के ऐसी रीति, गावै त्रिय मन धर प्रीति ।
गाडैं चित्त अति हरषाई, ते ओलि हाट ले जाई ॥१३
केऊ रोटी के माही, गाडै के देत नखाही ।
तामाही जीव अपार, गाढे सो हीणाचार ॥१४
ते अदया के अधिकारी, पावें दुरगति दुख भारी ।
जिनके करुना मन मांही, ताको दै दूरि नखाही ॥१५
दस दिन को ह्वै जव बाल, सूरज पूजै तिह काल ।
लागै तसु दोष मिथ्यात, जिन मारग ए नही घात ॥१६
तीन्है जब न्हवण करै है, जलथानिक पूजन जैहै ।
जल जीवन को भंडार, एकेंद्री त्रस अधिकार ॥१७
जैनी जिनके घर माही, सकाचित मांहि धराही ।
जलथानक जाय न दूजे, घरमांहि परहंडी पूजे ॥१८
ताको है द्रोष महंत, तत्तक्षिण तजिए गुणवंत ।
दिन तीस तणो ह्वै बाल, जिन मारग मे इह चाल ॥१९
वसु दरब मनोहर लेई, चैत्याले गमन करेई ।
ते बालक अक मझारी, तिह साथ चलै बहु नारी ॥२०
गावैं जिन गुण हरषंती, इय मंदिर जिन दरसती ।
भगवंत चरण सिरनाय, पुनि नृत्य रचै वहु भाय ॥२१
बाजित्र विविधि के बाजे, जामौं घन अंबर गाजे ।
जिन भाव हरखि धरि सेवै, तसु जनम सफलता लेवै ॥२२
श्रुत गुरु पूजै वहु भाई, जिनकी युति मै मन लाई ।
भाषै अति उत्तम बैन, सव जन मन को सुख दैन ॥२३

दोहा

जिन श्रुत गुरु पूजा पढ़ै, आवें अपने गेह । यथा सकति अरथी जनहि, दान हरषतें देय ॥२४
सनमानें परिवार को, यथायोग्य परवान । जैनी इह विध पुत्र को, जनम महोछो ठाम ॥२५
आठ वरष लो पुत्र जो, करत पाप विस्तार । तास दोप पितु मातु को, ह्वै है फेर न सार ॥२६
याते सुनि निज कार मैं, राखै जे मति मान । ताहि पढावै लाभ लखि, ह्वै तव विद्यावान ॥२७

चाल छन्द

अव व्याह करन की वार, किरिया जे ह्वै अविचार ।
प्रथमहि जव लगन लिखावै, सज्जन दस बोस वुलावै ॥२८
चावल ह्वै जिन कर माही, पूजा सव लगन कराही ।
करि तिलक विदा तिन कीजे, मिथ्यात महा सु गिनीजे ॥२९
मांडे फिरि भीत विनायक, कहि सिद्ध सकल सुखदायक ।
नर देह वदन तिरयंच, सो तो सिधि देय न रंच ॥३०

तातें जैनी जो होइ, ए जैन विनायक सोई ।
साजी अवटावे जेह, पापड़ करण को तेह ॥३१
जल तीन चार दिन ताईं, राखै नही सक धराही ।
वसु पहर गये तिन माहीं, सनमूर्छन जे उपजाही ॥३२
मांग्यो घर घर पहुचावे, बहुतो सो पाप बढावै । वसुजाम मांहि वह नीर, बरतै जे बुद्ध गहीर ॥३३
उपरांति दोष अति होई, मरयाद तजो मति कोई ।
अरु वडी करण कै ताईं, भिजवावै दालि अथाहीं ॥३४
सो दालि धोय सब नाखे, बहुविरिया लगन न राखे ।
घटिका दुय मै उस माही, सन्मूर्च्छन जीव उपजाही ॥३५
याते भविजन मन लावे, तस तुरतहि ताहि सुकावे ।
धोवण को पानी जेह, नाखे बहु जतन करेय ॥३६
बसु सरद रहै नही जातै, बीखरिवानांसै यातै ।
साझै जो दालि पिसावै, बासन भरि राति रखावै ॥३७
उपसावै अधिक खटावै, उपजै त्रस वारन पावै ।
फुनि लूण मसाला डारै, करतै मसलै बहुबारै ॥३८
इम जीवनि नास करती, मनमाँही हरख धरती ।
निज परतिय वहुत्त बुलावे, तिनपै ते बड़ी दिबावे ॥३९
सो पाप अनेक उपावे, कहते कछु ओर न पावै ।
करुणा जाके मनि आवे, सो इह विधि बड़ी निपावे ॥४०
उनहै जलदालि भिजोवे, प्रासुक जल तै फिर धोवे ।
किरिया को दोष न लावे, सो दिन मे कलौ करावे ॥४१
ततकाल वडी तसु देह, उपजावे पुण्य न छेह ।
स्याणो जन अवर अयाणो, दुहु व्याह करे इह जाणो ॥४२
किरिया में भेद अपार, इक सुख दे इक दुखकार ।
जाके करुणा मनमाँही, अविवेक न क्रिया कराही ॥४३
छाणा कौ गाडो आने, अविवेक की पूजा ठाने ।
लकड़ी को थम बनाव, ताको तिय पूजण आवे ॥४४
गावंती गीत घनेरा, जो जो जिह थानक केरा ।
माटी पूजै करि टीकी, कारण लखि सबही को ॥४५
सकडी राखी दिन ऐ है, तिर्यंचाकि पूजणो जै है ।
तिसि को डोरे बँधवावै, परियण सज्जन मिलि आवै ॥४६
तह पूज बिनायक करिके, रोली पूजै चित धरिके ।
अरु बार बार बिनायक, पूजे जानो सुखदायक ॥४७
इन आदि क्रिया विपरीति, करिहै मूरख धरि प्रीति ।
मिथ्यात भेद नहिं जाने, अघ को उर मन नहि आने ॥४८

अघ ते ह्वै नरक बसेरा, वोर न आवे दुख केरा ।
यातै सुनि वुध जन एह, मिथ्यात क्रिया तजि देह ॥४९
तातै भव भव सुख पावै, आगम जिन राज बतावे ।
यातें सुख वाछक जीव, आज्ञा जिन पालि सदीव ॥५०
करि है जे क्रिया विवाह, सिव मत माफिक यह राह ।
मिथ्यात दोष इह जाते, जैनी को वरजी यातैं ॥५१
पूरव दिस ज्योतिस जैन, कछुयक उद्योत सुख दैन ।
रहियो दिन माफिक व्याह, जैनी धरि करे उछाह ॥५२
तामें मिथ्या नहि दोष, सिवमत विधि हूँ नही पोष ।
जैनी श्रावक जो पंडित, जिनमत आचार जु मंडित ॥५३
ते व्याह करावै आई, मन में शका न धराई ।
तिन हूँ स्यो आप समाही, सुत बेटी सगपन थाही ॥५४
प्रथमहि जो व्याह सँचैहै, जिन मदिर पूज रचै है ।
वाजित्र अनेक बजावें, युवती जन मंगल गावे ॥५५
कन्या वर कों ले जाँही, जिन चरणनि नमन कराही ।
जिन पूजि रुआवे गेहै, पीछे विधि एम करे है ॥५६
सज्जन परिवार संतोष, ऊषित भूषित जन पोषे ।
जिन मत विधि पाठ प्रमाणै, अपराजित मत्र वषाणै ॥५७
वर कन्या दोहुँ कर जोड, फेर कराय धरी कोड ।
समधीजन असन करावे, दुहूँ तरफहि हरष वढावे ॥५८
देवो निज सकति प्रमाण, कन्या वर भूषण दान ।
इह विधि जे व्याह करांही, मिथ्यात न दोष लगाही ॥५९
गुरु देव धरम परतीत, धारो जन की इह रीति ।
तिनको जस है जगमाही, दूषण मिथ्यात तजाही ॥६०

दोहा

श्री हणवन्त कुमार की, मूढ़नि धरि चित प्रीत्ति । गांम गांम की थापना, महाघोर विपरीत ॥६१

चाल छन्द

मूरत्ति पाषण घड़ावै, तसु ऐसे अङ्ग वनावे ।
मानुष कैसे कर पाय, वन्दर को सो मुख थाय ॥६२
लंवी पूछ जु अधिकाई, मूरति इस भाँति रचाई ।
कहु इक क्षत्री जु चुणावै, कहु मढि रचिकै पधरावै ॥६३
कहुँ चौड़े निकटाहि गाम, कहुँ कांकड़ दूरहि धाम ।
तिनतेल लगावे पूर, चरचै कौं वीरू सिन्दूर ॥६४॥
कहिहै तमुखेडा देव, वहु जन तिह पूजै एव ।
पापी जन भेद न जानैं, जिह आगे अदया ठानै ॥६५

चौपाई

जात्री दूर दूर का घणा, आवै पायनि में तिह तणा ।
जीव बद्ध करि तास चढाय, निहचैते नरकहि जाय ॥६६
कामदेव हणमन्त कुमार, विद्याधर कुल मे अवतार ।
तीर्थंकर बिनु जग नर जिते, तिह-सम रूपवान नहिं तिते ॥६७
बन्दरवंशी खगपति जान, धुजा माहि कपि चिह्न बखान ।
माता अजनी जाकी जानी, पवनजय तसु पिता बखानी ॥६८
दादी खगपति नृप प्रह्लाद, जैनधर्म धरि चित अह्लाद ।
पालै देव गुरु श्रुत ठीक, महाशीलधारी तहकीक ॥६९
हणुकुमार दीक्षा धरि सार, मोक्ष गये सुख लहै अपार ।
ताको भाषै कपि को रूप, ते पापी पडिहैं भवकूप ॥७०
आनमती सो कछु न बसाय, जैनी जन सो कहु समझाय ।
जिनमारग मै भाष्यो यथा, तिह अनुसार चलौ सरवथा ॥७१
गगा नदी महा सिरदार, जाको जल पवित्र अधिकार ।
जिन पषाल पूजा तिह थाकी, करिये जिन आगम मे बकी ॥७२
जैनी श्रावक नाम धराय, हाड रु लावे तिह पितु माय ।
धन्य जनम मानै जग आप, गंगा घालै माय रू बाप ॥७३
आनमती परशसा करे, तिन वच सुनि चित हरषहि धरे ।
मूढ़ धरम अघ भेद न लहैं, वातुल-सम जिम तिम सरदहै ॥७४
पदमद्रह हिमवन ऊपरी, ताइहते गगा नीकरी ।
विकल त्रस जल मे नही होय, बहुदिन रहै न उपजै वोय ॥७५
जिस पर आय तजै ततकाल, और ठाम उपजै दरहाल ।
हाड रु लाए गगा माहिं, कैसे ताकी गत्ति पलटाहि ॥७६
जैनी जन तिन शिक्षा एह, जैन विरुद्ध कीजे है तेह ।
ते करिये नही परम सुजान, तिम उत्तम गति लहै पयाण ॥७७

अथ जनम मरण की क्रिया को कथन

दोहा

मरण समय कीजै क्रिया, आगमते विपरीत ।
पोषक मिथ्यादृष्टि की, कहूँ सुनहुँ तिन रीत ॥७८

चौपाई

पूरी आयु करवि जे मरे, मेल्हि सनहती ए विधि करे ।
चून पिण्ड का तीन कराय, सो ताके कर पास धराय ॥७९
भ्रात पुत्र पोता की वहू, धरि नालेष्ट धोक दे सहू ।
पान गुलाल कफन पर भरै, एम क्रिया करि ले नीसरै ॥८०

दग्ध क्रिया पाछे परिवार, पानी देय तबै तिह बार।
दिन तीजो सो तीयो करे, भात सरा इम ताके धरे ॥८१
चाँदी सात तवा परिडारि, चन्दन टिपकी दे नर नारि।
पानी दे पत्थर खटकाय, जिन दर्शन करिकै घर आय ॥८२
सब परिजन जीमत तिहि बार, वांवा करते गास निकार।
साझ लगे तिहि ढार्कारि खाय, गाय वछाक देय खुवाय ॥८३
जिह थानक मूवो जन होय, लींपै ठाम करै सुख होय।
फेरे ता ऊपरि के रडी, ए मिथ्यात क्रिया अति बड़ी ॥८४
ए सब क्रिया जैन मत माँहि, निंद सकल भाषै सक नाहि।
अवर क्रिया जे खाटी होय, सकल त्यागिए बुध जन सोय ॥८५
जब जिय निज तजि कै परजाय, उपजै दूजी गति मै जाय।
इक दुय तिन समये के माहि, लेइ आहार तहां सक नाहि ॥८६
गति माफिक पर्यापति धरै, अन्त मुहूरत पूरो करै।
जिह गति ही मे मगन रहाय, पिछलो भव कुण याद कराय ॥८७
पिंड मेल्हि तिहि कारण लोय, धोक दिये जै लै नही सोय।
पाणी देवे की जो कहै, मूए को कबहु न पहौचिहै ॥८८
भात सराई काकै हेत, वह तो आय आहार न लेत।
जाकै निमित्त काढ़िये गास, पहुचै वहै यहै मन आस ॥८९
सो जाणै मूरख की वाणि, मूवो गास लेय नहिं आणि।
गउ के रडी गास ही खाहि, अरे मूढ किम पहुँचै ताहि ॥९०
मृत्यकभूमि फिरै के रडी, सो मिथ्यात भूल अति वडी।
उलटी किरिया ते ह्वै पाप, जो दुरगति दुख लहै संताप ॥९१
यातै जैन धरम प्रति पाल, जे शुभ क्रिया अझूठी चाल।
तिनहिं भूलि मति करियो कोय, जो आगम हिरदै दृढ होय ॥९२
पूरी आयु करिवि जिय मरै, ता पीछे जैनी इम करे।
घड़ी दोय में भूमि मसान, ले पहुँचे परिजन सब जान ॥९३
पीछे तास कलेवर माहिं, त्रस अनेक उपजै सक नाहिं।
मही जीव बिन लखि जिह थान, सूको प्रासुक इंधण आन ॥९४
दगध करिवि आवै निज गेह, उसनोदक स्नान करेह।
वासर तीन वीति है जवै, कछु इक सोक मिटण को तवै ॥९५
स्नान करिवि आवे जिन-गेह, दर्शन करि निज घर पहुँचेह।
निज कुल के मानुष जे थाय, ताके घर तै असन लहाय ॥९६
दिन द्वादश वीते है जबे, जिन मन्दिर इम करिहै तवे।
अष्ट द्रव्य तैं पूज रचाय, गीत नृत्य वाजित्र वजाय ॥९७
शक्ति जोग उपकरण कराय, चंदोवादिक तासु चढाय।
करिवि महोछव इह विधि सार, पात्र दान दे हरष अपार ॥९८

परिजन पुरजन न्योति जिमाय, यथाशक्ति इम शोक मिटाय।
अरु परिजण सूतक की बात, सूतक विधि मे कही विख्यात ।।९९
ता अनुसार करे भवि जीव, हीण क्रिया को तजो सदीव।
इह विधि जैनी क्रिया करेय, अवर कुक्रिया सबहि तजेय ।।१३००

अथ सूतक-विधि लिख्यते। उक्तं च मूलाचार उपरि भाषा

त्रोटक छन्द

इम सूतक देव जिनिन्द कहै, उतपत्ति विनास वि भेद लहै।
जन मे दस बासर को गनिए, मरिहै जब बारह को भनिए ।।१
कुल मे दिन पच लगी कहिये, जिन पूजन द्रव्य चढे नहि ये।
परसूत भई जिह गेह मही, वह गाम भलो दिन तीस नही ।।२

चौपाई

चेरी महिषी घोड़ी गाय, ए घर मे परसूतिज थाय।
इनको सूतक इक दिन होय, घर बारे सूतक नहि कोय ।।३
महिषी क्षीर पक्ष इक गए, गाय दूध दिन दस गत भये।
छेली आठ दिवस परमाण, पाछे पय सबको सुध जाण ।।४
जनम तणो सूतक इह होय, मरण तणौ सुनिये अब लोय।
दिन बारह इह सूतक ठानि, पीढी तीनि लगै इक जानि ।।५
चौथी साखि दिवस दस आय, पचम पीढी षट दिन जाय।
षष्ठी साखि चार दिन कहे, साख सातमी तिहु दिन रहे ।।६
अष्टम साखि अहो निसि सोग, नवमी जामहि दोय नियोग।
दसमी हीन मात्रही जाणि, सूतक गोत्रनि गहे बखाणि ।।७
करि संन्यास मरे जो कोय, अथवा रण मे जूझै सोय।
देशातर मे छोडैं प्रान, बालक तीस दिवस लो जान ।।८
एक दिवस इनको ह्वै सोग, आगे अवर सुनो भवि लोग।
पीढो बालक दासी दास, अरु पुत्री सूतक सम भास ।।९
दिवस तीन लो कह्यो बखान, इसकी मरयादा मे जान।
बनिता गरभ पतन जो होय, जितना मास तणी थिति सोय ।।१०
जितने दिन को सूतक सही, पीछे स्नान शुद्धता लही।
पति का मोह थकी तिय जरे, अथवा अपघातक जु करे ।।११
अरु निज परि मरि है जो कोय, इन तिनहूँ की हत्या होय।
पखवारा सूतक ता तणो, आगे अवर विशेष जो भणो ।।१२
जाके घर के असन रु नीर, खाय न पीवै बुद्ध गहीर।
अरु श्री जिन चैत्यालय मही, द्रव्य न चढै रु आवै नही ।।१३
बीति जाय जब ही छह मास, जिन पूजा उच्छव परकास।
जामै पंच तासु के गेह, जाति माहि तब आवै जेह ।।१४

मरयादा ऐसी को छांड, और भांति करवा नहिं मांड।
जो जिन आगम भाखी रीत, सो करिए नित मन धर प्रीत ॥१५

कुंडलिया

सूतक क्षत्री गेह पंच वासर कह्यो. ब्राह्मण गेह मझारि दिवस दस ही लह्यो।
अहो रात्रि दस दोय वैश्य घर जाणियै, सब सूद्रनि के सूतक पाप बखानिये ॥१६
ऋतुवंती तिय प्रथम दिवस चंडालणी. ब्रह्मघातिका दिवस दूसरा में भणी।
त्रितिय दिवस के यांहि निदिसम रजकणी,
वासर चोथे स्नान क्रियासों सुध भणी ॥१७
जाके घर में नारि अधिक है दुष्टणी, जाकै किरिया हीण सदा पूरब भणी।
व्यभिचारणि पर-पुरुष रमण मति है सदा,
ताके घर को सूतक निकसै नहिं कदा ॥१८

सोरठा

को कवि कहै बनाय, ताके अवगुण को कथन।
प्रायश्चित न समाय, जिहि दिन दिन खोटी क्रिया ॥१९

कुंडलिया

अरु जाकै घर त्रिया दया व्रत पालनी, सत्य वचन मुख कहै अदत्तहिं टालिनी।
ब्रह्मचर्य को धरै सती सब जन कहै, पतिवरता पति भक्ति रूप नित ही रहै ॥२०
जिनवर की सो पूज करै नित भाव सों, पात्रनि को दे दान महा उच्छाह सो।
सूतक पातक ताके घर नहिं पाइये, प्रायश्चित तिय तिहि कों केम बताइये ॥२१

दोहा

इह सूतक वरनन कियो, मूलाचार प्रमान।
तिह अनुसार जु चालिहैं, ता सम और न जान ॥२२

सोरठा

भाषा कीनी सार, जो मत संशय ऊपजै।
देखो मूलाचार, मन संशयो भाजै सही ॥२३

इति सूतक विधि

अथ तमाखू भांग निषेध वर्णनम्

चाल छन्द

सुनियै बुध जन कलिकाल, प्रगटी हीणी दोय चाल।
इक प्रथम तमाखू जानो. दूजी विजियाहि बखानो ॥२४
मुनिलेहु तमाखु दोष, अदया कारण अघ कोष।
निपजन की विधि है जैसे, परगट भाषत हौं तैसें ॥२५

तसु हरित तोडि कै पान, साजी जलतै छिडकांन ।
गदहा को मूत्र जु नाखै, बाधिरु जुडाघरि राखै ॥२६
दिन बहुत सरदता जामै, त्रस जीव ऊपजै तामै ।
तिनकी अदया है भूरि, करुणा परि है नहिं मूरि ॥२७
पिरथी मे आगि डराही, तिनिके जिय नास लहाही ।
धूवा मुखसेती निकसै, तबवाय जीव बहु बिनसै ॥२८
थावर की कौन चलावै, त्रस जीव मरण बहु पावै ।
दुरगन्ध रहै मुख मांही, कारे कर ह्वै अधिकाही ॥२९
उत्तम जन ढिग नहिं आवै, निंदा सब ठाम लहावै ।
दुरगतिहिं दिखावे बाट, सुरगति कौ जाणि कपाट ॥३०
अतिरोग बढावे श्वास, ऐसै नरकी का आस ।
दोषीक जानि करि तजिए, जिन आज्ञा हिरदय भजिए ॥३१
उपवास करै दे दान, किरिया पालै धरि मान ।
पीवै है तमाखू जेह, ताके निरफल ह्वै एह ॥३२
अघ-तरु सिंचन जल-धार, शुभ पादप-हनन कुठार ।
वहु जनकी झूटि घनेरी, दायक गत्ति नरकहि केरी ॥३३
इह काम न बुधजन लायक, ततक्षिण तजिये दुखदायक ।
के सूंघे कैंऊ खेहै, तेऊ दूषण को लैहैं ॥३४

दोहा

भांग कसूँभो खात ही, तुरत होत वै रोस ।
काम बढ़ावन अघ करन, श्री जिनवर पद सोस ॥३५
अतीचार मदिरा तणो, लागै फेर न सार ।
जग मे अपजस विस्तरे, नरक लहै निरधार ॥३६
लखहु विवेकी दोष इह, तजहु तुरत दुखधाम
षट मत में निन्दित महा, हनै अरथ शुभ काम ॥३७

मरहटा छन्द

इह जगमाही अति विचराही क्रिया मिथ्यात जु केरी ।
अदया को कारण शुभगति-वारण भव-भटकावन फेरी ॥
करिहै अविवेकी ह्वै अति टेकी तजिकै नेकी सार ।
धरि मन चित आनै अघही जानै कौन वखानै पार ॥३८
तामै रमि रहिया ग्रह ग्रह गहिया तिय वच सहिया तेह ।
मन मे उर आनै कहै सु वखानै वचन वखानै जेह ॥
नरपद जिन पायो वृथा गमायो पाप उपायो भूरि ।
अस मन मे रमिहै कुगुरुन नमि है भव-भव भ्रमिहै कूर ॥३९

किरिया लखि ऐसी भाषी तैसी तजिय वैसी वीर।
ताते सुख पावे अघ नसि जावे जो मन आवे धीर॥
जिनभाषित कीजै निज रस पीजे कुगति है दीजै नीर।
भव भ्रमणहि छाडो सकतिह माडो उतरौ भवदधि तीर॥४०

अथ ग्रहशांति जोतिष वर्णन लिख्यते

चौपाई

जोतिस चक्रतणी सुनि वात, जम्बूद्वीप माँहि विख्यात।
दोय चन्द सूरिज दो कहे, जैनी जिन आगम सरदहे॥४१
इक रवि भरत उदै जब होय, दूजो ऐरावति मे जोय।
दुहुनि विदेह माँहि निसि जाणि, जोतिस चक्र फिरे इहवाणि॥४२
भरत अरु ऐरावत्ति निसि जवै, दुहुन विदेह दुहू रवि तवै।
इक पूरब विदेह रवि जान, अपर विदेह दूसरो मान॥४३
फिरते रवि शशि को इह भाय, आदि अन्त थिरता नहि थाय।
एक चन्द्रमा को परिवार, आगम भाष्यो पच प्रकार॥४४
शशि रवि ग्रह नक्षत्र जाणिये, पचम सहु तारा ठाणिए।
तिनको गिनती इह विधि कही, एक चन्द्रमा इक रवि सही॥४५
ग्रह अठ्यासी अवर नक्षत्र, भाषै अट्ठाईस विचित्र।
छासठ सहसरु नव सय सही, ऊपरि पचहत्तरिको गही॥४६

अडिल्ल छन्द

पंच अंक इन ऊपर चौदह सुनि हिये, अक भये उगणीस सकल भेले किये।
छासठ सहसरु नव सय पचहत्तर भणे, कोड़ा कोड़ी तारा इतने गण गणे॥४७

चौपाई

एक चन्द्रमा को परिवार, तैसो दूजा को विस्तार।
मेरुतणी परदिक्षणा देई, थिरता एक निमिष ना लेई॥४८
जिन आगममें इह तहकीक, आनमतीकै सो नहि ठीक।
जिन मत जोतिष विन्छित्ति भई, अट्ठासी ग्रह भेद न लई॥४९

दोहा

प्रगट्यो शिवमत जोर जब, पंडित निजवुधि धार।
ग्रन्थ कियो जोतिष तणो, तिम फेल्यो विस्तार॥५०
आदित्त सोम रु भूमि-सुत, बुध गुरु शुक्र सुजान।
राहु केतु शनि ए सकल, नव ग्रह कहे वखान॥५१
चौथो अष्टम वारहौ, अरु घातीक वनाय।
साडे साती शनि कहै, दान देहु समथाय॥५२

चालछन्द

तंदुल रूपो सित वास, रवि शशि को दान प्रकास ।
रातो कपडो गोधूम, तांबो गुलद्यौ सुत भूम ।।५३
बुध केतु दुहूँ इकसेही, मूगादि कर्ह्यो इत देही ।
गुरुज वसन द्यौ हेम, अरु दालि वनन करि प्रेम ।।५४
जिम कहे शुक्र को दान, तिमही दे मूढ अयान ।
शनि राहु श्याम भणि लोह, तिल तेल उडद तद्योह ।।५५
हस्ती अरु घोटक श्याम, जुत श्याम विलरथ नाम ।
इत्यादिक दान बखानै, ग्रह शान्ति निमित मन आनै ।।५६
नवग्रह सुरपद के धारी, तिनके नहिं कवल अहारी ।
किह काज नाज गुल दैहै, सुर किम हि तृपतिता लैहै ।।५७
हाथी घोड़ा असवारी, तिनि निमित देह उर धारी ।
वन के विमान अतिसार, सुवरण नग जडित्त अपार ।।५८
भूपरि कछु पाय न चालै, किह कारण दानहि झालै ।
ताते ए दान अनीति, शिवमत भाषै विपरीति ।।५९
बालक जनमे तिय कोई, मूला असलेखा होई ।
दिन सात बीस परभाणै, वनिता नहिं स्नान जु ठानै ।।६०
पति पहिरै वसन मलीन, बालक निज स्वाद नवीन ।
सिर दाढी केस न ल्यावे, स्नानहुँ करिवो नहिं भावै ।।६१
दिन ह्वै सब जाय वितीत, किरिया बहु रचै अनीति ।
द्विज को निज गेह बुलावे, वह मूला शाति करावे ।।६२
तरु जाति बीस पर सात, तिनके जु मगावे पात ।
इतने ही कूवा जानी, तिनको जु मगावे पानी ।।६३
इतने ही छाहि जु केरा, सो फूस करै तस भेरा ।
अरु सताईस कर टूक, सीधा इतने ही अचूक ।।६४
दक्षिणा एती जु मगावे, सामग्री होम अनावै ।
करि अगिनि बाल अगियारी, घृत आदिक वस्तु जु सारी ।।६५
होमे करि वेद उचारे, इह मूल शाति निरधारे ।
पाछे फिर एम कराई, वह फूस जो देय जलाई ।।६६
बालक पग तेल जु माही, परियण को देहि बुलाई ।
सबहीने बालक कै पाय, कहि ढोल चोह सिरनाय ।।६७
सब मुख वच एम कहावे, हमते तू बड़ो कहावे ।
ऐसी विधि शिवमत्त रीति, जैनी करिहै धरि प्रीति ।।६८
धरम न अर्थ भेद लहाही, किम कहिए तिन शठ पाही ।
ते अघ उपजावे भारी, तिनके शुभ नही लगारी ।।६९

गुरुदेव शासतर प्रीति, घरिहै जे मन घरि प्रीति।
तें ऐसी क्रिया न मडै, अघ-कर लखि तुरतहि छंडै ॥७०
सतवीस नक्षत्र जु सारे, बालक ह्वै सकल मझारे।
जाके शुभ पूरव सार, सो भुगतै विभव अपार ॥७१
जाके अघ ह्वै प्राचीन, सोइ यहै दलिद्री हीन।
ए दान महादुख दाई, दुरगति केरे अधिकाई ॥७२
मिथ्यात महा उपजावे, दर्शन सिव-मूल नसावे।
निज हित बाछक जे प्रानी, ए खोटे दान वखानी ॥७३
जिनमारग भाष्यौ एह, विधि उदै आय फल देह।
तैसो भुगते इह जीव, अधिको ओछो न गहीव ॥७४
जाके निश्चय मन माही, विकलप कबहू न कराही।
मन माहि विचारै एह, अपनो लहनो विधि लेह ॥७५

दोहा

निमित तास चित्त पूजसी, अधिका जे द्रव्य लाय।
कोटि जनम करतो रहो, ज्यों को त्यों ही थाय ॥७६
ग्रह की शांति निमित जो, विकलप छूटै नाहि।
भद्रबाहु कृत श्लोक मै, कहो जेम करवाहि ॥७७

अडिल्ल

नमसकार कीरति न जगत गुरु पद लही,
सद गुरु मुखतै कथन सुण्यो जो होहि सही।
लोक सकल सुख निमित्त कह्यो शुभ वैन को,
नवग्रह शातिक वर्णन सुनिये चैनको ॥७८

नाराचछन्द

जिनेद्र देव पासेव खेचरीय लाय है, निमित्त तासु पूजि जैन अष्ट द्रव्य लाय है।
सुनीर गध तदुलै प्रसून चारु नेवज, सुदीप धूप औ फलं अनर्घ सिद्धदं भजं ॥७९

चालछन्द

सूरज क्रूर जव थाय, पदमप्रभ पूजै पाय।
श्री चंद्रप्रभु पूजा तैं, सिद्ध दोप न लागै ताते ॥८०
जिन वासुपूज्य पद पूजत्त, भाजै मगल दुख धूजत।
वुध क्रूर पण जव थाय, वसु जिन पूजै मन लाय ॥८१

अडिल्ल

विमल अनन्त सुधर्म शान्ति जिन जानिए, कुन्थु अरह नमि वर्धमान मन आनिए।
आठ जिनेसुर चरण सेव मन लाय है, बुद्धतणो जो दोष तुरत नसि जाय है ॥८२

रिषभ, अजित, सभव, अभिनन्दन वदिए, सुमति, सुपारस, शीतल मन आनदिए।
श्री श्रेयास जिनंद पाय पूजत सही, विसपत्ति दोष नसाय यही आगम कही ।।८३
सुबुधनाथ पद पूजित शुक्र नसाय है, मुनिसुव्रत को नमत दोष शनि जाय है।
नेमनाथ पद वदत राहु रहै नही, मल्लि रु पारस भजत केतु भजिहै सही ।।८४
जनम लगन के समै कूर ग्रह जो परै, अथवा गोचर माहि अशुभ जे अनुसरै।
तिनि तिनि ग्रह कै काजि पूजि जिनकी कही, जाप करै जिन नाम लिए दुष ह्वै नही ।।८५
नवग्रह सातिह काज जिनेश्वर सो मणी, घडो होय सिरनाय करै सो थुत्ति घणी।
वार एक सो आठ जाप तिनको जपै, ग्रह नक्षत्र की वात कर्म बहुविधि खपै ।।८६
भद्रबाहु इम कही तासु ऊपरि भणी, जो पूरब विद्यानुवाद श्रुति ते मणी।
इह नवग्रह शान्ति बखाणी जैन मै, करिवि श्लोक अनुसार किसनसिंध पै नमै ।।८७
आन धरम के माहि उपाय इम कहत हैं, विपरीत बुद्धि उपाय न मारग लहत है।
चंडारनि के दान दियाँ ह्वै शुद्धता, कल्प्यो एम विपरीत ठाणि मति मुग्धता ।।८८
चद दोय दोय रवि दोय जिनागम मे कहै, मेरु सुदरसन गिरिद सदा फिर लेत है।
शशि बिमान तल राहु एक योजन वहै, रवि कै नीचे केतु एम भमतो रहै ।।८९
पखि अधियारे माहि कला शशि की सही, एक दबावत्ति जाय अमावस लो कही।
शुकल पक्ष इक कला उघरती है, पूरणमासी दिन शशि निरमल थाय है ।।९०
नित्यहि ग्रह को मिलन इहा होय न सबै, पूज्यू विन विपरीति राहु उलटै जावै।
देवे शशि जब दान ग्रहण जब ठान ही, जिन मत में सो दान कबहूँ न बखानही ।।९१
रवि शशि चारयो तणौ ग्रहण चतु जानियो, ऐरावत्त अरु भरत माहि परमानियो।
छठै महीने अतर पडे आकाश मे, फेरि चाल कूं लहै दबावै तास मे ।।९२
तिह विमान की छाया अवर न मानिए, जिन मारग के सूत्रनि एक बखानिए।
भरत माहिं एक ऐरावत मे भी सही, इक ऐरावत्त माहि भरत तिहुँही लही ।।९३
भरत्त माहि ऐरावत चहूँ मे ना कही, ऐरावत्त हे च्यारि भरत पै ए नही।
दोय दोय दुहुँ थान होय तो नहिं मनै, इह ग्रहण की रीत अनादि थकी बने ।।९४

उक्त च गाथा त्रैलोक्यसारे नेमिचन्द-सिद्धान्ति-कृते।

राहु अरिट्ठविमाणं किंचूणा किं पि जोयणं अधोगंता।
छम्मासे पव्वन्ते चन्द रवि छादयदि कमेण ।।९५

चालछन्द

ससि राहु केतु रवि जाण, आछादह है जु विमान।
विपरीत चाल षट् मास, पावत है जत्र आकास ।।९६
चारयो सुर पद के धार, तिह के कछु नहिं व्यापार।
देणो लेहणो को करि है, फिरि है जोजन अतर है ।।९७
चहूँ को मिलिवो नही कवही, निज थानकि साहिव सवही।
औरनि की दीयो दान, लहैणी नही उतरे आन ।।९८
शशि राहु चाल इक बारी, शशि वढे घटै निरधारी।
षटमास विना लहि दावे, रवि को नहि केतु दवावे ।।९९

दोहा

एह कथन सुनि भविक जन, करि चित में निरधार ।
कथित आन मत दान जे, तजहु न लावौ बार ॥१४००
पाप बढावन दुःखकरन, भव भटकावन हार ।
जास हृदय सत्त जैन दृढ, त्यागै जानि असार ॥१

इति नवग्रह शान्ति विधिः ।

अथ निज तन संबंधी क्रिया कथन

चौपाई

निज तन सबधी जे क्रिया, करहु भव्य तामे दे हिया ।
शयन थकी जब उठिये सवार, प्रथमहि पढै मन्त्र नवकार ॥२
प्रासुक जल भाजन कर-माहि, त्रस-भूषित जो भूमि तजाहि ।
वृद्धि नीति को जैहै जबै, अवर वसन तन पहरै तबै ॥३
नजरि निहारि निहारि करत, जीव-दया मन माहि धरत ।
होत निहार पछै जल लेइ, वामां करतै शौच करेइ ॥४
फिरि माटी वामा कर माहि, वार तीन ले धोवै ताहि ।
अर तहतें आवै घर करी, वस्त्रादिक सपरस परिहरी ॥५
कर धोवण को ईंटा खोह, लेह तदा पद मर्दित सोह ।
बालू अरु भसमी करि धारि, हाथ धोइ नागरि नर-नारि ॥६
वांवो हाथ फेरि तिहुबार, धोवै जुदो गारि करि धार ।
हाथ दाहिणो हूँ तिहु बार, धोवै जुदो वहै परकार ॥७
माटी ले दुहु हाथ मिलाय, धोवै तीन बार मन लाय ।
पच्छिम दिशि मुख करिकै सोइ, दातुण करिय विवेकी जोइ ॥८
स्नान करन जल थोडो नाखि, कीजे इह जिन आगम साखि ।
करुणा कर मन माहि विचारि, कारिज करिए करुणा धारि ॥९
प्रथमहि महि देखिए नैन, जहँ त्रस जीव न लहै अचैन ।
रहै नही सरदी वहु वार, स्नान जहाँ करिहै वुध धार ॥१०
पूरव दिसि सन्मुख मुख करै, उजरे वसन उत्तर दिसि धरे ।
जीमत वार धोवती धार, अवर सकल ही वसन उतारि ॥११
सिर डाढी सव राखै जवै, स्नान करै किरिया जुत तवै ।
लोकाचार उठै किहि तणै, तवहू स्नान करत ही वर्णै ॥१२
तिय सेवै पीछें इह जाणि, परम विवेकी स्नानहि ठाणि ।
शयन जुदी सेज्या परि करै, इम निति ही किरिया अनुसरै ॥१३
. राति सुपन मै मदन द्रवाय, धातु विपै को कारण पाय ।
कपड़े दूरि डारि निरवार, जल तैं स्नान करै तिहि वार ॥१४

निसि सोवन को सेज्या-थान, पलग करै दक्षिण सिरहान।
अरु पश्चिम दिसहू सिर करै, उठत दुहु दिसि निज रिजु परै ॥१५
पूरव अरु उत्तर दुहु जाणि, उत्तम उठिए हरषहि ठाणि।
इह विधि क्रिया अहो निसि करै, सो किरिया विधि को अनुसरै ॥१६

इति तन-सबधी क्रिया।

अथ जाप्य पूजा को विधि लिख्यते

चौपाई

जाप-करण पूजा की बार, जो भाषो किरिया निरधार।
ताको वरणन भवि सुन लेह, श्लोकनि मे वरणी है जेह ॥१७
पूरब दिसि मुख करि बुधिवान, जाप करै मन वच तन जानि।
जो पूरब कदाचिटरिजाय, उत्तर समुख करि चितलाय ॥१८
दक्षिण पश्चिम दुहु दिसि जथा, जाप-करन वरजी सरवथा।
तीन सास-उसास मझारि, जाप करै नवकार विचारि ॥१९
प्रथम जाप अक्षर पैतीस, दूजी सोलह वरण बत्तीस।
तृतीय अक छह अरहत सिद्ध, अ सि आ उ सा तुरी परसिद्ध ॥२०
पंच वरण च्यारि अरहंत, षष्ठम दुय जपि सिद्ध महत।
वरण एक जोवो ऊंकार, जाप सताईस जपिए सार ॥ २१
कही द्रव्यसग्रह मे एह, सात जाप लखि तजि सदेह।
और जाप गुरु-मुख सुनि वाणि, तेऊ जपिए निज हित जानि ॥२२
मेरु विना मणिया सौ आठ, जाप तणा जिन मत इह पाठ।
स्फटिक मणि अरु मोती माल, सुवरण रूपो सुरग प्रवाल ॥ २३
जीवा पोतारे सम जाणि, कमल-गटा अरु सूत वखान।
ए नौ भाँत्ति जाप के भेद, भाव-सहित जपि तजि मन खेद ॥ २४

दोहा

दिसि विशेष तिनिको कह्यौ, जिन मदिर विनु थान।
चैत्यालय मे जाप करि, सन्मुख श्री भगवान् ॥ २५

चौपाई

पूजा निमित्त स्नान आचरै, सो पूरब दिसि को मुख करै।
धौत वस्त्र पहिरै तनि तवै, उत्तर दिसि मुख करिहै जवै ॥ २६

उक्तं च श्लोक

स्नानं पूर्वामुखी भूप, प्रतीच्यां दन्त-धावनम्।
उदीच्यां श्वेतवस्त्राणि, पूजा पूर्वोत्तरामुखी ॥२७

चौपाई

पूरव उत्तर दिसि सुखकार, पूजक पुरुष करै सुख सार।
जिन प्रतिमा पूरव जो होइ, पूजक उत्तर दिसि को जोइ ॥२८
जो उत्तर प्रतिमा मुख ठाणि, तो पूरव मुख सेवक ठाणि।
श्री जिन चैत गेह मैं एम, करै भविक पूजा धरि येम ॥२९
निज मदिर मे प्रतिमाधाम, करै तास विधि सुनि अभिराम।
घर मांहे पौलि प्रवेश करत, वाम भाग दिसि स्वयं महत ॥३०
मदिर उपलेखणकी मही, ऊँचो हाथ जोड़ कर सही।
जिन प्रतिमा पदरावन गेह, परम विचित्र करै धरि नेह ॥३१
प्रतिमा मुख पूरव दिसि करै, अथवा उत्तर दिसि मुख धरै।
पूजक तिलक रचै नव जाणि, सो सुनि बुधजन कहूँ बखान ॥३२
सीस सिखादिक करिए एह, दूजो तिलक ललाट करेह।
कठ तीसरो चौथो हिए, कानि पांचमो ही जानिए ॥३३
छठो भुजा कूखि सातवो, अष्टम हाथि नाभि परि नवो।
एह तिलक नव ठामि वनाय, अरु गहनो तरु विविध बनाय ॥३४
मुकुट सीस परि धारै सोय, कंठ जनेउ पहिरै सोय।
भुज बाजूहि विराजत करै, कुडल कानह ककण धरै ॥३५
कटि-सूत्र रु कटि-मेखल धरै, क्षुद्र घटिका सवदहि करै।
रतन जडित सुवरण मय जाणि, दस अंगुलनि मुद्रिका ठाणि ॥३६
पाय साकला घुंघुरु धरै, मधुर शब्द बाजें मन हरै।
भूषण भूषित करिवि शरीर, पूजा आरम्भै वर वीर ॥३७

पद्धड़ी छन्द

पूर्वादिक पूजा जो करेइ, वसु दरव मनोहर करि धरेइ।
मध्याह्न पूज समए सु एह, मनु हरण कुसुम बहु पेखि देह ॥३८
अपराह्न भविक जन करिह एव, दीपहि चढाय बहु धूप खेव।
इहि विधि पूजा करि तीन काल, शुभ कंठ उचारिय जयह माल ॥३९
जिन वाम अगि धरि धूप दाह, खेवै सुगंध सुभ अगर ताह।
अरहत दक्षिणा दिसि जु एह, अति ही मनोज्ञ दीपक धरेहु ॥४०
जप ध्यान धरै अति मन लगाय, जिन दक्षिण दिसि मौन लाइ।
प्रतिमा वदन मन वचन काय, करि दक्षिण भुज दिसि सीस नाय ॥४१
इह भाँति करिय पूजा प्रवीण, उपजै बहु पुन्य रु पाप क्षीण।
पूजा माहे नहि जोगि दर्व, तिनि नाम वखानैं सुनहु सर्व ॥४२

द्रुत विलंबित छन्द

प्रथम ही पृथ्वी परि जो धर्यो, अरु कदा करते खिसि के पर्यो।
जुगल पायनि लागि गयो जदा, दरवसे जिन-पूजन ना वदा ॥४३

करिन तैं फिरियो सिर ऊपरैं, वसन हीण मलीन नही धरैं।
कटि तलै परसै जय अंग ही, दरवसे जिन पूजन लौ गही ॥४४
बहु जना करतैं कर संचर्स्यो, मनज दुष्टनि भीटि करैं धर्यो।
त्रसन दुखित दर्व सवै तजौ, भगति तैं जिन पूज सदा सजौ ॥४५

दोहा

असन पहरि भोजन करै, सो जिन पूजा माहि।
तनु धारे अघ ऊपजै, यामै सशय नाहि ॥४६

कुंडलिया छन्द

कबहु सधिही वसन तै, भगति वत तन होइ।
मन वचन तन निहचै इहै, पूजा करै न सोइ॥
पूजा करै न सोइ, दगध फटियौ है जातै।
पहरयो अवर नितणौ, कटिहि वधियो पुनि तातैं॥
करी वृद्ध लघु नीति, धारि सेई तिय जबही।
करहि नाहि भवि सेव, वसन सधिततै कबही ॥४७

चौपाई

जो भविजन जिन पूजा रचै, प्रतिमा परसि पखालहिं सचै।
मौन सहित मुख कपडो करै, विनय विवेक हरष चित धरै ॥४८
पूजा की विधि ऊपर कही, करिवै पुण्य ऊपजै सही।
नर को करवो पूजा जथा, आगम मे भाषी सरवथा ॥४९
जिन पूजा वनिता जो करै, सो ऐसी विधि को अनुसरै।
प्रतिमा-भीटण नाही जोग, ऐसे कहे सयाणै लोग ॥५०
स्नान क्रिया करिकै थिर होइ, धौत वसन पहरै तनि सोइ।
बिना कचुकी सो नहिं रहै, पूजा करै जिनागम कहै ॥५१
बड़ी साखि मैना सुन्दरी, कुष्ट व्याधि पति-तनुकी हरी।
लै गधोदक सीची देह, सुवरण वरण भयो गुण-गेह ॥५२
अनतमती उर्विल्या जाणि, रेवतीय चेलना बखानि।
मदनसुदरी आदिक घणी, तिन कीनी पूजा जिन-तणी ॥५३
लिंग नपु सक धारी जेह, जिनवर पूजा करिहै तेह।
प्रतिमा-परसण कौ निरधार, ग्र थनि मैं सुणि लेहु विचार ॥५४
नर वनिता रु नपु सक तीन, पूजा-करण कही विधि लीन।
अव जिनिकौ पूजा सरवथा, करण जोगि भाषी नहि जथा ॥५५
औढेरो काणो भणि अध, फूलोधूधि-जाति चखि वध।
प्रतिमा-अवयव सूझै नही, जाकौ पूजा करन न कही ॥५६
नासा कान कटी अगुरी, हुई अगनि दाझे वाकुरी।
षट् अगुलिया कर अरुपाय, पूजा करणी जोगि न थाय ॥५७

खोडो दुऊ पायन पांगलौ, कुवज गू गौ वचन तोतलौ ।
जाकै मेद गाठि तनि घणी, ताकौं पूजा करत न वणी ॥५८
काछ दाद पुनि कोड़ी होइ, दाग-सुपेद सरीरहि जोइ ।
मंडल फोड़ा पाव अदीठ, अर जाकी वाकी ह्वै पीठि ॥५९
गोसो वधै आंत नीकलै, ताकौ पूजा विधि नहि पलै ।
होइ भगंदर कानि न सुर्णै, सून्य पिंड गहलो वच सुर्णै ॥६०
खयनी ऊर्द्धस्वास ह्वै जास, सरै नासिका श्लेपम तास ।
महा सुस्त चाल्यौ नहि जाय, पूजा तिनहि जोग नहि थाय ॥६१
द्यूत विसन जाकै अधिकार, अर आमिष-लंपट चडार ।
सुरा-पान तैं कवहु न हटै, सो पापी पूजा नहि थटै ॥६२
वेश्या रमहै लगनि लगाय, अवर अहेडा सौं न अघाय ।
चोरी करै रमै पर-नारि, पूजा जोगि नही हिय धारि ॥६३

दोहा

इत्यादिक पापी जिके, तिनकौ नरक नजीक ।
वह पूजा कैसे करै, परी कुगति की लीक ॥६४
जो जिन पूजक पुरुष है, ते दुरगति नहि जाय ।
तिनकी मूरति सवनि कों, लागै अति सुखदाय ॥६५

चालछन्द

जिन पूजा तै ह्वै इंद्र, ताको सेवै सुर वृंद ।
अरु चक्री पद को पावै, पट खंडहि आणि फिरावै ॥६६
धरणेंदन्र है पद जीको, स्वामी दश भुवनपती को ।
हरि प्रति हरि पदई थई, जलभद्र मदन मुसकाय ॥६७
पूजा फल को नाहि पार, अनुक्रम हो तीर्थंकर सार ।
पदवी पावै सिव जाइ, किसनेस नमैं सिर नाइ ॥६८

छप्पय छन्द

दोष अठारह रहित्त तीस चउ अतिसय मडित,
प्रातिहार्य युत आठ चतुष्टय च्यारि अखंडित ।
समवशरण विभवादिरूढ त्रिभुवन पति नायक,
भविजन कमल प्रकास करन दिनकर सुखदायक ।
देवाधिदेव अरह्रंत मुझ भगति-तर्णौं भव-भय हरौ,
जयवंत सदा तिहुँ लोक मे सकल संघ मंगल करौ ॥६९
अठाईस गुण मूल लाख चौरासी उत्तर धरैं,
करैं तप घोर सुद्ध आतम अनुभौ परैं ।
ग्रीपम पावस सीत सहै बाईस परीसहि,
भवि भावहि शिवपंथ ज्ञान द्रग चरण गसीरहि ।

निज तिरहिं भविन तारहिं सदा इहै विरद तिन पै खरौ,
ऐसे मुनीश जयवत जग सकल सघ मंगल करौ ।।७०
तीर्थंकर मुख थकी दिव्य ध्वनि तै जिनवाणी,
स्याद्वादमय खिरी सप्त-भगी सुखदानी ।
ताकौ लहि परसाद गए शिवथानक मुनिवर,
अज हौ याहि सहाय पाप तिरिहै भवि धरि उर ।
तसु रचिय देव गणधरनि जो द्वादशांग विधि श्रुतधरी,
भारती जगत जयवंत निति सकल सघ मंगल करी ।।७१

अथ श्री चैत्यालयजी में ए चौरासी काम कीजे तो आसादना लागै तिस कौ कथन प्रत्येक होजैछै

दोहा

श्री जिन श्रुत गुरु को नमों, त्रिविधि शुद्धता ठानि ।
चौरासी आसादना, कहू प्रत्येक बखान ।।७२
श्री जिन चैत्यालय विषै, क्रिया हीण है जेह ।
कीयै पाप अति ऊपजै, ते सुणि भवि जिन देह ।।७३

चालछन्द

मुखतै खखार निकारै, हास्यादि केलि विसतारै ।
पुनि विविध कला जु बणावै, पात्र्यादिक नृत्य करावै ।।७४
अरु कलह करै रिसधारी, खैहै तबोल सुपारी ।
जल पीवै कुरला डारै, पखा तै पवन हिडारै ।।७५
गारी वच हीण उचरिहै, मल मूत्र वावनहि सरिहैं ।
कर पद धोवै अरु न्हावै, सिर डाढी कच उतरावै ।।७६
कर पगके नख ही लिवावै, कारी तै रुधिर कढावै ।
औषध वणवावै खांही, नाख पसेव उतरांही ।।७७
तनु व्रण की तुचा उतरावै, कर वमन कफादिक डारै ।
दातिण पुनि सिलक कराही, हालै दतन उपराही ।।७८
बाधै चौपद तनधार, पुनि करिहै जहाँ आहार ।
आँखन के गीडहि डारै, कर पग नख मैलि उतारै ।।७९
जह कंठ कान सिर जानी, नासा कौ मैल डरानी ।
जो वस्तु शरीर की थाय, बाँटै निज थानक जाय ।।८०
मित्रादिक समधी कोऊ, मिलि जाहि जिनालय दोऊ ।
ठंडै मिलि भेटवि देही, पुनि हरष चित्त धरि लेई ।।८१
परधान जु भूपति केरे, वय गुरु धनवान घनेरे ।
आए उठि करि सन मानौ, इह दोष वडौ इक जानौ ।।८२
पुनि ब्याह करन की वात, मिलि कै जह जन वठलात ।
जिन श्रुत गुरु चरन चढावै, ताकौ भंडार रखावै ।।८३

निज घर कौ माल रखीजै, पद परि पद धरि बैठीजै ।
कोऊ भयतै जाय छिपीजै, काहू दुख दूर न करीजै ॥८४

चौपाई

कपडा धोवै धूपति देई, गहणारा व घडावै लोई ।
ले असलाख जभाई छीक, केस सवारि करे तिन ठीक ॥८५
धोवै दालि वडी दे जहाँ, पापड सोज वणावै तहाँ ।
मैदा छानन छपर वधान, करन कढाई ते पकवान ॥८६
राज असन तिय तसकर तणी, चारोविकथा कौ भाखणी ।
करण सीधादिक सीवणो, कर नासिका कौ वीधणो ॥८७
पंछी डारि पिंजरो धरै, अगनि जारि तन तापन करै ।
सुवरण रज तप हर ही जोई, छत्र चमर सिर धारै कोई ॥८८
वंदन आवै ह्वै असवार, पुनि तनकौ धारै हथियार ।
तेल अर गजादिक मिलवाय, वैठ करै पसारै पाय ॥८९
बांधै पाग पेच फुनि देई, आवै तुररादिक ढाकेय ।
जूवा खेलै होड वदेय, निद्रा आवै शयन करेय ॥९०
मैथुन करै तथा तिसवात, चालै झोग शरीर खुजात ।
बात करण व्यापार हि तणी, चौपाई परि बैठ न गिणी ॥९१
पान द्रव्य ले जेहै जोय, जलतै क्रीडा करिहै कोय ।
सवद जुहार परसपर करै, गीडू प्रमुख खेलि चित धरै ॥९२
जिन मंदिर परवेस जो करै, सवद निसही न वि ऊचरै ।
पुनि कर जोडै विनु जो जोय, ए दोन्यौ आसादन थाय ॥९३
ए चौरासी अघ कर क्रिया, करनी उचित नही नर त्रिया ।
जिन मन्दिर श्रुत गुरु लखि जानि, रहनौ अधिक विनय उर आनि ॥९४

दोहा

किसनसिंघ विनती करै, सुनौ भविक चित आनि ।
क्रिया हीण जिन-ग्रहि तजो, सजौ उचित सुखदान ॥९५

इति पूजा विधि-आसातना वर्णन सपूर्णम् ।

अथवा त्रेपन क्रिया तथा अवर क्रिया को वर्णन कीयो तिण को मूल कथन ।

दोहा

त्रेपन किरिया की कथा, लिखी संस्कृत जेह ।
गौतम-कृत पुस्तक महै, मंडो नाम सुनि एह ॥९६
ता उपरि भाषा रची, विविध छदमय ठानि ।
श्रावक को करनी किरिया, किरिया कही बखान ॥९७
अतीचार द्वादश वरत, लगै तिनहि निरधार ।
सूत्रनिमैते पाय कै, करी भाष विस्तार ॥९८

कछू त्रिवरणाचारतै, जो धरिवे कौ जोग।
सुणी तेम भाषी तहां, चाहिए-तिसो नियोग ॥९९
कछू श्रावकाचार तै, नियम आदि बहु ठाम।
कहीं जेम तस चाहिए, धरी भाष अभिराम ॥१५००
जगत माहि मिथ्यातकी, भई थापना जोर।
क्रिया हीण तामै चलन, दायक नरक अघोर ॥१
ताहि निषेधनको कथन, सुन्यो जिनागम जेह।
जिसो बुधि अवकास मुझ, भाषा रची मैं एह ॥२
मूलाचार थकी लिखी, सूतक विधि विस्तार।
श्लोक संस्कृत ऊपरै, भाषा कीनी सार ॥३
विद्यानुवाद पूरब थकी, भद्रबाहु मुनिराय।
कथन कियो ग्रहशान्ति कौ, तिह परिभाष वनाय ॥४
निज तन निति प्रति की क्रिया, अरु पूजा परबंध।
श्लोकनि परिभाषा धरी, जहं जैसो सम्बन्ध ॥५

भुजंगी प्रयात छन्द

कथा में कह्यो पंचेन्द्री निरोध, कथा मे कह्यो पंच पापं विरोधं।
कथा मे मध्य बाईस भाषे अभक्ष, कथा मे कह्यो गोरस भेद भक्षं।
कथा मध्य कांजी निषेधी प्रत्यक्ष, कथा मे कह्यो मुरब्बादि लक्षं ॥६
कथा मध्य मूलं गुणं अष्ट भेदं, कथा मध्य रत्नत्रय कर्म खेद।
कथा मध्य शिक्षा व्रतं भेद चारं, कथा मध्य तीन्यो गुणाव्रतधारं ॥ ७
कथा मध्य भाषी प्रतिज्ञा सु ग्यारा, मध्य भाषे तपो भेद वारा।
कथा मध्य भाषै बहुदान सार, कथा मध्य भाषे निशाहार ढारं ॥८
कथा मध्य सलेषणा भेद भाख्यो, कथा मध्य सुद्धं समं भाव आख्यो।
कथा मध्य पानी क्रिया कौ विशेषं, कथा मध्य त्यागी कह्यो राग द्वेषं ॥९
कथा मे कह्यो नेम सत्रा प्रमाणं, कथा मे क्रिया जोषिता धर्म जाणं।
कथा मे कही मौन सप्त निकाय, कथा मध्य भाषे जिके अन्तरायं ॥१०
कथा मध्य भाषी ग्रहा की जु शाति, कथा मे कह्यो सूतकं दोइ भांति।
कथा मध्य देही क्रिया को प्रमाण, कथा मध्य पूजा विधानं वखान ॥११

दोहा

कलौ काल कारण लही, जगत माहि अधिकार।
प्रगटी क्रिया मिथ्यात की, हीणाचार अपार ॥१२
तिनहि निषेधन को कथन, सुन्यो जिनागम माहि।
ता अनुसारि कथा महै, कह्यो जथारथ आहि ॥१३

अथ मनोक्त व्रत निषेध कथन लिख्यते।

दोहा

श्री जिन आगम मे कहे, वरत एक सौ आठ।
श्रावक कौ करणै सही, इह सब जागा पाठ ॥१४
इनि सिवाय विपरीति अति, चलण थापियो मूढ।
सुगम जाणि सो चलि पड्यो, सुणहु विशेष अगूढ ॥१५

चाल छन्द

वनिता लखिकै लघु वेस, तिनिको इम दे उपदेस।
दिन मे जीमो दुय बार, जल की संख्या नहिं धार ॥१६
एकंत वरत धरि नाम, आगमि न बखांण्यो ताम।
खखल्यो एकत करांही, सिर-खंड सुनाम धरांही ॥१७
तंदुल केसर दधि माही, करि गोली वरत कहांही।
टीकी व्रत नाम सुलेई, वनिता सिर टीकी देई ॥१८
अरु तिलक वरत को धारै, बहु तिय सिर तिलक निकारै।
करि देइ टको इक रोक, लेहै तिनकै अघ कोष ॥१९
कोथलीय व्रत धर नाम, बांटै तिन तीसहि ठाम।
मधि सोंठ मिरच धरि रोक, प्रभुताह्वै भाषै लोक ॥२०
अर व रत खोपरा भाषै, एकन्त तीस अभिलाषै ॥२१
नारेल वरत को लेह, बाँटै घर घर धरि नेह।
खीर जु व्रत नाम धरावै, निज घर जो दूध मंगावै ॥२२
चावल ता माँही डारी, निपजावै खीर जु नारी।
भरि ताहि कचोला माही, बाँटै बहु धरि हरषाही ॥२३
काचली व्रत तिय धरि है, कांचली दस बीस जु करि है।
निज सगपण कीजे नारी, तिनको दे हेत विचारी ॥२४
तिन पहिरे जूं उपजाही, त्रस-घात पाप अधिकाही।
जिनको व्रत नाम धरावै, सो कैसे शुभ फल पावै ॥२५
व्रत करि घृत नाम बखानो, घृत दे घर घर मन आनो।
बांटत माखी तहँ परिहै, उपजाय पाप दुःख भरिहै ॥२६
चूड़ा व्रत नाम धराही, करिकै मन मे हरखाई।
बांटत मन धरि अति राग, इसते मुझ वढै सुहाग ॥२७
विन न्योतो पर घर जाई, निज करते असन गहाई।
भोजन कर निज घर आवै, व्रत नाम धिगानो पावै ॥२८
भरि खाड रकेवी तीस, वाटै ते घर दस वीस।
व्रत नाम रकेवी तास, करिहै मूरखता जास ॥२९
वनिता चैत्यालय जाही, पाछे विधि एम कराही।
धरि असन थाल इक माही, इक जल दुहुँ टाक धराही ॥३०

तिय चैत्यालय ते आवै, इक थाली आय उठावै ।
जो असन उभारे तीय, भोजन करि जल बहु पीय ॥३१
जल थाल उघाडे आयी, जल पीवे बैठि रहाही ।
इम बरत करम पति बन्यो, सूत्रनि मे नबी बखान्यो ॥३२
इत्यादि कहाँलो ठीक, आगम ते अधिक अलीक ।
करिके शुभफल को चाहे, हियरे तिय अधिक उमाहै ॥३३
जो कलपित बरत जु मान, भाषै तेते अघवान ।
जो सकल वस्तु ले आवै, निज पूजा माँहि चढावै ॥३४
निज सगपन गेह मिलाय, बाटै घर घर फिरि आय ।
भादो के मास जु माही, तप करन सकति ह्वै नाही ॥३५
इम कहि एकन्त कराही, जिन-उक्त व्रत सो नाही ।
बांटै जो वस्तु मंगाई, सोई व्रत नाम धराई ॥३६
जिनमत व्रत बिनु मरयाद, करिये मन उक्त प्रमाद ।
जिन सूत्रनि मे जैनी है, सुखदायक व्रत आही है ॥३७
जिन आज्ञा को जे गोपै, ते निज कृत सब शुभ लोपै ।
यातें सुनिये नरनारी, मन मे तिस ते अवधारी ॥३८
जिन-भाषित जे व्रत कीजे, उक्त न कबहू लीजे ।
आज्ञा विधिजुत व्रत धार, सुरपद पावे निरधार ॥३९

सवैया ३१ ॥

त्रेपन क्रिया ने आदि देके नाना भेद भाति क्रिया को कथन साखि ग्रन्थन की आनिकै ।
अवर मिथ्यात कलिकाल भई थापना जे तिनको निषेध कीयो आगम ते जानिकै ॥
व्रत मन उकति सुगम जानि चालि परै कहै नहिं नते जिते दु.ख वृथा मानिकै ।
अबै नर नारी मन लाय जो वरत धरै यहि समय शील तप व्रत जीय सानिकै ॥४०

छप्पय ।

बहुविधि क्रिया प्रसंग कही इह कथा मझारी,
अब उछाह मन माहि आनि इह वात विचारी ।
क्रिया सफल जब होइ वरत विधि यामे आए,
मन्दिर शोभा जेम शिखर पर कलश चढ़ाए ।
इह जान वास व्रत विधिनि की, सुनी जेम आगम भनी,
दरशन विशुद्ध जुत धरहु भवि इह विनती किसना-तनी ॥४१

चाल छन्द

समकित जुत व्रत सुखदाई, अनुक्रम ते शिव पहुँचाई ।
कछु नाम वरत के कहिए, भवि जन जे जे व्रत गहिए ॥४२

अथ अष्टाह्निक व्रत कथन । चौपाई

अष्टाह्निक महाव्रत सार, रहै अनादि जाको नहिं पार ।
जो उत्कृष्ट भए नर तेह, तिन पूरव व्रत कीन्हो एह ॥४३

व्रत करन की है विधि जिसी, जिन आगम मे भाषी तिसी।
तीन बार इक बरष मझार, आसाढ कातिक फागुण धार ॥४४
जो उत्तक्रिष्ट वरत को करै, आठ-आठ उपवास जु धरै।
दूजो भेद कोमली जाँन, जिन मारग मे करो बखान ॥४५
आठै दिन कीजे उपवास, नौमी एक भुक्त परकास।
दसमी दिन काजी करि सार, पाणी भात एक ही बार ॥४६
ग्यारस अल्प असन कीजिए, दुयवट तजि इकवट लीजिए।
मुख सोध्यो वारस विधि एह, त्रिविधि पात्रको भोजन देय ॥४७
अंतराय तिनको नहिं थाय, तो वह व्रत धरि असन लहाय।
अतराय तिनिको जो परे, तो उस दिन उपवास हि करे ॥४८
तेरसि दिन आँविल कीजिए, ताकी विधि भवि सुन लीजिए।
एक अन्न षटरस बिनु जानि, जल मे मूँकि लेइ इक ठाँनि ॥४९
चउदस चित्त वेलडी थाय, भात नीर जुत मिरच लहाय।
पूरणवासी को उपवास, किए होय चिर को अघ नास ॥५०
इह कोमली की विधि कही, जिन आगम मे जैसी लही।
आदि अंत करिए एकत, दस दिन धरिये शील महंत ॥५१
जाके जिम चउदस उपवास, चौदस पंदरस वेलो तास।
तेरस आँबिल के दिन जेह, रहित विवेक आँवली लेह ॥५२
सदा सरद जाकी नहिं जाय, उपजै जीव न ससै थाय।
चउदस दिवस बेलडी करे, तादिन इम अनीति विसतरे ॥५३
खाँहि खलरा अर काचरी, तथा तोरई निज मतहरी।
तिनमे उपजै जीव अपार, सो व्रत जिन लेवो नहि सार ॥५४

दोहा

काजी के दिन नीर मे, नाखि कसेलो लेह।
तंदुल जल विनु अवर कछु, द्रव्य न भाषो जेह ॥५५

चौपाई

तीजी विधि जु आठई जान, आठे ते चउदसहि बखान।
वारस असन पछै तिहुँ वास, इहै भेद लखि पुण्य निवास ॥५६
दशमी तेरस जीमण होइ, वेला तीन करहु भवि लोय।
चौथो भेद यहै जानिए, शीलव्रत ताको ठानिये ॥५७
आठै दशमी वारस तीन, प्रोषध धरिये भाव प्रवीन।
चउदस पंदरस वेलो करे, पचम विधि बुधजन उच्चरे ॥५८
आठैं ग्यारस चौदस जान, तीन दिवस उपवास वखान।
अथवा दोय करे नर कोय, एकासन पण छइ दिन जोय ॥५९

यह व्रत संवर धरि मन लाय, सबरी हरी तजिए दुखदाय ।
दस दिन शील वरत पालिये, सँवरहू इह विधि धारिये ।।६०
वसु एकासण, विधि जुत करे, पाँच पाप व्रत धरि परिहरे ।
धरि आरम्भ तजै अघ-दाय, दिवस आठलो शुभ उपजाय ।।६१
अब मरयादा सुनि भवि जीव, धरि त्रिशुद्धता सो लखि लीव ।
सत्रह बरष साखि इक जान, करिये बावन साख प्रवान ।।६२
अथवा आठ बरष लो जान, बीस चार तसु साख बखान ।
पच वरष करि पदरा साख, धरि मन बच तन शुभ अभिलाख ।।६३
तीन वरष नो साख प्रमाण, एक वरष तिहु साख सुजाण ।
जैसी सकति छइ अवकास, सो विधि आदर करि भवि तास ।।६४
सकत्ति प्रमाण उद्यापन करे, सँवर तै कबहूँ नहि टरे ।
मैना सुन्दरि अरु श्रीपाल, कियौ बरत फल लह्यो रसाल ।।६५
कोड अठारह रहते जास, सबै गए सुवरण परकास ।
और जहूँ ते सात सै वीर, तिनके निर्मल भए शरीर ।।६६
चक्री भयो नाम हरषेण, व्रत त्रिशुद्ध आराध्यो तेण ।
तिन फल पायौ सुख दातार, करम नासि पहुँचे भव-पार ।।६७
अतराय पारो भवि सार, मौन सहित करिए आहार ।
व्रत मे हरी जिके नर खाय, सँवर तास अकारथ जाय ।।६८
ताते व्रत धारी नर नार, मन वच क्रम हियरे अवधार ।
विधि माफिकते भविजन करो, सुर नर सुख लहि शिव-तिय बरौ ।।६९
सकल वरष के दिन मैं जान, परब अठाई भूषित मान ।
खग भूमीस मिले नरेस, तिनकरि पूज जेम चक्रेस ।।७०
चक्री की जो सेवा करे, सो मनवाछित सुख अनुसरे ।
आज्ञा-भग किए दुख लहै, ऐसे लोक सयाणे कहै ।।७१
तिन जो इम दिन सँबर धरे, तास पुण्य बरनन को करे ।
जो इन दिन मे अघ उपजाय, संख्यातीत तास दुख थाय ।।७२

दोहा

इहे अठाही व्रत धरो, प्रगट वखाण्यौ मर्म ।
सुरगादिक की वारता, लहै सास्वतो सर्म ।।७३

अथ सोलह कारण, दश लक्षण, रत्नत्रय व्रत विधि-कथन

चौपाई

सोलह कारण विधि सुनि लेह, जिन आगम मे भाखी जेह ।
भादो माघ चैत तिहुँ मास, मध्य करे चित्त धारि हुलास ।।७४
वास इकत्तर विधि जुत धरे, बीच दोय जीमण नहि करे ।
सोलह बरस करे भवि लोय, उद्यापन करि छाडे सोय ।।७५

सकति नही उद्यापन-तणी, करै दुगुण व्रत श्री जिन भणी।
दश लक्षण याही परकार, उत्कृष्टी दश वासहि धार ॥७६
दूजो विधि छह वासह तणी, करै इकन्तर भाण्यो गणी।
मरयादा दश वरषहि जान, वरष मद्धि तिहुँ बारहि ठान ॥७७
अवर सकल विधि करिहै जिती, संबर माहि जानिये तिती।
रत्नत्रय की विधि ए सही, वरषावधि तिहुँ बारह कही ॥७८
भादौ माघ चैत पखि सेत, बारसि करि एकन्त सुहेत।
पोसह सकति प्रमाण जु धरै, अति उच्छाहतै तेलो करै ॥७९
पडिवा दिन करिहै एकन्त, पंच दिवस धरि सील महत्त।
बरस तीन मरयादा गहै, उद्यापन करि पुनि निरवहै ॥८०
सकत्ति-हीन जो नर तिय होय, संबर दिवस न छाड़ै सोय।
जाको फल पायो सो भणौ, नृप वैश्रवण विदेहा तणौ ॥८१
मल्लिनाथ तीर्थंकर होय, ताके पद पूजित तिहुँ लोय।
बाल ब्रह्मचारी तप कियो, केवल पाय मुकति पद लियो ॥८२
अजहूँ जे या व्रत को धरे, दरसन त्रिविधि शुद्धता करै।
ताको फल शिव है तहकीक, श्री जिन आगम भाष्यो ठीक ॥८३

अथ लब्धि विधान व्रत। चौपाई

भादौं माघ चैत विध जान, वदि पंदरसि एकन्तहि ठान।
पडिवा दोयज तीज प्रवान, थापैं तेला करि विधि जान ॥८४
सकत्ति प्रमाण जु पोसह धरै, चौथ दिवस एकासण करै।
पाँचौ दिवस सीलको पाल, तीन वरस व्रत करहि सम्हाल ॥८५
पुत्री तीन कुटुम्बी तणी, जिन व्रत लियो एम मुनि भणी।
विधिवत्त करि उद्यापन कियो, तियपद छेदि देवपद लियो ॥८६
वह द्विज-सुत ह्वै पंडित्त नाम, गौतम भर्ग रु भार्ग रु नाम।
महावीर के गणधर भए, तिनके नाम इन्द्र ए दिए ॥८७
इन्द्रभूति गौतम को नाम, अग्निभूत दूजो अभिराम।
वायुभूत तीजे को सही, वरत तणो तीनो फल लही ॥८८
इन्द्रभूत तदभव शिव गयो, दुहूँ तिहूँ उत्तम पद को लयो।
याते ते नवि परम सुजान, करो वरत पावो सुखथान ॥८९
दूजी विधि आगम इम कहै, पडिवा तीजहि प्रोपध गहै।
दोयज दिवस करे एकन्त, इस मरयाद वरप छह सन्त ॥९०
परिवा तीज एकान्त करेय, दोयज को उपवास धरेय।
मरयादा भाषी नव वर्ष, करिये भवि मन मे धरि हर्ष ॥९१
पंच दिवस लो पालै शील, सुरगादिक सुख पावै लील।
पुनि उत्तम नर पदवी लहै, दीक्षा वर शिव-तिय-कर गहै ॥९२

अथ अक्षयनिधि व्रत । चौपाई

व्रत अक्षयनिधि को उपवास, श्रावण सुदि दशमी करि तास ।
भादो बदि जब दशमी होय, तिनहूँ के प्रोषध अवलोय ॥९३
अवर सकल एकत जु धरै, सो दश वर्षहि पूरो करै ।
उद्यापन करि छाड़ै ताहि, नातर दुगुणो करिहै जाहि ॥९४

अथ मेघमाला व्रत । चौपाई

बरत मेघमाला तसु नाम, भादव मास करे सुखधाम ।
प्रोषध परिवा तीन बखान, आठै दुहूँ चौदसि दुहु जान ॥९५
सात वास चौईस इकत्त, त्रिविधि शील जुत करिए सत्त ।
वरष पाँच लो तसु मरयाद, सुर-सुख पावे जुत अहलाद ॥९६॥

अथ जेष्ठ जिनवर व्रत । चौपाई

वरत जेष्ठ जिनवर भवि लोइ, ज्येष्ठ मास मे करिये सोय ।
किशन पक्ष पडवा उपवास, एकासण चौदा पुनि तास ॥९७
प्रोषध शुकल प्रतिपदा करै, पुनि एकन्त चतुर्दश धरै ।
ज्येष्ठमास के दिवस जु तीस, तास सहित व्रत करे गरीस ॥९८
वृषभनाथ जिन पूजा रचै, गीत नृत्य वाजित्र सुसबै ।
अति उछाह धरि हिये मझार, मरयादा लखि कथा विचार ॥९९

अथ षट्रसीव्रत । अडिल्ल

दूध दही घृत तेल लूण मीठी सही, तजै पाख दोय दोय सकल सख्या कही ।
करे असन इक वार व्रती इम व्रत सजै, पख बारह मरयाद षट्रसी व्रत भजै ॥१६००

अथ पाख्या व्रत

लूण दीत ससि हरी मगल मीठो हरै, घिरत बुद्ध गुरु दही दूध भृगु परिहरै ।
तेल तैल सनि इहै वरत पाण्या गहै, मरयादा जिम नेम धरे जिम निरवहै ॥१

अथ ज्ञानपचीसी उपवास लिख्यते

प्रोषध चौदह चौदसि के विधि जुत करे, तैसे ग्यारा ग्यारसि के प्रोषध धरे ।
सब उपवास पचीस शील व्रत जुत धरे, ज्ञान पचीसी व्रत जिनागम इम कहै ॥२

अथ सुखकरण व्रत

एक वास एकंत एक अनुक्रम करै, मास चार पख एक इकन्तर इम धरै ।
देव शास्त्र गुरु पूज सजै व्रत धरि सदा, नाम तास सुख-करण हरण दुख जिन वदा ॥३

अथ समवशरण व्रत । दोहा

श्वेत किशन चौदसि तणी, प्रोषध बीस रु चार ।
शील-सहित भविजन करै, समोशरण व्रत धार ॥४

अथ आकास पंचमी व्रत । चौपाई

भादव सुदि पंचमि उपवास, करे व्रत पचमि आकाश ।
वरष पंच मरयादा जास, शील सहित प्रोषध धरि तास ।।५

अथ अक्षय दशमी व्रत

श्रावण सुदि दशमी को सही, अक्षय दशमि व्रत को जन गही ।
प्रोषध करे शील जुत सार, तसु मरयाद वरष दश धार ।।६

अथ चंदन षष्ठी व्रत

भादव वदि छठि दिन उपवास, चदन षष्ठी व्रत-धर तास ।
मन वच काय शील व्रत पाल, तसु परमाण वरष छह धार ।।७

अथ निर्दोष सप्तमी व्रत

भादो सुदि साते निर्दोष, वरत करै प्रोषध शुभ कोष ।
सख्या सात वरष लो जाहि, उद्यापन करि तजिए ताहि ।।८

अथ सुगंध दशमी व्रत

व्रत सुगन्ध दशमी को जान, भादो सुदि दशमी दिन ठान ।
प्रोषध करे वरष दश सही, शील सहित मर्यादा गही ।।९
अष्ट द्रव्य सो पूजा करे, धूप विशेष खबे अघ हरे ।
धीवर-सुता हुती दुरगंध, व्रत-फल तस तन भयो सुगन्ध ।।१०

श्रवण द्वादसी व्रत

भादो सुदी द्वादशि व्रत नाम, श्रवण द्वादशी जो अभिराम ।
बारह वरष लगे जो करै, शील सहित प्रोषध अनुसरे ।।११

अथ अनन्त चतुर्दशी व्रत

भादौ सुदि चौदस दिन जानि, व्रत अनंत चौदसि को ठानि ।
तीर्थंकर चौदहौ अनंत, रचै पूज सो जीव महंत ।।१२
प्रोषध करे शील जुत सार, चौदह वरष लगे निरधार ।
उद्यापन विधि करि वह तजै, सो जन स्वर्ग-तणा सुख भजै ।।१३

अथ नवकार पैंतिस व्रत । चौपाई

अपराजित मंत्र नवकार, अक्षर तसु पैंतीस विचार ।
करि उपवास वरण परमानि, सातैं सात करो बुध मानि ।।१४
पुनि चौदा चौदसि गनि साँच, पाँचै तिथि के प्रोषध पाँच ।
नवमी नव करिये भवि संत, सब प्रोषध पैंतीस गणत ।।१५
पैंतीसी नवकार जु एह, जाप्य मन्त्र नवकार जपेह ।
मन वच तन नर नारी करै, सुर नर सुख लहि शिव तिय वरै ।।१६

अथ त्रेपन क्रिया व्रत

त्रेपन किरिया की विधि जिसी, सुणिए बुध भाषी जिन तिसी ।
आठै आठ मूल गुण तणी, पाँचै पाल अणुव्रत भणी ।।१७
तीन तीन गुणव्रत की धार, शिक्षाव्रत की चौथ जु सार ।
तप बारह की बारसि जानि, तिसका प्रोषध बारह ठान ।।१८
सामि भाव की पड़िवा एक, ग्यारसि प्रतिमा की दश एक ।
चौथ चार चहु दानहि तणी, पडिवा एक जल-गालन भणी ।।१९
अणथमीय पडिवा अघ-रोध, तीनहु तीज चरण दृग बोध ।
ए त्रेपन प्रोषध जे करै, शील-सहित तप को अनुसरै ।।२०
सो नर तिय सुर-नृप-सुख पाय, अनुक्रमते शिव-थान लहाय ।
उद्यापन विधि करिए सार, सकति जेम हीननि विस्तार ।।२१

अथ जिनेंद्र गुण संपत्ति व्रत । चालछन्द

जिनगुण सपत्ति व्रत धार, सुनिए तिनको अवधार ।
दस अतिसै जिन जनमत ही, लीये उपजै लखि सति ही ।।२२
उपज्यौ जव केवल ज्ञान, दस अतिसै प्रगटे जान ।
इम अतिसय वीस जु करी, करि बीस दसै सुखवरी ।।२३
देवाकृत अतिसय जाणो, चौदस चौदह तिह ठाणो ।
वसु प्रातिहार्य जिन देव, बसु आठै करिए एव ।।२४
भावन सोलह कारण की, पड़िमा षोडश करि नीकी ।
पाँचो कल्याणक जाकी, पाँचौ पाँचे करि ताकी ।।२५
प्रोषध ए त्रेसठि जाणो, जुत सील भविक जन ठाणो ।
उत्तम सुर-नर मुख पावै, अनुक्रमते शिव पहुँचावै ।।२६

अथ पंचमी व्रत । चौपाई

फागुण आसाढ कातिक एह, सित पंचमि तैं व्रत को लेह ।
पैसठ प्रोषध करिए तास, वरष पाँच पाँच परि मास ।।२७
श्वेत पंचमी को व्रत धार, कमलश्री पायो फल सार ।
भविसदत्त तव मिलियो आय, तिनहूँ व्रत कीनो मन लाय ।।२८
तास चरित माहे विसतार, बरनन कीयो सब निरधार ।
अजहुँ नर तिय करिहै सोय, त्रिविध सुधी तैसो फल होय ।।२९

अथ शीलकल्याणक व्रत । दोहा

शील कल्याणक व्रत तणो, भेद सुनो जे सत ।
मन वच काय त्रिशुद्धि करि, धारौ भवि हरषत ।।

चालछन्द

तिरयंचणि सुर तिय नारि, चौथी विनु चेतन सारि ।
पंचइन्द्रिनिते चहु गुणिए, तिनि संख्या वीसज मुणिये ॥३१
मन वच तन तैं ते वीस, गुणतैं ह्वै तीस र तीस ।
कृत कारित अनुमोदन ते. गुणिए पुनि साठहि गनते ॥३२
एक सौ असी हुई जोई, प्रोपध करु भवि धरि सोई ।
इक वरष मांहि निरवार, करिए पूरण सव व्रत सार ॥३३
इक दिन उपवास जु कीजैं, दूजी दिन असन जु लीजै ।
तीजैं दिन फिर उपवास, इम करहु इकंतर तास ॥३४
एक सो अस्सी एकंत, इतने ही वास करंत ।
दिन साढ़े तीन सैं वीर. पालैं निति शील गहीर ॥३५
इह शील कल्याणक नाम, व्रत है बहुविधि सुख-धाम ।
ह्वै चक्री काम कुमार, हरि प्रति हरि बल अवतार ॥३६
तीर्थंकर पदवी पावै, समकित जुत व्रत जो ध्यावै ।
ऐसें लखि जे भवि जांण, करिए व्रत शील कल्याण ॥३७

अथ शीलव्रत । चालछन्द

अव सुनहु शील व्रत सार, जैसो आगम निरवार ।
वैशाख सुकल छठि लीजैं, प्रोपध उपवास करीजैं ॥३८
अभिनन्दन जिनवर मोपं, कल्याणक दिन शिव पोपं ।
शुभ शीलवरत तसु नाम, करि पंच वरष सुखधाम ॥३९

अथ नक्षत्रमाला व्रत । गीताछन्द

अश्विनी नक्षत्र की जु वासर च्यार अधिक पंचास हीं,
तिहि मध्य एकासन सत्ताईस वीस सात उपवास ही ।
जुत शील मन वच तन त्रिगुप्तहि करि विवेकी चाव स्यों,
माला नक्षत्र सुनाम व्रत तैं छूटिये विधि-दाव स्यों ॥४०

अथ सर्वार्थसिद्धि व्रत

कातिक सुकल अष्टम दिवस तैं अष्ट वास जु कीजिए,
तसु आदि अंत इकंत दस दिन सील सहित गनीजिए ।
जिनराज श्रुत गुरु पूज उत्सव सहित नृत्यादिक करैं
सर्वार्थसिद्धि जु नाम व्रत इह मोक्ष सुख कों अनुसरैं ॥४१

अथ तीन चोविसी व्रत । दोहा

व्रत चौवीसी तीन कौ, सुकल भाद्रपद तीज ।
प्रोपध कीजै शील जुत, सुर-सुख शिव को वीज ॥४२

अथ श्रुत-स्कन्ध व्रत

श्रुत-स्कन्ध व्रत तीन विधि, उत्तम मध्य कनिष्ट ।
षोडश प्रोषध तीस दुय, वासर मांहि गरिष्ट ।।४३
दस प्रोषध दिन बीस मे, मध्य सुविधि लखि लेह ।
वसु प्रोषध इक वास मे, है कनिष्ट व्रत एह ।।४४
कथन विशेष कथा-मही, द्वादशाग के भेद ।
त्रिविध जिनेश्वर भाषियो, करके कर्म उछेह ।।४५

अथ जिनमुखावलोकन व्रत

जिन मुखावलोकन व्रत, करिये भादो मास ।
जिन मुख देखे प्रति उठि, अवर न पैखै तास ।।४६

चाल छन्द

प्रोपध इक मास इकन्तर, काजो जुत करिये निरन्तर ।
अथवा चन्द्रायण करिहै, लघु सकति इकन्त जू धरिहै ।।४७
सख्या धरि वस्तु जु केरी, ताते अधिक ले नहि केरी ।
इह वरत महा सुखदाई, चहुँ गति-भव-भ्रमण नसाई ।।४८

अथ लघु सुख-संपत्ति व्रत

सुख-संपत्ति व्रत दुय भेद, तिनकी विधि भवि सुनि एव ।
षोड़श तिथि प्रोषध षट दश, लहुही सुखदाय अनेकश ।।४९

बड़ा सुख-संपत्ति व्रत

पडिवा इक दोयज दोई, तिहुँ तीज चौथ चहुँ जोई ।
पाँचै पण छठ छह जाणो, सातै पुनि सात बखाणो ।।५०
आठै के प्रोषध आठ, नवमी नव आगम पाठ ।
दसमी दस ग्यारस ग्यारै, वारसि के प्रोषध वारै ।।५१
तेरसि तेरा गनि लीजै, चौदसि के चौदह कीजै ।
पदरसि पदरह शिवकारी, मीसरु सो प्रोषध धारी ।।५२
इह सुख-सपत्ति व्रतनिको, भव भव सुखदायक जी को ।
मन वच काया शुध कीजे, भविजन नर-भवफल लीजै ।।५३

अथ बाराव्रत । चौपाई

बारा व्रत तणी विधि जिसी, बारा भाति बखाणो तिसी ।
प्रोषध कीजे बारा भाँति, अरु बारा ही करिए एकन्त ।।५४
बारा काजी तदुल लेय, निगोरसे गोररस तजि देय ।
अलप अहार असन इक भाग, लेहै करिहै दुय बट भाग ।।५५

इकठाणौ भोजन जल सवै, ले पुरसाय बार इक तवै।
मूँग मोट चौला अरु चिणा, लेहि इकौण वीणी तत्त छिणा ॥५६
पाणी लूण थकी जो खाय, नयड नाम ताको कहवाय।
घिरत छांडिये सब परकार, सो जाणो लूखौ जु अहार ॥५७
त्रिविधि पात्र साधरमी जाण, ताहि आहार देय विधि जाण।
ले मुख सोधि निरन्तर थाय, पाछै व्रत धर असन लहाय ॥५८
अतराय हुए उपवास, करै नाम मुख सोध्यो तास।
घर के लोक बुलाय कहेई, विन जाँचै भोजन जल देई ॥५९
धरै थाल माही जो खाय, किरिया जैन अयाची थाय।
लूण सर्वथा त्यागे जदा, भाँति अलुणा की ह्वै तदा ॥६०
जिन पूजा सुन शास्त्र वखान, एक गेह को करि परिमाण।
जाय उडंड तास के वार, भोजन लेहु कहै नर नार ॥६१
ठाम असन जल को जो गहै, वरतमान निरमान जु कहै।
वारा वरत भाँति दस दोय, अनुक्रमि सेत पक्ष भवि लोय ॥६२
समकित-सहित जु व्रत को धरै, त्रिविध शुद्ध शीलहि आचरे।
करिहै पूरण वरष मझार, सो सुर पद पावे नर नार ॥६३

अथ एकावली व्रत। अडिल्ल

सुनहु भव्यक एकावली विधि है जिसी, सुकल प्रतिपदा पचम अष्टम चउदसी।
कृष्ण चतुरथी आठै चउदसि जाणिए, चउरासी उपवास वरष-मधि ठाणिये ॥६४
वीर्य कान्ति नृप प्रौषध विधि है तिसी, उद्यापन की रीति करी आगम जिसी।
दीक्षा धरि मुनि होय घोर तप को गह्यो, केवल ज्ञान उपाय मोक्ष पदवी लह्यो ॥६५

अथ दुकावली व्रत। दोहा

विधि दुकावली वरत की, श्री जिन भाषी ताम।
वेला सात जु मास मे, करिए सुनि तिय नाम ॥६६

चाल छन्द

पक्षि श्वेत थकी व्रत लीजै, पडिवा दोयज वृद्धि कीजै।
पुनि पाँचै षष्टी जाणो, आठै नवमी छठि ठाणो ॥६७
चौदसि पूण्यौ गिन लेह, वेला चहुँ पखि सित एह।
तिथि चौथी पांचमी कारी, आठै नौमो सुविचारी ॥६८
चौदसि मावस परवीन, पखि किसन करै छठ तीन।
इम सात मास इक माही, बारा मासहि इक ठाही ॥६९
चौरासी वेला कीजे, उद्यापन करि छांडीजे।
इस व्रत ते सुर शिव पावे, सुख को तहाँ वोर न आवै ॥७०

अथ रतनावली व्रत । चाल छन्द

रतनावलि व्रत इम करिये, प्रोषध सुदि तीजहि धरिये ।
पचम अष्टम उपवास, सित पक्ष तिहूँ प्रोषध तास ।।७१
दोयज पचम अँधियारी, आठै प्रोषध सुखकारी ।
इक मास माहि छह जानो, वरष सतरि दुय ठानो ।।७२
उद्यापन सकत्ति समान, करिके तजिए मतिमान ।
दृग-जुत धरि शील धरीजै, ताते उत्तम फल लीजै ।।७३

अथ कनकावली व्रत

कनकावलीय व्रत जैसे, आगम भाष्यो सुणि तैसे ।
सितपक्ष थकी उपवास, करिये विधि सुनिए तास ।।७४
प्रोषध सित पडिवा कीजै, पुनि वास पचमी लीजै ।
सुदि दशमी पुनि होय जबही, वदि छठ बारस व्रत सजही ।।७५
छह मास मास इक माही, करिए भवि भाव धराही ।
उपवास बहत्तरि जास, इक वरष मध्य कर तास ।।७६

अथ मुक्तावली व्रत

मुक्तावली व्रत लघु एम, करिहै भवि करि प्रेम ।
भादौ सुदि सातै जाणो, पहिलो उपवास बखाणो ।।७७
आसोज किसन छठि तेरस, उजियारी करिये ग्यारस ।
कात्तिक वदि बारस ताम, सुदि तीज रु ग्यारस ठाम ।।७८
मगसिर वदि ग्यारसि जानो, प्रोषध सुदि तीजहि ठानो ।
नव नव प्रति वरष गहीजै, प्रोषध इक असी करीजै ।।७९
पूरो नव वरष मझारी, जुत शील करहु नर नारी ।
ताते फल पावे मोटो, मिटि है विधि उदय जु खोटो ।।८०

अथ मुकुटसप्तमी व्रत । दोहा

सावण सुदि सप्तमी दिवस, प्रोषध को नर वाम ।
सात वरष तक कीजियै, मुकुट सप्तमी नाम ।।८१

अथ नंदीश्वर पंक्ति व्रत

नदीश्वर पकति बरत, सुनहु भविक चित लाय ।
किये पुण्य अति ऊपजै, भव-आताप मिटाय ।।८२

चौपाई

प्रथमहि चार इकतर बोस, करहु पछै तेलो इकतीस ।
ता पीछै जु एकंतर करै, द्वादश प्रोषध विधि जुत धरै ।।८३

पुनि बेलो करिये हित जानि, वारा वास इकतर ठानि ।
पाछै इक वेलो कीजिए, इक अतर दश दुय लीजिए ॥८४
फिरि इक वेलो करि धरि प्रेम, वसु उपवास एकतर एम ।
सव उपवास आठ चालीस, विचि वेलो चहु गहे गणीस ॥८५
दधिमुख रतिकरके उपवास, अंजनगिरि चहुँ बेला तास ।
दिवस एक सो आठ मंझार, वरत यहै पूरणता धार ॥८६
छप्पन प्रोषध भवि मन आन, करे पारणा वानन जान ।
लगत करे ना अतर परै, अघ अनेक भव-सचित हरै ॥८७

अथ लघु मृदंग-मध्य व्रत । अडिल्ल

दोय वास फिर असन फिर तिहु चउ करै, पांच वास धरि चार तीन दुय अनुसरै ।
दिवस तीस मे वास कहे तेईस है, लघु मृदग मधि सात पारणा जुत गहै ॥८८

अथ बड़ो मृदंग-मध्य व्रत । गीता छन्द

उपवास इक करि दोय थापे तीन चहु पण छह धरै,
पुनि सात आठ रु चढ़ै नवलो फेरि वसु सात जु करै ।
छह पांच चार रु तीन दुय इक वास इक्यासी गहै,
मिरदंग मधि जु नाम दीरघ पारणा सत्रह लहै ॥८९

अथ धर्मचक्र व्रत । अडिल्ल छन्द

एक वास करि दोय तीन पूनि चहुँ धरे, ता पीछैं करि पांच एक पुनि विस्तरे ।
दिन वाईस मझार वास षोडश कहे, धरम चक्र व्रत धारि पारणा छह गहै ॥९०

वड़ी मुक्तावली व्रत

एक वास दुय तीन चार पण थापई, चार तीन दुय एक धार अघ कांपई ।
सर्वे वास पणवीस पारणा नव गही, गुरु मुक्तावली व्रत दिवस चौतीसही ॥९१

अथ भावना-पचीसी व्रत

दसमी दस उपवास पंचमी पंच है, आठै वसु उपवास प्रतिपदा दुय गहै ।
सव प्रोषध पच्चीस शील युत कीजिए, ए भावना-पचीसी वरत गहीजिए ॥९२

अथ नवनिधि व्रत

चौदा चौदसि चौदा रतन तणी करै, नव निधि की तिथि नवमी नव प्रोषध धरे ।
रतनत्रय तिहु तीज ज्ञान पण पचमी, नवनिधि प्रोषध एक [illegible] ॥९३

अथ श्रुतज्ञान व्रत । दोहा

प्रोषध व्रत श्रुत ज्ञान के जिनवर भाषे [illegible] ।
[illegible] आठ [illegible] ॥९४

चौपाई

सकल पाप मै व्रत लीजिए, पोड़स तिथि ताकी कीजिए।
सोला पडिवा प्रोषध सार, सित मित करि पख मै निरधार ॥९५
और कहूँ तिथि तिन कर तीज, चौथ चार पण पाच लीज।
छह छठ्ठि सातैं सात वखाणि, आठै आठ नवमी नव जाणि ॥९६
बीस दसै ग्यारा ग्यारसी, प्रोषध करि बारा बारसी।
तेरसि तेरस वास वखाणि, चौदसि चौदह प्रोषव ठाणि ॥९७
पून्यो पन्दरह करि उपबास, अमावस पन्दरह करि तास।
शील सहित प्रोषघ सब करे, भव भव के सचित अघ हरै ॥९८

अथ सिहनि क्रीडित व्रत। दोहा

सिहनि· क्रीडित तप तणो, कहुँ विशेष वखाण।
विधि सो कीजे भावजुत, करम निरजरा ठाण ॥९९

चालछन्द

प्रथम हि करि इक उपवास, पुनि दोय एक तिहु जास।
दोय चारि तीन पणि कीजै, चव पाँच थापि करि दीजै ॥१७००
चहु पाँच तीन चहु दोई, तिहु एक दोय इक होई।
सब वास साठि गण लीजैं, तसु वीस पारणा कीजैं ॥१
अस्सी दिन मे व्रत एह, करि कह्यो जिनागम जेह।
इह तप शिव-सुख के दायक, कीन्हो पूरब मुनि-नायक ॥२

अथ लघु चौतीसी व्रत। दोहा

अतिशय लघु चौतीस व्रत, तास तणो कछु भेद।
कथा-माहिं सुनियो जिसो, किये होय दुख छेद ॥३

अडिल्लछन्द

दस दसमी जनमत के अतिसय दस तणी, फिरि दस केवल ज्ञान ऊपजै दस भणी।
चौदसि चौदह अतिशय देवाकृत कही, चार चतुष्टय चौथ चार इह विधि गही ॥४
षोडश आठैं प्रतिहार्य की बसु भणी, ज्ञान पाँच की पाँचै पाँच कही गणी।
अरु षष्ठी छह लही सबै प्रोषध सुनो, पाँच अधिक भवि साठ कीए फल वहु गुणो ॥५

अथ बारासै चौतीसी को व्रत

दोयज पाँचै आठै ग्यारस चउदसी, इनके प्रोषध करै सकल अघ जैन सी।
प्रोषध सब बारह सौ अरु चौतीस ही, नाम बरत बारासै चौतीसी कही ॥६

अथ पंचपरमेष्ठी का गुणव्रत। उक्तं च गाथा

अरहंता छैयाला सिद्धा अट्ठेव सूरि छत्तीसा।
उवज्झायापणवीसा साहुणं हुंति अडवीसा ॥७

दोहा

कहूं पच परमेष्ठि के, जे जे गुण सगरीस ।
छयालीस बसु तीस छह, अरु पचीस अडवीस ॥८

अरहंत के गुण वर्णन

कहू छियालीस गुण अरहन्त, दस अतिसय जनमत ह्वै सन्त ।
केवलज्ञान भये दश थाय, दुहु की वीस दसे करवाय ॥
प्रातिहार्य को आठे आठ, चौथि चतुष्टय चहुं ए पाठ ।
सुरकृत अतिशय चवदह जास, चौदहस चौदसि गनिए तास ॥१०

सिद्ध के गुण वर्णन

अब सुनिए वसु सिद्धन भेद, करिए वास आठ सुणि तेह ।
समकित दूजो णाण बखाण, दसण चौथो वीरज जाण ॥११
सूक्षम छट्ठो अवगाहण सही, अगुरुलघु सप्तम गुण गही ।
अव्याबाध आठमो धरै, इन आठो की आठे करै ॥१२

आचार्य के छत्तीस गुण

आचारिज गुण जेह छत्तीस, तिनकी विधि सुनिए निसि दीस ।
वारसि बारा तप दश दोय, षडावश्यकी छठि छह होय ॥१३
पाचै पांच पांच आचार, दश लक्षण की दशमी धार ।
तीन तीज तिहुँ गुप्त जो तणी, प्रोषध ए छह तीस जो भणी ॥१४

उपाध्याय के पच्चीस गुण

गुण पचीस उवझाया जानि, चौदह पूरव कहे वखान ।
ग्यारा अंग प्रकाशै धीर, ए पचीस गुण लखिये वीर ॥१५
चौदा चौदस के उपवास, ग्यारां ग्यारसि प्रोषध तास ।
उपाध्याय के गुण हैं जिते, वास पचीस वखाणे तिते ॥१६

साधु के अट्ठाईस गुण

साधु अठाईस गुण जाणिये, तिनि प्रोषध इनि विधि ठाणिए ।
पंच महाव्रत समिति जु पच, इन्द्री विजय पच गणि मच ॥१७
इनिकी पंद्रह पक्षे करे, षडआवसिकी छठि छह धरे ।
भूमि सयन मज्जन को त्याग, वसन-त्यजन कचलोच विराग ॥१८
भोजन करे एक ही वार, ठाडो होइ सो लेइ अहार ।
करे नही दांतण की वात, इनि सातो को पडिवा सात ॥१९
सव मिलि प्रोपध ए अठवीस, करिहै भवि तरिहै शिव ईस ।
पंच परम गुरु गुण सव जोड़, सौ पर तियालीस धरि कोड ॥२०

करिए प्रोषध तिनके भव्व, सुरपद के सुखदायक सव्व ।
अनुक्रम शिव पावै तहकीक, जिनवर भाष्यो है इह ठीक ॥२१

अथ पुष्पांजलि व्रत । अडिल्ल

भादो तें वसु चैत मास परयत ही, तिनके सित पख मैं व्रत पुष्पाजलि कही ।
पंचम ते उपवास पाच नवमी लगै, किये पुण्य उपजाय पाप सिगरे भगै ॥२२
अथवा पाचै नवमी वास दुय ही करै, छठि सातैं दिन आठे तिहु काजी करैं ।
छठि आठै एकन्त वास तिहु कीजिए, दोय वास एकत तिनहूँ लीजिये ॥२३
पाच वरष लौ वरत इह, करि त्रिशुद्धता धार ।
तातै फल उतकिष्ट ह्वै, यामै फेर न सार ॥२४

अथ शिवकुमार का बेला । चौपाई

शिवकुमार का वेला जान, सुनी कथा जिन कहूँ बखान ।
चक्रवर्त्ति का सुत सुखधाम, शिवकुमार है ताको नाम ॥२५
घर मे तप कीनो तिह सार, वेला चौसठि वर्ष मझार ।
त्रिया पांच सै कै घर माहि, करै पारणै कांजी आहि ॥२६
पूरण आयु महेन्द्र सुर थयो, तहते जबू स्वामी भयो ।
दीक्षा घर तपकरि शिव गयो, गुण अनत सुख अत न पयो ॥२७
वरष हजार एक प्रति एक, बेला चौसठि धरि सुविवेक ।
करै आयु लघु जानी अबै, शील सहित धारो भवि सवै ॥२८
लगतै कारण सकति को नाहि, आठैं चौदस कर सक नाहि ।
इनमे अतर पाड़ै नही, सो उतकिष्ट लहै सुखग्रही ॥२९

अथ तीर्थङ्करो का वेला । दोहा

ऋषभ आदि तोर्थेश के, बेला बीस रु चार ।
आठै चौदस कीजिए, अंतर भूर न पार ॥३०

चौपाई

सातै आठमि वेलो ठान, नौमी दिवस पारणो जान ।
तेरसि चौदसि दुय उपवास, मावस पूण्यो भोजन तास ॥३१
अव पारणा की विधि जिसी, सुणो वखाणत हो मैं तिसी ।
बेला प्रथम पारणै एह, तोन आजली शर्वत लेह ॥३२
अरु तेईस पारणा जान, तीन आंजली दूध बखान ।
इम बेला कीजे चौवीस, तिन तै फल अति लहै गरीस ॥३३

अथ जिनपूजा पुरंदर व्रत

गीताछन्द

वरत जिन पूजा पुरदर सुनहु भवि चित्त लाय कै,
बारा महीना माझ कोई मास इक हित्त दायकै ।

ताकी सुकल पडिवा थकी ले अष्टमी लौ कीजिए,
प्रोषध इकंतर आठ दिन मैं पूज जिन शुभ लीजिए ॥३४

दोहा

वरत यह दिन आठ को, वार एक करि लेह ।
मन वच तन तिरकाल जिन, पूजै सुरपद देह ॥३५

अथ रोहिणी व्रत

व्रत अशोक रोहणि तनो, करिहै जे भवि जीव ।
सात वीस प्रोषध सकल, धरि त्रिशुद्धता कीव ॥३६

अडिल्ल छन्द

जिह दिन मांह्ये नक्षत्र रोहिणी आय है, ताको प्रोषध करै सकल सुखदाय है ।
अनुक्रमते उपवास सताईस जानिए, वरष सवा दुय माहि पूर्णता मानिए ॥३७

अथ कोकिला पञ्चमी व्रत । दोहा

अबै कोकिला पञ्चमी, वरत कहो विधि सार ।
शील सहित प्रोषध किये, सुरपति को दातार ॥३८

द्रुत विलंबित छन्द

पक्ष अंधयारे मास असाढ ही, करिये प्रोषध कातिक लौ सही ।
तिथि सु पंचमी के उपवास ही, प्रति सुकोकिल पंचमि को लही ॥३९

दोहा

मरयादा या वरत की, सुनहु भविक परवीन ।
पांच वरष लौ कीजिए, त्रिविध शुद्धता कीन ॥४०

अथ कवल चन्द्रायण व्रत

वरत कवल चंद्रायणा, वारह मास मंझार ।
एक महीना मे करै, एक वार चित धार ॥४१

चौपाई

करहि अमावस को उपवास, पाछैं तैं इक चढता ग्रास ।
पडिवा दिवस ग्रास इकलीन, दोयज दोय तीज दिन तीन ॥४२
चौथ चार पण पांचै सही, छट्ठि छह सातैं सत लही ।
आठैं आठ नवमि नो टेक, दशमी दस ग्यारहि दस एक ॥४३
वारसि वारह तेरसी जान, तेरसि चौदस चौदह ठांन ।
पून्यो दिवस लेई दस पांच, सुकल पक्ष की ए विधि सांच ॥४४

कृष्ण पक्ष की पडिवा जास, चौदह गास तणौ परगास ।
दोयज तेरह् वारह् तीज, चौथ ग्यार पंचमी दस लीज ।।४५
छह् नव सातै आठ वखाण, आठे सात नवमि छह् जाण ।
दसमी पाँच ग्यारसी चार, वारसि तिहु तेरसि दुय धार ।।४६
चौदस दिनहि गास इक जाण, माँवस दिवस पारणौ ठाण ।
एक मास को व्रत है एह, गास लीजिये तिम सुणि लेह ।।४७
गास लैन को ऐसी करै, मुख मे देत न करतैं परै ।
वीच पिवो पाणी न गहाय, अतराय गल अटकै थाय ।।४८
जिन पूजा विधि जुत दिन तीस, करै वन्दना गुरु नमि सीस ।
शास्त्र वखाण सुणै मन लाय, धरम कथा मै दिवस गमाय ।।४९
पालै शील वचन मन काय, इह् विधि महा पुण्य उपजाय ।
यातै सुरपद होवै ठीक, अनुक्रम शिव पावै तहकीक ।।५०

अथ मेरु पंक्ति व्रत

वरत मेरु पकत्ति जो नाम, तास करन विधि सुनि अभिराम ।
दीप अढाई मध्य सुजाण, पंचमेरु जो प्रकट वखाण ।।५१
जंवूद्वीप सुदर्शन सही, विजय सु पूरव धातकी सही ।
अपर धातकी अचल प्रमान, प्राची पोहकर मदर मान ।।५२
पुहकर अपर जु विद्युन्मालि, पच मेरु वन बीस सम्हालि ।
तिन मे असी चैत्यगृह सार, तिनके व्रत प्रोषध निरधार ।।५३
सुनहु सुदरशन भूधर जेह, भद्रसाल वन चहुँ दिसि तेह ।
जिन मदिर तिह चार वखाण, प्रोषध चार इकंतर ठाण ।।५४
पाछैं वैलो कीजे एक, वन सौमनस दूसरो टेक ।
चार जिनेश्वर भवन प्रकाश, चार वास पुनि बेलो तास ।।५५
नदन वन जिन प्रोपध चार, पीछैं ताके वेलो धार ।
पाडुक वन चउ जिनवर गेह, ताके चहु प्रोषध धरि एह ।।५६
पुनि बेलो धारो भवि सार, मेरु सुदरसन इह बिसतार ।
प्रोषध सोलह् बेला चार, व्रत दिन चहु चालीस मझार ।।५७
चार वीस उपवास वखाण, वीस जु तास पारणा जाण ।
ऐसे अनुक्रम करिए भव्व, पच मेरु व्रत विधि सो सव्व ।।५८
ध्यावत्त मेरु सुदरशन नाम, तेई नाम सबनि सुख धाम ।
वाही विधि सव वरत जु तणी, जाणो सही जिनागम भणी ।।५९
इनमे अन्तर पाडे नही, लगते प्रोषध बेला गही ।
सब प्रोषध को ऐसे जोड़, बेला वास करे चित कोड़ ।।६०
वास सकल एक सौ बीस, करे पारणा सत्तर तीस ।
सात महीना दिन दस माँहि, सकल वरत इम पूरण थाहि ।।६१

सकल वास बेला विच जाण, बीस इकत्त जु कहे वखाण।
ऐसे बीस दिवस जानिए, बरत मेरु पकत्ति मानिए ॥६२
शील सहित शुभ व्रत पालिये, हीण उदै विधि के टालिए।
सुरपद पावै सशय नाहिं, अनुक्रम भव लहि शिवपुर जाहि ॥६३

दोहा

वरत मेरु पंकत इहै, वरन्यो सुख-दातार।
करहु भविक समकित-सहित, ज्यो पावै भाव पार ॥६४
पंचमेरु के बीस वन, तहाँ असी जिन गेह।
तिनके व्रत की विधि सकल, पूरण कीनी एह ॥६५

अथ पल्य विधान व्रत। दोहा

सुनहु पल्य विधान व्रत, जिन आगम अनुसार।
वरष बहत्तर कीजिए, बारा मास मझार ॥६६

चाल छन्द

आसोज किसन छठि तेरस, सुदि बेलो ग्यारस बारस।
चौदसि सित प्रोषध धरिये, कातिक वदि बारस वरिए ॥६७
प्रोषध सुदि तीजरु बारसि, मगसिर वदि वारसु ग्यारसि।
सुदि तीज अबर करि बारसि, वदि पोसह दुतिया पदरसि ॥६८
सुदि पाँचै सातै कीजे, पून्यूं को वास धरीजै।
वदि माघ चौथ सातै गनि, चौदस उपवास धरो मनि ॥६९
सुदि सातै आठै बेलो, दशमी करि वास अकेलो।
फागुण पाँचै छठि कारी, बेलो सुणि तिथि उजियारी ॥७०
पुनि पडिवा ग्यारसि लीजे, दोनो दिन भेलौ कीजे।
वदि पडिवा दोयज बेलो, चैत की करो इकेलो ॥७१
चौथ छठि इकादस अठमी, सुदि सातें को अर दसमी।
वैशाख चौथ वदि धारी, दशमी वास पुनि कारी ॥७२
सित दोयज तीज धरीजे, नौमी तेरसि दुहूँ लीजे।
दसि प्रोपध तेरसि ठान, चौदस मावस तेलो जान ॥७३
सुदि आठै दसमी पंदरस, उपवास करो करि मन वस।
अव सावण मधि जे वास, कहि हो भवि सुनियो तास ॥७४
छठि चौथि अष्टमी सावण, पुनि चोदसि सित तृतीया भण।
वारसि तेरस को भेलो, पून्यू को वास अकेलो ॥७५
भादो वदि दोयज वास, छठि सातैं वेलो तास।
वारस उपवास धरीजे, मित पाखज एक करीजै ॥७६

तेलो पाचै छठि साते, सुत नौमी वास क्रियातै ।
ग्यारस बारस तेरस को, प्रोषध तेलो पन्दरस को ॥७७
उपवास आठ चालीस, तेला चहु कहे गरीस ।
वेला छह जिनवर भाखे, जिन आगम मे इह आखे ॥७८
ए वरष एक मे वास, सत्तरि दुय आगम मे भास ।
धारणे पारणो सन्त, करिये एकन्त महन्त ॥७९
धरि शील त्रिविधि नर नारी, व्रत करहु न ढील लगारी ।
सुर ह्वै अनुक्रम शिव जाई, विधिपल्यतणी इह गाई ॥८०

अथ रुक्मिणी व्रत

सवैया इकतीसा

लक्ष्मी मती का भव वाहि व्रत कीनो इह श्वेत भाद्र पद आठै प्रोषध अदाय कै ।
दोय जाम धरणे और चार उपवास दिन पूजा रचै दोय याम पारणो बनायकै ॥८१
कीनो आठ वरष लौ शुद्ध भाव देह त्यागि अच्युत सुरेश इद्राणी पद पायकै ।
भई रुक्मिणी कृष्ण वासुदेव पट तिया रुक्मिणो नाम व्रत जाणो चित्त लायकै ॥८२

अथ विमानपक्ति व्रत । दोहा

व्रत विमान पंकति तणे, विधि सुनिये भवि सार ।
मन वच क्रम करिए सही, सुर सुरेश पद धार ॥८३

अडिल्ल

सौधर्म 'रु ईशान स्वर्ग दुहु तै गही, पच पिचोत्तर लगै पटल त्रेसठ कही ।
तिनकी चहुदिस माहि बद्ध श्रेणी जहा, जैन भवन है अनेक अकृत्रिम हो तहां ॥८४

दोहा

तिनके नाम विधान को, बरत इहै लखि सार ।
जहा जहा जेते पटल, सो सुनिये विस्तार ॥८५

चौपाई

दुय सुर गनि इकत्तीस विख्यात, सनत कुमार महेद्रहि सात ।
चार ब्रह्म ब्रह्मोत्तर सही, लांतव कापिष्ठ है द्वय सही ।८६
एक सुक्र महासुक्रह धार, एकहि शतार अरु सहसार ।
आणत प्राणत आरण तीन, अच्युत लगै छह पटल प्रवीन ॥८७
नव नव ग्रैवेयक जानिये, नव नवोत्तर इक मानिये ।
पच पंचोत्तर पटल जु एक, ए त्रेसठ मुणि धरि सुविवेक ॥८८
अबै वरत प्रोपध विधि जिसी, कथा प्रमाण कहों सुनि तिसी ।
एक पटल प्रति प्रोषध चार, करै एकतर चित अवधार ॥८९

प्रोषध लगते बेलो एक, करि भविजन मन धरि सुविवेक ।
ता पीछैं प्रोषध चहुजान, तिनके पीछै बेलो ठान ॥९०
चहुं प्रोषध वेलो चहु वास, छट चहु अनसन पुनि छठ तास ।
इह विधि त्रेसठ वार विधान, चहु प्रोपध छठ अनुक्रम जान ॥९१
त्रेसठ बार जु पूरण थाय, इक लगतो तेलो करवाय ।
बीच इकतर असन जु करै, एक भुक्त अंतर नही परै ॥९२
इनके वेला अरु उपवास, अनसन दिवस रु तेलो जास ।
अरु सब दिन इकठे कर जोड़, सो सुणल्यौ भवि चित धरि कोड़ ॥९३
छह सौ दिबस सताणवै जाण, वरत दिवस मरयाद वखाण ।
बास इकन्तर दुइसे जाण, तिन ऊपर वावन परवान ॥९४
त्रेसठ छठ तेलो इक जान, अब सब वास जोड इम मान ।
वास इक्यासी पर सय तीन, असन तीन सै सोला जान ॥८५
इह व्रत तीन भवन मे सार, विधिजुत किए देवपद धार ।
अनुक्रम शिव जैहै तहकीक, अवधारहु भवि चित धरि ठीक ॥९६

अथ निर्जर पंचमी व्रत

सवैया इकतीसा

प्रथम असाढ सेत पचमी को वास करे कातिकलो मास पाच प्रोपध गहीजिये ।
आठ परकार जिनराज पूजा भावसेती उद्यापन विधि करि सुकृत लहीजिये ॥
कीयो नागश्रिय सेठ सुता एक वरप लो सुरगति पाय विधि कथातें पाईजिये ।
निर्जर पंचमी को व्रत इह सुखकार भाव शुद्ध कीए दु ख को जलाजलि दीजिये ॥९७

अथ कर्मनिर्जरणो व्रत

दरसण के निमति चौदसि आसाढ सुदि, सावण को चौदस सुज्ञानकाज कीजिये ।
भादों सुदि चौदस को प्रोपध चारित्त केगे तपजोग चौदसि असौज सित लीजिये ॥
एई चार प्रोपध वरष माहि विधि सेती कर्म निर्जरनी वरत मुन लीजिये ।
धनश्रीय सेठ सुता करि सुरपद पायो अजो भवि भावि करिवे को चित दीजिये ॥९८

अथ आदित्य वार व्रत

दोहा

सुणो वरत आदित्यको, विधि भाखी है जेम ।
कथा प्रमाण सु कहत हों, दायक सब निधि क्षेम ॥९९

चौपाई

प्रथम एक माहे आसाढ, आठें शुक्ल विधि आढ ।
सावण माहि करै पुनि चार, चार वास अरु भादों सार ॥१००

तजै चकार मकार विचार, वरष एक माहे नव बार ।
करै वरष नवलो निरधार, उजुमण करो सकत्ति संमार ॥१
उत्तम प्रोषध की विधि जाण, आमिल दूजी जगत वखाण ।
तृतीय प्रकार कह्यो इकठान, एक भुक्ति विधि चौथी जान ॥२
सयम शील सहित निरधार, वरष जु नव को इह विसतार ।
वरष एक मे कीयो चहै, दीत आठ चालीस जु गहै ॥३
विधि वाही चहु बार बखाण, पार्श्वनाथ जिन पूजा ठाण ।
कीजे उद्यापन चहुँ सार, पीछै तजिए व्रत निरधार ॥४
उद्यापन की शक्ति न होय, दूणो व्रत करिये भवि लोय ।
सेठ नाम मति सागर जाण, त्रिया गुणवत्ती जास बखाण ॥५
तिह इह व्रत को फल पाइयौ, विधि तै कथा माँहि गाइयौ ।
इह जाणी कर भविजन करौ, व्रत फल तै शिवतिय कू वरो ॥६

अथ कर्म-चूर व्रत

कर्म चूर व्रत की विधि एह, आठ भाति भाषत हो जेह ।
आठै आठ आठ मै करै, चौसठि आठे पूरा परै ॥७
प्रोषध आठ करै विधि सार, इक ठाणा वसु एक ही बार ।
एक गास ले इक दिन माहि, आठहि नयेड करे सक नाहि ॥८
करहि इक फल्यो हरित तजेय, सीत दिवस तन्दुल इक लेय ।
लाडू तिथि इक लाडू खाय, काजी आठ करै सुखदाय ॥९

दोहा

वरष दोय बसु मास मे, व्रत पूरो ह्वै एह ।
शील सहित व्रत कीजिये, दायक सुर शिवगेह ॥१०

अथ अनस्तमित व्रत

चौपाई

अनस्तमित व्रत विधि इम पाल, घटिका दुय रवि अथवत टालि ।
दिवस उदय घटिका दुय चढै, तजि आहार चहु विधि व्रत वढै ॥११
याकी कथा विशेष विचार, भाषी त्रेपन क्रिया मझार ।
याते कही नही इह ठाम, निसि भोजन तजिये अभिराम ॥१२

अथ पंचकल्याणक व्रत

दोहा

व्रत कल्याणक पचमी, प्रोषध तिथि विधि जाण ।
आचारज गुणभद्रकृत, उत्तर पुराण प्रमाण ॥१३
तीर्थंकर चौबीस के, गरभकल्याणक सार ।
तिथि उपवास तणी सुनो, करिये तिस मन धार ॥१४

गर्भ कल्याणक । पद्धड़ी छन्द

दोयज असाढ वदि वृषभधीर, छठि वासुपूज्य सुदि छठि जु वीर ।
मुनिसुव्रत सांवण दुतीय श्याम, दसम करी जिन कुंथुनाम ॥१५
सित दोयज सुमति सुगरभ एव, भादौं बदि सातैं साति देव ।
सुदि छठि सुपारस उदर-मात, नमि वदि कुवारि दोयज विख्यात ॥१६
कातिक बदि पडिवा जिन अनन्त, सुदि छठि नेमि प्रभु सूर महंत ।
पद्मप्रभु वदि छठि माघमास, फागुणवदि नौमी सुविधि तास ॥१७
अरहनाथ सुकल त्रितिया वखाण, आठैं संभव उर मात ठाण ।
शसि प्रभ वदि पांचैं चैत एव, आठैं सीतल दिन गरभमेव ॥१८
सुदि एकैं जिनवर मल्लि जानि, वदि तीज पार्श्व वैशाख मानि ।
सुदि छठि अभिनन्दन गरभवास, जिन धर्मनाथ तेरसि प्रकाश ॥१९
श्रेयांस जेठ वदि छठि गरीस, दशमी दिन उच्छव विमल ईश ।
जिन अजित अमावसि उदरमात, चौवीस गरभ उत्सव विख्यात ॥२०

दोहा

बीस चार जिनवर गरभ, वासर कहे बखान ।
अबै जनम दिन तिथि सकल, सुनि भवि चित हित आन ॥२१

जन्म कल्याणक । पद्धड़ी छन्द

आसाढ दसमी वदि नमि जिनेश, सावण वदि छठि नेमीश्वरेश ।
कातिक वदि तेरस पदम संत, मगसिर सुदि नौमी पुष्पदत ॥२२
ग्यारसि मल्लिनु जनमावतार, अरहनाथ जनम चौदसि सु सार ।
पूरणमासो सम्भव सुदेव, शसिप्रभ वदि ग्यारसि पौष एव ॥२३
ग्यारस दिन पारश नाथ जान, शीतल जिन वारसि किसन मान ।
सित चौथ विमल नाम जु उछाह, दसमी सित उच्छव अजित नाह ॥२४
वारसि अभिनन्दन जनम लीय, तेरसि जिन धर्म प्रकाशकीय ।
ग्यारसि फागुण श्रेयांसस्वामि, जिन वासुपूज्य चौदसि प्रणामि ॥२५
वदि चैत नवमि रिसहेस स्वामि, दसमी मुनि सुव्रत पय नमामि ।
सुदि तेरस जन्मे वीरनाथ, सुमति दसमी वैशाख श्याम ॥२६
सुदि पडिवा जनमे कुंथुवीर, वारसि वदि जेठ अनन्त धीर ।
चौदसि श्री शांति कियो प्रकाश, सित वारसि जनमे श्री सुपाश ॥२७

तप कल्याणक

नमि नाथ दशमी आसाढ श्याम, सावण सुदि छठ तप नेमिनाथ ।
कातिक वदि तेरस वीर धीर, मगसिर वदि दशमो पद्म वीर ॥२८
सुदि एकैं दीक्षा पुहुप दन्त, दशमी दिन अरह जिन तप महन्त ।
जिन मल्लि तजो ग्यारसि सुगेह, सुदि पून्यो शंभव तप सनेह ॥२९

चन्द्रप्रभ बारस कृष्ण पौष, ग्यारसि पास तप्यो उ पखि पोष।
सीतल जिन वदि द्वादसीय माह, सुदि चौथ विमल तप लियहु नाह ॥३०
नवमी दिन दीक्षा अजित देव, बारस अभिनन्दन सु तप भेव।
तेरस जिन धर्म तपो प्रशंस, फागुण वदि ग्यारसि श्री श्रेयांस ॥३१
प्रभु वासु पूज्य चौदस सुजान, वदि चैतर नवमी रिसहमान।
सुव्रत दशमी वैशाख श्याम, सुदि पडिवा कुन्थु जिनेस ताम ॥३२
सित नवमी लियो तप सुमति वीर, तिन शांति जेठ वदि चौथ धीर।
बदि बारसि तप जिनवर अनत, बारस सुपार्श्व सित जेठ सन्त ॥३३

दोहा

तप कल्याणक को कथन, उत्तर पुराणहु माँहि।
काढ़ि कियो अब ज्ञान को, सुनिहुँ चित्त इक ठाहि ॥३४

ज्ञान कल्याणक। पद्धड़ीछन्द

जिन नेमीश्वर पड़िवा कुंवार, सभव जिन चौथहि ज्ञान धारि।
कातिक सुदि दोयज पुहपदन्त, लहि केवल बारस अर महत ॥३५
मगसिर सुदि ग्यारस मल्लि सुबोध, ग्यारस नमि हणिया कर्म जोध।
शीतल वदि चौदसि पौष ज्ञान, सुदि दसमी सुमति केवल महान ॥३६
सुदि ग्यारसि अजित सुबोध पाय, चौदस अभिनन्दन ज्ञान पाय।
पून्यो लहि केवल धर्म वीर, श्रेयांस अमावस माघ धीर ॥३७
सुदि वासुपून्य दोयज प्रकाश, छठि विमल नाथ केवल विभास।
फागुण बदि छट्टी सुपार्श्व ईश, सातै चन्द्रप्रभु नमूँ सीश ॥३८
फागुण वदि ग्यारस वृषभ जान, बदि चैत चौथ पारश बखान।
अमावस श्री जिनवर अनत, सुदि तीज कुथु केवल लहंत ॥३९
सुदि ग्यारस सुमति जु बोध पाय, पदम प्रभु पून्यों ज्ञान थाय।
सुव्रत नौमी बैशाख श्याम, सुदि दसै वीर जिन बोध पाम ॥४०

दोहा

ज्ञान कल्याणक वर्णयो, उत्तर पुराण मे जेम।
अब निर्वाण प्रमाण तिथि, सुनहु भविक धर प्रेम ॥४१

निर्वाण कल्याणक। पद्धड़ी छन्द

आसाढ विमल आठे असेत, सुदि साते शिव नेमी सहेत।
सावण सुदि सातै पार्श्वनाथ, पून्यो श्रेयास लहि मोक्ष साथ ॥४२
भादो सुदि आठे पुहपदत, जिन वासुपूज्य चौदस नमत।
सीतल जिन आठे सित कुमार, कातिक मावस भव वीर पार ॥४३
बदि महा चतुर्दशि वृषभनाम, पद्म प्रभु फागुन चौथ स्याम।
सातैं सुपार्श्व शिव लहीय धीर, चद्र प्रभु सातैं त्रिजग तीर ॥४४

वदि वारसि मुनि सुव्रत वखाण, सुदि पाँचैं मल्लि जिनेस जाण।
वदि चैत मावसी नंत नाथ, अमावस अर जिन मोक्ष साथ ॥४५
सुदि पाँचै शिव जिन अजित पाय, सुदि छठ संभव निर्वाण थाय।
सुदि ग्यारसि सुमति सु मोक्ष धीर, नमि वदि चौदसि वैशाख तीर ॥४६
सुदि एकै शिव-दिन कुंथु जाण, अभिनंदन छठ निर्वाण ठाण।
वदि चौदसि जेठ सु शांतिनाथ, सुदि चौथ धर्म शिव कियो साथ ॥४७

दोहा

कल्याणक निर्वाण की, तिथ चौवीस विचार।
कही जेम भाषी तिसी, उत्तर पुराण मझार ॥४८
ह्वै सम्पूरण व्रत जवैं, कर उद्यापन सार।
आगम मैं जिन भाषियो, सो भवि सुन निरधार ॥४९

उद्यापन की विधि। चौपाई

पाँच कीजिये जिनवर गेह, पाँच प्रतिष्ठा कर शुभ लेह।
झालरि झांझ कंसाल, ताल, छत्र चमर सिंघासन सार ॥५०
भामंडल पुस्तक भंडार, पंच-पंच सव कर निरधार।
घंटा कलश ध्वजा पण थाल, चंद्रोपक बहु मोल विशाल ॥५१
पुस्तक पाँच चैत गृह धरैं, तिन बाँचैं भवि जन भव तरैं।
चार संघ को देय आहार, जिन आगम भाषी विधि सार ॥५२
इतनी विधि जो करी न जाय, सकति प्रमाण करै सो आय।
सकति उलंघन न करनी कही, सकति दान कर परहै नही ॥५३
काहू भाँति कछू नहिं थाय, तो दूणो व्रत कर चित लाय।
अबैं वरत कन्हिै नर नार, करै दान सुन हिये अवधार ॥५४
गरभ कल्याणक की दत्त जान, मैदा का करि खाजा आन।
वांटै सवको घर अहलाद, करे इसी विधि हर परमाद ॥५५
जनम कल्याणक दत्त विस्तरैं, चिणा भिजोय रु विरहा करैं।
मैदा फल घर वाटै नार, चित्त माहि अति हित अवधार ॥५६
तप कल्याणक दत्त अवधार, बाजर पापर खिचड़ी धार।
जिन आगम ही बखाणी नही, युक्ति मान मानत विधि गही ॥५७
ज्ञान कल्याणक पूरा थाय, जवै दान दे मन चित लाय।
पाठ मंगाय वांटै तिया, मन मे हरप सफल निज जिया ॥५८
करके कल्याणक निर्वाण, तास दान को करैं बखान।
मोतीचूर रु मगद कसार, लाडू कर बांटै सब ठार ॥५९
बीस चार घर की मरयाद, दे अति मान हिये अहलाद।
मन की रुकति उपावे घणी, जिन शास्त्रनि माहे नही भणी ॥६०

याते सुनिये परम सुजान, जिन आगम भाष्यो परमान ।
थोडो किये अधिक फल देय, भाव-सहित कर सुर-पद लेय ॥६१

अडिल्ल

जिम निज आगम कह्यो दान तिम दीजिये,
निज मन युक्ति उपाय कबहु नहिं कीजिये ।
कलीकाल नहिं जोग संग नहि पाइये,
जास बराबर धर्म तिनहि चित लाइये ॥६२
भोजनादि निज सकति जुत, दानादिक विधि सार ।
करि उपजावैं पुण्य बहु, यामे फेर न सार ॥६३
एकासन कर धारणे, अवर पारणे जान ।
शील सहित प्रोषध सकल, करहु सुभवि चित आन ॥६४

मरहटा छन्द

कल्याणक सारं पंच प्रकार गरभ जनम तप णाण,
पचम निर्वाणं वरत प्रमाण कहियो महापुराण ।
तिनकी विधि भाखी जिम जिन आखी किए लहै सुर गेह,
अनुक्रम शिव पावै जे मन भावै ते सब जानी एह ॥६५

निर्वाण कल्याणक का बेला । चौपाई

जे जे तीर्थङ्कर निर्वाण, गए तास दिन की तिथि ठाण ।
तिह दिन को पहिलो उपवास, लगतो दूजो वास प्रकाश ॥६६
इह विधि बारह मास मझार, बेला करिये बीस रु चार ।
बेला कल्याणक निर्वाण, वरत नाम लखिये बुध माण ॥६७

लघुकल्याणक को व्रत । दोहा

गरभ जनम तप ज्ञान शिव, तीर्थङ्कर चौबीस ।
वरस माहि तिथि सबन की, करै एक सो बीस ॥६८

छप्पय

रिषभ गरभ वदि द्रुतिय गर्भ छठि वासु पूज गन,
आठै विमल सुज्ञान दशमी नमि जनम रु तप मन ।
वर्धमान छठि सुकल गरभ माता के आए,
सुदि सातै जिन नेमि करन हणि मोक्ष सिधाए ।
आसाढ़ मास माहे दिवस, छह माहे ही जाणियो,
छह कल्याणक सातमो, छह जिनवर को ठाणियो ॥६९

मुनि सुव्रत जिन देव गरभ वदि दोयज वासर,
कुंथु गरभ वदि दसे सुमति सित वीज गरभ वर।
नेमनाथ सित छठी जनम दिन तप पुनि धरियो,
साते पारशनाथ मोक्ष लहि भव दधि तरियो।
श्रेयांसनाथ निरवान पद, पून्यूं के दिन सरदही।
सावण सुमास छठि दिन विषै, सात कल्याणक है सही ॥७०

वदि भादौ जिन शांति गरभ सातै माता उर,
सुदि छठि गरभ सुपास अष्टमी मोक्ष सुविधि पर।
वासुपूज्य निर्वाण चतुर्दसि भादौ जाणो,
वदि दोयज आसोज गरभ नमि जिनवर मानो।
लहि मोक्ष नेमि एकै सकल, आठै शीतल शिव गए।
दुह मास मांहि दिन सात मैं, कल्याणक सातहि भए ॥७१

गरभ अनन्त जिनेश प्रतिपदा कातिक करियो,
सभव केवल चौथ त्रयोदसि पद्म जनम लियो।
तप पुनि तेरसि पद्म मोक्ष नमति जु अमावस,
सुविधि ज्ञान सित वीज नेमि छठि मात गरभ वस।
अरनाथ चतुष्टय विधि हणिवि, केवल ज्ञान उपानियो।
दिन सात कल्याणक आठ सव, काती माहि सुजानियो ॥७२

सन्मति तप वदि दसें सुविधि सुदि एकै तप गन,
पुहपदन्त नय जनम दसम तप अरहनाथ मन।
मल्लि जनम तप ज्ञान कल्याणक चिहु सित ग्यारस,
नमि तिस ग्यारसि ज्ञान जनम अरनाथ सु चौदस।
सभव जु कल्याणक जनम तप, दुहु पूरणवासी थए।
दिन सात कल्याणक, एकदस मगसिर माही वरणए ॥७३

पारशनाथ सु जनम अवर तप ग्यारसि कारी,
जनम चन्द्र प्रभ तास दिवस दिक्षाहू धारी।
चौदस शीतल ज्ञान शांति सुदि दशमी विधि तसु,
ग्यारस केवल अजित जिनेश्वर प्रगट भयो जसु।
प्रभु अभिनन्दन चौदसि दिवस, लोकालोक प्रकासियो।
दिन पाँच कल्याणक आठ जुत, पौष महीनो भासियो ॥७४

दोहा

फागुण दिन ग्यारसि विषे, कल्याणक जिनराय।
पदरह किये त्रिजगत-पति, नमें किसन सिर नाय ॥७५

छन्द त्रिभंगी

अष्टाह्निक धारण सोलह कारण व्रत दशलक्षण रतनत्रयं,
शुभ लब्धि विधानं अखय निधानं मेघ सु मालो षडरसयं ।
ज्येष्ठादिक जिनवर रसपाष्यावर ज्ञान पचीसी अखय दसै,
समवादिक सरण व्रत सुख करण सुख पचम आकास लसै ।।७६
खंडेलीवालं वसबिसाल नागर वाल देस धिय,
रामापुर वास देव निवास धर्म प्रकास प्रकट कियं ।
संघ ही कल्याण सब गुण जाण गोत्र पाटणी सुजस लियं,
पूजा जिनरायं श्रुत गुरुपाय नमै सकति जिन दान दियं ।।७७
तसु सुत दोय एव गुरु सुखदेवं लहुरो आणदसिंघ सुणौ,
सुखदेव सुनंदन जिनपद वदन ज्ञान मान किसनेस मुणो ।
किसनै इह कीनी कथा नवीनी निज हित चीनी सुरपदकी,
सुखदाय क्रिया भनि इह मन वच तन शुद्ध पले दुरगति रदकी ।।७८

दोहा

मधुर राय वसन्त को, जाने सकल जहान ।
तस प्रधान सुत कौन जू, किसन सिंह मनमान ।।७९

अडिल्ल

क्षेत्र विपाकी कर्म उदै जब आइयो, निज पुर तजि कै सागानेर बसाइयो ।
तह जिन धर्म प्रसाद गनै दिन सुखलही, साधरमी जन सजन मान दे हित गही ।।८०

दोहा

इह विचार मन आनियो, क्रिया कथन विधिसार ।
होय चौपई बध तो, सव जन कुं उपगार ।।८१
सब ही जन वाचो पढौ, सुणौ सकल नर नार ।
सुखदाई मन आणिये, चलौ क्रिया अनुसार ।।८२

छन्दचाल

व्याकरण न कबही देख्यो, छन्द न नजरा अवलेख्यो ।
लघु दीरघ वरण न जाणूं, पद मात्रा हू न पिछाणू ।।८३
मति-हीन तहा अधिकाई, पटुता कबहूँ नहि पाई ।
मनमाही बोहि आई, त्रेपन किरिया सुख दाई ।।८४
इह कथा संस्कृत केरी, भाषा रचिहो शुभ वेरी ।
कछु अवर ग्रथ ते जानी, नानाविध किरिया आनी ।।८५
धर क्रियाकोष तिस नाम, पूरण करिहो अभिराम ।
जिम मूढ समुद्र अवगाहै, जिन भुजते उतरो चाहै ।।८६
गिरि परि तरु को फल जानी, कुवजक मनि तोरन ठानी
शशि नीर कुड के मांही, करते शशि-विम्ब गहाही ।।८७

तिम सज्जन मुझको भारी, हंसिहै संशय नहिं कारी।
वुधजन मो क्षिमा करीजे, मेरो कछु दोष न लीजे ॥८८
जो अशुद्ध होय पद याही, शुध करि पढियो भवि ताही।
अधिको नहिं कहनो जोग, बुधजन को यही नियोग ॥८९

अडिल्ल

किसन सिंह इह अरज करै सव जन सुनो,
कर मिथ्यात्त को नाश निजातम पद सुनो।
क्रिया सहित व्रत पाल करण वश कीजिये,
अनुक्रम लहि शिव थान शाश्वता जीजिए ॥९०

॥ सवैया इकतीसा ३१ ॥

सत्रह सौ सम्वत् चौरासी यासु भादौ मास वर्षारितु स्वेत तिथि पून्यो रविवार है।
शतिभिषा रवि धृतनाम जोग कुम्भ ससि सिंघको दिनेस मुहूरत्त अति सार है॥
ढुंढाहर देस जान वसे सागानेर थान जैसिंह सवाई महाराज नीति धार है।
ताके राज-समय परिपूरण की इह कथा भव्यनि को हिरदय हुलास देनहार है ॥९१
द्वैसे चौवन पैंतीस इकतीसा मरहटा पचास पाँच से बीस ठाने है।
सातसै छाणवे सु चौपई छबीस छप्पै पद्धड़ी पैतीस तेरा सोरठा बखाने हैं॥
अडिल्ल वहत्तर नाराच आठ गीता दस कुण्डलिया तीन छह तेईसा प्रमान है।
द्रुत विलबित चार आठ हे भुजगी तीन त्रोटक त्रिभगी नव छन्द ऐते आने है ॥९२

॥ सवैया तेईसा २३ ॥

छन्द कहे इस ग्रन्थ मझार लीए गनि जे उक्तं च धराई,
दोय हजार मही लखि घाट पंचसीय एह प्रमान कराई।
जो न मिलै तुक अक्षर मात तदा पुनरुक्त न दोष ठराही,
तो मुझको लखि दीन प्रवीन दसो मति मे तुम पाय पराही ॥९३
ग्रन्थ लिखै इह लेखक को इक है मरयाद सिलोक किती है,
छन्दनि के सव अक्षर जोरि रूप ध्वनि अक जु मांधि तिठी है।
ते सब वर्ण बतीस प्रमाण श्लोकनि की गणती जुड़ती है,
दोय हजार परी नवसे लखि लेहु जिके भवि शुद्धमती है ॥९४

छप्पय छन्द

मंगल श्री अरिहत सिद्ध मंगल सिव-दायक,
आचारज उवझाय साधु गुरु मंगल-लायक।
मगल जिनमुख खिरी दिव्य धुनि मय जिनवाणी,
मंगल श्रावक नित्य समकिती मंगल जानी।
मंगल जु ग्रन्थ इह जानियो, वक्ता-मुख मंगल सदा।
श्रोता जु सुनै निज गुण मुनै, मंगल कर तिनको सदा ॥९५

दोहा

किसनसिंह कवि वीनती, जिन श्रुत गुरु सों एह ।
मंगल निज तन सुपद लखि, मुझहि मोक्ष पद देह ॥९६

चौपाई

जब लो धर्म जिनेश्वर सार, जगत माहि वरते सुखकार ।
तब लो विस्तारो यह ग्रन्थ, भविजन सुर-शिव-दायक पंथ ॥९७

इति श्री क्रियाकोष भाषा मूल त्रेपन क्रिया ते आदि दे और ग्रन्थो की साख का मूल कथन ऊपर व्रत सम्पूर्णम् ॥

श्री दौलतराम कृत क्रियाकोष

मंगलाचरण

दोहा

प्रणमि जिनन्द मुनिंद को नमि जिनवर-मुख वानि ।
क्रियाकोष भापा कहूं, जिन आगम परवानि ॥१
मोक्ष न आतम-ज्ञान विन, क्रिया ज्ञान विन नाहि ।
ज्ञान विवेक विना नही, गुन विवेक के मांहि ॥२
नहिं विवेक जिनमत विना, जिनमत जिन विन नाहिं ।
मोक्ष मूल निर्मल महा, जिनवर त्रिभुवन माहिं ॥३
तातें जिनको वन्दना, हमरी वारंवार ।
जिनतैं आपा पाइये, तीन भुवन में सार ॥४
द्वीप अढाई के विषैं, आरज क्षेत्र अनूप ।
सौ ऊपर सत्तरि सवे, व्रतभूमि शुभरूप ॥५
जिनमे उपजे जिनवरा, व्रतविवान निरूप ।
कवहूँ इक इक क्षेत्र में, इक इक ह्वै जिनभूप ॥६
तव्र सत्तरि सौ ऊपरे, उतकिष्टे भुवनेस ।
तिनमें महा विदेह में, अस्सी दूण असेस ॥७
भरतैरावत क्षेत्र दस, तिनके दस जिनराय ।
ए दस अर वे सर्व ही, सौ सत्तरि सुखदाय ॥८
घटि ह्वैं तौ जिन वीसतें, घटै न काहू काल ।
पंच विदेह विषै महा, केवल रूप विगाल ॥९
चलै धर्म द्वय सासता, यति श्रावक व्रतरूप ।
टलै पाप हिंसादिका, उपजे पुरुष अनूप ॥१०
कालचक्र की फिरणि विन, कुलकर तहां न होय ।
नाहिं कुलिंगम वरति है, ताते रुद्र न जोय ॥११
तीर्थाधिप चक्री हल, हरि प्रतिहरि उपजन्त ।
इन्द्रादिक आवें जहां; करे भक्ति भगवन्त ॥१२
तीर्थंकर अर केवली, गणधर मुनि विहरन्त ।
जहां न मिथ्यामारगी, एक धर्म अरहन्त ॥१३
तात मात जिनराज के, अर नारद फुनि काम ।
परगट पुरुष पुनीत वहु, शिवगामी गुण धाम ॥१४
ह्वैं विदेह मुनिवर जहां, पंच महाव्रत धार ।
ताते महाविदेह में, सत्यारथ सुखकार ॥१५

भरतैरावत दस विषे, कालचक्र है दोय ।
अवसर्प्पिणी उतसर्प्पिणी, षट् षट् काला सोय ॥१६
तिनमे चौथे काल ही, उपजे जिन चौबीस ।
द्वादश चक्री नव हली, हरि प्रतिहरि अवनीस ॥१७
त्रिसठि सलाका पुरुष ए, जिन मारग धर धीर ।
इनमे तीर्थंकर प्रभू, और भक्ति वर वीर ॥१८
तात मात जिनदेव के, चौबीसा चौबीस ।
नौ नारद चौदा मनूं, कामदेव चौबीस ॥१९
एकादश रुद्र महा, इत्यादिक पद धार ।
उपजे चौथे काल ही, ए निश्चय उर धार ॥२०
या विध भए अनन्त जिन, होसी देव अनन्त ।
सबको मारग एक ही, ज्ञान क्रिया बुधिवन्त ॥२१
सब ही शान्ति-प्रदायका, सबही केवल रूप ।
सब ही धर्म-निरूपका, हिंसा-रहित सरूप ॥२२
सबही आगम भासका, सब अध्यातम मूल ।
युक्ति-मुक्ति-दायक सबै, ज्ञायक सूक्षम थूल ॥२३
बरणन मे आवें नही, तीन काल के नाथ ।
सर्व क्षेत्र के जिनवरा, नमो जोरि जुग हाथ ॥२४
भरत क्षेत्र यह आपनो जम्बूद्वीप मझारि ।
ताके मै चौबीसिका, बन्दू श्रुत-अनुसारि ॥२५
निर्वाणादि भये प्रभू, निर्वाणी चौबीस ।
ते अतीत जिन जानिये, नमों नाय निज शीस ॥२६
जिन भाष्यौ द्वै विधि धरम, परम धाम को मूल ।
यति श्रावक के भेद करि, इक सूक्षम इक थूल ॥२७
बहुरि वर्तमाना जिना, रिखभादिक चौबीस ।
नमो तिने निज भाव करि, जिनके राग न रीस ॥२८
तिनहूँ सो ही भाषियौ, द्वै विधि धर्म विसाल ।
महाव्रत अणुव्रतमय, जीवदया प्रतिपाल ॥२९
बहुरि अनागत काल मे होंगे तीरथनाथ ।
महापद्म प्रमुख प्रभु, चौबीसा बडहाथ ॥३०
ताते सो ही भासि है, जे जो अनादि प्रबन्ध ।
सबको मेरी वन्दना, सबको एक निबन्ध ॥३१
चौबीसी तीनूं नमू, नमो तीस चौबीस ।
सीमंधर आदिक प्रभू, नमन करो पुनि बीस ॥३२
पन्द्रा कर्मधरा सबै, तिनमे जे जिनराय ।
अर सामान्य जु केवली, वर्तें निर्मल काय ॥३३

तिन सबको परणाम करि, प्रणमो सिद्ध अनंत ।
आचारिज उपाध्याय को, बिनऊं साधु महन्त ॥३४
तीन काल के जिनवरा, तीन काल के सिद्ध ।
तीन काल के मुनिवरा, वंदो लोक प्रसिद्ध ॥३५
पंच परमपद-पद प्रणमि, वन्दो केवलवानि ।
वदो तत्त्वारथ महा, जैनधर्म गुण-खानि ॥३६
सिद्धचक्रकूं वदिकै सिद्धमत्रकू वदि ।
नमि सिद्धान्त-निबन्धको, समयसार अभिनदि ॥३७
वदि समाधि तन्त्रकूं, नमि समभाव-सरूप ।
नमोकारकूं करि प्रणति, भाषों व्रत्त अनूप ॥३८
चउ अनुयोगहि वदिके, चउ सरणा ले सुद्ध ।
चउ उत्तम मंगल प्रणमि, कहूँ क्रिया अविरुद्ध ॥३९
देव-धर्म गुरु प्रणति करि, स्यादवाद अवलोकि ।
क्रियाकोष भाषा कहू, कुंदकुंद मुनि ढोकि ॥४०
अरचो चरचा जैनकी, चरचो चरचा जैन ।
क्रोध लोभ छल मोह मद, त्यागि गहूँ गुन वैन ॥४१
कृत्रिम और अकृत्रिमा जिनप्रतिमा जिनगेह ।
तिन सबकूं परणाम करि, धारूं धर्म सनेह ॥४२
गाऊं चउविधि दान शुभ, गाऊं दसधा धर्म ।
गाऊं षोडश भावना, नमि रतनत्रय धर्मं ॥४३
स्तवऊं सर्व यतीसुरा, विनऊ आर्या सर्व ।
सब श्रावक अर श्राविका, नमन करो तजि गर्व ॥४४
करो वीनती मना धर, समदृष्टिसो एह ।
अपनो सौ धीरज मुझे, देहु धर्म मे लेह ॥४५
लोक-शिखर पर थान जो मुक्ति क्षेत्र सुख-धाम ।
जहां सिद्ध शुद्धातमा, तिष्ठे केवल राम ॥४६
नमों नमो ता क्षेत्र को, जहा न कोई उपाधि ।
आधि व्याधि असमाधि नहिं, वरतै परम समाधि ॥४७
प्रणमि ज्ञान कैवल्य को केवलदर्शन ध्याय ।
यथाख्यात चारित्रकू वदो सीस नमाय ॥४८
प्रणमि सयोगिस्थानको, नमि अजोग गुणथान ।
क्षायिक सम्यक वदिकै, वरणो व्रतविधान ॥४९
वन्दों चउ आराधना, वंदो उपशमभाव ।
जाकरि क्षायिकभाव ह्वै, होय जीव जिनराव ॥५०
मूलोत्तर गुण साधुके, ह्वै जिनकरि जन सिद्ध ।
तिनकूं वदि कहूँ क्रिया, त्रेपन परम प्रसिद्ध ॥५१

जहा मुनी निजध्यान करि, पावे केवलज्ञान ।
वंदो ठौर प्रशस्त जो, तीरथ महानिधान ।।५२
जा थानकसो केवली, पहुचे पुर निर्वाण ।
वदो धाम पुनीत जो, जा सम थान न आन ।।५३
तीर्थंकर भगवान के, वदो पच कल्याण ।
और केवली को नमो, केवल अर निर्वाण ।।५४
नमो उभैविधि धर्म को, मुनि श्रावक निरधार ।
धर्म मुनिन को मोक्ष दे, काटे कर्म अपार ।।५५
तातें मुनि-मत अति प्रबल, बार-बार थुति जोग ।
धन्य धन्य मुनिराज ते, तजे समस्त अजोग ।।५६
पर परणति जे परिहरें, रमे ध्यान मे धीर ।
ते हमकूं निज दास करि, हरौ महा भव-पीर ।।५७
मुनि की क्रिया बिलोकि कै, हम पै वरनि न जाय ।
लौकिक क्रिया गृहस्थ की, वरणू मुनि-गुण ध्याय ।।५८
यतिव्रत ज्ञान विना नही, श्रावक ज्ञान विना न ।
वुद्धिवत नर ज्ञान विन खोवे वादि दिनान ।।५९
मोक्ष मारगी मुनिवरा, जिनकी सेव करेय ।
सो श्रावक धनि धन्य हैं, जिनमारग चित्त देय ।।६०
जिन-मदिर जो शुभ रचे, अरचै जिनवर देव ।
जिनपूजा नित-प्रति करै, करै साधुकी सेव ।।६१
करै प्रतिष्ठा परम जो, जात्रा करै सुजान ।
जिन शासन के ग्रन्थ शुभ, लिखवावै मतिमान ।।६२
चउविधि सघतणो सदा, सेवा धारे वीर ।
पर उपकारी सर्व की, पीडा हरे जु वीर ।।६३
अपनी शक्ति प्रमाण जो, धारैं तप अर-दान ।
जीवमात्र को मित्र जो, शीलवन्त गुणधाम ।।६४
भाव शुद्ध जाके सदा, नहिं प्रपच को लेश ।
पर-धन पाहन सम गिनै, तृष्णा तजी विशेष ।।६५
तातें गृहपति हू प्रबल, ताकी क्रिया अनेक ।
जिनमे त्रेपन मुख्य है, तिनमे मुख्य विवेक ।।६६
नमस्कार गुरुदेव को, जे सब रीति कहेय ।
जिनवानी हिरदै धरी, ज्ञानवन्त व्रत लेय ।।६७
क्रियाकाड को करि प्रणति, भाषो किरिया कोष ।
जिनशासन अनुसार शुभ, दयारूप निरदोष ।।६८
प्रथमहि त्रेपन जे क्रिया, तिनके वरणो नाम ।
ज्ञान-विराग-सरूप जे, भविजनकूं विश्राम ।।६९

त्रेपन क्रिया

गाथा—गुण-वय-तव-सम-पडिमा, दाण जलगालण च अणत्थमियं ।
दसण णाण चरित्तं किरिया तेवण्ण सावया भणिया ॥१

चौपाई

गुण कहिये अठमूल जु गुणा, वय कहिये व्रत द्वादस गुणा ।
तव कहिये तप बारह भेद, सम कहिये समदृष्टि अभेद ॥७०
पड़िमा नाम प्रतिज्ञा सही, ते एकादस भेद जु लही ।
दाणं कहिये दान जु चार, अर जलगालण रीति विचार ॥७१
निसिको खान-पान नहिं भला, अन्न औषधी दूध न जला ।
रात्रि विषें कछू लेवौ नाहिं, अति हिंसा निसि-भोजन माहिं ॥७२
कह्यौ "अणत्थमिय" शब्द जु अर्थ, निसि भोजन सम नाहिं अनर्थ ।
दंसण णाण चरित्र जु तीन ए त्रेपन किरिया गिणि लीन ॥७३
प्रथमहिं आठ मूलगुण कहो, गुण-परसाद विषाद न कहो ।
मद्य मास मधु मोटे पाप, इन करि पावे अतुलित ताप ॥७४
वर पीपर पाकर नहिं लीन, ऊमर और कठूमर हीन ।
तीन पंच ए आठो वस्तु, इनको त्यागे सकल प्रशस्त ॥७५
मन-वच-काय तजौ नर नारि, कृत-कारित-अनुमोद विचारि ।
जिनमे इनको दोष जु लगै, तिन वस्तुनितें बुधजन भगे ॥७६
अमल जाति सवही नहिं भक्ष, लगै मद्यको दोष प्रत्यक्ष ।
रस चलितादिक सड़िय जु वस्तु, ते सव मदिरा तुल्यउ वस्तु ॥७७
जाये खाये मन ठीक न रहै, सो सब मदिरा दूषण लहै ।
अर्क अनेक भांतिके जेह, खइवे में आवत है तेह ॥७८
आली वस्तु रहै दिन धना, तामें दोष लगै मदतना ।
अब सुनि आमिष दोष जु भया, चर्मादिक घृत तेल न लया ॥७९
हींग कदापि न खावन वुधा, वीधौ सीधौ भखिवो मुधा ।
चून चालियो चलनी चाम, नीच जाति पीस्यौ हु न काम ॥८०
फूल आर्यो खान अखान, फूल्यौ साग तजौ मतिवान ।
कन्द अथाणा माखन त्याग, हाट मिठाई तज वडभाग ॥८१
निसि भोजन अणछण्यू नीर, आमिप तुल्य गिनें वर-वीर ।
निसि पीस्यौ निसि रांध्यो होय, हाड़ चाम को परस्यो जोय ॥८२
मास अहारी के घर तनौ, सो सब मांस समानहिं गिनौं ।
विकलत्रय अर तिर नर जेह, तिनको मास रुधिरमय जेह ॥८३
तजौ सर्व आमिष अघ-खानि, या सम पाप न और प्रमानि ।
त्यागौ महुत जु मदिरा समा, मधु दोउको नाम निरभ्रमा ॥८४
अर जिन वस्तुनि मे मधुदोष, सो सब तजह पापगण-पोष ।
दाखिव और मुनक्का आदि, इनहिं माहिं तिनको पन नादि ॥८५

मधु मदिरा पल जे नर गहे, ते शुभ गतित्ते दूरहिं रहै।
नरक निगोद माहि दुख सहे, अतुल अपार त्रासना लहे ॥८६
ताते तीन मकार धिकार, मद्य मास मधु पाप अपार।
ये तीनो औ पच कुफला, तीन पाँच ये आठो मला ॥८७
इन आठो में अगणित त्रसा, उपजै मरण करे परवसा।
जीव अनंता बहुत निगोद, ताते कृत कारित अनुमोद ॥८८
इनको त्याग किये वसु मूल गुणा होहिं अघत्ते प्रतिकूल।
पांच उदम्बर तीन मकार, इनसे पाप न और प्रकार ॥८९
बार-बार इनको धिक्कार, जो त्यागै सो धन्य विचार।
इन आठनिसे चौदा और, भखै सु पावै अति दुख ठौर ॥९०॥
वहुत अभक्षनमें बाईस, मुख्य कहे त्यागे व्रतईस।
ओला नाम वड़ा जु वखानि, जीव-रासि भरिया दुख-खानि ॥९१
अणछणया जलके बँधाण, दोष करै जैसे सघाण।
भखै पाप लागे अधिकाय, ताते त्याग करौ सुखदाय ॥९२
घोल वडा मे दूषण वडा, खाहि तिके जाणे अति जडा।
दही मही मे बिदल जु वस्तु, खाये सुकृत जाय समस्त ॥९३
तुरत पंचेन्द्री उपजे तहा, विदल दही मुख मे ले जहा।
अन्न मसूर मू ग चणकादि मोठ उड़द मट्टर तूरादि ॥९४
अर मेवा पिस्ता जु बदाम, काजू चारौली अति नाम।
जिन वस्तुनि की ह्वै द्वै दाल, सो सो सब दधि भेला टालि ॥९५
जानि निशाचर जे निशि चरे, निशि-भोजन करि भव दुख करे।
ताते निशि-भोजन तजि भया, जो चाहे जिनमारग लया ॥९६
दोय मुहूरत्त दिन जब रहै, तबते चउबिहार बुध गहै।
जौलौ जुगल मुहूरत्त दिना, चढि है तौलौं अनसन गिना ॥९७
रात्त-बसौ अर रातहिं कियो, रात्त-पिस्यौ कवहूँ नहिं लियौ।
जहा होय अधेरो वीर, तहा दिवस हू असन न वीर ॥९८
दृष्टि देखि भोजन करि शुद्ध, दृष्टि देखि पग धरहु प्रबुद्ध।
बहुबीजा जामे कण धणा, ते फल कुफल जिनेसुर भणा ॥९९
प्रगट तिजारा आदिक जेह, बहुबीजा त्यागौ सब तेह।
वेगण जाति सकल अघ-खानि, त्याग करौ जिन आज्ञा मानि ॥१००
सधाणा दोषीक विसेस, सो भव्या छाडौ जु असेस।
ताके भेद सुनो मन लाय, सुनि यामे उपजें अधिकाय ॥१०१
अत्थाणा सधाणा मथाण, तीन जाति इनकी जु बखानि।
राई लूणी कलजी आदि, अबादिक मे डारहि बादि ॥१०२
नाखि तेल मे करहिं अथाण, या सम दोष न सूत्र प्रमाण।
त्रस जीवा तामे उपजन्त, मखिया आमिष दोष लहन्त ॥१०३

नीवू आम्रादिक जे फला, लूण माहिं डारै नहि भला ।
याको नाम होय सधाण, त्यागे पण्डित पुरुष सुजाण ॥१०४
अथवा चलित रसा सब वस्त, संधाणा जाणो अप्रशस्त ।
बहुरि जलेबी आदिक जोय, डोहा राव मथाणा होय ॥१०५
लूण छांछि माही फल डारि, केर्यादिक जे खाहि गवारि ।
तेहि विगारे जन्म स्वकीय, जैसे पापी मदिरा पीय ॥१०६
अब सुनि चून तनी मरजाद, भाषै श्री गुरुजी अविवाद ।
शीतकाल मे सातहि दिना, ग्रीषम मे दिन पांचहिं गिना ॥१०७
वरषा रितु माही दिन तीन, आगे सधाणा गण लीन ।
मरजादा बीते पकवान, सो नही भक्ष कहे भगवान ॥१०८
ताहि भखे जु असूत्री लोक, पावैं दुरगति मे दुख शोक ।
मर्यादा की विधि सुनि धीर, जो भाषी गौतम प्रति वीर ॥१०९
जामे अन्न जलादिक नाहिं, कछु सरदी जामाहिं नाहिं ।
वूरा और बतासा आदि, बहुरि गिदौडादिक जु अनादि ॥११०
ताकी मर्यादा दिन तीस, शीतकाल मे भाषी ईश ।
ग्रीष्म पदरा वर्षा आठ, यह धारौ जिनवाणी पाठ ॥१११
अर जो अन्नतणो पकवान, जलको लेश जु याहै जान ।
आठ पहर मरजादा तास, भाषे श्री गुरु धर्म प्रकाश ॥११२
जल-वर्जित जो चूनहि तनी, घृत मीठी मिलिकै जो बनी ।
ताकी चून समानहिं जानि, मरजादा जिन-आज्ञा मानि ॥११३
भुजिया बडा, कचौरी पुवा, मालपुवा घृत तेलहि हुआ ।
इत्यादिक है अवरहु जेह, लुचई सीरा पूरी एह ॥११४
ते सव गिनी रसोई समा, यह उपदेश कहे पति रमा ।
दारि भात कडही तरकारि, खिचडी आदि समस्त विचारि ॥११५
दोय पहर इनकी मरजाद, आगे श्री गुरु कहे अखाद ।
केई नर सधारक त्यागि, ल्यूंजी खाँय सवादहिं लागि ॥११६
केरी नीवू आदि उकालि, नाना विधि सामग्री घालि ।
सरस्यूं केरी तेल तपाय, तामे तले सकल समुदाय ॥११७
जिह्वालपट वहु दिन राख, खांय तिन्हे मतिमद जु भाख ।
तरकारी सम ल्यूंजी एह, आगे सधाणा समुझेह ॥११८
अणजाण्यू फल त्यागहु मित्र, अणछाण्यो जल ज्यों अपवित्र ।
त्यागी कंदमूल बुधिवत, कंदमूल में जीव अनंत ॥११९
गारि न कबहुँ भखहु गुणवन्त, गारी कबहु न काढउ मन ।
डरी गारि मे जीव असंग, तिन्है नाशु असक, अकम ॥१२०
जा खाये छूटैं निज प्राण, सो विषजानि अभक्ष प्रवान ।
आफू और सहोग आदि, तजो सकल मुनि सूत्र अनादि ॥१२१

काचौ माखण अति हि सदोष, भखिया करै सबै शुभ सोख।
पहले आमिष दूषण माहिं, पुनि-पुनि निन्द्यौ सशय नाहिं ।।१२२
फल अति तुच्छ खाहु मति वीर, निन्दे महावीर जगधीर।
पाली राति जमावै कोय, ताहि भखत दुरगति फल होय ।।१२३
निज सवाद तजि ह्वै विपरीत, सो रस-चालित तजो भवभीत।
आगे मदिरा दूषण महै, निद्यौ ताहि सु बुध नहि गहै ।।१२४
ए बाईस अभख तजि सखा, जो चाहौ अनुभव रस चखा।
अवर अनेक दोषके भरे, तजो अभख भव्यनि परिहरे ।।१२५
फूल जाति सब ही दोषीक, जीव अनन्त फिरे तहकीक।
कबहु न इनको सपरस करौ, इह जिन आज्ञा हिरदै धरौ ।।१२६
खावौ और सूँघिवौ सदा, इनकू तजहु न ढाकहु कदा।
शाक पत्र सब निंद बखानि, त्याग करौ जिन आज्ञा मानि ।।१२७
नेम धर्म व्रत राख्यौ चहै, तौ इन सबकू कबहु न गहै।
झाड़ तने बड वोरि जु तनें, तजौ वौर त्रस जीव जु घने ।।१२८
पेठा और कोहला तजौ, तजि तरबूज जिनेसुर भजौ।
जांबू और करोदा जेहु, दूध झरै त्यागौ सहु तेह ।।१२९
कन्द शाक दल फल जु त्यागि, साधारण फलतें दुर भागि।
जो प्रत्येकहु छाड़ै वीर, ता सम और न कोई धीर ।।१३०
जो प्रत्येक न त्यागे जाय, तौ परमाण करो सुखदाय।
तेहु अलप ही कबहुक खाय, नहिं तौडे न तुडावन जाय ।।१३१
ताजा ले बासी नहिं भखै, रस चलितादिक कवहुँ न चखै।
हरित कायसो त्यागै प्रीति, सो जाने जिन-मारग रीति ।।१३२
जे अनन्तकाया दुखदाय, सब साधारण त्यागौ राय।
तजि केदार तूबड़ी सदा, खाहु म नाली ढिस तुम कदा ।।१३३
कचनारादिक डौडी तजौ, तजि अण फोडयो फल जिन भजौ।
पहलो बिदलतनू अति दोष, भाख्यौ भेद सुनहु तजि रोष ।।१३४
अन्न मसूर मूग चणकादि, तिनकी दालि जु होय अनादि।
अर मेवा पिस्ता जु निदाम, चारौली आदिक अतिनाम ।।१३५
जिन जिन वस्तुनि की है दालि, सो सो सव दधि भेला टालि।
अर जो दधि भेलो, भिष्टान तुरतहिं खावा सूत्र प्रमान ।।१३६
अन्तमुहूरत पीछे जीव, उपजे इह गावे जगपीव।
तातें मीठा जुत जो दही, अन्तमुहूरत पहले गही ।।१३७
दधि-गुड़ खावौ कवहु न जोग, वरजे श्री वस्तु अजोग।
पुनि तुम सुनहु मित्र इक बात, राई लूण मिले उतपात ।।१३८
तातें दही मही मे करै, तजौ रायता काजी वरै।
घी ताजा गहिवौ भवि लोय, सूद्रनिको घृत जोगि न होय ।।१३९

स्वाद-चलित जो खावै घीव, सो कहिये अविवेकी जीव।
धिरत सोधिको लेवौ अल्प, भजिवौ जिनवर त्यागि विकल्प ॥१४०
घृतहू छाड़ै तौ अति तपा, नीरस तप धरि श्रीजिन जपा।
सिंधव लोंन व्रतिनिको लेन, कृत्रिम लोन सबै तजि देन ॥१४१
जो सिंधवहू त्यागै भया, महा तपस्वी श्रुत मे लया।
अब तुम गोरस की विधि सुनो, जिनवर की आज्ञा उर गुणों ॥१४२
दोहत जब महिषी अर गाय, तबतें इह मरजाद गहाय।
काचौ दूध न राखै सुधी, ह्वै घटिका राखै तौ कुधी ॥१४३
काचौ दूध न लेवौ वीर, अणछाण्यू पय तजिवो धीर।
अंतर एक मुहूरत बसा, उपजै जीव असखित त्रसा ॥१४४
जाको पय ह्वै तैसे जीव, प्रगटे इह भावे जगपीव।
पंचेन्द्री सम्मूर्छन प्राणि, भैया तू जिनवचन प्रवाणि ॥१४५
इह तो दूध तणी विधि कही, अब सुनो दही महीकी सही।
जामण दीयौ ह्वै जिह दिना, ताके दूजौ दिन शुभ गिना ॥१४६
पीछे दधि खावौ नहिं जोगि, इह भाषे जिनराज अरोगि।
दधि को मथियौ पानी डारि, ताको नाम जु छाछि विचारि ॥१४७
ताही दिवस होय सो भक्ष, यह जिन आज्ञा हैं परतक्ष।
मथता ही जा माही तोय, बहुर्यो वारि न डार्यो होय ॥१४८
माथिया पाछे काचौ वारि, नाख्यौ सो लेवौ जु विचारि।
जेतो काचा जलको काल, तेतौ ही ताको जु विचारि ॥१४९
छणयूं जल सो काचौ रहै, एक मुहूरत जिनवर कहै।
आगे त्रसजीवा उपजंत, अणछणया को दोष लगत ॥१५०
तिक्त कषाय मिल्यौ जो नीर, सो प्राशुक भाख्यौ जिन वीर।
दोय पहर पहिली ही गहौ, यह जिन आज्ञा हिरदै बहो ॥१५१
तातौ जल जो भात उकाल, आठ पहर मरजादा काल।
आगे सनमूर्छन उपजाहिं, पीवत धर्मध्यान सब जाहिं ॥१५२

दोहा

अघ-तरुवर को मूल इह, मोह मिथ्यात जु होय।
राग द्वेष कामादिका, ए सकंध वहु जोय ॥१५३
अशुभ क्रिया शाखा घनी, पल्लव चंचल भाव।
पत्र असजम अव्रता छाया नाहिं लखाव ॥२५४
इह भव दुख भाखै पहुप, फल निगोद नरकादि।
इह अघ-तरु को रूप है, भव-वन माँहि अनादि ॥१५५

चौपाई

क्रिया कुठार गहै कर कोय, अघ-तरुवरको काटै सोय।
जे वेचैं दधि और जु मठा, उदर भरण के कारण शठा ॥१५६

तिनको मोल लेय जे खाहिं, ते नर अपनो जन्म नसाहिं ।
तातैं मोललनों दधि तजौ, यह गुरु आज्ञा हिरदै भजौ ॥१५७
दधी जमावै जा विधि ब्रती, सो विधि धारहु भार्षहिं जती ।
दूध दुहाकर ल्यावै जबै, ततछिन अगनि चढावै तबै ॥१५८
रूपौ गरम करै पयमाहि, जामण देय जु ससै नाहिं ।
जमे दही या विधि कर जोहु, बाधै कपरा माही सोहु ॥१५९
बूद रहै नहिं जल की एक, तबहिं सुकाय धरै सुविवेक ।
दही वडी इह भाषी सही, गृही जमावै तासो दही ॥१६०
अथवा दधि मे रूई भेय, कपरा भेय सुकाय धरेय ।
राखै इक द्वै दिन ही जाहि, बहुत दिना राखै नहिं ताहि ॥१६१
जल मे घोलिर जामण देय, दधि ले तौ या विधि करि लेय ।
और भाँति लेवौ नहिं जोगि, भाखे जिनवर देव अरोगि ॥१६२
शीतकाल की इह विधि कही, उष्णऊ बरषा राखै नही ।
जो हि सर्वथा छाँडै दधी, तासम और न कोई सुधी ॥१६३
सूद्रतने पात्रनि को दुग्ध, दधि-घृत-छाछि भखे ते मुग्ध ।
उत्तम कुल हू जे मतिहीन, क्रियाहीन जु कुविसन अधीन ॥१६४
तिनके घरको कछहु न जोगि, तिनकी किरिया बहुल अजोगि ।
दूध ऊँटणी भेडिन तनो, निद्यौ जिनमत माही घनो ॥१६५
गो महिषी बिन और न भया, कबहु न लेनो नाही पया ।
महिषी दूध प्रमाद करेय, ताते गायनि की पय लेय ॥१६६
नीरसव्रत घर दूधहिं तजै, ताते सकल दोष ही भजै ।
हाटे विकते चूनरु दालि, बुधजन इनको खावौ टालि ॥१६७
बोधौ खोटौ पीसै दलै, जीवदया कैसे करि पलै ।
चूनो संखतणो कसतूरि, इनको निंद कहे जिनसूरि ॥१६८

दोहा

चरम-सपरसी वस्तु को, खातैं दोष जु होय ।
ताको सक्षेपहिं कथन, कहो सुनो भवि लोय ॥१६९
मूये पसूके चर्मको, चीरै जो चडार ।
ता चडालहिं परसिकै, छोति गिने ससार ॥१७०
तो कैसे पावन भयौ, मिल्यौ चर्म सो जोहि ।
आमिष तुल्य प्रभू कहे, याहि तजौ बुध सोहि ॥१७१
उपजै जीव अपार सुनि, जिनवानी उर धारि ।
जा पसुको है चर्म जो, तैसे ही निरधारि ॥१७२
सन्मूर्छन उपजै जिया, ताते जल घृत तेल ।
चर्म सपरसे त्यागिये, भापे साधु अचेल ॥१७३

जैसे सूरज कांच के, रूई बीचि धरेय।
प्रगटै अगनि तहाँ सही, रूई भस्म करेय ॥१७४
तैसे रस अर चर्म के जोगै, जिय निपजाहि।
खावे वारे के सकल, धर्मव्रत लुपि जाँहि ॥१७५
जीमत भोजन के समै, मुवौ जिनावर देखि।
तजै नही जे असनको, ते दुरबुद्धि विशेखि ॥१७६
जे गँवार पाठातनी, फली खाय मतिहीन।
तिनके घट नहिं समुझि है, यह भावै परवीन ॥१७७

रसोई, परंडा, चक्की आदि क्रियाओ का वर्णन। चौपाई

जा घर माँहि रसोई होय, धारे चदवा उत्तम सोय।
बहुरि परंडा ऊपर ताणि, उखली चाकी आदिक जाणि ॥१
फटकै नाज बीणिये जहाँ, चून चालिये भैय्या तहाँ।
अर जिह ठौर जीमिये धीर, पुनि सोवे की ठौहर वीर ॥२
तथा जहाँ सामायिक करै, अथवा श्री जिनपूजा धरै।
इतने थानक चदवा होय, दीखै श्रावक को घर सोय ॥३
चाकी अर उखली परमाण, ढकणा दीजै परम सुजाण।
श्वान बिलाव न चाटै ताहि, तव श्रावक को धर्म रहाहि ॥४
मूसल धोय जतन सो धरै, निशि घोटन पीसन नहिं करै।
छाज तराजू अर चालणी, चर्मतणी भविजन टालणी ॥५
निशिको पीसै घोटै दलै, जीवदया कबहूँ नहिं पलै।
चाकी गालै चून रहाय, चोटी आदि लगै तसु आय ॥६
निसिको पीसत खबर न परै, तातें निशि पीसन परिहरै।
तथा रातिको भीज्यौ नाज, खावौ महापाप को साज ॥७
अंकूरे निकसे ता माहिं, जीव अनन्ता सशय नाहिं।
तातै भीज्यौ नाज अखाज, तजौ मित्र अपने सुखकाज ॥८
सुल्यौ सड्यौ गडियौ जो धान, फूली आयौ होय नखान।
स्वाद चलित खावौ नहिं वीर, रहिवौ अति विवेकसू धीर ॥९
नहिं छीवै गोवर गोमूत, मल, मूत्रादिक महा अपूत।
छाणा ईंधन काज अजोगि, लकडी हू वीधी नहिं जोग ॥१०
जेती जाति मुरब्बा होय, लेणा एक दिवस ही सोय।
पीछे लागै मधुको दोष, तासम और न अघ को पोष ॥११
आयाणा का नाम अचार, भखे अविवेकी अविचार।
या सम अणाचार नहिं कोय, याको त्याग करें बुध सोय ॥१२

राह चल्यौ भोजन मति खाहु, उत्तम कुलको धर्म रखाहु ।
निकट रसोई भोजन करौ, अणाचार सब ही परिहरौ ॥
करौ रसोई भूमि निहारि, जीव-जन्तु की बाधा टारि ॥१३

वेसरी छन्द

दोब खोदि मति करौ रसोई, तहा जीव की हिंसा होई ।
मलिन वस्तु अवलोकन होवै, सो थानक तजि औरहिं जोवै ॥१४
नरम पूजणी सो प्रतिलेखै, करै रसोई चर्म न देखै ।
माटी के वासण इक बारा, दूजी विरिया नाही अचारा ॥१५
जो दूजे दिन राखै कोई, सो नर सूद्रनि सदृश होई ।
मिटै न सरदी करै न कोई, मिट्टी के वासण की भाई ॥१६
उपजे जीव असख्य जु तामे, बासी भोजन दूषण जामे ।
दया न किरिया उत्तम ताई, माटी के वासण मे भाई ॥१७
तातै भले धातु के बासन, इह आज्ञा गावै जिन शासन ।
धातु-पात्र ही नीका मजै, सोई अशन-अक्रिया भजै ॥१८
रहै अशन को लेश जु कोई, सो बासन माज्यौ नहिं होई ।
दया क्रिया को नास जु तामे, अन्न जोग उपजे जिय जामे ॥१९
माजि धोय अर पू छ जु राछा, राखै उज्जल निर्मल आछा ।
दया सहित करणी सुखदाई, करुणा बिन करणी दुखदाई ॥२०
जीवनिकू सन्ताप न देवै, तब आचार तणी विधि लेवै ।
बिन जिनधर्मा उत्तम वसा, देइ न लेय सुराक्ष नृशंसा ॥२१
श्रावक कुल किरिया करि युक्ता, तिनके करको भोजन युक्ता ।
अथवा अपने करको कीयौ, आरम्भी श्रावक ने लीयौ ॥२२
अन्यमती अथवा कुलहीना, तिनक करको कवहु न लीना ।
अन्य जाति जो भीटै कोई, तौ भोजन तजवौ है सोई ॥२३
नीली हरी तजै जो सारी, ता सम और नही आचारी ।
जो न सर्वथा छाडी जाई, तौ प्रत्येक फला अलपाई ॥२४
हरी सुकावौ योग्य न भाई, जामे दोष लगै अधिकाई ।
सूके पत्र औषधी लेवा, भाजी सूकी सब तजि देवा ॥२५
पत्र-फूल-कन्दादि भखे जे, साधारण फल मूढ चखे जे ।
ते नहिं जानो जैनी भाई, जीभ-लपटी दुरगति जाई ॥२६
पत्र-फूल-कन्दादि सबै ही साधारण फल सर्व तजै ही ।
अर तुम सुनहु विवेकी भैय्या, भेलै भोजन कबहु न लैया ॥२७
मात तात सुत बाधव मित्रा, भेले भोजन अति अपवित्रा ।
महा दोष लागै या माही, आमिष को सो संशय नाही ॥२८

अपने भोजन के जे पात्रा, काहूकू नहिं देय सुपात्रा।
वुधजन भेले जीमे कैसे, भाषे श्री जिन-नायक ऐसे ॥२९
माहि सराय न भोजन भाई, जव श्रावक को व्रत्त रहाई।
अन्तिज नीचनि के घर माही, कवहुँ रसोई करणी नाही ॥३०
मास त्यागि व्रत जो नि धारै, नीचन को संगर्ग न कारै।
उत्तम कुलहू परमट धारी, तिनहू के भोजन नहिं कारी ॥३१
जैन धर्म जिनके घट नाही, अन्य देव पूजा घर माही।
तिनको छूयौ अथवा करको, कवहू न खावै तिनके घरको ॥३२
कुल किरिया करि आप समाना, अथवा आप थकी अधिकाना।
तिनको छुयौ अथवा करको, भोजन पावन तिनके घरको ॥३३
अर जे छाणि न जाणे पाणी, अन्न वीण की रीति न जाणी।
भक्षाभक्ष भेद नहिं जानें, कुगुरु कुदेव मिथ्यामत मानें ॥३४
तिनतें कैसी पाति जु मित्रा, तिनको छूयौ है अपवित्रा।
चर्म रोम मल हाथी दन्ता, जेहिं कचकडा विमल कहन्ता ॥३५
तिनतें नहिं भोजन सम्वन्धा, यह किरिया को कह्यौ प्रवन्धा।
जङ्गम जीवनि के जु शरीरा, अस्थि चर्म रोमादिक वीरा ॥३६
सव अपवित्रा जानि मलीना, थावर दल भोजन मे लीना।
रोमादिक को सपरस होवै, सो भोजन श्रावक नहिं जोवै ॥३७
नीला वस्त्र न भीटै सोई, नाहिं रेशमी वस्त्र हु कोई।
विन धोया ह्वै कपरा नाही, इह आचार जैनमत नाही ॥३८
दया लिया ह्वै किरिया धारी, भोजन करै सोधि आचारी।
पाच ठावसूं भोजन नाही, धोति दुपट्टा विमल धराही ॥३९
विन उज्ज्वलता भई रसोई, त्याग करै ताकूं विधि जोई।
पंचेन्द्री पसु हू को छूयौ, भोजन तजै अविधितें हूयौ ॥४०
सोध तनी सव वस्तु जु लेई, वस्तु असोधी त्यागैं तेई।
अन्तराय ओ परे कदापी, तजैं रसोई जीव निपापी ॥४१
दया क्रिया विन श्रावक कैसे, वुद्धि पराक्रम विन नृप जैसे।
मांस रुधिर मल अस्थि जु, चामा तथा मृतक प्राणी लखि रामा ॥४२
अर जो वस्तु तजी है भाई, सो कवहू जो थाल धराई।
तौ उठि वैठे होउ पवित्रा, यह आज्ञा गावै जगमित्रा ॥४३
दान विना जीमौ मति वीरा, इह आज्ञा धारौ उर धीरा।
विना दान भोजन अपवित्रा, शक्ति प्रमाणे दान दो चित्रा ॥४४
मुनी अर्जिका श्रावक कोई, कै सुश्राविका उत्तम होई।
अथवा अव्रत सम्यकदृष्टी, जिह उर अमृतधारा वृष्टी ॥४५
इनकूं महाभक्ति करि देहो, तिनके गुण हिरदा मे लेहो।
अथवा दुखित भुखित नर नारी, पसु पंखी दुखिया ससारी ॥४६

अन्न वस्त्र जल सबको देना, नर भव पाये का फल लेना ।
तिर्यचनिकूं तृण हू देना, दान तणो गुण उरमे लेना ॥४७
भोजन करत ओठि जिन छोड़ौ, ओठि खाय देही मति भाडौ ।
काहूकूं उच्छिष्ट न देनो, यही बात हिरदै धरि लेनी ॥४८
अन्तराय जो परै कदापी, अथवा छीवे खल जल पापी ।
तब उच्छिष्ट तजन नहिं दोषा, इह भाषे वुधजन व्रत पोषा ॥४९
घृत दधि दूध मिठाई मेवा, जोहि रसोई माहि जु लेवा ।
सो सब तुल्य रसोई जानो, यह गुरु आज्ञा हिरदै मानो ॥५०
जहा बापरै अन्न रसोई, ताते न्यारे राखै जोई ।
जेतौ चहिये तेतौ ल्यावै, आवै, सो वर्तन मे आवै ॥५१
पाका वस्तु रु भोजन भाई, एक भये वाहिर नहि जाई ।
जल अर अन्न तणो पकवाना, सो भोजन ही सादृश जाना ॥५२
असन रसोई वाहर जावै, मो बढ वोपा नाम कहावे ।
मौन विना भोजन वरज्या है, मौन सात श्रुत माहि कह्या है ॥५३
भोजन भजन स्नान करता, मैथुन वमन मलादि करता ।
मूत्र करता मौन जु होई, इह आज्ञा धारै बुध सोई ॥५४
अन्तराय अर मौन जु सप्ता, पालै श्रावक पाप अलिप्ता ।
अव जल की किरिया सुनि धर्मी, जे नहि धारे तेहि अधर्मी ॥५५
नदी तीर जो होय मसाणा, सो तजि घाट जु निन्द्य वखाणा ।
और घाटको पाणी आणो, इह जिन आज्ञा हिरदै जाणो ॥५६
लोक भरत जे निजरमा आवै, तिनके ऊपरलौ जल ल्यावै ।
सरवर माहि गाव को पानी, आवै सो सरवर तजि जानी ॥५७
गावथकी जो दूरि तलावा, ताका जल ल्यावौ सुभ भावा ।
तजौ अपावन नदी किनारा, अब वापी की विधि सुनि वीरा ॥५८
जा माही न्हावै नर नारी, कपरा धोवहि दातुनि कारी ।
ता वापी को जल मति आनो, तहा न निर्मलताई जानो ॥५९
कूपतणी विधि सुनहु प्रबीना, जहा भरै पानो कुल हीना ।
तहा जाहि मति भरवा भाई, तबै ऊचको धर्म रहाई ॥६०
उत्तम नीच यहै मरजादा, यामे है कहुँ हू न विवादा ।
यवन अन्तिजा सबसे हीना, इनको कूप सदा तजि दीना ॥६१
अव तुम बात सुनो इक औरै, शका छाडि बखानौ चौरै ।
धर्म रहित के पानी घर को, त्यागौ वारि अधर्मी नरको ।
बिन साधर्मी उत्तम बसा, पर घर की छाडौ जल असा ॥६२

दोहा

जल के भाजन धातु के, जो होवे घर माहिं ।
पूछ माजि नित धोयवा, यामे सशय नाहिं ॥६३

अर जे वासण गारके, गागर घट मटकादि ।
ते हि अल्प दिन राखिवौ, इह आज्ञा जु अनादि ।।६४
राति सुकाय धराय वा, माटी वासण वीर ।
तिनमे प्रातहि छाणिवौ, आछी विधिसो नीर ।।६५
जौ नहि राखै गारके, जल भाजन बुधिवान ।
राखै वासण धातु ही, सो अति ही शुचिवान ।।६६

चौपाई

इह तौ जल की क्रिया वताई, अव सुनि जल-गालन विधि भाई ।
रंगे वस्त्र नहि छानो नीरा, पहरे वस्त्र न गालौ वीरा ।।६७
नाहि पातरे कपड़े गालौ, गाढे वस्त्र छाड़ि अघ टालौ ।
रेजा दिढ आंगुल छत्तीसा, लंवा अर चौरा चौवीसा ।।६८
ताको दो पुडता करि छानो, यही नातणा की विधि जानो ।
जल छाणत इक वूंदहु धरती, मति डारहु भाषे महावरती ।।६९
एक बूंद में अगणित प्राणी, इह आज्ञा गावै जिनवाणी ।
गलना चिउंटी धरि मति दावौ, जीव दयाको जतन धरावौ ।।७०
छाणे पाणी वहुते भाई, जल गलणा धोवै चित लाई ।
जीवाणी को जतन करौ तुम, सावधान ह्वै विनवे क्या हम ।।७१
राखहु जलकी किरिया शुद्धा, तब श्रावक व्रत लधौ प्रबुद्धा ।
जा निवांणकौ ल्यावौ वारी, ताही ठौर जिवाणी डारी ।।७२
नदी तालाब बावड़ी माही, जलमे जल डारौ सक नाही ।
कूप माहि नाखौ जु जिवाणी, तौ इह बात हिये परवाणी ।।७३
ऊपरसू डारौ मति भाई, दयाधर्म धारौ अधिकाई ।
भवरकली को डोल मंगावौ, ऊपर नीचे डौरि लगावौ ।।७४
द्वै गुण डोल जतन करि वीरा, जीवाणी पधरावौ धीरा ।
छाण्या जल को इह निरधारा, थावरकाय कहे गणधारा ।।७५
द्वै घटिका तीतै जो जाको, अणछाण्यां को दोष जु ताकों ।
तिक्त कषाय मेलि किय फासू, ताहि अचित्त कहे श्रुत-भासू ।।७६
पहर दोय बीतै जो भाई, अगणित त्रस जीवा उपजाई ।
ड्योढ़ तथा पौणा दो पहरा, आगे मति वरतौ बुधि-गहरा ।।७७
भात उकाल उष्ण जल जो है, सात पहर ही लेणो सो है ।
बीते वसु जामा जल उष्णा, त्रस भरिया इह कहै जु विष्णा ।।७८
विष्णु कहावे जिनवर स्वामी, सर्व व्यापको अन्तर-यामी ।
या विधि पाणी दिवसे पीवौ, निसिकू जल छाडौ भवि जीवौ ।।७९
अशन पान अर खादिम स्वादी, निशि त्यागे विन व्रत सव वादी ।
दया विना नहि व्रत जु कोई, निग भोजन मे दया न होई ।।८०

छाण्यूं जाय न निसकों नीरा, वीण्यू जाय न धानहुँ वीरा।
छाण बीण विन हिंसा होवै, हिंसातै नारक पद जोवैं ॥७१
अवर कथन इक सुनने योगा, सुनकर धारहु सुबुधि लोगा।
नारिन को लागै वड रोगा, मास मास प्रति होहि अजोगा ॥८२
ताकी किरिया सुनि गुणवन्ता, जा विधि भाषैं श्रीभगवन्ता।
दिवस पांच वीते सुचि होई, पांच दिनालौ मलिन जु सोई ॥८३
उक्तं च श्लोक—त्रिपक्षे शुद्ध्यते सूती, रजसा पंच वासरे।
अन्यशक्ता च या नारी, यावज्जीवं न शुद्ध्यते ॥१

अर्थ—प्रसूता स्त्री डेड महीनेमे शुद्ध होय है, रजस्वला पांच दिवस गये पवित्र होय है अर जो स्त्री परपुरुष सो रत भई सो जन्म पर्यन्त शुद्ध नाही, सदा अशुचि ही है।

बेसरी छन्द

पाच दिवस लौ सगरे कामा, तजिकर, रहिवौ एकै ठामा।
कछु धंधा करवौ नहि जाको भई अजोग अवस्था ताको ॥८४
निज भर्ताहूँ को नहिं देखै, नीची दृष्टि धर्म को पेखै।
दिवस पाचलौ न्हावौ उचिता, नितप्रति कपडा धोवो सुचिता ॥८५
काहूँ सो सपरस नहिं करिवौ, न्यारे आसन बासन धरिवौ।
जो कबहूँ ताके वासन सो, छुयौ राछ अथवा हाथन सो ॥८६
तो वह बासन ही तजि देवौ, या विधि शुद्ध जिनाज्ञा लेवौ।
अन्न वस्त्र जल आदि सबैही, ताकौ छुऔ कछू नहिं लेही ॥८७
कोरो पीस्यौ कछु नहि गहिवौ, ताकौ ताके ठामहिं रहिवौ।
ठौर त्याग फिरवौ न कितैही, इह जिनवर की आज्ञा है ही ॥८८
करवौ नाही अशन गरिष्ठा, नाही जु दिवसे शयन वरिष्ठा।
हास कुतूहल तैल फुलेला, इन दिन माहिं न गीत न हेला ॥८९
काजल तिलक न जाको करिवौ, नाहिं महावर महेदी धरिवौ।
नख केशादि सुधार न करनो, या विधि भगवत-मारग धरनो ॥९०
और त्रियन मे मिलवौ जाको, पच दिवस है वर्जित ताको।
चंडाली छूते अति निंद्या, भाषे जिनवर मुनिवर वद्या ॥९१
पंच दिवस पति ढिग नहिं जावौ, अर नहि वाके सज्या रचावौ।
भूमि-सयन है जोग्य जु ताको, सिंगारादि न करनो जाको ॥९२
छट्टे दिवस न्हाय गुणवन्ती, शुभ कपडा पहरै बुधिवन्ती।
ह्वै पवित्र पतिजुत जिन अर्चा, कर वातै धारै शुभ चर्चा ॥९३
पूजा दान करै विधि सेती, सुभ मारग माही चित देती।
निसि को अपने पति ढिग जावै, तौ उत्तम वालक उपजावै ॥९४

सुबुधि विवेकी सुव्रत-धारी, शीलवन्त सुन्दर अविकारी।
दाता सूर तपस्वी श्रुतधर, परम पुनीत पराक्रम भर नर ॥९५
जिनवर भरत वाहुवलि सगरा, रामहणू पांडव अर विदरा।
लव अंकुश प्रद्युम्न सरीसा, वृषभसेन गौतम स्वामी सा ॥९५
सेठ सुदर्शन जंबू स्वामी, गज कुमार आदि गुण-धामी।
पुत्र होय तौ या विधि को ह्वै, अर कवहुं पुत्री हो जो ह्वै ॥९७
तो सुशील सौभाग्यवती अति, नेम धरम परवीन हस गति।
वाल सुब्रह्मचारिणी शुद्धा, ब्राह्मी सुन्दरि सी प्रतिवुद्धा ॥९८
चन्दन बाला अनन्तमतीसी, तथा भगवती राजमतीसी।
अथवा पतिव्रता जु पवित्रा, ह्वै सुशील सीतासी चित्रा ॥९९
कै सुलोचना कौशल्या सी, शिवा रुकमनी वीशल्या सी।
नीली तथा अंजना जैसी, रोहणि द्रौपद सुभद्रा तैसी ॥१००
अर जो कोऊ पापाचारी, पंच दिवस वीते विन नारी।
सेवै विकल अन्ध अविवेकी, ते चंडालनि हूते एकी ॥१
अति ही धृणा उपजै ता समये, ताते कवहु न ऐसे रमिये।
फल लागै तौ निपट हि विकला, उपजै संतति सठ वे-अकला ॥२
सुत जन्में तौ कामी क्रोधी, लापर लपट धर्म विरोधी।
राजा वक वसु से अति मूढा, ग्रन्थनि माहि अजस आरूढा ॥३
सत्यघोष द्विज पर्वत दुष्टा, धवल सेठ से पाप सपुष्टा।
पुत्री जन्में तोहो कुशीली, पर-पुरुषा रति अवहीली ॥४
राव जसोधर की पटरानी, नाम अमृतादेवि कहानी।
गई नरक छट्ठे पति मारे, किये कुब्रज सो कर्म असारे ॥५
रात्रि विषैं कपरा ह्वै नारी, तौ इह वात हिये मे धारी।
पंच दिवस मे सो निसि नाही, ता विन पंच दिवस श्रुत माही ॥६
इह आज्ञा धारौ तजि पापा, तव पावौ आचार निपापा।
अव सुनि गृहपति के षट् कर्मा, जो भाखै जिनवर को धर्मा ॥७
निज पूजा अर गुरु की सेवा, पुनि स्वाध्याय महासुख देवा।
संजम तप अर दान करौ नित, ए षट् कर्म धरौ अपने चित ॥८
इन कर्मनि करि पाप जु कर्मा, नासैं भविजन सुनि निज धर्मा।
चाकी उखरी और वुहारी, चूला वहुरि परडा धारी ॥९
हिंसा पांच तथा घर धन्धा, इन पापनि करि पाप हि वधा।
तिनके नासन कों षट कर्मा, सुभ भावै जिनवर को धर्मा ॥१०
ए सव रीति मूल गुण माही, भाषे श्री गुरु ससै नाही।
आठ मूल गुण अंगीकारा, करौ भव्य तुम पाप निवारा ॥११
अर तजि सात विसन दुखकारी, पाप मूल दुरगति दातारी।
जूवा आमिष मदिरा दारी, आखेटक चोरी पर नारी ॥१२

जूवा सम नहिं पाप जु कोई, सब पापनि कौ यह गुरु होई।
जूवारी कौ संग जु त्यागौ, द्यूत कर्म के रग न लागौ ॥१३
पासा सारि आदि बहु खेला, सब खेलनि मे पाप हि भेला।
सकल खेल तजि जिन भजि प्रानी, जाकर होय निजातम ज्ञानी ॥१४
ठौर ठौर मद मास जु निंदै, ताते तजिये प्रभू को बदै।
तज वेश्या जो रजक-शिला सम, गनिका को घर देखहु मति तुम ॥१५
त्यागि अहेरा दुष्ट जु कर्मा, ह्वै दयाल सेवौ जिन धर्मा।
करै अहेराते जु अहेरी, लहै नर्क मे आपद ढेरी ॥१६
क्षत्री को इह होय न कर्मा, क्षत्री को है उत्तम धर्मा।
क्षत् कहिये पीरा को नामा, पर-पीरा-हर जिनको कामा ॥१७
क्षत्री दुर्बल को किम मारै, क्षत्री तो पर-पीरा टारै।
मांस खाय सो क्षत्री कैसो, वह तौ दुष्ट अहेरी जैसो ॥१८
अर जु अहेरी तजै अहेरा, दयापाल ह्वै जिनमत हेरा।
तौ वह पावै उत्तम लोका, सबको जीव-दया सुख थोका ॥१९
त्यागौ चोरी जो सुख चाहौ, ठग विद्या तजि लोभ विलाहौ।
पर धन भूले विसरे आयौ, राखौ मति यह जिन श्रुत गायौ ॥२०
लूटि लेहु मति काहू को धन, पर धन हरवेको न धरौ मन।
चुगली करन, लुटावौ काकों, छाडो भाई अन्य रमा को ॥२१
काहू की न, धरोहरि दावौ, सूधौ राखौ मित्र हिसावौ।
तौल माहिं घटि-बधि मति कारौ, इह जिन आज्ञा हिरदै धारो ॥२२

दोहा

तजौ चोर की संगती, तासू नहिं व्यवहार।
चोरथो माल गृहौ मती, जो चाहौ सुख सार ॥२३
परदारा सेवन तजौ, या सम दोष न और।
याको निंदे जिनवरा, जो त्रिभुवन के मौर ॥२४
पापी सेवे पर तिया, परे नरक मे जायँ।
तेतीसा-सागर तहाँ, दुख देखें अधिकाय ॥२५
ताते माता बहन अर, पुत्री सम पर-नारि।
गिनो भव्य तुम भाव सो, शील वृत्त उर धारि ॥२६
जे जेठी ते मात सम, समवय वहन समान।
आप थकी छोटी उमरि, सो जिन सुता प्रमान ॥२७
निन्दे बिसन जु सात ए, सात नरक दुखदाय।
मन बच तिन ए परिहरौ, भजौ जिनेसुर पाय ॥२८
इन बिसननि करि वहु दुखी, भये अनन्ते जोव।
तिनको को वर्णन करै, ए निदे जग-पोव ॥२९

कैयक के भाखे भया, नाम, सूत्र-अनुसार।
राव जुधिष्ठर सारिखे, धर्मात्तम अविकार ॥३०
दुर्योधन के हठ थकी, एक वारही द्यूत।
... . ॥३१
हारि गये पांडव प्रगट, राज सम्पदा मान।
दुखी भये जो दीन जन, ग्रन्थनि माहिं बखान ॥३२
पीछे तजि सब जगत को, जगदीश्वर उर ध्याय।
श्री जिनवर के लोक को, गये जुधिष्ठर राय ॥३३
मांस भखनते वक नृपति, गये सातवे नर्क।
तोस तीन सागर महा, पायौ दुख संपर्क ॥३४
अमल थकी जदुनन्दना, रिषिको रिस उपजाय।
भये भस्मभावा सबै, पाप करम फल पाय ॥३५
कैयक उबरे जिन जपी, भये मुनीसुर जेह।
येह कथा जिनसूत्र मे, तुम परगट सुन लेह ॥३६
चारुदत्त इक सेठ हौ, करि गनिकासो प्रीति।
लही आपदा जिह घनी, गई संपदा बीति ॥३७
ब्रह्मदत्त पापी महा, राजा हौ मृग मार।
आखेटक अपराधते, बूड्यो नरक मझार ॥३८
चोरी करि शिवभूति शठ, लहे वहुत दुख दोष।
ताकी कथा प्रसिद्ध है, कहिवे को सतघोष ॥३९
परदारा पर चित्त धरी, रावण से वलवन्त।
अपजस लहि दुरगति गये, जे प्रतिहरि गुणवन्त ॥४०
विसन वुरे विसनी वुरे, तजौ इनो तै प्रीति।
व्रत क्रियाके शत्रु ये, इनमे एक न नीति ॥४१
अव सुनि भैया वात इक, गुण इकवीसौ जेह।
इनही मूल गुणानिको, परिवारो गनि लेह ॥४२
लज्जा दया प्रशांतता, जिन मारग परतीति।
पर औगुनको ढांकिवो, पर उपगार सुप्रीति ॥४३
सोमदृष्टि गुणग्रहणता, अर गरिष्ठता जानि।
सवसो मित्राई सदा, वैरभाव नहिं मानि ॥४४
पक्ष पुनीत पुमान की, दीरघदरसी सोय।
मिष्ट वचन वोलै सदा, अर वहु ज्ञाता होय ॥४५
अति रसज्ञ धर्मज्ञ जो, है कृतज्ञ पुनि तज्ञ।
कहै तज्ञ जाकूं वुधा, जो होवै तत्त्वज्ञ ॥४६
नही दीनता भाव कछु, नहिं अभिमान धरेय।
सवसों समताभाव है, गुण को विनय करेय ॥४७

पापक्रिया सब परिहरै, ए गुण होंय एकीस ।
इनको धारै सो सुधी, लहै धर्म जगदीश ॥४८
इन गुण बाहिर जीव जो, स्रावक नाहि गनेय ।
श्रावक व्रत के मूल ए, श्री जिनराज कहेय ॥४९
श्रावक ब्रत सब जाति को, जति-ब्रत तीन गहेय ।
द्विज क्षत्री वाणिज बिना, जति व्रत नाहि जु लेय ॥५०
अर एते विणज न करै, श्रावक प्रतिमा धार ।
धान पान मिष्टान अर, मोम हीग हरतार ॥५१
मादक लवण जु तेल घृत, लोह लाख लकडादि ।
दल फल कन्दादिक सबै, फूल फूस सीसादि ॥५२
चीट चाबका जेबडा, मूज डाभ सण आदि ।
पसु पखी नहिं विणजवो, साबुन मधु नीलादि ॥५३
अस्थि चर्म रोमादि मल, मिनखा बेचवौ नाहि ।
बन्दि पकडनी नाहि कछु, इह आज्ञा श्रुत माहि ॥५४
पशु-भाडे मति द्यौ भया, त्यागि शस्त्र व्यौपार ।
वध बंधन व्यवहार तजि, जो चाहौ भव-पार ॥५५
जहाँ निरतर अगिनि को, उपजै पापारभ ।
सो व्यौहार तजौ सुधी, तजौ लोभ छल दभ ॥५६
कन्दोई लोहार अर, सुवर्णकार शिल्पादि ।
सिकलीगर बाटी प्रमुख, अबर लखेरा आदि ॥५७
छीपा रगरेजादिका, अथवा कुम्भ जु कार ।
ब्रत धारी ए नहिं करै, उद्यम हिंसाकार ॥५८
रंग्यो नीलथकी जिको, सो कपरा तजि बीर ।
अति हिंसाकर नीपनो, है अजोगि वह चीर ॥५९
कूप तड़ाग न सोखियो, करिये नही अनर्थ ।
हिंसक जीव न पालिये, यह श्रुत धारौ अर्थ ॥६०
विषनि विणजवौ है भला, इसा विणजवौ नाहि ।
नही सीदरी सूतली, होय विणज के माहि ॥६१
बिणज करौ तो रतन को, कै कचन रूपादि ।
कै रूई कपडा तनो, मति खोवौ भव बादि ॥६२
जिनमे हिंसा अल्प ह्वै, ते व्यापार करेय ।
अति हिंसा के विणज जे, ते सव ही तज देय ॥६३
ए सब रीति कही वुधा, मूल गुणनि मे ठीक ।
ते धारौ सरधा करी, त्यागौ वात अलीक ॥६४
जैसे तरु के जड गिनी, अह मदिर के नीव ।
तैसे ए बसु मूलगुण, तप जप व्रत की सीव ॥६५

वेसरी छन्द

ए दुरगति दाता न कदेही, शिव-कारण ह्वै कहइ विदेही।
सम्यक सहित महाफल दाता, सव व्रत्तनि को सम्यक त्राता ॥६६
समकित सो नहिं और जु धर्मा, सकल क्रिया मे सम्यक पर्मा।
जाके भेद सुनो मन लाए, जाकरि आतम तत्व लखाए ॥६७
भेद वहुत पर द्वै वड भेदा, निश्चय अर व्यवहार अछेदा।
निश्चय सरधा निज आतम की, रुचि परतीति जु अध्यातम की ॥६८
सिद्ध समान लखै निज रूपा, अतुल अनन्त अखंड अनूपा।
अनुभव रसमें भोग्यौ भाई, धोई मिथ्या मारग काई ॥६९
अपनो भाव अपुनमे देखौ, परमानन्द परम रस पेखौ।
तीन मिथ्यात चौकड़ी पहली, तिन करि जीवनि की मति गहली ॥७०
मोह-प्रकृति है अट्ठावीसा, सात प्रवल भापे जगदीसा।
सात गये सवही नसि जावे, सर्व गये केवल पद पावे ॥७१
उपशम क्षय-उपशम अथवा क्षय, सात तनो कीयौ तजि सव भय।
ये निश्चय समकित को रूपा, उपजै उपशम प्रथम अनूपा ॥७२
सुनि सम्यक व्यवहार प्रतीता, देव अठारा दोष वितीता।
गुरु निरग्रन्थ दिगम्बर साधू, धर्म दयामय तत्व अराधू ॥७३
तिनकी सरधा दिढ़ करि धारै, कुगुरु कुदेव कुधर्म निवारै।
सप्त तत्व को निश्चय करिवौ, यह व्यवहार सु सम्यक धरिवौ ॥७४
जीव अजीवा आस्रव वधा, संवर निर्जर मोक्ष प्रवन्धा।
पुण्य पाप मिलि नव ए होई, लखै जथारथ सम्यक सोई ॥७५
ये हि पदारथ नाम कहावै, एई तत्व जिनागम गावै।
नव पदार्थ मे जीव अनन्ता, जीवनि माहि आप गुणवत्ता ॥७६
लखै आपको आपहि माही, सो सम्यक दृष्टि शक नाही।
ए दोय भेद कहै समकित्त के, ते धारौ कारण निज हितके ॥७७
सम्यकदृष्टि जे गुण धारै, ते सुनि जे भव-भाव विडारै।
अठ मद त्यागै निर्मद होई, मार्दव धर्म धरै गुन सोई ॥७८
राज गर्व अरु कुलको गर्वा, जाति मान बल मान जु सर्वा।
रूप तनू मद तपको माना, संपति अर विद्या अभिमाना ॥७९
ए आठो मद कवहु न धारै, जगमाया तृण-तुल्य निहारै।
अपनी निधि लखि अतुल अनन्ती, जो परपचनि मे न वसंती ॥८०
अविनश्वर सत्ता विकसत्ती, ज्ञान-दृगोत्तम द्युति उलसंती।
तामे मगन रहै अति रगा, भवमाया जानें क्षण भंगा ॥८१
तीन मूढ़ता दूरी नाखै, देव धर्मगुरु निश्चय राखै।
कुगुरु कुदेव कुधर्म न पूजा, जैन विना मत गहै न दूजा ॥८२

छह जु अनायतनी बुधि त्यागै, त्याग मिथ्यामत जिनमत लागै।
कुगुरु कुदेव कुधर्म बडाई, अर उनके दासनि की भाई ॥८३
कबहु करै नहिं सम्यकदृष्टी, जे करिहै ते मिथ्यादृष्टी।
शंका आदि आठ मल छाडै करि, परपच न आपौ भाडै ॥८४
जिनवच मे शका नहिं ल्यावै, जिनवाणी उर धरि दिढ भावै।
जग की बाछा सब छिटकावै, नि स्पृह भाव अचल ठहरावै ॥८५
जिनके अशुभ उदै दुख पीरा, तिनकी पीर हरै वर वीरा।
नाहि गिलानि धरै मन माही, सांची दृष्टि धरै शक नाही ॥८६
कबहु परको दोष न भाखै, पर उपगार दृष्टि नित राखै।
अपनो अथवा परको चित्ता, चल्यौ देखि थाभै गुणरत्ता ॥८७
थिरीकरण समकित्त कौ अगा, धारै समकित धार अभगा।
जिनधर्मीसूं अति हित राखै, सो जिनमारग अमृत चाखै ॥८८
तुरत जात बछरा परि जैसे, गाय जीव देय है तैसे।
साधर्मी परि तन धन वारै, गुण वात्सल्य धरै अघ ढारै ॥८९
मन वच काय करै वह ज्ञानी, जिनदासनि को दासा जानी।
जिनमारग की करै प्रभावन, भावै ज्ञानी चउ विधि भावन ॥ ९०
सब जीवनि मे मैत्रीभावा, गुणवंतनिकूं लखि हरसावा।
दुखी देखि करुणा उर आने, लखि विपरीत राग न ठाने ॥९१
दोषहु माही है मध्यस्था, ए चउ भावन भावै स्वस्था।
जिन चैत्याले चैत्य करावै, पूजा अर परतिष्ठा भावै ॥९२
तीरथ जात्रा सूत्र सु भक्ती, चउविधि सघ सेव है युक्ती।
एहै सप्त क्षेत्र परिसिद्धा, इनमे खरचै धन प्रतिबुद्धा ॥९३
जीरण चैत्यालय की मरमती, करवावै, अर पुस्तक की प्रति।
साधर्मी कूँ बहु धन देवे, या विधि परभावन गुन लेवे ॥९४
कहे अंग ए अष्ट प्रतक्षा, नाहिं धरवौ सोई मल लक्षा।
इन अगनि करि सीझै प्रानी, तिनको सुजस करै जिन वानी ॥९५
जीव अनन्त भये भवपारा, कौ लग कहिये नाम अपारा।
कैयक के शुभ नाम बखानो, श्रुत-अनुसार हिए मे आनो ॥९६
अजन और अनन्तमती जो, राव उदायन कर्म हतीजो।
रेवति राणी धर्म-गढ़ासा, सेठ जिनेन्द्र भक्त अघ नासा ॥९७
पर औगुन ढांके जिह भाई, जिनवर की आज्ञा उर लाई।
वारिषेण ओ विष्नुकुमारा, वज्रकुमार भवोदधि तारा ॥९८
अष्ट अंग करि अष्ट प्रसिद्धा, और वहुत हूए नर सिद्धा।
अठ मद त्यागि अष्ट मल त्यागा, तीन मूढता त्यागि सभागा ॥९९
षट जु अनायतना को तजिवौ, ए पच्चीस महागुण भजिवौ।
अर तजिवौ तिनकूँ भय सप्ता, निर्भय रहिवौ दोप अलिप्ता ॥१००

इह भव पर भव को भय नाही, मरण वेदना भय न धराही।
हमरौ रक्षक कौऊ नाही, इह संशय नाही घट माही ॥१०१
सबको रक्षक आयु जु कर्मा, कै जिनवर जिनवर को धर्मा।
और न रक्षक कोई काको, इह गुरु गायौ गाढ जु ताको ॥१०२
अर नहिं चोर तनो भय जाको, अपनो निज धन पायौ ताको।
चिद घन चोरयौ नांही जावै, तातै चित्त अडोल रहावै ॥१०३
अर नहिं अकस्मात भय कोई, जिन-सम लखियौ निज तन जोई।
चेतन रूप लख्यौ अविनासी, तातैं ज्ञानी है सुख रासी ॥१०४
काहू को भय तिनको नाही, भय-रहिता निरवैर रहा ही।
सप्त भया त्यागे गुण होई, सप्त विसन तजियो शुभ जोई ॥१०५
सप्त सप्त मिलि चौदा गुन ए, मिलि पचीसा गुणताल जु ए।
पच दुरगछा भाव कवै ही, नहिं मिथ्यात सराह करैही।
नहीं स्तवन मिथ्यादृष्टी को, यह लक्षण सम्यक दृष्टी को ॥१०७
पंच अतीचारनि कूँ त्यागा, सो ह्वै पंच गुणा बड भागा।
मिलि गुणताली चौवालीसा, गुणा होहिं भाषे जगदीसा ॥१०८
इनकूँ धारै सम्यकती सो, भव भ्रम तजि पावे मुक्ती सो।
ए गुन मिथ्याती के नाही, आतमज्ञान न मथ्या माही ॥१०९

उक्तं च गाथा

मयमूढमणायदण संकाइवसणभयमईयारं।
एहिं चउदालेदे ण संति ते हुति सद्दिट्ठी ॥१

अर्थ—जिनके अष्ट मद नाही, तीन मूढता नाही, षट आयतन नाही, शंकादि अष्ट मल नाही, सप्त व्यसन नाही, सप्त भय नाही, पंच अतीचार नाही, ए चवालीस नाही ते सम्यक-दृष्टि कहे।

दोहा

व्रत के मूल जु मूल गुण, सम्यक सबको मूल।
कह्यौ मूलगुण को सुजस, सुनि व्रतविधि अनुकूल ॥११०

इति क्रियाकोषे मूलगुण निरूपणम्।

बारह व्रत वर्णन

दोहा

द्वादस व्रतनि की सुविधि, जा विधि भाषी वीर।
सो भाषो जिन गुन जपी, जे धारे ते धीर ॥१
द्वादस व्रत माहें प्रथम, पंच अणुव्रत सार।
तीन गुण व्रत चारि पुनि, शिक्षा व्रत आचार ॥२

हिसा मृषा अदत्तधन, मैथुन परिग्रह साज।
एकदेश त्यागी गृही, सब त्यागी रिषिराज ॥३
सब व्रत्तनि के आदिही, जीवदया-व्रतसार।
दया सारिसौ लोक मे, नहिं दूजौ उपगार ॥४
सिद्ध समान लख्यौ जिने, निश्चय आतम राम।
सकल आतमा आपसे, लखै चेतना-धाम ॥५
ते सब जीवनि की दया, करे विवेकी जीव।
मन वच तन करि सर्व को, शुभ वाछै जु सदीव ॥६
सुख सो जीवौ जीव सहु, क्लेश कष्ट मति होह।
तजौ पाप को सर्व ही, तजौ परस्पर द्रोह ॥७
काहू को हु पराभवा, कबहु करौ मति कोइ।
इह हमरी वांछा फलौ, सुख पावौ सहु लोइ ॥८
सबके हितकी भावना, राखै परम दयाल।
दयाधर्म उरमे धरी, पावै पद जु विशाल ॥९
थावर पच प्रकार के, चउविधि त्रस परवानि।
सवसो मैत्री भावना, सो करुणा उर आनि ॥१०
पृथीकाय जलकाय का, अग्निकाय अर वाय।
काय बहुरि है वनस्पति, ए थावर अधिकाय ॥११
वे इन्द्री ते इन्द्रिया, चउ इन्द्रिय पचेन्द्रि।
ए त्रस जीवा जानिये, भावें साधु जितेन्द्रि ॥१२
कृत-कारित-अनुमोद करि, धरै अहिंसा जेह।
ते निर्वाण पुरी लहै, चउ गति पाणी देह ॥१३
निरारभि मुनि की दशा, तहा न हिंसा लेस।
छहूँ काय पीराहरा, मुनिवर रहित कलेश ॥१४
गृहपति के गृहजोगते, कछु आरम्भ जु होइ।
ताते थावरकाय को, दोष लगै अघ सोइ ॥१५
पै न करे त्रस घात वह, मन वच तन करि धीर।
त्रस कायनि को पीहरा, जाने परकी पीर ॥१६
विना प्रयोजन वह सुधी, थावर हू पीरै न।
जो निशक थावर हने जिनके जिनकी रैन ॥१७
हिंसाको फल दुरगती, दया स्वर्ग-सुख देइ।
पहुचावै पुनि शिवपुरे, अविनाशी जु करेइ ॥१८
दया मूल जिन धर्म को, दया समान न और।
एक अहिंसा व्रतही, सव व्रतनि को मौर ॥१९
यम नियमादिक बहुत जे, भावे श्री जिनराय।
ते सहु करुणा कारणे, और न कोइ उपाय ॥२०

विना जैन मत यह दया, दूजे मत दीखै न।
दया मई जिनदास है, हिंसा विधि सीखै न ।।२१
दया दया सब कोउ कहै, मर्म न जाने मूर।
अणछान्यूं पाणी पिवैं, ते हि दयातें दूर ।।२२
दया भली सवही रटै, भेद न पावै कोय।
वरतैं अणगाल्यौ उदक, दया कहां ते होय ।।२३
दया विना करणी वृथा, यह भावे सव लोक।
न्हावै अणगाले जलहि, बांधै अघ के थोक ।।२४
छाण्यूं जल घटिका जुगल, पाछें अगाल्यौ होय।
विना जैन यह बारता, और न जाने कोय ।।२५
दया समान न धर्म कोउ, इह गावें नर-नारि।
निशा माहि भोजन करें, जाहि जमारो हारि ।।२६
दया जहां ही धर्म हैं, इह जाने संसार।
पै नहिं पावैं भेदको, भखैं अभक्ष आहार ।।२७
दया बड़ी सव जगत में, धरै न मूढ़ तथापि।
परदारा परधन हरै, परै नरक मे पापि ।।२८
दया होय तौ धर्म ह्वै, प्रगट वात है एह।
तजै न तोहू द्रोह पर, धरै न धर्म सनेह ।।२९
व्रत करै पुनि मूढधी, अन्न त्यागि फल खाय।
कंदमूल भक्षण करै, सो व्रत निष्फल जाय ।।३०
दया धर्म कीजे सदा, इह जपै जग सर्व।
नहिं तथापि सब सम गिने, हनै न आठूं कर्म ।।३१
परम धर्म है यह दया, कहै सकल जन इह।
चुगली-चांटी नहिं तजै, दया कहां ते लेह ।।३२
दया व्रत के कारणे, जे न तजें आरम्भ।
तिनके करुणा होय नहिं, इह भाखे परब्रह्म ।।३३
दया धर्म को छांडिकै, जे पशु घात करेप।
ते भव भव पीड़ा लहैं, मिथ्या मारग सेय ।।३४
दया व्रताने सव मता, समझ न काहू मांहि।
धर्म गिने हिंसा विषें, जतन जीव को नाहि ।।३५
दया नही परमत विषें, दया जैनमत मांहि।
विना फैन यह जैन है, यामे संशय नांहि ।।३६
दया न मिथ्या मत विषें, कहै कहां लो वीर।
करुणा सम्यक भाव है, यह निश्चय धरि धीर ।।३७
काहे के वे देवता, करे जु मांस अहार।
ते चंडाल वखानिये, तथा श्वान मार्जार ।।३८

देवनिको आहार ह्वै, अमृत और न कोय।
मांसाशी देवानिकूं, कहै सु मूरखि होय ॥३९
मंगल कारण जे जणा, जीवनि को जु निपात।
करें अमङ्गल ते लहे, होय महा उतपात ॥४०
जे अपने जीवे निमित्त, करे औरकों नास।
ते लहि कुमरण वेग ही गहे नरक को वास ॥४१
मद्य मास मधु खाय करि, जे बाधे अघ कर्म।
ते काहे के मिनख है, इह भाखै जिनधर्म ॥४२
कन्दमूल फल खाय करि, करै जु वनको वास।
तिनको वनवासा बृथा, होय दयाको नास ॥४३
बिना दया तप है कुतप, जाकरि कर्म न जाय।
हिंसक मिथ्यामत धरा, नरक निगोद लहाय ॥४४
जैसो अपनो आतमा, तैसे सबही जीव।
यह लखि करुणा आदरौ, भाखें त्रिभुवन-पीव ॥४५

छन्द जोगीरासा

काहे के ते तापस, करुणा नाहिं धरावें।
कर अपनी आरम्भ सपष्टा, जीव अनेक जरावे ॥
जे तजि कपडा तपके कारण, धारें शठमति चर्मा।
ते न तपस्वी भवदधि कारण, बाधे अशुभ जु कर्मा ॥४६
रिषि तौ ते जे जिनवर-भक्ता, नगन दिगम्बर साधा।
भव तनु भोग थकी जु विरक्ता, करै न थिर चर बाधा ॥
मैत्री मुदिता करुणा भावा मध्यस्था जु धारै।
राग दोष मोहादि अभावा ते भवसागर तारै ॥४७
बिना दया नहिं मुनिव्रत होई, दया विना न गृही ह्वै।
उभय धर्म को सरवस करुणा जा विन धर्म नही ह्वै ॥
दया करौ मुखतै सब भाखे भेद, न पावे पूरा।
बासी भोजन भखि करि, भोदू रहे धर्म तें दूरा ॥४८
बासी भोजन माहिं जीव बहु, भखे दया नहिं होई।
दया बिना नहिं धर्म न व्रत्ता, पावे दुरगति सोई ॥
अत्थाणा सधाण मथाणा, काजी आदि आहारा।
करें विवेक बाहिरा कुबुधी, तिनके दया न धारा ॥४९
मासाशी के घरको भोजन, करे कुमति के धारी।
तिनके घट करुणा कहु कैसे, कहा शोध आचारी ॥
तातै पाणी आठ हि पहरा, आगे त्रस उपजाही।
ताकी तिनका सुधि बुधि नाही, दया कहा तिन माही ॥५०

निशिको पीस्यौ निसि को रांध्यौ थीघौ सीधौ खावै।
हरितकाय राधी सब स्वादै, दया कहां ते पावै॥
चर्म-पतित घृत तेल जलादिक, तिसमें दोष न मानें।
गिने न दोष हीग मे मूढा, दया कहां ते आने॥५१
हाटें विकते चून मिठाई, कहे तिने निरदोषा।
भखे अजोगि अहार सबै ही, दया कहां ते पोषा॥
दूध दही अरु छाछि नीर को, जिनके कछु न विचारा।
दया कहा है तिनके भाई, नही शुद्ध आचारा॥५२
सूडा नही मल मूत्रादिक की, ढोर समाना तेई।
तिनकू जो नर जैनी जाने, ते नहिं शुभ मति लेई॥
बाधक जिन शासन सरधाके, साधकता कछु नाही।
साधु गिने तिनकू जे कोई, ते मुरख जग माही॥५३
एक बारको नियम न कोई, बार-बार जल पाना।
बार-बार भोजन को करिवौ, तिनके व्रत्त न जाना॥
त्रस काया को दूषण जामे, सो नहिं प्रासुक कोई।
भखै असूत्री शठमति जोई, नाही व्रत घर होई॥५४
दयाधर्म को परकाशक है, जिन मन्दिर जगमाही।
ताहि न पूजे पापी जीवा, तिनके समकित नाही॥
कारण आतम-ध्यान तणी है, श्रीजिन प्रतिमा शुद्धा।
नाहिं न बन्दें निन्द जु तेई, जानहु महा अबुद्धा॥५५
बूढे नरक मझार महा शठ, जे जिन प्रतिमा निंदे।
जाहिं निगोद विवेक-वितीता, जे जिनगृह नहिं वन्दे॥
अज्ञानी मिथ्यात्ती मूढा, नही दया को लेशा।
दयावन्त तिनकू जे भाणे, ते न लहे निज देशा॥५६

दोहा

सुर नर नारक पशुगती, ए चारो परदेश।
पंचमगति निज देश है, यामे भ्राति न लेश॥५७
पंचमगति की कारणा, जीवदया जग माँहि।
दया सारिखौ लोक मे, और दूसरी नाँहि॥५८
दया दोय विधि है भया, स्व-पर दया श्रुत माँहि।
सो धारी दृढ चित्त मे, जाकरि भव-भ्रम जाँहि॥५९
स्वदया कहिये सो सुधी, रागादिक अरि जेह।
हनें जीव की शुद्धता, टारि तिन्हे शिव लेह॥६०
प्रगट करै निज शुद्धता, रागादिक मन मोरि।
निज आतम रक्षा करे, डारै कर्म जु तोरि॥६१

सो स्वदया भाषे गुरू, हरै कर्म-विस्तार।
निजहि बचावै कालते, करै जीव निस्तार ॥६२
षट कायाके जीव सहु, तिनतें हेत रहाय।
वैरभाव नहि कोइसू, सो पर-दया कहाय ॥६३
दया मात सब जगत की, दया धर्म को मूल।
दया उधारै जगत ते, हरै जोव की भूल ॥६४
दया सुगुन की बेलरी, दया सुखन की खान।
जीव अनन्ता सीजिया, दयाभाव उर आन ॥६५
स्व-पर दया दो विधि कही, जिनवाणी मे सार।
दयावन्त जे जीव है, ते भावे भवपार ॥६६

सवैया इकतीसा

सुकृत की खानि इन्द्रपुरी की निसेनी जानि,
पापरज खडन को पौनराशि पेखिये।
भवदुख-पावक बुझाय वे कू मेघमाला,
कमला मिलायवे को दूतो ज्यू विसेखिये ॥
मुकति-बधूसो प्रीति पालिवे को आलो सम,
कुगति के द्वार दिढ आगलसी देखिये।
ऐसी दया कीजै चित्त तिहूँ लोक प्राणी हित,
और करतूति काहू लेखे मे न लेखिये ॥६७

दोहा

जो कहु पाषाण जल, माहिं तिरै अर भान।
ऊगै पश्चिम की तरफ, दैवयोग परवान ॥६८
शीतल गुन ह्वै अगनि मे, धरा पीठ उलटेय।
तौहू हिंसा-कर्मते, नाही शुभ गति लेय ॥६९
जो चाहै हिसा करी, धर्म मुकति को मूल।
सो अगनीसू कमल-वन, अभिलाषै मति भूल ॥७०
प्राणि-घात करि जो कुधी, वाछै अपनी वृद्धि।
सो सूरज के अस्त ते, चाहे वासर शुद्धि ॥७१
जो चाहै व्रत धर्म को, करै जीव को नास।
सो शठ अहिके वदन ते, करै सुधा की आस ॥७२
धर्म वृद्धि करि जो अवुध, हनै आपसे जीव।
सो विवाद करि जस चहै, जल-मंथन ते घीव ॥७३
जैसे कुमती नर महा, काल कूटकू पीय।
जीवौ चाहै जीव हति, तैसे श्रेय स्वकीय ॥७४

करि अजीर्ण दुर्बुद्धि जो, इच्छै रोग-निवृत्ति।
तैसे शठ पर-घात करि, चाहै धर्म-प्रवृत्ति ॥७५
दया थकी इह भव सुखी, पर-भव सब सुख होय।
सुरग मुकति दायक दया, धारै उधरै सोय ॥७६
इन्द नरिन्द फणिन्द अर, चंद सूर अहमिन्द।
दया थकी इह पद लहै, होवै देव जिणंद ॥७७
भव सागर के पार ह्वै, पहुचै पुर निर्वान।
दया तणो फल मुख्य सो, भाषे श्री भगवान ॥७८
हिसा करिकै राज-सुत, सुबल नाम मति-हीन।
इह भव पर भव दुख लह्यो, हिंसा तजौ प्रवीन ॥७९
चौदसिके इक दिवस की, दया धारि चडार।
इह भव नृप पूजित भयौ, लह्यौ स्वर्ग-सुख सार ॥८०
जे सीझे जे सीझि है, ते सब करुणा धार।
जे बूढे जे बूढि है, ते सब हिसा कार ॥८१
अतीचार भजि व्रत तजि, करुणा तिनते जाय।
बध वंधन छेदन बहुरि, वोझ धरन अधिकाय ॥८२
अन्न पान को रोकिबौ, अतीचार ए पंच।
त्यागौ करुणा धारिकै, इनमे दया न रंच ॥८३
हिंसा तुल्य न पाप है, दया समान न धर्म।
हिंसक बूडै नरक मे, बांधै अशुभ जु कर्म ॥८४
हुती धन श्री पापिनी, वणिक-नारि व्यभिचारि।
गई नरक मे पुत्र हति, मानुष जन्म बिगारि ॥८५
हिंसा के अपराधते, पापी जोव अनत।
गये नरक पाये दुखा, कहत न आवै अत ॥८६
जे निकसे भव-कूपतें, ते करुणा उर धारि।
जे बूड़े भव कूपते, ते सब हिंसा कारि ॥८७
महिमा जीव दया तनी, जाने श्री जगदीश।
गणधर हू कहि ना सके, जे चउ ज्ञान अधीश ॥८८
कहि न सके इन्द्रादिका, कहि न सके अहमिंद्र।
कहि न सके लोकान्तिका, कहि न सके जोगीन्द्र ॥८९
कहि न सके पाताल-पति, अगणित जीभ बनाय।
सो महिमा करुणा तणी, हम पै वरणि न जाय ॥९०
दया मात को आसरो, और सहाय न कोय।
करि प्रणाम करुणा व्रते, भाषौ सत्य जु सोय ॥९१

इति दयाव्रत निरूपण

हिसा ह्वै परमादते अर प्रमादते झूठ ।
ताते तजौ प्रमादकूं, देय पापसो पूठ ॥९२

चौपाई

श्री पुरुषारथ सिद्धि उपाय, ग्रन्थ सुन्यां सब पाप लुभाय ।
जहँ द्वादश व्रत कहे अनूप, सम दम यम नियमादि स्वरूप ॥९३
सम जु कहावे समताभाव, सम्यकरूप भवोदधि नाव ।
दम कहिये मन इन्द्रिय-रोध, जाकर लहिये केवल बोध ॥९४
जीवो जाव वरत यम कह्यौ, अवधिरूप सो नियम जु लह्यौ ।
ऐसे भेद जिनागम कहै, निकट भव्य ह्वै सो ही गहै ॥९५
तामै सत्य कह्यौ चउ भेद, सो मुनि करि तुम धरहु अछेद ।
चउविधि झूठ तनो परिहार, सो है सत्य महागुण सार ॥९६
प्रथम असत्य तजौ बुध वहै, वस्तु छतीकू अछती कहै ।
दूजे अछती को जो छती, भाषै अविवेकी हतमती ॥९७
तीजे कहै औरसो और, विरथा मूढ करै झकझोर ।
चौथे झूठ तने वय-भेद, गर्हित सवद प्रति उछेद ॥९८
ए सब कृत कारित अनुमत्त, मन वच तन करि तज गुनवत ।
चुगली-चारी परकी हासि, कर्कश वचन महा दुख-राशि ॥९९
विपरीत न भाषौ बुधिवान, सबद तजौ अन्याय सुजान ।
वचन प्रलाप विलाप न बोलि, भजि जिन नायक तजि सहु भोलि ॥१००
भाषौ मत उतसूत्र कदेह, मिथ्यामत सो तजौ सनेह ।
ए सल गर्हित बैन तजेह, जिनशासन की सरधा लेह ॥१
बहुरि सबै सावद्य अजोग, वचन न वोलौ सुवुधी लोग ।
छेदन भेदन मारण आदि, त्यागौ अशुभ बचन इत्यादि ॥२
चोरी जोरी डाका दौर, ए उपदेश पाप सिरमौर ।
हिंसा मृषा कुशील विकार, पाप वचन त्यागौ व्रत धार ॥३
खेती विणज विवाह जु आदि, वचन न बौलै व्रती अनादि ।
तजहु दोषजुत वानी भया, वोलहु जामे उपजै दया ॥४
ए सावद्य बचन तजि धीर, तजि अप्रीति वचन वर वीर ।
अरति-करन भय-करन न बोल, शोक-करन त्यागौ तजि भोल ॥५
कलह-करन अध-करन तजेहु, बैर-करन वाणी न भजेहु ।
ताप-करन अर पाप-प्रधान, त्यागहु वचन जु दोष-निधान ॥६
मर्म-छेद को वचन न कहौ, जो अपने जियको शुभ चहौ ।
इत्यादिक जे अप्रिय बैन, त्यागहु, सुनि करि मारग जैन ॥७
बोलौ हित मित वानी सदा, संशय वानी वोलि न कदा ।
सत्य प्रशस्त दया रस भरी, पर उपगार करन शुभ करी ॥८

अविरुध अव्याकुलता लिए, बोलहु करुणा धरिकै हिये।
कबहु ग्रामणी वचन न लपौ, सदा सर्वदा श्री जिन जपौ ॥९
अपनी महिमा कबहुँ न करौ, महिमा जिनवर की उर धरौ।
जो शठ अपनी कीरत्ति करै, ते मिथ्यात्त सरूप जु धरै ॥१०
निन्दा परकी त्यागहु भया, जो चाहौ जिनमारग लया।
अपनी निन्दा गरहा करौ, श्री गुरु पै तप व्रत आदरौ ॥११
पापनि को प्रायश्चित्त लेह, माया मच्छर मान तजेह।
होवै जहा धर्म को लोप, शुभ किरिया होवैं पुनि गोप ॥१२
अर्थ शास्त्र के ह्वै विपरीत, मिथ्यामत्त की ह्वै परतीत।
तहा छांड़ि शका प्रतिवुद्ध, भावै सत्य वचन अविरुद्ध ॥१३
इनमें शका कवहु न करहू यही बुद्धि निश्चय उर धरहु।
सत्य मूल यह आगम जैन, जैनी बोलै अमृत्त वैन ॥१४
चार्वाक बौद्ध विपरीत, तिनके नांहि सत्य परतीति।
कौलिक कापालिक जे जानि, इनमे सत्य लेश मति मानि ॥१५
सत्य समान न धर्म जु कोय, बड़ो धर्म इह सत्य जु होय।
सत्य थकी पावै भव पार, सत्यरूप जिनमारग सार ॥१६
सत्य प्रभाव शत्रु ह्वै मित्र, सत्य समान न और पवित्र।
सत्य प्रसाद अगनि ह्वै शीत, सत्य प्रसाद होय जग-जीत ॥१७
सत्य प्रभाव भृत्य ह्वै राव, जल ह्वै थल धरिया सत भाव।
सुर ह्वै किंकर वन्न पुर होय, गिरि ह्वै घर सतकरि जोय ॥१८
सर्प माल ह्वै हरि मृगरूप, विल सम ह्वै पाताल विरूप।
कोऊ करै शस्त्र की घात, शस्त्र होय सो अबुज-पात ॥१९
हाथी दुष्ट होय सम श्याल, विष ह्वै अमृतरूप रसाल।
कठिन सुगम ह्वै सत्य-प्रभाव, दानव दीन होय निरदाव ॥२०
सत्य-प्रभाव लहै निज ज्ञान, सत्य धरे पावै वर ध्यान।
सत्य-प्रभाव होय निरवाण, सत्य बिना ना पुरुष वखाण ॥२१
सत्य-प्रसाद वणिक धनदेव, राजा करि पाई वहु सेव।
इह भव पर भव सुखमय भयौ, जाको पाप करम सव गयौ ॥२२
झूठ थकी वसु राजा आदि, पर्वत, विप्र सत्यघोषादि।
जग देवादिक वाणिज घने, गये दुरगती जाय न गिने ॥२३
सत्य दया को रूप न दोय, दया विना नहि सत्य जु होय।
सत्य तने द्वय भेद अछेद, व्यवहारो निश्चय निरखेद ॥२४
निश्चय सत्य निजातम बोध, व्यवहारो जिन वचन प्रबोध।
सत्य विना सब व्रत तप वादि, सत्य सकल, सूत्रनिमे आदि ॥२५
सत्य प्रतिज्ञा विन यह जीव, दुरगति लहै कहे जग-पीव।
सूकर कूकर वृक चंडार, घूघू श्याल काग मजार ॥२६

नाग आदि जे जीव विरूप, लापर सबते निद्य प्ररूप ।
सबते बुरो महा असपर्श, लापरका लखिये नहिं दर्श ॥२७
चुगली-साचहु झूठ हि जानि चुगल महा चडाल समान ।
चुगली उगली मुखते जबै, इह भव पर भव खोये तबै ॥२७
सत्य-हेत धारी भवि मौन, सत्य बिना सब सजम गौन ।
थोरो बोलहु कारण सत्य, मन वच तन करि तजौ असत्य ॥२९
मुनि के सत्य महाव्रत होय, गृहि के सत्य अणुव्रत होय ।
मुनि तौ मौन गहे कै जैन, वचन निरूपे अमृत बैन ॥३०
लौकिक वचन कहे नहिं साध, सब जीवन के मित्र अगाध ।
मृषावाद नही बोले रती, सो जिनमारग साचे जती ॥३१
श्रावक को किंचित आरम्भ, त्यागै कुविणज पापारम्भ ।
लौकिक वचन कहन जो परै, तौ पनि पाप वचन परिहरै ॥३२
पर उपगार दया के हेत, कबहुक किचित झूठहु लेत ।
जेती आटे माहे लोन, ते तौ बोलै अथवा मौन ॥३३
झूठ थकी उचरै पर-प्रान, तौ वह झूठ सत्य परमान ।
अपने मतलब कारिज झूठ, कवहु न बोलै अमृत बूठ ॥३४
प्राण तजै पर सत्य न तजैं, यद्वा तद्वा वचन न भजै ।
यहै देह अर भोगुपभोग, सब ही झूंठ गिने जग रोग ॥३५
परिग्रह की तृष्णा नहिं करै, करि प्रमाण लालच परिहरै ।
पाप झूठ को है यह लोभ, याहि तजै पावै व्रत शोभ ॥३६
सत्य प्रताप सुजस अति बधै, सत्य धरै जिन आज्ञा सधै ।
राजद्वार पचायति माहिं, सत्यवन्त पूजित सक नाहिं ॥३७
इन्द्र चन्द्र रवि सुर धरणेद, सत्य बचे अहमिन्द मुणिन्द ।
करे प्रशसा उत्तम जानि, इहे सत्य शिव-दायक मानि ॥३८
दया सत्य मे रच न भेद, ए दोऊ इकरूप अभेद ।
विपत्ति हरन सुख करन अपार, याहि धरे ते ह्वै भव-पार ॥३९
याहि प्रसंसे श्री जिनराय, सत्य समान न और कहाय ।
भुक्ति मुक्ति दाता यह धर्म, सत्य बिना सब गनिये भर्म ॥४०
अतीचार पाचो तजि सखा जो ते जिन वच अमृत चखा ।
तजि मिथ्योपदेश मतिवान, भजि तन मन करि श्री भगवान ॥४१
देहि मूढ मिथ्या उपदेश, तिनमे नाहि सुमति को लेश ।
वहुरि तजौ जु रहोऽभ्याख्यान, ताको व्यक्त सुनो व्याख्यान ॥४२
गुप्त बारता परकी कोइ, मति परकासौ मरमी होइ ।
कूट कुलेख क्रिया तजि वीर, कपट कालिमा त्यागहु धीर ॥४३
करि न्यासापहार परिहार, ताको भेद सुनहु व्रत धार ।
पेलो आय धरौहरि धरै, अर कबहू विसरन वह करै ॥४४

तौ वाको चित एम जु भया, देहु परायो माल जु लया ।
भूलिर थोरो मागै वहै, तौ वाकों समझा कर कहै ॥४५
तुमरो दैनो इतनो ठीक, अलप बतावन वात अलीक ।
ले जावौ तुमरो यह माल, लेखा में चूकौ मति लाल ॥४६
घटि देवे को जो परिणाम, सो न्यासापहार दुखधाम ।
अथवा धरी पराई वस्त, जाकी वुद्धि भई विध्वस्त ॥४७
और ठौरकी और जु ठौर, करै सोइ पापनि सिरमौर ।
पुनि साकारमन्त्र है भेद, तजौ सुवुद्धी सुनि जिन वेद ॥४८
दुष्ट जीव परको आकार, लखतो रहै दुष्टता कार ।
लखि करि जानै परको भेद, सो पावै भव-वन मे खेद ॥४९
परमंत्रनि को करइ विकास, सो खल लहै नरक को वास ।
जो परद्रोह धरै चित-माँहि इह भव दुख लहि नरकहिं जाहि ॥५०
अतीचार ए पाचो त्यागि, सत्य धरम के मारग लागि ।
परदारा परद्रव्य समान, और न दोष कहे भगवान ॥५१
परद्रोहसो पाप न और, निंद्यो श्रुत मे ठौर जु ठौर ।
जिन जान्यूं निज आतमराम, तिनके परधन सो नहिं काम ॥५२
सत्य कहे चोरी पर-नारि, त्यागी जाइ यहै उर धारि ।
झूठ वके ते जैनी नाहि, परधन हरन न इह मत माँहि ॥५३

दोहा

सत्य-प्रभावै धर्म-सुत, गये मोक्ष गुण कोष ।
लहे झूठ अर कपटते, दुर्योधन दुख दोष ॥५४
जे सुरझे ते सत्य करि, और न मारग कोय ।
जे उरझे ते झूठ करि, यह निश्चय अवलोय ॥५५
सत्यरूप जिनदेव है, सत्यरूप जिनधर्म ।
सत्यरूप निर्ग्रन्थ गुरु, सत्य समान न पर्म ॥५६
सत्यारथ आतम-धरम, सत्यरूप निर्वाण ।
सत्यरूप तप संयमा, सत्य सदा परवाण ॥५७
महिमा सत्य सुव्रत्त की, कहि न सके मुनिराय ।
सत्य वचन परभावते, सेवे सुर नर पाय ॥५८
जैसो जस है सत्य को, तैसौ श्री जिनराय ।
जाने केवल ज्ञान मे, परमरूप सुखदाय ॥५९
और न पूरण लखि सके, कीरति सुर नर नाग ।
या व्रतकू धारें सदा, तेहि पुरुष बडभाग ॥६०
नमस्कार या व्रतको, जो व्रत शिव-सुख देय ।
अर याके धारीनिको, जे जिनशरण गहेय ॥६१

दया सत्य को कर प्रणति, भाषो तीजो व्रत्त।
जो इन द्वय विन ना हुवै, चोरी त्याग प्रवृत्त ॥६२

चालछन्द

चोरी छांडौ बड भाई, चोरी हैं अति दुखदाई।
चोरी अपजस उपजावै, चोरी ते जस नहिं पावै ॥६३
चोरी ते गुणगण नाशा, चोरी दुर्बुद्धि प्रकाशा।
चोरी ते धर्म नशावै, इह आज्ञा श्रीगुरु गावै ॥६४
चोरी सों माता ताता, त्यागे लखि अपनो घाता।
चोरी सो भाई-बंधा, कबहुँ न राखै सबधा ॥६५
चोरी तें नारि न नीरै, चोरी ते पुत्र न तीरै।
चोरी सो मित्र बिडारै, चोरी सों स्वामी न धारै ॥६६
चोरी सों न्याति न पांती, चोरी सो कबहुँ न सांती।
चोरी तें राजा दंडै, चोरी तै सीस बिहडै ॥६७
चोरी तें कुमरण होई, चोरी मे सिद्धि न कोई।
चोरी तें नरक निवासा, चोरी तें कष्ट प्रकाशा ॥६८
चोरी ते लहै निगोदी, चोरी ते जोनि जु बोदी।
चोरी मे सुमति न आवै, चोरी ते सुमति न पावै ॥६९
चोरी ते नासे करुणा, चोरी मे सत्य न धरणा।
चोरी ते शील पलाई, चीरी मे लोभ धराई ॥७०
चोरी ते पाप न छूटै, चोरी ते तलवर कूटै।
चोरी ते इज्जति भगा, त्यागौ चोरनि को सगा ॥७१
चोरी करि दोष उपावै, चोरी करि मोक्ष न पावै।
चोरी के भेद अनेका, त्यागौ सब धारि विवेका ॥७२
परको धन भूले-विसरे, राखौ मति ल्यो गुण पसरै।
परको धन गिरियो परियो, दाबौ मति कबहु न धरियौ ॥७३
तोला घटि बधि जिन राखै, बोलौ मति कूडी साखै।
कबहूं औटा जिन देहो, डाका दे धन मति लेहो ॥७४
मति दगडा लूटौ भाई, दौडाई है दुखदाई।
ठग विद्या त्यागौ मित्रा, परधन है अति अपवित्रा ॥७५
काहूकू द्यो मति तापा, छाडो तन मन के पापा।
पासीगर सम नहिं पापी, पर प्राण हरै सतापी ॥७६
सो महानरक मे जावै, भव-भव मे अति दुख पावै।
हाकिम ह्वै धन मति चोरौ, ले घूस न्याव मति वारौ ॥७७
लेखा मे चूक न कारै, इहि नरभव मूढ ! न हारै।
जे हरियो पर को वित्ता, ते पापी दुष्ट जु चित्ता ॥७८

रुलिहैं भव माहिं अनंता, जे परधन प्राण हरत्ता ।
चुगली करि मतिहि लुटावौ, काहूकूँ नाहिं कुटावौ ॥७९
परको इज्जति मति हरि हो, परको उपगार जु करिहो ।
धन धान नारि पसु वाला, हरिये कछुके नहिं लाला ॥८०
काहू को मन नहिं हरिये, हिरदा मे श्री जिन धरिये ।
तिर नर जीवन की जीवी, मेटो मति करुणा कीवी ॥८१
तुम शल्य न राखौ वीरा, कर शुद्ध चित्त गुण धीरा ।
रोका बांधी मति करिहो, काहू की सोपि न हरिहो ॥८२
बोलो मति दुष्ट जु वाके, तुम दोष गहौ मति काके ।
काहू को मर्म न छेदौ, काहू को क्षेत्र न भेदौ ॥८३
काहू की कछु नहिं वस्ता, मति हरहु होय शुभ अस्ता ।
इह व्रत धारौ वर वीरा, पावौ भव सागर तीरा ॥८४
जाकरि ह्वै कर्म विध्वस्ता, सो भाव धरौ परशस्ता ।
तृण आदि रत्न परजत्ता, पर धन त्यागौ बुधिवत्ता ॥८५
हरिवौ रागादिक दोषा, करवौ कर्मन को सोषा ।
हरि मर्म धर्म धरि भाई, हूजे त्रिभुवन के राई ॥८६
अपनो अर परको पापा, हरिये जिन वचन प्रतापा ।
छाड़ै जु अदत्तादाना, करि अनुभव अमृत पाना ॥८७
चोरी त्यागे शिव होई चोरी लागे शठ सोई ।
चोरी के दोय प्रकारा, निश्चै ब्यौहार विचारा ॥८८
निश्चै चोरी इह भाई, तजि आतम जड लव लाई ।
पर परणति प्रणमन चोरी, छाडैं ते जिनमत धोरी ॥८९
तजिकै पर परणति जीवा, त्यागौ सब भाव अजीवा ।
यह देह आदि पर वस्ता, तिनसो नहि प्रीति प्रशस्ता ॥९०
विन चेतन जे परपंचा, तिनमे सुख ज्ञान न रंचा ।
इनमे नहिं अपनो कोई, अपनो निज चेतन होई ॥९१
ताते सुनि के अध्यातम, छांडौ ममता सब आतम ।
अपनो चेतन धन लेहो, परकी आसा तजि देहो ॥९२
जे ममता पंथ न लागे, निश्चै चोरी ते त्यागे ।
जब निश्चै चोरी छूटै, तब काल भूपाल न कूटै ॥९३
इह निश्चै व्रत बखाना, या सम और न कोई जाना ।
शिव पद दायक यह वृत्ता, करिये भवि जीव प्रवृत्ता ॥९४
जिन त्यागी परकी ममता, तिन पाई आतम-समता ।
अब सुनि व्यवहार सरूपा, जा विधि जिनराज प्ररूपा ॥९५
इक देव जिनेसुर पूजौ, सेवौ मति जिन विन दूजौ ।
विन गुरु निरग्रन्थ दयाला, सेवौ मति औरहि लाला ॥९६

सुनि श्री जिन जूके ग्रन्था, मति सुनहु और अघ-पंथा ।
मिथ्यात समान न चोरी, धारे तिनकी मति भोरी ॥९७
इह अंतर बाहिज त्यागे, तब वृत्त विधान हिं लागें ।
सम्यक् ह्वै आतम भावा, मिथ्यात अशुद्ध विभावा ॥९८
सम्यक् निश्चय व्यवहारा, सो धारौ तजि उरझारा ।
वर व्रत्त अचौरज धारे, ते सर्व दोष को टारे ॥९९
या बिन नहि साधु गनिया, या बिन नहिं श्रावक भनिया ।
श्रावक मुनि द्वय विध धर्मा, यह व्रत्त दुहुनि को मर्मा ॥१००
मुनि के सब ममता छूटी, समता ते दुरमति टूटी ।
मुनि उपधि न एक धराही, कछु छाने नाहिं कराही ॥१
देहादिक सो नहिं नेहा, बरसै घट आनद मेहा ।
मुनि के सब दोष जु नासें, ताते सु महाव्रत भाषे ॥२
मुनि के कछु हरनो नाही, चित लागै चेतन माही ।
श्रावक के भोजन लेई, नहि स्वाद विषे चित देई ॥३
काम न क्रोध न छल माना, नहिं लोभ महा वलवाना ।
जे दोष छियालिस टालें, जिनवर की आज्ञा पालें ॥४
ते मुनिवर ज्ञान सरूपा, शुभ पच महाव्रत रूपा ।
गृहपति के कछु इक धधा, कछु ममता मोह प्रबन्धा ॥५
छाने कछु करनो आवै, ताते अणुव्रत कहावैं ।
कूपादिक को जल हरिवौ, इह किंचित दोपहु धरिवो ॥६
मोटे सब त्यागे दोषा, काहू को हरिये न कोषा ।
त्यागौ परधन को हरिवौ, छाडौ पापनि को करिवौ ॥७
सक्षेप कही यह बाता, आगे जु सुनहु अब भ्राता ।
इह अणुव्रत को जु सरूपा, जिनश्रुत अनुसार प्ररूपा ॥८
अब अतीचार सुनि भाई, त्यागौ पंचहि दुखदाई ।
है चोरी को जु प्रयोगा, सो पहलो दोष अजोगा ॥९
चोरी को माल जु लेनो, इह दूजो अघ तजि देनो ।
थोरे मोलें वड वस्ता, लेवौ नहिं कवहु प्रशस्ता ॥१०
राजा को हासिल गोपै, राजा की आणि जु लोपै ।
इह तीजो दोष निरूपा, त्यागौ व्रत धारि अनूपा ॥११
देवे के तोला घाटै, लेवे के अधिका वाटै ।
इह अतिचार है चौथो, त्यागौ शुभमति तें थोथो ॥१२
वधि मोल मे घटि मोला, मेलें ह्वै पाप अतोला ।
इह पंचम है अतिचारा, त्यागे जिन मारग धारा ॥१३
ए अतीचार गुरु भाखे, जैनी जीवनिने नांखे ।
चोरी करि दुरगति होई, चोरी त्यागे शुभ सोई ॥१४

चोरी तजि अजन चोरा, तिरियो भव-सागर थोरा ।
लहि महामत्र तप गहिया, ध्यानानल भववन दहिया ॥१५
अजन हूओ जु निरजन, इह कथा भव्य मनरजन ।
वहुरि यो नृप श्रेणिक पुत्रा, है वारिषेण जगमित्रा ॥१६
कर परधन को परिहारा, पायौ भवसागर पारा ।
चोरी करि तापस दुष्टा, पचागन साधनि पुष्टा ॥१७
लहि कोटपालकी त्रासा, मरि नरक गयौ दुख भापा ।
दलिद्दर का मूल जु चोरी, चोरी तजि अर तजि जोरी ॥१८
सब अघ तजि जिनसो जोरी, विनऊँ भैय्या कर जोरी ।
चोरी तजियाँ शिव पावैं, यह महिमा श्री जिन गावे ॥१९
चोरी ते भव-भव भटकै, चोरी ते सब गुन सटकै ।
जो वुधजन चोरी त्यागै, सो परमारथ पथ लागै ॥२०

दोहा

परधन के परिहार विन, परम धाम नहिं होय ।
भये पार ते तीसरे, व्रत्त विना नहिं कोय ॥२१
जे बूढे नर नरक मे, गये निगोद अजान ।
ते सब परधन-हरणते, और न कोई वखान ॥२२
व्रत्त अचोरिज तीसरो, सब व्रत्तनि मे सार ।
जो याको धारै व्रत्ती, सो उतरै संसार ॥२३
याकी महिमा प्रभु कहे, जो केवल गुणरूप ।
पर गुण रहित निरंजना, निर्गुण निर्मलरूप ॥२४
कहे गणिद मुनिन्दवर, करें भव्य परमान ।
जे धारे ते पावही, पूरण पद निर्वान ॥२५
अल्पमती हम सारिखे, कहे कौन विधि बीर ।
नमस्कार या वृत्त को, धारे धर्मी धीर ॥२६
जे उरझे ते या विना, इह निश्चय उर धारि ।
जे सुरझे ते या करी, यह व्रत है अघहारि ॥२७
दया सत्य सतोष अर, शीलरूप हैं एह ।
उतरैं भवसागर थकी, धरै या थकी नेह ॥२८
दया सत्य अस्तेयकौ, करि वन्दन मन लाय ।
भाषो चौथो शीलव्रत, जो इन विगर न थाय ॥२९

इति अचौर्याणुव्रत वर्णन

प्रणमि परम रस शांति को, प्रणमि धरम गुरुदेव ।
वरणो सुजस सुशील को, करि शारद की सेव ॥३०

शीलव्रत को नाम है, ब्रह्मचर्य सुखदाय ।
जाकरि चर्या ब्रह्म मे, भव वन भ्रमण नशाय ।।३१
ब्रह्म कहावे जीव सब, ब्रह्म कहावें सिद्ध ।
ब्रह्मरूप कैवल्य जो, ज्ञान महा परसिद्ध ।।३२
ब्रह्मचर्य सो वृत्त ना, न पर ब्रह्म सो कोय ।
व्रती न ब्रह्म-लवलीन सो, तिरै, भवोदधि सोय ।।३३
विद्या ब्रह्म-विज्ञान सी, नही दूसरी जान ।
विज्ञ नही ब्रह्मज्ञ सो, इह निश्चय उर आन ।।३४
ब्रह्म वासना सारिखी, और न रस की केलि ।
विषय वासना सारिखी, और न विष की बेलि ।।३५
आतम अनुभव सिद्ध सी, और न अमृत बेलि ।
नही ज्ञान सो वलवता, देहि मोह को ठेलि ।।३६
अव्रत नाहि कुशील सो, नरक निगोद प्रदाय ।
नही सील सो सजमा, भाषे श्री जिनराय ।।३७
धर्म न श्री जिनधर्म से, नहि जिनवर से देव ।
गुरु नहि मुनिवर सारिखे, रागी सो न कुदेव ।।३८
कुगुरु न परिग्रह धारितै, हिंसा सो न अधर्म ।
मर्म न मिथ्या सूत्र सो, नही मोह सो कर्म ।।३९
द्रष्टा न कोई जीव सो, गुन न ज्ञान सो आन ।
ज्ञान न केवल ज्ञान सो, जीव न सिद्ध समान ।।४०
केवलदर्शन सारिखो, दर्शन और न कोई ।
यथाख्यात चारित्र सो, चारित और न होइ ।।४१
नहि विभाव मिथ्यात सो, सम्यक सो न स्वभाव ।
क्षयिक सो सम्यक नही, नही शुद्ध सो भाव ।।४२
साधु न क्षीण कषाय से, श्रेणि न क्षपक समान ।
नहि चौदम गुण थान सो, और कोई गुणथान ।।४३
नहि केवल प्रत्यक्ष सों, और कोई परमाण ।
सुकल ध्यान सो ध्यान नहि, जिनमतसो न बखाण ।।४४
अनुभव सो अमृत नही, नहि अमृत सो पान ।
इन्द्री रसनासी नही, रस न शांति सो आन ।।४५
मनोगुप्ति सी गुप्ति नहि, चचंल मन सो नाहि ।
निश्चल मुनि से और नहि, नही मौन मन माहि ।।४६
मुनि से नहि मतिवत नर, नहि चक्री से राव ।
हलधर अर हरि सारिखो, हेत न कहूँ लखाव ।।४७
प्रतिहरि से न हठी भए, हरि से और न सूर ।
हर से तासम धार नहि, बहु विद्या भरपूर ।।४८

नारद से न भ्रमंत नर, भ्रमें अढाई दीप ।
कामदेव से सुन्दर न, नहिं जिनसे जगदीप ॥४९
जिन-जननी जिन-जनक से, और न गुरुजन जानि ।
मिष्ट न जिनवानी समा, यह निश्चय परमान ॥५०
जिनमूरत्ति सी मूरति न, परमानद सरूप ।
जिनसूरति सी सूरति न, जासम और न रूप ॥५१
जिनमदिर से मदिर नही, जिन तन सो न सुगन्ध ।
जिन विभूति सी भूति नहि, जिन श्रुति सो न प्रबध ॥५२
जिनवर से न महाबली, जिनवर से न उदार ।
जिनवर से न मनोहरा, जिनसे और न सार ॥५३
चरचा जिन चरचा समा, और न जग मे कोइ ।
अर्चा जिन अर्चा समा, नही दूसरी होइ ॥५४
राज न श्री जिनराज से, जिनके राग न रोस ।
ईति भीति नहिं राज मे, नही एक भी दोस ॥५५
सेवैं इन्द नरिन्द सव, भजहिं फणीस मुनीस ।
रटे सूर ससि सुर सबै, जिनसम और न ईस ॥५६
अर्चै अहमिद्रा महा, अरचें चतुर सुजान ।
हरि हर प्रति हरि हलि मदन, पूजे चक्रि पुमान ॥५७
गुरु कुल कर नारद सबैं, सेवे तन मन लाय ।
जग मे श्री जिन राय सो, पूज्य न कोइ लखाव ॥५८
तीर्थंकर पर सारिखा, और न पद जग माहि ।
वज्र वृषभ नाराच सो, संहनन कोई नाहिं ॥५९
सम चतुस्र सठान सो, और नही संठाण ।
पुरुष सलाका सारिखा, और न कोई जाण ॥६०
चक्रायुध हल-आयुधा, कुसुमायुध इत्यादि ।
धर्मायुध के दास सब, वज्रायुध नृप आदि ॥६१
जे हैं चरम शरीर धर, तद भव मुक्ति मुनीश ।
तिन सौ कोई न मानवा, नमे सुरासुर सीस ॥६२
नही सिद्ध पर्याय सी, और शुद्ध पर्याय ।
नही केवली कायसी, और दूसरी काय ॥६३
अर्हंत सिव साधू सवं, केवल भाषित धर्म ।
इन चउ से नहि मगला, उत्तम और न पर्म ॥६४
इन चउ शरणनि सारिखे, शरण नाहिं जग माहिं ।
सघ न चउविधि सघ से, जिनके सशय नाहिं ॥६५
चोर न इन्द्री-चित से, मुसें धर्म धन भूरि ।
चारित से नहिं तलवरा, डारं तिनको चूरि ॥६६

जैसें ए उपमा कही, तैसें शील समान ।
व्रत न कोई दूसरो, भाषे श्री भगवान ॥६७
वक्ता सर्वज्ञ से नही, श्रोता गणधर से न ।
कथन न आतम ज्ञान सो, साधक साधु जिसे न ॥६८
बाधक नहिं रागादि से, तिनहिं तजे जोगिन्द ।
नहिं साधन समभाव से, धारे धीर मुनिन्द ॥६९
पाप नही परद्रोह सो, त्यागे सज्जन सत ।
पुण्य न पर उपकार सो, धारे नर मतिवत्त ॥७०
लेश्या शुक्ल समान नहिं, जामे उज्ज्वल भाव ।
उज्ज्वलता निकषाय सी, और न कोई लखाव ॥७१
दया प्रकाशक जगत मे, नही जैन सो कोइ ।
पर्म धर्म नहिं दूसरो, दया सारिखो होइ ॥७२
कारण निज कल्याण को, करुणा तुल्य न जानि ।
कारण जिन विश्वास को, नही सत्य सो मानि ॥७३
सत्यारथ जिन सूत्र सो, और न कोइ प्रवानि ।
सर्व सिद्धि को मूल है, सत्य हिये मे आनि ॥७४
नहिं अचौर्य व्रत सारिखौ, भय हरि भ्रांति निवार ।
नहिं जिनेन्द्रमत सारिखौ, चोरी बरज उदार ॥७५
नही सील सो लोक मे, है दूजो अविकार ।
कारण शुद्ध स्वभाव को, भव-जल तारणहार ॥७६
नहिं जिनशासन सारिखौ, शील प्रकाशन हार ।
या ससार असार मे, जा सम और न सार ॥७७
नहिं संतोष समान है, सुख को मूल अनूप ।
नही जिनेसुर धर्म सो, वर संतोष स्वरूप ॥७८
कोमल परिणामानि सो करुणाकरण नाहिं ।
नहिं कठोर भावानि सो, दयारहित जग माहि ॥७९
नहिं निरलोभ स्वभाव सो, सत्य मूल है कोइ ।
नही लोभ सो लोक मे, कारण मिथ्या होइ ॥८०
मूल अचोरिज व्रत को, निस्पृहतासो नाहिं ।
चोरी मूल प्रपच सो, नही लोक के माहि ॥८१
राजवृद्धि को कारणा, नही नीति सो जानि ।
नाहिं अनीति प्रचार सो, राज विघन परवानि ॥८२
कारण सजम शील को, नहिं विवेक सो भान ।
नहिं अविवेक विकार सो, मूल कुशील बखान ॥८३
मूल परिग्रह त्याग को, नहिं वैराग समान ।
परिग्रह सग्रह कारणा, तृष्णा तुल्य न आन ॥८४

करुणा निधि न जिनेन्द्र सो, जगत मित्र है सोय।
नहिं क्रोधी सो निरदई, सर्वनाश को होय ॥८५
सतवादी सर्वज्ञ से, नही लोक में कोइ।
कामी लोभी से महा, लापर और न होइ ॥८६
सम्यक् दृष्टी जीव सो, और न मन मद मोर।
मिथ्या दृष्टी जीव सो, और न परधन चोर ॥८७
समताभाव न सत्य सो, सीलवंत नहिं धीर।
लपट परिणामी जिसो, नाहिं कुशीली वीर ॥८८
निसप्रेही निरद्वंदसो, परिग्रह त्यागी नाहिं।
तृष्णावंत असतसो, परिग्रह व्रत न काहिं ॥८९
दारिद-भजन, जस-करण, कारण सपत्ति कोइ।
नही दान सो दूसरो, सुरग मुक्ति दे सोइ ॥९०
चउ दाननि से दान नहि, औषध और आहार।
अभयदान अर ज्ञान को, दान कहे गण-धार ॥९१
रागादिक परिहार सो, और न त्याग बखान।
त्याग समान न सूरता, इह निश्चय परवान ॥९२
तप समान नहिं और है, द्वादश माहिं निधान।
नही ध्यान सो दूसरो, भाषे श्री भगवान ॥९३
ध्यान नही निज ध्यान सो, जो कैवल्य स्वरूप।
जा प्रसाद भवरूप मिटि, जीव होय चिद्रूप ॥९४
क्षीण मोह से लोक मे, ध्यानी और न जानि।
कारण आतम ध्यान को मन निश्चलता मानि ॥९५
कारण मन वशि करण को, नही जोग सो और।
जोग न निज सजोग सो, है सबको सिर मौर ॥९६
भोग न निज रस भोग सो, जामे नाहिं विजोग।
रोग न इन्द्री भोग सो, इह भाषे भवि लोग ॥९७
शोक न चिन्ता सारिखौ, विकलपरूप विडरूप।
नहिं संशय अज्ञान सो, लखै न चेतनरूप ॥९८
विकलपजाल-परित्याग सो, और नही वैराग।
वीतराग से जगत मे, और नही वडभाग ॥९९
छती सपदा चक्रि की, जो त्यागै मतिवत।
ता सम त्यागी और नहिं, भाषे श्री भगवत ॥१००
चाहे अछती भूमिका, करै कल्पना मूढ।
ता सम रागी और नहिं, सो शठ विषयारूढ ॥१
नव जौवन मे व्याह तजि, बाल ब्रह्म व्रत लेय।
ता सम वैरागी नही, सो भवपार लहेय ॥२

कटक नहिं क्रोधादि से, चढ़ि जु रहे गिर मान ।
मुनिवर से जोधा नही, शस्त्र न शुकल समान ॥३
भाव समान न भेष है, भाव समान न सेव ।
भाव समान न लिंग है, भाव समान न देव ॥४
ममता-माया रहित सो, उत्तम और न भाव ।
सोइ शुद्ध कहिये महा, बर्जित सकल विभाव ॥५
कारण आतम ध्यान को, भगवत्त भक्ति समान ।
और नही ससार मे, इह धारौ मतिमान ॥६
विघन-हरण मंगल-करन, जप सम और न जानि ।
जप नहिं अजप जाप सौ, इह श्रद्धा उर आनि ॥७
कारण रागविरोध को, भाव अशुद्ध जिसौ न ।
कारण समताभाव को, विरकित भाव तिसौ न ॥८
कारण भव वन-भ्रमण के, नहिं रागादि समान ।
कारण शिवपुर गमन को, नही ज्ञान सो आन ॥९
सम्यग्दर्शन ज्ञान व्रत, ए रतनत्रय जानि ।
इनसे रतन न लोक मे, ए शिव दायक मानि ॥१०
निज अवलोकन दर्शना, निज जाने सो ज्ञान ।
निजस्वरूप को आचरण, सो चारित्र निधान ॥११
निजगुण निश्चय रतन ये, कहे अभेद स्वरूप ।
व्यवहारै नव तत्व की, सरधा अविचल रूप ॥१२
तत्त्वारथ श्रद्धान सो, सम्यग्दर्शन जानि ।
नव पदारथ को जानिवौ, सम्यग्ज्ञान बखानि ॥१३
विषय कषाय व्यतीत जो, सो व्यवहार चरित्र ।
ए रतनत्रय भेद है, इनसे और न मित्र ॥१४
देव जिनेसुर गुरु जत्ती, धर्म अहिंसारूप ।
इह सम्यक् व्यवहार है, निश्चय निज चिद्रूप ॥१५
नहिं निश्चय व्यवहार सी, सरधा जग मे कोइ ।
ज्ञान भक्ति दातार ए, जिन भाषित नय दोइ ॥१६
भक्ति न भगवत भक्ति सी, नहिं आतम सो बोध ।
रोध न चित्त निरोध सो, दुरनयसो न विरोध ॥१७
दुर्मतिसी नहिं शाकिनी, हरै ज्ञान सो प्रान ।
नमोकार सो मंत्र नहिं, दुरमत्ति हरे निदान ॥१८
नहिं समाधि निरूपाधि सी, नहिं तृष्णा सी व्याधि ।
तन्त्र न परम-समाधि सो, हरै सकल असमाधि ॥१९
भवयन्त्र जु भयदाय को, ता सम विघन न कोय ।
सिद्धयन्त्र सो सिद्धकर, और न् जग में होय ॥२०

सिद्धक्षेत्र सो क्षेत्र नहिं, सर्व लोक के सीस ।
यात्री जतिवर से नही, पहुँचै तहां मुनीस ॥२१
षोड़सकारण सारिखा, और न कारण कोय ।
तीर्थेश्वर पद सारिसा और न कारज होय ॥२२
नाही दर्शन शुद्धि सा, षोडश माही जान ।
केवल रिद्धि बराबरी, और न रिद्धि बखान ॥२३
नहिं लक्षण उपयोग से, आतम ते जु अभेद ।
नाहिं कुलक्षण कुबुधि से, करै धर्म को छेद ॥२४
धर्म अहिंसारूप के, भेद अनेक बखान ।
नहिं दशलक्षण धर्म से, जग मे और निधान ॥२५
क्षमा उत्तमा सारिखो और दूसरी नाहिं ।
दशलक्षण मे मुख्य है, क्रोध-हरण जगमाहिं ॥२६
नीर न शांति स्वभाव सो, अगनि न कोप समान ।
मान समान न नीचता, नहिं कठोरता आन ॥२७
मानी को मन लोक मे, पाहन-तुल्य बखान ।
मान समान अज्ञान नहिं भाखे श्री भगवान ॥२८
निगरवभाव समान सो, मृदु नहिं जगमें और ।
हरै समस्त कठोरता, है सब कौ सिरमौर ॥२९
कीच न कपट समान को, वक्र न कपट समान ।
सरल भाव सो उज्जवल, न सूधी कोइ न आन ॥३०
आपद लोभ समान नहिं, लोभ समान न लाय ।
लोभ समान न खांड है, दुख औगुन समुदाय ॥३१
नहिं सन्तोष समान धन, ता सम सुक्ख न कोय ।
नहिं ता सम अमृत महा, निर्मल गुण है सोय ॥३२
श्रेष्ठ नहि निर्मल भाव सो, जहा न अशुभ सुभाव ।
नाहिं मलिन परिणाम सो, दूजौ कोई कुभाव ॥३३
सन्देह न अयथार्थ सो, जाकरि भर्म न जाय ।
नहिं यथार्थ सो लोक मे, निस्सन्देह कहाय ॥३४
नाहिं कलंक कषाय सो, भापे श्री भगवन्त ।
निःकलंक न अकषाय से, करै कर्म को अन्त ॥३५
शुचि नहिं मन-शुचि सारिखी, करै जीव को शुद्ध ।
अशुचि नही मन-अशुचिसी, इह भापें प्रतिबुद्ध ॥३६
नही असजम सारिखौ, जगत डवोवनहार ।
नहिं संचय सो लोक मे, ज्ञान बढावन हार ॥३७
वंचक नहिं परपंच से, ठगे सकल को सोइ ।
विप-वांछना सारिखी, नाहि ठगौरी कोइ ॥३८

नहिं त्रिलोक मे दूसरो, तप सो ताप-निवार।
त्रिविध ताप से ताप नहि, जरा जन्म मृति धार ॥३९
इच्छासी न अपूरणा, पूरी होइ न सोइ।
नहि इच्छा जु निरोध्र सी, तपस्या दूजी होइ ॥४०
त्याग समान न दूसरो, जग-जजाल निवार।
नही भोग-अनुराग सो, नरकादिक दातार ॥४१
नही अकिञ्चन सारिखौ, निरभय लोक मँझार।
नर परिगरही सारिखौ, भय-रूप न निरधार ॥४२
परिग्रह सो नहिं पापगृह, नहिं कुशील सो काद।
ब्रह्मचर्य सो और नहिं ब्रह्मज्ञान को वाद ॥४३
नही विषय रस सारिखौ, नीरस त्रिभुवन माहिं।
अनुभव रस आस्वाद सो, सरस लोक मे नाहिं ॥४४
अदयासी नहिं दुष्टता, अनृत सो न प्रपच।
छल नहिं चोरी सारिखौ, चोर समान न टच ॥४५
हिंसक सो नहि दुर्जन, हरै पराये प्राण।
नहिं दयाल सो सज्जना, पीरा हरै सुजाण ॥४६
नहिं विश्वास-घाती अवर, झूठे नर सो कोय।
नहि व्यभिचारी सो अना-चारी जग मे होय ॥४७
विकथा सो न प्रलाप है, आरत्ति सो न विलाप।
पाप न द्वय नय थाप सो, जिनवर सो न प्रताप ॥४८
सन्ताप न कोई सोक सो, लोक न सिद्ध समान।
धन प्राणन के नाश सो, और न शोक बखान ॥४९
जड जिय सो अभिलाष नहिं, गुण-मणि सो न मिलाप।
श्री जिनवर गुणगान सो, और न कोई अलाप ॥५०
नहिं विकथा नारीनिसी, कथा न धर्म समान।
नहिं आरत्ति भोगार्त्तिसी, दुरगत्ति दाई आन ॥५१
ऊँकार समान नहिं सर्व शास्त्र की आदि।
महा मङ्गलाचार है, यह उपचार अनादि ॥५२
नाद न सोऽह सारिखौ, नही स्वरस सो स्वाद।
स्यादवाद सिद्धान्त सो, और नही अविवाद ॥५३
एक एक नय पक्ष सो, और न कोई वाद।
नाहि विषाद विवाद सो, निद्रा सो न प्रमाद ॥५४
स्त्यान गृद्धि निद्रा जिसी, निद्रा निंद्य न और।
परनिन्दा सो दोष नहिं, भापे जिन जग-मौर ॥५५
निन्दा चउविधि सघ की, ता सम अघ नहिं कोय।
नाहि प्रससा जोगि कोउ जिन आगम सो होय ॥५६

सार न अध्यातम जिसौ, निज अनुभव को मूल ।
नहिं मुनि से अध्यातमी, सर्व विषय प्रतिकूल ॥५७
विषय कषाय बराबरी, बैरी जियके नाहिं ।
ज्ञान विराग विवेक से, हितू नाहि जग माहि ॥५८
अध्यात्म चरचा समा चरचा और न कोय ।
जिनपद अरचा सारिखी, अरचा और न होइ ॥५९
नाहि गणाधिप से महा-चरचा-कारक जानि ।
नाहि सुरधिप सारिखे, अरचा-कारक मानि ॥६०
गमन न ऊरध गमन सो, नही मोक्ष सो धाम ।
रोधक नाही कर्म से, हरो कर्म तजि काम ॥६१
शत्रु न कोई अधर्म सो, मित्र न धर्म समान ।
धर्म न वस्तु स्वभाव सो हिंसा-रहित बखान ॥६२
निज स्वभाव को विस्मरण, नहि ता सम अपराध ।
साधे केवलभाव को, ता सम और न साध ॥६३
नर देहा सम देह नहिं, लिङ्ग न पुरुष समान ।
वेद नही नर वेद सो, सुमन समो न सयान ॥६४
त्रस-काया सम काय नहिं, पचेन्द्री जा माहि ।
पंचेन्द्री नहि मनुष से, जे मुनिव्रत्त धराहि ॥६५
मुनि नहि तदभवमुक्ति से, जे केवल पद पाय ।
पहुँचे पचमगति महा, चहुगति भ्रमण नशाय ॥६६
गति नहि पचम गति जिसी, जाहि कहैं निजधाम ।
अविनश्वर पुर नाम जा, जा सम नगर न राम ॥६७
नाहि शुद्ध उपयोग सो मारग सूधौ होय ।
नाही मारग मुक्ति को, भव-विरक्ति सो कोय ॥६८
लोक शिखर सो ऊंच नहिं, सबके शिरपर सोय ।
नही रसातल सारिखौ नीचो जग में जोय ॥६९
जित मन इन्द्री धीर से और न वद्य वखानि ।
विषयी विकलनि सारिखे, और न निंद्य प्रवानि ॥७०
नहि अरिष्ट अघ कर्म से, शिष्ट न सुभग समान ।
नाहि पञ्च परमेष्ठि से, और इष्ट परवान ॥७१
जिन-देवल से देवल न, नही जैन से विम्ब ।
केवल सो ज्ञायक नही, जामे सव प्रतिविंव ॥७२
नाहि अकृत्रिम सारिखे, देवल अतिसयरूप ।
चैत्य वृक्ष से वृक्ष नहि, सुरतरु से हु अनूप ॥७३
जोगी जिनवर से नही, जिनकी अचल समाधि ।
निजरस भोगी ते सही, वर्जित सकल उपाधि ॥७४

इन्दिय भोगी इन्द्र से, नाहिं दूसरे जानि ।
इन्द्रा जीत मुनीन्द्र से, इन्द्र नरेन्द्र न मानि ॥७५
राग द्वेष परपंच से, असुर और नहिं होय ।
दर्शन-ज्ञान-चारित्र से, असुर-नाशक न कोय ॥७६
काम-क्रोध-लोभादि से, नाहिं पिशाच बखानि ।
सम संतोष विवेक से, मंत्राधीश न मानि ॥७७
माया मच्छर मान से, दुखकारी नहिं वीर ।
निगरव निकपटभाव से, सुखकारी नहिं धीर ॥७८
मैल न कोई मिथ्यात सो, लग्यौ अनादि विरूप ।
सावुन भेद विज्ञान सो, और न उज्ज्वलरूप ॥७९
मदन दर्प सो सर्प नहिं, डसै देव नर नाग ।
गरुड़ न कोई शील सो, मदन जीत बड़भाग ॥८०
मैल न मोहासुर समो, सकल कर्म को राव ।
महामल्ल नहिं वोध सो, हरै मोह-परभाव ॥८१
भर्म न कोई कर्म से, कारण सशय जानि ।
भ्रमहारी सम्यक्त्व से, और न कोई मानि ॥८२
विष नहिं विषयानद से, देहि अनता मर्ण ।
सुधा न ब्रह्मानद सो, अनुभवरूप अवर्ण ॥८३
क्रूर न क्रोधी सारिखे, नही क्षमी से शात ।
नीच न मानी सारिखे, निगरवसे न महात ॥८४
मायावी सो मलिन नहिं, विमल न सरल समान ।
चिंतातुर लोभीनसे, दीन न दुखी अयान ॥८५
दुष्ट न दोषी सारिखे, रागी से नहिं अध ।
अहंकार ममकार सो, और न कोई बध ॥८६
मोही से नहिं लोक मे, गहलरूप मतिहीन ।
कामातुर से आतुर न, अविवेकी अधलीन ॥८७
ऋण नहिं आस्रव-बंध से, राखे भव मे रोकि ।
मुनिवर से मतिवंत नहिं, छूटे ब्रह्म विलोकि ॥८८
संवर निर्जर सारिखे, रिण-मोचन नहिं कोइ ।
दुर्जर कर्म हरे महा, मुक्तिदायक सोइ ॥८९
विपति न वांछा सारिखी, वाछा-रहित मुनीश ।
मृगतृष्णा मिथ्या जिसो, और न कहे रिषीश ॥९०
समतासी ससार मे, साता कोइ न जानि ।
सातासी न सुहावणी, इह निश्चय उर आनि ॥९१
ममतासी मानो भया, और असाता नाहिं ।
नाहिं असाता सारिखी, है अनिष्ट जगमाहिं ॥९२

उदासीनता सारिखी, समता-करण न कोय ।
जग अनुराग समानता, समता मूल न जोय ॥९३
नाहिं भोग-अभिलाष सी, भूख अपूरण वीर ।
नाहिं भोग वैराग सी, पूरणता है वीर ॥९४
नाही विषयाशक्ति, सी त्रिसा त्रिलोकी मांहि ।
विरकततासी विश्व मे, और तृषा-हर नाहिं ॥९५
पराधीनता सारिखी, नही दीनता कोइ ।
नहिं कोई स्वाधीनता, तुल्य उच्चता होइ ॥९६
नही समरसी भाव सी, समता त्रिभुवन मांहि ।
पक्षपात वकवाद सी, और न विसमता नाहि ॥९७
जगतकामना कल्पना,-तुल्य कालिमा नांहि ।
नही चेतना सारिखी ज्ञायक त्रिभुवन माहि ॥९८
ज्ञान चेतना सारिखी, नही चेतना शुद्ध ।
कर्म कर्मफल चेतना, ता सम नाहि अशुद्ध ॥९९
नर निरलोभी सारिखे, नाहिं पवित्र बखान ।
सन्तोषी से नहिं सुखी, इह निश्चय परवान ॥१००
निरमोही अर निरममत, ता सम सन्त न कोय ।
निरदोषी निरबैर से, साधु और न कोय ॥१
दोष समान न मोषहर राग समान न पासि ।
मोह समान न वोध हर, ए तीनू दुखरासि ॥२
व्रती न कोई निशल्य सो, माया तुल्य न शल्य ।
हीन न जाचिक सारिखौ त्यागी से न अतुल्य ॥३
कामी से न कलकंधी, काम समान न दोष ।
परदारा परद्रव्य सो, और न अघ को कोष ॥४
शल्य समान न है सली, चुभी हिये के मांहि ।
नहिं निरदयी स्वभाव सो, मूढा और कहांहि ॥५
शोच न संग समान है, सग न अग समान ।
अंग नही द्वय अग से, तिनहिं तजें निरवान ॥६
कारमाण अर तैज सा, ए द्वय देह अनादि ।
लगे जीव के जगत मे, रोग महा रागादि ॥७
गेह समान न दूसरो, जानूं कारागेह ।
देह समान न गेह है, त्यागी देह-सनेह ॥८
ए काया नहिं जीव की, सो है ज्ञान शरीर ।
मृत्यु न ज्ञान शरीर की, नही रोग को पीर ॥९
नाही इष्ट-वियोग सो, शोक-मूल है कोइ ।
काया माया सारिखी, इष्ट न जग के जोइ ॥१०

नहिं संकल्प विकल्प सो, जाल दूसरो जानि।
नहिं निरविकलप ध्यान सो, छेदक जाल बखानि ॥११
नही एकता सारिखी, परम समाधि स्वरूप।
नही विषमतासी अवर, सठता रूप विरूप ॥१२
चिन्ता सी असमाधि नहिं, नहिं तृष्णा सी व्याधि।
नहिं ममता सी मोहनी, मायासी न उपाधि ॥१३
ज्ञानानन्दादिक महा, निजस्वभाव निरदाव।
तिनसो तन्मय भाव जो, सो एकत्व कहाव ॥१४
आशासी न पिशाचिनी, आसासी न असार।
नही जाचना सारिखी, लघुता जगत मंझार ॥१५
दान-कलासी दूसरी, दुख-हरणी नहिं कोइ।
ज्ञान कलासो जगत मे, सुखकारी नहिं कोइ ॥ १६
नाहि क्षुधासी वेदना, व्यापै सबको सोइ।
अन्न-पान दातार से, दाता और न होइ ॥१७
पर दुख हरणी सारिखी, गुरुता और न जानि।
पर पीडा करणी समा, खलता कोइ न भानि ॥१८
शुद्ध पारणामिक समा, और नाहि परिणाम।
सकल कामना त्याग सो, और न उत्तम काम ॥१९
धर्म-सनेही सारिखा, नाहिं सनेही होइ।
विषय-सनेही सारिखा, और कुमित्र न कोइ ॥२०
सर्व वासना त्याग सी, और न थिरता वीर।
कष्ट न नरक निगोद से, नही मरणसी पीर ॥२१
राज-काज अभ्यास सो, और न दुरगति-दाय।
जोगाभ्यास अभ्यास सो, और न सिद्धि उपाय ॥२२
नहि विराधना सारखी, बाधाकरण कहाहिं।
आराधन सी दूसरो, भव-बाधा-हर नाहिं ॥२३
निजसरूप आराधना, अचल समाधि स्वरूप।
ता सम शिव साधन नही, यह भाखे जिनभूप ॥२४
निज सत्ता सी निश्चलता, और न मानो मित्त।
आधि-व्याधि ते रहित जो, ध्यावौ ताहि निचिंत ॥२५
निज सत्ता को भूलि जे, राचे माया माहिं।
धरि धरि काया मे भ्रमे यामे संशय नाहिं ॥२६
मुनिव्रत तजि भवभोग को, चाहे जे मति मंद।
तिनसे मूढ न लोक मे, इह भाखे जिनचन्द ॥२७
वृद्ध भये हू गेह को, जो न तजे मतिहीन।
तिनसे गृद्ध न जगत मे, कापुरुषा न मलीन ॥२८

गेह तजें नव वर्ष के, धरें महाव्रत सार।
तिनसे पूज्य न लोक में, ते गुण वृद्ध अपार ॥२९
नहिं वैरागी जीव से, निरवंधन निरुपाधि।
नहीं जु रागी सारिखे, धारक आधि रु व्याधि ॥३०
निजरस आस्वादन-विमुख, भुगते इन्द्रीभोग।
नरकवासना ते लहैं, तिनसे नाहिं अजोग ॥३१
अभविनि से न अभागिया, भव्यनि से न सभाग।
निकटभव्य से भव्य नहि, गहै ज्ञान वैराग ॥३२
नहिं दरिद्र दुरबुद्धि सो, दलिद्दर सो न दुकाल।
नहिं संपति सन्मति जिसी, नही मोह सो जाल ॥३३
नही शमी से संयमी, व्रत सो नाहिं विधान।
नहिं प्रधान जिनवोध सो, निज निधि सो न निधान ॥३४
कोष न गुणभंडार सो, सदा अटूट अपार।
औगुन सो नहि गुणहरा, भव-भव दुख-दातार ॥३५
खल स्वभाव सो औगुन न, गुण न सुजनता तुल्य।
सत्य पुरुष निरवैर से, जिनके एक न शल्य ॥३६
खलजन दुरजन सारिखे, और न दूसरे नाहिं।
भववन सो वन नाहि कौ, भ्रमै मूढ़ जा माहिं ॥३७
विषवृक्ष न वसुकर्म से, नानाफल दुखदाय।
बेलि न मायाजाल सी, जगजन जहाँ फँसाय ॥३८
दुरनय पक्षी सारिखे, नाहिं कुपक्षी आन।
दैत्य न निरदय भाव से, तिमिर न मोह समान ॥३९
मन-उनमाद गयँद सो, और न वनगज कोइ।
क्रूरभाव सो सिंह नहिं, ठग न मदन सो सोइ ॥४०
नहिं अजगर अज्ञान सो, ग्रसै जगत को जोइ।
नहिं रक्षक निज ध्यान सो, काल हरण है सोइ ॥४१
थिर चर से नहि वनचरा, बसे सदा भव माहिं।
नहिं कंटक क्रोधादि से, दया तिनू महिं नाहिं ॥४२
विष-पहुप न विषयादि से, रहै कुवासनि पूरि।
नाहिं कुपात्र कुसूत्रसे, ते या वन मे भूरि ॥४३
पंथ न पावें जगत मे, मुकति तनो जग जत।
कोइक पावै ज्ञान निज, सोई लहै भव-अंत ॥४४
नहिं सेरो जिनबानि सी, दरसक गुरु से नाहिं।
नगर नही निरवाण सो, जहां सत ही जाहिं ॥४५
नहिं समुद्र ससार सो, अति गभीर अपार।
लहर न विषय तरंगसी, मच्छ न जमसो भार ॥४६

भ्रमण न चहुगति भ्रमण सो, भरमे जीव अपार।
पोत न मुनिव्रत सो महा, करै भवोदधि पार ॥४७
द्वीप नही शिवद्वीप सो, गुन रतनन की रासि।
तीरथनाथ जिनद से, सारथवाह न भासि ॥४८
अंधकूप नहि जगत सो, परै तहा तनधार।
जिन विन काढै कौन जन, करिकै करुणा सार ॥४९
नाहि भवानल सारिखी, दावानल जग माहि।
जगत चराचर भस्म कर, यामे सशय नाहि ॥५०
जिनगुण अंबुधि शरण ले, ताहि न याको ताप।
ताते सकल विलाप तजि सेवौ आप निपाप ॥५१
नहि वायु जगवायु सी, जगत उडावै जोय।
काय टापरी वापरी, याकै टिकै न कोय ॥५२
जिन पद परचित आसिरौ, जो नर पकरै आय।
सोई यामे ऊवरै, और न कोइ उपाय ॥५३
नाहि अतिंद्री, सुख समो, पूरण परमानन्द।
नाहि अफद मुनीन्द्र सो, आनदी निरद्वन्द ॥५४
नहि दीक्षा दुख-हारिणी, जिनदीक्षासी कोय।
नहि शिक्षा सुख-कारिणी, जिनशिक्षा सी होय ॥५५

चाल जोगीरासा

फंद न कनककामिनी सरिसा, मृग नहि मूरख नरसा।
नाहि अहेरी काम लोभसा, सूर न अंध सु नरसा ॥१
काटक फद न वोध वृत्त सा, मंदमती न अभविसा।
बुद्धिवत नहि भव्यजीव सा, भव्य न तद्भव शिवसा ॥५६
पुरुष शलाका महाभाग से, तथा चरम तन धर से।
और न जानो पुरुष प्रवीना, गुरु नहि तीर्थंकरसे ॥
ते पहली भाषे गुणवता, अब सुनि देवस्वरूपा।
इन्द्र तथा अहमिंद्र न सरखे, और न देव अनूपा ॥५७
इन्द्र न षट इद्रनि से कोई, सौधर्म सनतकुमार।
ब्रह्मेन्द्र जु अर लातव इद्रा, आनत आरण सारा ॥
ए एका भवतारी भाई, नर ह्वै शिवपुर लेंवे।
सम्यक्दृष्टी इद्र सवै ही, श्री जिनमारग सेवे ॥५८
लोकपालहु सम्यक्दृष्टी, इक भव धरि भव-पारा।
इंद्र सारिखे सुर ये सोहै, इनसे देव न सारा ॥
देवरिषी लौकातिक देवा, तिनसे इन्द्रहु नाही।
ब्रह्मचर्य धारत ए देवा, इनसे भुवन न माही ॥५९

तप कल्याणक समये सेवा, करें जिनेसुर की ये ।
नर ह्वै पावें पद निरवाना, राखे जिनमत हीये ॥
इंद्राणी सी देवी नाही, इन्द्राणी न शचीसी ।
इक भव धरि पावै सुखवासा, तीर्थंकर जननीसी ॥६०
सेवक देव जिनेसुरजू के, नाहिं सुरेसुर तुल्या ।
शची सारिखी भक्त न कोई, धारे भाव अतुल्या ॥
कल्याणक ए पांचू पूजैं, शची शक्र जिनदासा ।
अहनिशि जिनवर चरचा इनके, धारे अतुल विलासा ॥६१

दोहा

अब सुनि अहमिंद्रा महा, स्वर्ग ऊपरै जेहि ।
नव ग्रीवक नव अनुदिसा, पंचानुत्तर लेहि ॥६२
तेईसौ शुभ थान ए, तिनमे चौदा सार ।
नव अनुदिश पंचोत्तरा, ये पावें भवपार ॥६३
सम्यक्‌दृष्टी देव ए, चौदहथान निवास ।
चौदह मे नहि पच से, महा सुखनि की रास ॥६४
पंचनि मे सरवारथी, सिद्ध नाम है थान ।
सकल स्वर्ग को सीस जो, ता सम लोक न आन ॥६५
एका भवतारी महा, सरवारथसिधि वास ।
तिनसे देव न इन्द्र कोउ, अहमिद्रा न प्रकाश ॥६६
कहे देवमें सार ए, तैसे व्रत में सार ।
शील समान न गुरु कहे, शील देय भवपार ॥६७
देव माहिं जे समकिती, देव देव हैं जेहि ।
देव माहिं मिथ्या मती, पशु तें मूरख तेहि ॥
नारक मे जे समकिती, तिनसे देव न जांनि ।
तिरजंचनि में श्राविका, तिनसे मनुज न मांनि ॥६९
मनुजनि में जे अव्रती, अज्ञानी मतिमंद ।
तिनसे तिरजचा नही, सेवें विषय सुछंद ॥७०
मनुजनि माहि मुनन्द्रि जे, महाव्रती गुणवान ।
तिनसे अहमिन्द्रा नही, ताको सुनहु वखान ॥७१
थावर नहिं कृमिकीट से, ते सकलिन्द्री से न ।
पंचेन्द्री नहिं नरनि से, नर जु नरेन्द्र जिसे न ॥७२
महामंडलिक से न नृप, ते अर्धचक्री से न ।
अर्धचक्री नहिं चक्री से, चक्री इन्द्र जिसे न ॥७३
इन्द्र नही अहमिन्द्र से, ते न मुनीन्द्र समान ।
नाहिं मुनीन्द्र गणीन्द्र से, ज्ञानवान गुणवान ॥७४

नाहिं गणीन्द्र जिनेन्द्र से, जे सबके गुरुदेव ।
इन्द्र फणिन्द्र नरेन्द्र मुनि, करें सुरासुर सेव ॥७५
ते जिनेन्द्र हू तप समय, करे सिद्ध को ध्यान ।
सिद्धनि सो संसार मे, नाहिं दूसरो आन ॥७६
सिद्धनि सो यह आत्मा, निश्चय नय करि होय ।
सिद्धलोक दायक महा, नही शील सो कोय ॥७७
भूमि न अष्टम भूमि सी, सर्वभूमि के शीश ।
कर्म भूमि ते पावही, अष्टम भूमि मुनीस ॥७८
द्वीप अढाई से नही, असख्यात ही द्वीप ।
जहां ऊपजे जिनवरा, तीन भुवन के दीप ॥७९
नहिं जिन प्रतिमा-सारिखी, कारण वर वैराग ।
नही आन मूरति जिसी, कारण दोष रु राग ॥८०
नहि अनादि प्रतिमा समा, सुंदर रूप अपार ।
नाहिं अकृत्रिम सारिखे, चैत्यालय विसतार ॥८१
क्षेत्र न आरिज सारिखे, सिद्धक्षेत्र है सोइ ।
भरतैरावत दस सबै, नहिं विदेह से कोइ ॥८२
गिरि नहिं सुरगिरि सारिखे, तरु सुरतरु से नाहिं ।
नदी सुरनदी सी नही, सर्व नदी के माहिं ॥८३
शिला न पाडुकशिला सम, जा परि न्हावै ईश ।
सिद्ध सिलासी पांडु नहि, सा त्रिभुवन के शीश ॥८४
उदधि न क्षीरोदधि समा, द्रह पदमादि जिसे न ।
मणि नहिं चिंतामणि समा, कामधेनु सी धेनु ॥८५
निधि नहिं नवनिधि सारिखी, सो निजनिधि सी नाहिं ।
नहिं समुद्र गुणसिंधु सो, है निज निधि जा माहिं ॥८६
नन्दनादि से बन नही, ते निज वन से नाहिं ।
निज बन मे क्रीडा करे, ते आनन्द लहाहिं ॥८७
केवल परिणति सारिखी, नदी कलोलनि कोइ ।
निज गगा सोई गनो, ता सम और न होइ ॥८८
देव न आतम देव सो, गुण आतम सो, नाहि ।
धर्म न आतम धर्म सो, गुण अनन्त जामाहि ॥८९
बाजा दुन्दुभि सारिखा, नही जगत मे और ।
राजा जिनवर सो नही, तीन भुवन सिर-मौर ॥९०
नाहिं अनाहत तूर से, देव दुन्दभी तूर ।
सूर न तिनसे जे नरा, डारे मनमथ चूर ॥९१
वाहन नही विमान से, फिरे गगन के माहि ।
नाहिं विमान जु ज्ञान से, जा करि शिवपुर जाहिं ॥९२

हीन दीन अति तुच्छ तन, नहि निगोदिया तुल्य ।
सरवारथ सिधि।देव से, भववासी नहि कुल्य ॥९३
दीरघ देह न मच्छ से, सहसर जोजन देह ।
चौइन्द्री नहिं भ्रमर से, जोजन एक गनेह ॥९४
कान खजुरया से नहीं, ते इन्द्री त्रय कोस ।
बेइन्द्री नहि संख से, तन अढतालीस कोश ॥९५
एकेन्द्री नहि कमल से, सहसर जोजन एक ।
सब परि करुणा राखिवौ, इह जिनधर्म विवेक ॥९६
धातु न कनक समान सो, काई लगै न जाहि ।
सोहु न चेतन धातु सो, नहिं कबहू विनसाहि ॥९७
पारस से पाषाण नहिं, लोहा कनक कराय ।
पारसनाथ समान कोउ, पारस नाहिं कहाय ॥९८
करै जीव को आप सम, हरै सबै दु:ख दोय ।
धरै मोक्ष थानक विषैं, करै कर्म गण सोय ॥९९
ध्यावौ पारसप्रभु महा, बसै सदा सो पास ।
रागि सकल गुणरत्तन की, काटै कर्म जु पासि ॥१००
चातुर्मासिक सारखे, उतपत जीव न आन ।
व्रती जति से नाहिं कोउ, गमन तजे गुणवान ॥१
जिन कल्याणक क्षेत्र से और न तीरथ जान ।
तेहु न निज तीरथ जिसै, इह निश्चय कर मान ॥२
निज तीरथ निज क्षेत्र है, असंख्यात परदेश ।
तहां विराजै आतमा, जानै भाव असेस ॥३
अष्टमि चउदसि सारिखी, परवी और न जानि ।
आष्टाह्निक से लोक में, पर्व न कोइ प्रवानि ॥४
नंदीसुर सो धाम नहिं, जहां हरख अति होय ।
नदादिक वापनि सी, नही वापिका कोय ॥५
नारक से क्रोधी नही, शठ नर सो न गुमान ।
विकल न पशुगण सारिखे, लोभ न दभ न समान ॥६
नारक से न कुरूप कोउ, देवनि से न सुरूप ।
नर से धन्वाधर नही, नहिं पशु से वहुरूप ॥७
कारण भोग न दान सो, तप सो स्वर्ग न मूल ।
हिंसारम्भ समान नहिं, कारण नरक सथूल ॥८
पशुगति कारण कपट सो, ओर न कोइ वखान ।
सरल निगर्व सुभाप सो, नरभव मूल न आन ॥९
सुख कारण नहिं शुभ समो, अशुभ समा दुख मूल ।
नही शुद्ध सो लोक मे, मोक्ष-मूल अनुकूल ॥१०

पोसह पडिक्रमणादि सो, शुभाचरण नहि होइ ।
विषय कषाय कलंक सो, अशुभाचरण न कोइ ॥११
आतम अनुभव सारिखा, शुद्धभाव नही वीर ।
नही अनुभवी सारिखे, तीन भुवन मे धीर ॥१२
नारि समान न नागिनी, नारी सम न पिशाच ।
नारि समान न व्याधि है, रहे मूढजन राचि ॥१३
ब्रह्मज्ञान को विश्व मे, वैरी है व्यभिचार ।
ब्रह्मचर्य सो मित्र नहिं, इह निश्चै उर धारि ॥१४
कायर कृपण समान नहिं, सुभट न त्यागी तुल्य ।
रंक न आसादास से, लहै न भाव अतुल्य ॥१५
संत न आशा रहित से, आशा त्यागे साध ।
साध समान अबाध नहिं, करहि तत्त्व आराध ॥१६
निजगुण से नहिं भूषणा, भूख न चाहि समान ।
वस्त्र न दश दिश सारिखे, इह भाषे भगवान ॥१७
भोजन तृपति समान नहिं, भाजन गगन जिसौ न ।
राज न शिवपुर राज सो, जामे काल धको न ॥१८
राव न सिद्ध अनन्त से, साथ न भाव समान ।
भाव न ज्ञानानन्द से, इह निश्चय परवान ॥१९
चेतनता सत्ता महा, ता सम पटरानी न ।
शक्ति अनन्तानन्त सी, राजलोक जानी न ॥२०
नारक से दुखिया नही, विषयी देव जिसै न ।
चिन्तावान मनुष्य से, असहाई पशु से न ॥२१
सूक्षम अलप प्रजापत्ता, जीव निगोद निवास ।
ता सम सूक्षम थावर न, इह जिन आज्ञा भास ॥२२
अलस्या से बेइन्द्रिया, और न अलप शरीर ।
नही कुथिया से अलप, ते इन्द्रिय तनवीर ॥२३
काणमच्छिकासे न तुच्छ, चौइन्द्रिय तन धार ।
तन्दुलमच्छ समान तुच्छ, पचेन्द्री न विचार ॥२४
चुगली-चोरी अति बुरी, जोरी जारी ताप ।
चोरी चमचोरी तथा, जुवा आमिष पाप ॥२५
मदिरा मृगया मागना. पर महिलासू प्रीति ।
परद्रोह परपच अर, पाखंडादि प्रतीत ॥२६
तजो अभक्षण भक्ष्य अरु, तजौ अगम्यागम्य ।
तजौ विपर्यय भाव सहु, त्यागहु पाप अरम्य ॥२७
इनसी और न कुक्रिया, नरक निगोद प्रदाय ।
सकल कुक्रिया त्याग-सो और न ज्ञान उपाय ॥२८

उज्जल जल गल्यौ उचित, सोव्यौ अन्न अडंक ।
ता सम भक्ष्य न लोक मे, भावे विवुध निशंक ॥२९
मद्य मांस मधु माखणा, ऊमरादि फल निंदि ।
इनसे अभख न लोक मे, निंदे नर जगवंदि ॥३०
वेश्या दासी परत्रिया, तितसी धारै प्रीति ।
एहि अगम्या गम्य है, या सम नाहि अनीति ॥३१
होय कलक को सारखे, नाहि अनीतो कोय ।
वज्र चक्री सारिखे, नीतिवान नहि जोय ॥३२
खग जग कोउ गजेन्द्र से, मृग मृगेन्द्र से नाहिं ।
खग नहिं कोउ खगेन्द्र से, जे अति जोर धराहि ॥३३
वादित्र न कोइ वीन से, सुरपति से न प्रवीन ।
वाण न कोइ अमोघ से, हिंसक से न मलीन ॥३४
अशन न पान पियूष से, व्यसन न द्यूत समान ।
वस्त्राभरण न लोक मे, देवलोक सम आन ॥३५
वाजित्री न महेन्द्र से, पच कल्याणक माहि ।
सदा वजावे राग धरि, गावै संशय नाहिं ॥३६
अश्व नही जात्यश्व से, कटक न चक्रि-समान ।
अलकार नहिं मुकट से, अग न सीस समान ॥३७
पालें वाल जु ब्रह्मव्रत, ता सम पुरुष न नारि ।
खोवै वृद्धहि ब्रह्मव्रत, ता सम पशु न विचारि ॥३८
वज्र चक्र से लोक मे, आयुध और न वीर ।
वज्रायुध चक्रायुधी, तिनसे प्रवल न वीर ॥३९
हल मुसलायुध सारिखे, भद्रभाव नहि भूप ।
नहि धनुषायुध सारिखे, केलि कुतूहल रूप ॥४०
नाहि त्रिशूलायुध जिसै, और न भयंकर कोइ ।
नहि पुष्पायुध सारिखे, महा मनोहर होइ ॥४१
धर्मायुध से धर्मधर, सर्वोत्तम सव नाथ ।
और न जानो लोक मे, सकल जिनो के साथ ॥४२
नहि व्यभिचारी सारिखा, पापाचारी और ।
नाहि ब्रह्मचारी समा, आचारी सिरमौर ॥४३
मायासी कुलटा नही, लगी जगत के सग ।
विरचे क्षण मे पापिनी, परकीया बहु रग ॥४४
नहि चिद्रूपा सिद्धि सी, सुकिया जगत मझार ।
नहि नायक चिद्रूप सो, आनन्दो अविकार ॥४५
न्यारी होय न चेतना, है चेतन को रूप ।
रामरूप सी नहि रमा, रामस्वरूप अनूप ॥४६

कनक कामिनी रागतें, लखी जाय नहिं सोइ।
सयम शील स्वभावतें, ताको दरसन होइ ॥४७
सील ओपमा वहुत है, कहै कहालौ कोय।
जाने श्री जिनराज जु, शीलशिरोमणि सोय ॥४८
दौलति और न ऋद्धि सी, ऋद्धि न बुद्धि समान।
बुद्धि न केवल सिद्धि सी, इह निश्चय परवान ॥४९

इति शील-उपमा वर्णन

अथ शील स्वरूप निरूपण

कह्यौ दोय विध शीलव्रत, निश्चय अर व्यवहार।
सो धारो उर मे सुधी, त्यागौ सकल विकार ॥५०
निश्चय परम समाधितें, खिसवौ नाहि कदाचि।
लखिवौ आतमभाव को, रहियौ निज मे राचि ॥५१
निज परिणति परगट जहा, पर परिणति परिहार।
निश्चय शील-निधान जो, वर्जित सकल विकार ॥५२
पर परिणति जे परिणमे, ते व्यभिचारी जानि।
मानि ब्रह्मचारी तिके, लेहि ब्रह्म पहिचान ॥५३
परम शुद्ध परिणति विषै, मगन रहै धरि ध्यान।
पावे निश्चय शील को, भावे आतमज्ञान ॥५४
निज परिणति निज चेतना, ज्ञान सरूपा होइ।
दरसन रूपा परम जो, चारितरूपा सोइ ॥५५
जडरूपा जगबुद्धि जो, आपापर न लखेह।
पर परिणति सो जानिए, तन-धन माहि फसेह ॥५६
पर परिणति के मूल ए, राग दोष मद मोह।
काम क्रोध छल लाभ खल, परनिंदा परद्रोह ॥५७
दभ प्रपंच मिथ्यात मल, पाखडादि अनंत।
इन करि जीव अनादि के, भव-भव मे भटकत ॥५८
जौ लग मिथ्या परिणती, सठजन के परकास।
तौ लग सम्यक् परिणती, होय न ब्रह्म-विकास ॥५९

जोगीरासा

तजि व्यभिचारी भाव, सबै ही भए ब्रह्मचारी जे।
ते शिवपुर मे जाय विरजे, भव्यनि भव तारीजै ॥६०
व्यभिचारी जे पापाचारी, ते भरमे भव-भवमे।
पर परिणति सो रचिया जौलो, तौलो जाय न शिव मे ॥६१

जग मे जड़ अनुरागे, लागे नाही निज मे ।
कर्म कर्मफल रूप होय कै, परे भंवर भ्रम रज में ॥६२
ज्ञान चेतना लखी न अबलो, तत्त्वस्वरूपा शुद्धा ।
जामे कर्म न भर्मकलपना, भाव न एक अशुद्धा ॥६३
मिथ्या परणति त्यागै कोई, सम्यक्दृष्टी होई ।
अनुभव रस मे भीगै जौई, शीलवन्त है सोई ॥६४
निश्चय शील बखान्यूं एई, अचल अखण्ड प्रभावा ।
परम समाधि मई निजभावा, जहां न एक विभावा ॥६५

छन्द चाल

अब सुनि व्यवहार सुशीला, धारन मे करहु न ढीला ।
दृढ व्रत आखडी धरिवौ, नारिको सग न करिवौ ॥६६
नारी है नरक प्रतोली, नारिन मे कुमति अतोली ।
ए महा मोह की टोली, सेवें जिनकी मति भोली ॥६७
नारी जग-जन-मन चोरै, नारी भवजल मे बोरै ।
भव भव दुखदायक जानो, नारी सौं प्रीति न ठानों ॥६८
त्यागे नारी को संगा, नहि करे शीलव्रत्त भंगा ।
ते पावे मुक्ति निवासा, कबहु न करे भव-वासा ॥६९
इह मदन महा दुखदाई, याकू जीते मुनिराई ।
मुनिराय महा वलवन्ता, मनजीत मानजित सन्ता ॥७०
शीलहि सुरपति सिर नावै, शीलहिं शिवपुर जति जावै ।
साधू है शील सरूपा, यह शील सुव्रत्त अनूपा ॥७१
मुनि के कछुहू न विकारा, मन वच तन सर्व प्रकारा ।
चितवौ व्रत चेतन माही, नारी को सपरस नाही ॥७२
गृहपति के कछुक विकारा, तातें ए अणुव्रत धारा ।
परदारा कवहुं न सेवैं, परधन, कवहुँ नहि लेवैं ॥७३
जेती जग मे परनारी, वेटी वहनी महतारी ।
इह भांति गिनै जो भाई, सो श्रावक शुद्ध कहाई ॥७४
निजदारा पर सन्तोषा नहिं, काम राग अति पोषा ।
विरकत भावै कोउ समये, सेवै निज नारी कम ये ॥७५
दिनको न करै ए कामा, रात्री कवहुक परिणामा ।
मैथुन के समये मवना, नहि राच करै रति रमना ॥७६
परवी सव ही प्रति पालै, व्रत शील धारि अघ टालै ।
अष्टान्हिक तीनों धारै, भादव के मास हु सारै ॥७७
ये दिवस धर्म के मूला, इनमें मैथुन अघ थूला ।
अवर हु जं व्रत के दिवसा, पालै इन्द्रिनि के न वसा ॥७८

अपने अर तियके व्रत्ता, सबही पालै निरवृत्ता ।
या विधि जिन नारी सेवै, पर मनमे ऐसे बेवै ॥७९
कब तजि हौ काम-विकारा, इह कर्म महा दुख-भारा ।
यामें हिंसा बहु होवै, या कर्म करे शुभ खोवै ॥८०
जैसे नाली तिल भरिये, रचहु खाली नहिं धरिये ।
तातौ कीलौ ता माहे, लोहे को ससै नाहै ॥८१
घालें तिल भस्म जु होई, यह परतछि देखौ कोई ।
तैसे ही लिंग करि जीवा, नासे भग माहिं अतीवा ॥८२
ताते यह मैथुन निद्या, याको त्यागे जगवद्या ।
धन धन्य भाग जाकौ है, जो मैथुनते जु बच्यौ है ॥८३
जो बाल ब्रह्मव्रत धारे, आजनम न मैथुन कारे ।
तिनके चरणनि की भक्ती, दे भव्य जीवकूं मुक्ती ॥८४
हमहू ऐसे कब होहै, तजि नारी व्रत करि सोहै ।
या मैथुन मे न भलाई, परतछ दीखै अघ भाई ॥८५
अपनीहू नारी त्यागै, जब जिनवर के मत लागै ।
यह देहहु अपनी नाही, चेतन बैठो जा माही ॥८६
तौ नारी कैसे अपनी, यह गुरु आज्ञा उर खपनी ।
या विधि चिंतवै मन माही, कब घर तजि वनकूं जाही ॥८७
जबलों बलवान जु मोहा, तबलो इह मनमथ द्रोहा ।
छाडै नहिं हमसो पापी, तातें ब्याही त्रिय थापी ॥८८
जबलो वलवान जु होहै, मारै मनमथ अर मोहै ।
असमर्था नारी राखे, समरथ आतम-रस चाखें ॥८९
यह भावन नित भावतो, घर माहिं उदास रहतौ ।
जैसे पर-घर पाहुणियो, तैसे ये श्रावक गिणियो ॥९०
वह तौ घर पहुचौ चाहे, यह शिवपुर को जो उमाहै ।
अति भाव उदासी जाको, निज चेतन मे चित ताको ॥९१
छांडै सब राग रु दोषा, धारै सामायिक पोषा ।
कबहू न रक्त घरमे, ह्वै नगन त्रियासो न रमे ॥९२
मुख आदि विकारा जे है, छांडे नर ज्ञानी ते है ।
इह त्रिय-सेवन विधि भाखी, बिन पाणिग्रह नहिं राखी ॥९३
श्रावक व्रतधरि सुरपति ह्वै, सुरपति ते चय नरपति ह्वै ।
पुनि मुनि ह्वै पावै मुक्ती, इह शील प्रभाव सु जुक्ती ॥९४
नहिं शील सारिखौ कोई, दे सुरपुर शिवपुर होई ।
जे बाल ब्रह्मचारी हैं, सम्यग्दर्शन धारी है ॥९५
तिनके सम है नहिं दूजा, पावै त्रिभुवन करि पूजा ।
जे जीव कुशीले पापा, पावै भव-भव सतापा ॥९६

व्यभिचारी तुल्य न होई, अपराधी जग में कोई ।
ह्वै नरक निगोद निवासा, पापनि का अति दुख भासा ॥९७
जेते जु अनाचारा हैं, व्यभिचार पिछै सारा हैं ।
त्यागो भविजन व्यभिचारा, पालौ श्रावक आचारा ॥९८

दोहा

मुख्य बारता यह भया, बाल ब्रह्मव्रत लेय ।
जो यह व्रत धार न सके, तौ इक ब्याह करेय ॥९९
दूजी नारी न जोग्य है, व्रतधारनि को वीर ।
भोग समान न रोग है, इह धारै उर धीर ॥२००
जो अभिलाषा बहुत है, विषय-भोग की जाहि ।
तौ विवाह औरहु करै, नहि परदारा चाहि ॥१
परदारा सम पाप नहिं, तीन लोक में और ।
जे सेवे परनारि को, लहैं नरक मे ठौर ॥२
नरक मांहि बहु काल लो, दुख देवे अधिकाय ।
वज्रागनि पुतलीनिसों तिनको अंग तपाय ॥३
जरि जरि तिनकी देह जो, जैसे को तैसो हि ।
रहै सागरावधि तहां, दु ख सहंता सोहि ॥४
कहिवे में आवें नही, नरकवास के कष्ट ।
ते पावें पापी महा, परदारा तें दुष्ट ॥५
नारक के बहु कष्ट लहि, खोटे नर तिर होय ।
जन्म-जन्म दुरगति लहै, दुख देखै अघ सोय ॥६
अर याही भव मे सठा, अपजस दु.ख लहेय ।
राजदण्ड परचण्ड अति, पावे पर-तिय सेय ॥७

बेसरी छन्द

जग में धन बल्लभ है भाई, धनहूते जीतव अधिकाई ।
जीतवते लज्जा है वल्लभ, लज्जातें नारी नर दुल्लभ ॥८
जे पापी परदारा सेवे, ते बहुतनि की लज्जा लेवे ।
वैर बढै जु बहु सेती वीरा, परदारा सेवे नहि धीरा ॥९
धन जीतव लज्जा जस माना, सर्व जाय या करि व्रत ज्ञाना ।
कुलको लागै वड़ो कलंका, या अघको निंदे अकलंका ॥१०
पर-नारी रत पापनि को, जे दस वेगा उपजे मनसो जे ।
चिन्ता अर देखन अभिलाषा, पुनि निसास नाखन भय भाषा ॥११
काम-ज्वर होवै परकासा, उपजै दाह महादुख भासा ।
भोजन की रुचि रहै न कोई, वहुरि महामूरछा होई ॥१२

तथा होय सो अति उनमन्ता, अध महा अविवेक प्रभन्ता ।
जानौ प्राण रहन को ससै, अथवा छूटै प्राण निससै ॥१३
कहे वेग ए दश दुखदाई, व्यभचारी के उपजे भाई ।
कौ लग वर्णन कीजै मित्रा, परदारा सेवे न पवित्रा ॥१४
इही पाप है मेरु समाना, और पाप है सरस्यूँ दाना ।
याके तुल्य कुकर्म न कोई, सर्व दोष मूल जु सोई ॥१५
नर ते ही पर-दारा त्यागें, नारी जे पर पुरुष न लागे ।
सर्वोत्तम वह नारि जु भाई, ब्रह्मचर्य्य आजन्म धराई ॥१६
व्याह करै नहिं जो गुणवन्ती, विषय-भाव त्यागै गुणवन्ती ।
ब्राह्मी सुन्दरि ऋषभ-सुता जे, रहित विकार सुधर्म-रता जे ॥१७
चेटक पुत्री चदनबाला, ब्रह्मचारिणी व्रत्त विशाला ।
बहुरि अनन्तमती अति शुद्धा, वणिक-सुता व्रत शील प्रबुद्धा ॥१८
इत्यादिक की रीति चितारै, निरमल, निरदूषण व्रत पारै ।
महा सती जाकै न विकारा, विषयनि ऊपरि भाव न डारा ॥१९
आतम तत्त्व लख्यौ निरवेदा, काम कल्पना सबै निषेदा ।
पुरुष लखै सहु सुत अरु भाई, पिता समाना रंच न काई ॥२०
धारै बाल ब्रह्मव्रत शुद्धा, गुरु प्रसाद भई प्रति बुद्धा ।
ऐसी समरथ नाही पावै, तो पतिव्रत वृत्त धरावै ॥२१
मात पिता की आज्ञा लेती, एक पुरुष धारै विधि सेती ।
पाणिग्रहण कर सो कुलवन्ती, पतिकी सेव करै गुणवन्ती ॥२२
और पुरुष सहु पिता समाना, कै भाई पुत्रा करि माना ।
मेघेश्वर राजा की राणी, तथा राम की राणी जाणी ॥२३
श्रीपाल भूपति की नारी, इत्यादिक कीरति जु चितारी ।
जग सो विरकत भाव प्रवर्तै, औसर पाय सिताव निवर्तै ॥२४
मैथुन को जाने पशुकर्मा, यह उत्तम नारिन को धर्मा ।
तजि परिवार जु सम्यकवती, ह्वै आर्या तप संजमवन्ती ॥२५
ज्ञान विवेक विराग प्रभावै, स्त्रीपद छाडि स्वर्गपुर आवै ।
सुरग माँहि उतकिष्टा सुर ह्वै, बहुत काल सुख लहि पुनि नर ह्वै ॥२६
धारै महाव्रत निज ध्यावै, कर्म काटि शिवपुर को जावै ।
शिवपुर सिद्धक्षेत्रकू कहिये, और न दूजौ शिवपुर लहिये ॥२७
शिव है नाम सिद्ध भगवन्ता, अष्टकर्म-हर देव अनन्ता ।
भुक्ति मुक्तिदायक इह शीला, या धरवे मे ना कर ढीला ॥२८
शील सुधारस पान करै जो, अजरामर पद कोय धरे जो ।
शील बिना नारी धिग जन्मा, जन्म-जन्म पावे हि कुजन्मा ॥२९
रानी राव जशोधर केरी, शील विना आपद बहुतेरी ।
लही नरक मे ताते त्यागौ, कदै कुशीलपंथ मति लागौ ॥३०

शील समान न धर्म जु होई, नाहिं कुशील समौ अघ कोई ।
जे नर नारि शीलव्रत धारे, ते निश्चय परब्रह्म निहारे ॥३१
त्यागे दशो दोष व्रतवन्ता, ते मुनि एकचित करि सता ।
अञ्जन मञ्जन बहु सिंगारा, करना नहो व्रतिनको भारा ॥३२
तजिवो तिनको अशन गरिष्ठा, अर तजिवौ संसर्ग सपष्टा ।
नरको नारीको ससर्गा, नारिन को उचित न नरवर्गा ॥३३
ह्वै ससर्ग थकी जु विकारा, अर तजिवौ तौर्यत्रिक सारा ।
तौर्यत्रिक को अर्थ जु भाई गीत नृत्य वाजित्र वजाई ॥३४
मुनि को इनते कछुहु न कामा, श्रावक के पूजा विश्रामा ।
करे जिनेश्वर पद की पूजा, जिन प्रतिमा विन और न दूजा ॥३५
अष्टद्रव्य से पूजा करई, तहाँ गीत वादित्र जु धरई ।
नृत्य करै प्रभु जी के आगे, जिनगुन में भविजन मन लागै ॥३६
और न सिंगारादिक गावै, केवल जिनपद सों उर लावै ।
नारी-विषयनि को संकलपा, तजिवौ बुध को सर्व विकलपा ॥३७
अंग-उपंग निरखनों नाही, जो निरखै तो दोष धराही ।
सतकारादिक नारी जनसो, करनो नाही मन-वच-तनसो ॥३८
पूरव भोग-विलास न चितवौ, अर आगामी वांछा हरिवौ ।
सुपने हूँ नहिं मनमथ कर्मा, ए दश दोष तजै व्रत धर्मा ॥३९
व्रत नहिं शील वरावर कोई, जिनशासन की आज्ञा होई ।
.... ॥४०

उक्तंच श्री ज्ञानार्णवमध्ये

आद्यं शरीरसस्कारो द्वितीयं वृष्यसेवनम् ।
तौर्यत्रिकं तृतीय स्यात्ससर्गस्तुर्यमिष्यते ॥१
योपिद्विषसकल्पं पंचमं परिकीर्तितम् ।
तदंगवीक्षण षष्ठं सत्कारः सप्तमो मत ॥२
पूर्वानुभूतसंभोग. स्मरण स्यात्तदष्टमम् ।
नवमे भावनी चिन्ता दशमे वस्तिमोक्षणम् ॥३

कवित्त

तिय-थल-वासि प्रेम रुचि निरखन, देखि रीझ भाषत मधु वैन,
पूरव भोग केलिरस चितवन, गुरु व अहार लेत चित चैन ।
करि सुचि तन सिंगार वनावत, तिय परजक मध्य मुख सैन,
मनमथ कथा उदर भरि भोजन, ए नव वाडि जानि मत जैन ॥४१

दोहा

अतीचार सुनि पाँच अव, मुनि करि तजि वर वीर ।
जव चौथो व्रत शुद्ध ह्वै, इह भाषे मुनि वीर ॥४२

ब्याह सगाई पारको, किरिया अव्रत पोष ।
शीलवन्त नर नहिं करै, जिन त्यागे सहु दोष ॥४३
इत्वरिका कुलटा त्रिया, ताकी है द्वै जाति ।
परिग्रहीता एक है, जाके सामिल खाति ॥४४
अपरिग्रहीता दूसरी जाके, स्वामि न कोय ।
ए इत्वरिका द्वै बिधा, पर पुरुषा-रत होय ॥४५
जिन सो रहनो दूर अति, तिनको सग तजेय ।
तिन सो सभाषण नही, तबै जनम सुधरेय ॥४६
गमन करै नहिं वा तरफ, विचरै तहाँ न नारि ।
डारि नारि को नेह नर, धरै व्रत्त अघ टारि ॥४७
तजि अनग क्रीड़ा सबै, क्रीडा अघ की एहि ।
मदन मारि मन जीति कर, ब्रह्मचर्य व्रत लेहि ॥४८
निज नारी हूते सुधी, करै न अधिकी प्रीति ।
भाव तीव्र नहि काम के, धरै धर्म की रीति ॥४९
कहै अतिक्रम पच ए, इनमे भला न कोय ।
ए सब ही तजि या थका, शील निर्मला होय ॥५०
नीलो सेठ-सुता शुभा शील व्रत परसाद ।
देवनि करि पूजा लही, दूरि भयो अपवाद ॥५१
शील प्रभावै जय-प्रिया, शुभ सुलोचना नारि ।
लही प्रशसा सुरनि करि, सम्यग्दर्शन धारि ॥५२
शील-प्रमादै राम की, जनकसुता शुभ भाव ।
पूज्य सुरासुर नरनि करि, भये जगत की नाव ॥५३
सेठ विजय अर सेठनी, विजया शील प्रसाद ।
भई प्रशसा मुनिन करि, भये रहित परमाद ॥५४
शुक्ल पक्ष अर कृष्ण पक्ष, धारि शील व्रत तेहि ।
तीन लोक पूजित भये, जिन आज्ञा उर लेहिं ॥५५
सेठ सुदर्शन आदि बहु, सीझे शील-प्रताप ।
नमस्कार या व्रत्त को, जो मेटै भव-ताप ॥५६
जे सीझे ते शील करि, और न मारग कोय ।
जनम जरा मरणादि को, नाशक यह व्रत होय ॥५७
धरि कुशील बहु पापिया, बड़े नरक मँझार ।
तिनको को निरणय करै, कहत न आवै पार ॥५८
रावण खोटे भाव धरि, गये अधोगति माँहि ।
धवल सेठ नरके गयो, यामे सशय नाहिं ॥५९
कोटपाल जमदड शठ, करि कुशील अति पाप ।
गयो नरक की भूमि मे, लहि राजातें ताप ॥६०

बहुरि हुतौ जमदंड इक, कोटपाल गुणवन्त ।
नीति धर्म परभाव ते, पायौ जस जयवन्त ॥६१
सर्व गुणां है शील मे, अरु कुशील मे दोष ।
नाहिं कुशील समान कोउ, और पाप को पोष ॥६२
इन दोउनि के गुण अगुण, कहत न आवै थाह ।
जाने श्री जिनराय जू, केवल रूप अथाह ॥६३
महिमा शील महंत को, कहैं महा गणधार ।
भाषै श्री जिन भारती, रटै साधु भव तार ॥६४
सरवारथसिधि के महा, अहमिन्द्रा परवीन ।
गावे गुण व्रत शील के, जे अनुभव रसलीन ॥६५
कपे कांति इन्द्रादि का, जपे सुजस जोगीन्द्र ।
लौकान्तिक वरणन करे, रटे नरिन्द्र फणीन्द्र ॥६६
चन्द्र सूर सुर असुर खग, महिमा शील करैय ।
सूरि सन्त अध्यापका, मन वच काय धरेय ॥६७
हम से अलपमती कहो, कैसे गुण वरणेह ।
नमो नमो व्रत शील को, रहै ऋषि शरणेह ॥६८
दया सत्य अस्तेय अर, शीलै करि परणाम ।
भाषो पंचम व्रत्त जो, परिग्रह त्याग सुनाम ॥६९

इति चतुर्थ व्रत निरूपण ।

इन चारनि विन ना हुवै, परिग्रह के परिहार ।
परिग्रह के परिहार बिन, नहिं पावे भव-पार ॥७०
मुनिको सर्वहि त्यागवी, अतंर बाहिज-सग ।
धर्मं अकिंचन धारिवौ, करिवौ तृष्णा-भंग ॥७१
अपने आतमभाव विनु, जो पररूपा वस्त ।
सो परिग्रह भाषौ सुधी, ताको त्याग प्रशस्त ॥७२
सर्व भेद चउबीस हैं, चउदस अर दस भेलि ।
अंतर वाहिज सग ये, दुरगति फलकी बेलि ॥७३
परिग्रह द्वै विध त्यागिये, तव लहिये निज भाव ।
ब्रह्मज्ञान के शत्रु ये, नरक निगोद उपाय ॥७४
अतरंग परिग्रह तने, भेद चतुर्दश जान ।
मिथ्यात्वादिक जो सवै, जिन आज्ञा उर आन ॥७५
राग द्वेष मिथ्यात अर, चउ कषाय क्रोधादि ।
षट हास्यादिक वेद पुनि, चउदस भेद अनादि ॥७६
राग कहावै प्रीति अरु, द्वेष होइ अप्रीति ।
राग दोष तज भव्य जन, धरै धर्म की रीति ॥७७

जहां तत्त्व श्रद्धा नही, सो मिथ्यात कहाय ।
जड़ चेतन को ज्ञान नही, भर्मरूप दरसाय ॥७८
क्रोध मान चउ लोभ ये, चउ-कषाय वलवन्त ।
हतिये ज्ञान सुबानते, लहिये भाव अनन्त ॥७९
हास्य अरति अरु शोक भय, वहुरि ग्लानि वखान ।
तजिये षट हास्यादि का, मोह प्रकृति दुखदानि ॥८०
वेद भेद है तीन पुनि, पुरुष नपुंसक नारि ।
चेतन ते न्यारै लखौ, जिनवानी उर धारि ॥८१
एक समय इक जीव के, उदय होय इक वेद ।
ताते गनिये वेद इक, यह गावे निरवेद ॥८२
संख असख अनन्त है, इनि चउदह के भेद ।
अन्तरंग ये सग तजि, करिये कर्म विछेद ॥८३
अन्तर संग तजे विना, होइ न सम्यक् ज्ञान ।
विना ज्ञान लोभ न मिटै, इह भाषे भगवान ॥८४
अब सुनि बाहर संग जे, दसधा है दुखदाय ।
मुनिने त्यागे सर्वही, दीये दोष उडाय ॥८५
क्षेत्र वास्तु चौपद द्विपद, धान्य द्रव्य कुप्यादि ।
भाजन आसन सेज ये, दस परकार अनादि ॥८६
तजे संग चउबीस सहु, भजे नाथ चउवीस ।
सजे साज शिवलोक को, सबमे बडे मुनीस ॥८७
मूर्च्छा ममता सहु तजी, तृष्णा दई उडाय ।
नगन दिगम्बर भव तिरे, धरे न वहुरी काय ॥८८
श्रावक के ममता अलप, वहु तृष्णाको त्याग ।
राग नही पर द्रव्य सो, एक धर्म को राग ॥८९
धरम हेत खरचै दरव, गर्व नाहिं मन माहिं ।
सर्व जीवसो मित्रता, दुराचारता नाहिं ॥९०
जीव दया के कारणो, तजो वहुत आरम्भ ।
परिग्रह को परिमाण करि, तजौ सकल ही दम्भ ॥९१
लोभ लहरि मेटी जिनौ, धरियो धर्म संतोप ।
ते श्रावक निरदोष हैं, नही पाप को पोप ॥९२
क्षेत्र आदि दस संग को, कियौ तिने परिमाण ।
राख्यौ परिग्रह अलप ही, तिन सम और न जाण ॥९३
कह्यौ परिग्रह दसविधा, वहिरंगा जे वीर ।
तिनके भेद सुनू भया, भाखे मुनिवर धीर ॥९४

चौपाई

क्षेत्र परिग्रह खेत वखान, जहाँ ऊपजै धान्य निधान।
वास्तु कहावै रहवा तना, मन्दिर हाट नौहरा बना ॥९५
हस्ती घोटक ऊँट रु आदि, गाय वलध महिषी इत्यादि।
होय राखणो जो तिरजंच, चौपद परिग्रह जानि प्रपंच ॥९६
द्विपद परिग्रह दासी दास, पुत्र कलत्रादिक परकास।
धान्य कहावै गेहूँ आदि, जीवन जनको अन्न अनादि ॥९७
धन कनकादिक सवही धात, चिन्तामणि आदिक मणि जात।
चौवा चन्दन अगर सुगन्ध, अत्तर अगरजा आदि प्रबन्ध ॥९८
तेल फुलेल घृतादिक जेह, वहुरि वस्त्र सव भाँति कहेह।
ये सब कुप्य परिग्रह कहे, संसारी जीवनिने गहे ॥९९
भाजन नाम जु वासन होय, धातु पषाणा काठके कोय।
माटी आदि कहाँ लग कहै, साधन भाजन ए कहु गहे ॥२००
आसन वैसनके वहु जान, सिंघासन प्रमुखा परवान।
गद्दी गिलम आदि जेतेक, त्यागौ परिग्रह धारि विवेक ॥१
सज्या नाम सेजको कह्यौ, भूमि-शयन मुनिराजनि गह्यौ।
ए दसधा परिग्रह द्वय रूप, कैइक जड कैइक चिद्रूप ॥२
द्विपद चतुष्पद आदि सजीव, रतन धातु वस्त्रादि अजीव।
अपने आतमते सब भिन्न, परिग्रहते ह्वै खेद जु खिन्न ॥३
है परिग्रह चिन्ताके धाम, इनको त्याग लहैं शिवठाम।
जिनवर चक्री हलधर धीर, कामदेव आदिक वर वीर ॥४
तजि परिग्रह धारे मुनिरूप, मुनिसम और न धर्म अनूप।
मुनि होवे की शक्ति न होय, श्रावक व्रत धारै नर सोय ॥५
करै परिग्रहको परमाण, त्यागै तृष्णा सोहि सुजाण।
इह परिग्रह अति दुखको मूल, है सुखते अतिही प्रतिकूल ॥६
जैसे वेगारी सिर भार, तैसे यह परिग्रह अधिकार।
जेतौ थोरौ तेतौ चैन, यह आज्ञा गावै जिन वैन ॥७
तातें अल्पारम्भी होय, अल्प परिग्रह धारे सोय।
ताहूको नित त्यागौ चहै, मन माही अति विरकत रहै ॥८
जैसे राहु केतु करि कान्ति, रवि शशिकी ह्वै और हि भाँति।
तैसे परणति होय मलीन, आतमकी परिग्रह करि दीन ॥९
ध्यान न उपजै या करि कवै, याहि तजे पावैं शिव तवै।
समताको यह वैरी होय, मित्र अधीरपनाको सोय ॥१०
मोह तनो विश्राम निवास, याते भविजन रहहिं उदास।
नासै सुखको सुभतें दूर, असुभ भावतें है परिपूरि ॥११

खानि पाप की दुख की रासि, रह्याँ आपदा को पद भासि ।
.... ॥
आरति रुद प्रकाशइ कंग, धर्म ध्यान का धरइ न सग ।
गुण अनन्त धन धार्‌यां चहै, सो परिग्रह तें दूरहि रहै ॥१२

दोहा

लोला बनि दुर्ध्यान को, बहु आरम्भ सरूप ।
आकुलता की निधि महा, सशय रूप विरूप ॥१३
मद का मंत्री काम घर, हेतु शोक को सोई ।
कलह तनों क्रीडा ग्रह, जनक वैर को होय ॥१४
धन्य घरी वह होयगी, जब तजियेगो सग ।
यामे बडपन नाहिं कछु, महादोष को अग ॥१५
हिंसादिक अपराध का, कारण मूल बखानि ।
जनम जनम मे जीव को, दुखदाई सो जानि ॥१६
धिग धिग द्विविधा संग को, जो रोके शिव-सग ।
चहुँ गति माहिं भ्रमाय करि, करै सदा सुख भंग ॥१७
जो यामें बडपन गिनै, सो मूरख मति-हीन ।
परिग्रहवान समान नहिं, और जगत मे दीन ॥१८
धन्य धन्य धरमज्ञ जे, याकू तुच्छ गिनेय ।
माया ममता मूरछा, सर्बारम्भ तजेय ॥१९
यही भावना भाव तो, भविजन रहै उदास ।
मन मे मुनिव्रत की लगन, सो श्रावक जिनदास ॥२०
बहुरि बिचारै सो सुधी, अगनि धरै गुण शीत ।
जो कदापि तौहु न कबै, परिग्रहवान अभीत ॥२१
काल कूट जो अमृता, होइ दैव सयोग ।
नहिं तथापि सुख होय ये, इन्द्रिन के रस भोग ॥२२
विषयनि मे जे राचिया, ते रुलिहै भव-माहिं ।
सुख है आतन-ज्ञान मे, विषय माहिं सुख नाहिं ॥२३
थिर ह्वै तड़ित प्रकाश जो, तौहु देह थिर नाहिं ।
देह नेह करिवो वृथा, यह चितवै मन माहिं ॥२४
इन्द्रजाल जो सत्य ह्वै, दैव जोग परवान ।
तौ पनि ससारी जना नाहिं कदे सुखवान ॥२५
चहुँ गति मे नहिं रम्यता, रम्य आतमाराम ।
जाके अनुभव ते महा, है पचमगति धाम ॥२६
इह विचार जाके भयौ, देहहु अपनी नाहिं ।
सो कैसे परपच करि, वढै परिग्रह माहिं ॥२७

सवैया तेईसा

हय गय पायक आदि परिग्रह, पुण्य उदै गृह होय विभौ अति ।
पाय विभौ पुनि मोहित होत, सरूप विसारि करे परसौं रति ।।
नारहि पोषण काज, रच्यौ बहु आरम्भ बाँधत दुर्गति ।
ज्ञानि कहै हमकूं कबहू मन, राम वहै पुनि देहहु द्यो मति ।।२८
नाहिं सतोष समान जु आन है, श्रीभगवान प्रधान सुधर्मा ।
है सुखरूप अनूप इहै गुण, कारण ज्ञान हरैं सब कर्मा ।।
पापनिको यह बाप जुलोभ, करै अतिक्षोभ करै अति मर्मा ।
धारि सतोष लहै गुणकाष, तजै सब दोष लहै निज-मर्मा ।।२९
रक सबै जग राव रिषीसुर, जो हि धरै शुभ शील संतोषा ।
सो हि लहै निज आतम भेद, करै अघ छेद हरे दुख दोषा ।।
श्रावक धन्य तजे सहु अन्य, हुए जु अनन्य गहै गुण कोषा ।
काम न मोह न लोभ न लेश, गहैं नहि भान दहै रति रोषा ।।३०
लोभ समान न आँगुण आन, नही चुगली सम पाप अरूपा ।
सत्य हि बैन कहै मुखतें सुभ, तो सम व्रत न तथ्य निरूपा ।।
पावन चित्त समान न तीरथ, आतम तुल्य न देव अनूपा ।
सज्जनता सम और कहा गुण, भूषन और न कीरति रूपा ।।३१
ब्रह्म सुज्ञान समान कहा धन, औजस तुल्य न मृत्यु कहाई ।
देवनिको गुरु देव दयानिधि, ता सम कोई न है सुखदाई ।।
रोष समान न दोष कहैं वुध, मोक्ष समान न आनन्द भाई ।
तोष समान न कारण मोक्ष, कहे भगवन्त कृपा उर लाई ।।३२
अग प्रसंग भये बहु सग, तिनौ महिं नाहि अभंग जु कोई ।
शुद्ध निजातम भाव अखंडित, ता महि चित्त धरै बुध सोई ।
बँध-विदारण, दोष-निवारण, लोक-उधारण और न होई ।
जा सम कोई न जान महामत्ति, टारइ राग विरोध जु दोई ।।३३

दोहा

धन्य-धन्य श्रावक व्रती, जो समकित धर धीर ।
तन धन आतम भावते न्यारे देखै वीर ।।३४
तन धनको अनुराग नहिं, एक धर्म को राग ।
संतोषी समता धरा, करै लोभ को त्याग ।।३५
मोह तनी ग्यारह प्रकृति शात होय जब वीर ।
तब धारै श्रावक व्रता, तृष्णा वर्जित धीर ।।३६
तीन मिथ्यात कषाय वसु, ये ग्यारह परवान ।
पंचम ठाने श्रावका, इनते रहित सुजान ।।३७
गई चौकरी द्वय प्रवल, जे दुरगति दुखदाय ।
रह्यो चौकरी द्वय अबै, तिनको नाश उपाय ।।३८

चितवै मनमे सासतौ, है जौलग अवसाय ।
तौलग तीजी चौकरी उदै धरै रहवाय ॥३९

अल्प परिग्रह धारई, जाके अल्पारम्भ । अवसर पाय सिताब ही, त्यागै सर्वारम्भ ॥४०
मुनिव्रतके परसाद शिव, ह्वै अथवा अहमिन्द्र । श्रावकवरत प्रभावतै, सुरह्वै तथा सुरिन्द्र ॥४१
परिग्रहको परमाण करि, जयकुमार गुणधार । सुर-नर कर पूजित भयौ, लह्यौ भवोदधि पार ॥४२
परिग्रहकी तृष्णा करे, लुब्धदत्त गुणवीत । गयौ दुरगती दुख लहे ज्यो समश्रु नवनीत ॥४३
करै जु संख्या सगकी, हरै देहतै नेह । अति न भ्रमावै नर पसू, गिनै आप सम तेह ॥४४

बोझ वहुत नहिं लादिवौ, करनो बहुत न लोभ ।
अति सग्रह तजिवौ सदा, करनो बहुत न क्षोभ ॥४५

अति विस्मय नहि धारिवो, रहनो निःसन्देह । झूठी माया जगतकी, अचिरज नाहि गनेह ॥४६

परिग्रह सख्या वरत के, अतीचार है पच ।
तिनकू त्यागें जे व्रती, तिनके पाप न रच ॥४७
क्षेत्र वास्तु सख्या करी, ताको करै उलघ ।
अतीचार हैं प्रथम यह, भाषै चउविधि सघ ॥४८
काहु प्रकारै भूलि करि, जोहि उलघे नेक ।
अतीचार ताको लगै, भाषै पडित एम ॥४९
द्विपद चतुष्पद सग को, करि प्रमाण जो वीर ।
अभिलाषा अधिकी धरै, सो न लहै भव-तीर ॥५०
अतीचार दूजौ इहै, सुनि तीजो अघरास ।
धन धान्यादिक वस्तु को, करि प्रमाण गुरु पास ॥५१
चित सकोचि सकै नही, मन दौरावे मूढ ।
सो न लहै व्रत शुद्धता, होय न ध्यानारूढ ॥५२
हम राख्यौ परिग्रह अलप, सरै न एते माहि ।
ऐसे विकलप जो करै, वर्तमान सो नाहि ॥५३
कुप्य भाड परिग्रह तनौ, करि प्रमाण तन धारि ।
चित्त चाहि मेटै नही, सो चौथो अतिचार ॥५४
शयन नाम सेज्या तनो, आसन द्वय विधि होय ।
थिर आसन चर आसना, करै प्रमाण जु कोय ॥५५
पुनि अधिको अभिलाष धरि, लावै व्रत मे दोष ।
अतीचार सो पाचमो, रोकै मारग मोष ॥५६
थिर आसन सिंहासनो, ताहि आदि वहु जानि ।
त्यागै चक्री मडलो, जिन आज्ञा उर आनि ॥५७
स्यन्दन कहिये रथ प्रगट, शिविका है सुखपाल ।
ए थल के चर आसना, त्यागै भव्य भूपाल ॥५८
बहुरि विमानादिक जिके, चर आसन शुभ रूप ।
ते आकाश के जानिये, त्यागे खेचर भूप ॥५९

नाव जिहाजादिक गिने, चर आसन जल माहिं।
चर आसन को पडिता, यान कहै सक नाहिं ॥६०
सकल परिग्रह त्यागिवौ, सो मुनि मारग होय।
किंचित मात्र जु राखिवौ, व्रत श्रावक को सोय ॥६१
व्याधि न तृष्णा सारखो, तृष्णा सी न उपाधि।
नहि सन्तोष समान है, कारण परम समाधि ॥६२
तृष्णा करि भव वन भ्रमै, तृष्णा त्यागे सन्त।
गृह परिग्रह बन्धन गिनै, ते निर्वाण लहत ॥६३
व्रत पाचमो इह कह्यौ, सम सन्तोष स्वरूप।
धन्य धन्य ते धीर है, त्यागें लोभ विरूप ॥६४
जे सीझे ते लोभ हरि, और न मारग होय।
मोह प्रकृति मे लोभ सो, और न परवल कोय ॥६५
सर्व गुणनि को शत्रु है, लोभ नाम वलवन्त।
ताहि निवारे व्रत्त ए करे कर्म को अन्त ॥६६
नमस्कार सतोष को, जाहि प्रशसे धीर।
जाकी महिमा अगम है, जा सम और न बोर ॥६७
जानै श्री जिनराय जू, या व्रत के गुण जेह।
और न पूरन ना लखै, गणधर आदि जिकेह ॥६८
हमसे अलपमती कहा, कैसें कहै बनाय।
नमो नमो या व्रत्त को, जो भव पार कराय ॥६९
सन्तोषी जीवानिको, वार-बार परणाम।
जिन पायौ सतोष धन, सर्व सुखनि को धाम ॥७०
नहिं सन्तोष समान गुरु, धन नहि या सम और।
निर विकलप नहि या समा, इह सवको सिरमौर ॥७१

इति पंचम व्रत निरूपण।

दया सत्य असतेय अर, ब्रह्मचर्य सन्तोष।
इन पांचनिको कर प्रणति, छट्ठम व्रत्त निरदोष ॥७२
भाषो दिसि परिमाण शुभ, लोभ नासिवे काज।
जीवदयाके कारणो, उर धरि श्री जिनराज ॥७३
द्वादश व्रत में पच व्रत, सप्त शील परवानि।
सप्त शील मे तीन गुण, चउ शिक्षा व्रत जानि ॥७४
जैसें कोट जु नगरके, रक्षा कारण होय।
तैसे व्रत रक्षा निमित, शीत सप्त ये जोय ॥७५
वरत शील धारे सुधी, ते पावे सुखराशि।
कहैं व्रत अव शील के, भेद कहां परकाशि ॥७६

पहलो गुणव्रत, गुणमई, छट्ठा व्रत सो जानि।
दसो दिशा परमाण करि, श्रीजिन आज्ञा मानि ॥७७
तीन गुणव्रत मे प्रथम, दिग्व्रत कह्यौ जिनेश।
ताहि धरे श्रावक व्रती, त्यागे दोष असेस ॥७८
लोभादिक नाशन निमित्त, परिग्रहको परिमाण।
कीयौ तैसे ही करौ, दिशि परमाण सुजाण ॥७९

बेसरी छन्द

पूरव आदि दिशा चउ जानो, ईशानादि विदिशि चउ मानो।
अध ऊरध मिलि दस दिशि होई, करै प्रमाण व्रती है सोई ॥८०
शीलवान व्रत धारक भाई, जाके दरशनते अघ जाई।
या दिशिको एत्तोही जाऊँ, आगै कबहु न पाँव धराऊँ ॥८१
या विधिसो जु दिशाको नेमा, करै सुबुद्धि धरि व्रतसो प्रेमा।
मरजादा न उलघं जोई, दिग्व्रत धारक कहिये सोई ॥८२
दसो दिशा की सख्या धारे, जित्ती दूरलौ गमन विचारै।
आगं गये लाभ ह्वै भारी, तौ पनि जाय न दिग्व्रत धारी ॥८३
सतोपी समभावी होई, धनकूँ गिनै धूरि-सम सोई।
गमनागमन तज्यो बहु जाने, दया धर्म धार्यो उर तानै ॥८४
लगं न हिंसा तिनको अधिकी, त्यागी जिन तृष्णा धन निधिकी।
कारण हेत चालनो परई, तो प्रमाण माफिक पग धरई ॥८५
मेरु डिगै परि पैड न एका, जाय सुबुद्धी परम विवेका।
व्रत करि नाश करै अघ कर्मा, प्रगटै परम सरावक धर्मा ॥८६
बिना प्रतिज्ञा फल नहिं कोई, रहै बात परगट अवलोई।
अतीचार पाँचो तजि बीरा, छट्ठो व्रत धारौ चित धीरा ॥८७
पहली ऊरध व्यतिक्रम होई, ताको त्याग करौ श्रुति जोई।
गिरि परि अथवा मन्दिर ऊपरि, चढनो परई ऊरध भूपरि ॥८८
ऊरध की सख्या ह्वै जेती, ऊँची भूमि चढै बुध तेती।
आगै चढिवो कौ जो भावा, अतीचार पहलो सु कहावा ॥८९
दूजो अध-व्यतिक्रम तजि मित्रा, जा तजिये व्रत होइ पवित्रा।
वापी कूप खानि अर खाई, नीची भूमि माहि उतराई ॥९०
तौ परमाण उलघि न उतरौ, अधिकी भू उतर्या व्रत खतरौ।
अधिक उतरने को जो भावा, अतीचार दूजो सु कहावा ॥९१
तीजो तिर्यंग व्यतिक्रम त्यागौ, तब छट्टे व्रत माही लागौ।
अष्ट दिशा जे दिशि विदिशा है, तिरछे गमने माहिं गिना है ॥९२
बहुरि सुरगादिक मे जावौ, सोऊ तिरछे गमन गिनावौ।
चउदिशि चउविदिशा परमाणा, ताको नाहि उलघ बखाणा ॥९३

जो अधिक जावेको भावा, अतीचार तीजो सु कहावा।
चौथो क्षेत्रवृद्धि है दूषन, ताको त्याग करे व्रत भूषन ॥९४
जेती दूर जानका नेमा सो स्वक्षेत्र भाषे श्रुति-प्रेमा।
जो स्वक्षेत्रते बाहिर ठौरा, सो परक्षेत्र कहावे औरा ॥९५
जो परक्षेत्र थको इह सधा, राखै सठमति हिरदे अधा।
ह्वाते क्रय विक्रय जो राखै, क्षेत्रवृद्धि दूषण गुरु भाखे ॥९६
पंचम अतीचारको नामा, स्मृत्यतर भासे श्रीरामा।
ताको अर्थ सुनो मनलाई, करि परमाण भूलि जो जाई ॥९७
जानत और अजानत मूढा, सो नहिं होई व्रत आरूढा।
ए पाँचू दोषा जे टारे, ते व्रत निर्मल निश्चल धारे ॥९८
श्री कहिये निजज्ञान विभूती, शुद्ध चेतना निज अनुभूती।
केवल सत्ता शुद्ध स्वभावा, आतमपरिणति-रहित विभावा ॥९९
ता परिणतिसो रमिया जोई, कर्म-रहित श्रीराम जु होई।
तिनकी आज्ञारूप जु धर्मा, धारे ते नाशे सब भर्मा ॥८००
अब सुनि व्रत सातमो भाई, जो दूजो गुणव्रत कहाई।
दिशा तणो कीयौ परिमाणा, तामे देश प्रमाण बखाणा ॥१
देश नगर अर गाँव इत्यादी, अथवा पाटक हाट जु आदी।
पाटक कहिये अर्ध जु ग्रामा, करै प्रमाण व्रती गुण-धामा ॥२
जिन देशनि मे धर्म जु नाही, जाय नही तिन देशनि माही।
जब वह बहु देशनिते छूटे, तब यासो अति लोभ जु टूटें ॥३
बहु हिंसा आरभ निवर्त्या, जीवदया मन माहिं प्रवर्त्या।
दिश अरु देशनिको जु प्रमाणा, लोभ नाशने निमित्त बखाना ॥४
जिनवर मुनिवर अर जिन धामा, जिनप्रतिमा अर तीरथ ठामा।
यात्राकाज गमन निरदोष, द्वीप अढाई लौ व्रत पोसा ॥५
अतीचार पाँचो तजि धीरा, जाकरि देश व्रत ह्वै धीरा।
चित पसरन-रोकन के कारन, मन वच तन मरजादा धारन ॥६
कबहूं नाहिं उलघि सु जाई, अर ह्वातैं आसा न धराई।
प्रेष्य नाम है सेवक को जी, ताहि पठावौ जो अधिको जी ॥७
वस्तु भेजिवौ लोभ निमित्ता, प्रेष्य प्रयोग दोष है मित्ता।
ताते जेतौ देश जु राख्यौ, भृत्य भेजिवो ह्वा तक भाख्यौ ॥८
आगै वस्तु पठैवो नाही, इह वाते धारौ उर माही।
दूजो दोष आनयन त्यागै, तब हि व्रत विधानहि लागै ॥९
परक्षेत्र जु ते वस्तु मँगावै सा गुणव्रतको दूषण लावै।
जो परमाण वाहिरा ठौरा, सो परक्षेत्र कहैं वृषभौरा ॥१०
तीजो दोष शब्दविनिपाता, ताको भेद सुनो तुम भ्राता।
जाय नही परि शब्द सुनावै, सो निरदूषण व्रत्त न पावै ॥११

चौथा दूषण रूपनिपाता, रूप दिखावण जोगि न बाता।
पंचम पुद्गलक्षेप कहावै, कंकर आदिक जोहि बगावै ॥१२

भावार्थ—दिशा और देशको जावजीव नियम कियो छै, ताहूमे वर्ष छमासी दुमासी मासी पाखी नेम धार्यो छै, तीमे भी निति नेम करै छै। सो निति नेम मरजादामे क्षेत्र निपट थोडा राख्यो सो गमन तो मरजादा बाहिर क्षेत्रमे न करै। परि हेलौ मारि सबद सुनावे, अथवा जिह तरफ जिह प्रानीसो प्रयोजन होय तिह तरफ झाकि झरौकादिकमे बैठि करि तिह प्राणीने आपनो रूप दिखाय प्रयोजन जणावे, अथवा कंकर इत्यादि बगाय पैलाने मतलब जतावै सो अतीचार लगाय व्रतने मलीन करै।

वेसरी छन्द

अब सुनि वरत आठमो भाई, तीजौ गुणव्रत अति सुखदाई।
अनरथदण्ड पापको त्यागा, यह व्रत धारे ते बडभागा ॥१३
पंच भेद हैं अनरथदोषा, महापापके जानहु पोषा।
पहला दुर्ध्यान जु दुखदाई, ताको भेद सुनो मन लाई ॥१४
पर औगुण गहना उरमाही, परलक्ष्मी अभिलाष धराही।
परनारी अवलोकन इच्छा, इन दोषनिते सुधी अनिच्छा ॥१५
कलह करावन करन जु चाहै, बहुरि अहेरा करन उमाहै।
हारि जीति चितवै काहूका, करै नही भक्ति जु साहूकी ॥१६
चौर्यादिक चितवे मनमाही, सो दुरगति पावै शक नाही।
दूजौ पापतनो उपदेशा, सो अनरथ तजि भजौ जिनेशा ॥१७
कृषि पशु धन्धा वणिज इत्यादी, पुरुष नारि सजोग करा दी।
मत्र यत्र तन्त्रादिक सर्वा, तजौ पापकर वचन सगर्वा ॥१८
सिंगारादिक लिखन लिखावन, राज-काज उपदेश बतावन।
सिलपि करम आदिक उपदेशा, तजो पाप कारिज आदेशा ॥१९
तजहू अनरथ विफला चर्या, सो त्यागौ श्री गुरुने बर्ज्या।
भूमि-खनन अरु पानी ढारन, अगनि-प्रजालन पवन-विलोरन ॥२०
वनसपती छेदन जो करनो, सो विफला चर्याको धरनो।
हरित तृणाकुर दल फल फूला, इनको छेदन अघको मूला ॥२१
अब सुनि चौथी अनरथदण्डा, जा करि पावौ कुगति प्रचण्डा।
हिंसादान नाम है जाको, त्याग करो तुम बुधजन ताको ॥२२
दयादान करिवा जु निरन्तर, इह बार्ता धारौ उर अन्तर।
छुरौ कटारी खडग रु भाला, जूती आदिक देहि न लाला ॥२३
विष नहि देवौ अगनि न देनी, हल फाल्यादिक दे नहि जैनी।
धनुष बान नहि देनो काको, जो दे अघ लागै अति ताको ॥२४
हिंसाकारक जेती वस्तु, सो देवौ तो नाहि प्रसस्तू।
वध बन्धन छेदन उपकरणा, तिनको दान दयाको हरणा ॥२५

पापवस्तु मागी नहिं देवै, जो देवे सो शुभ नहिं लेवै।
जामे जीवनिको उपकारी, सो देवौ सबकौ हितकारी ॥२६
अन्न वस्त्र जल।औषध आदी, देवौ श्रुतमें कह्यौ अनादी।
दान समान न आन जु कोई, दयादान सबके सिर होई ॥२७
मजारादिक दुष्ट सुभावा, मांस अहारी मलिन कुभावा।
तिनको पालन कबहु न करनौ, जीवनिकी हिंसाते डरनौ ॥२८
नखिया पंखिया हिंसक जेही, धर्मवन्त पालै नहिं तेही।
आयुधको व्यापार न कोई, जाकरि जीवनिको वध होई ॥२९
सीसा लौह लाख साबुन ए, वनिज जोग नहिं अघकारन ए।
जेती वस्तू सदोष बताई, तिनको वनिज त्यागवौ भाई ॥३०
खान पान मिष्टादि रसादिक, लवण हींग घृत तेल इत्यादिक।
दल फल तृण पहुपादिक कंदा, मधु मादिक विणिजे मतिमन्दा ॥३१
अतर फुलेल सुगन्ध समस्ता, इनको विणज न होइ प्रशस्ता।
तथा अजोग्य मोम हरतारे, हिंसाकारन उद्यम टारै ॥३२
वध बन्धनके कारिज जेते, त्यागहु पाप विणज तुम तेते।
पशु पंखी नर नारी भाई, इनके विणज महा दुखदाई ॥३३
काष्ठादिकको विणज न करै, धर्म अहिंसा उरमे धरै।
ए सब कुविणज छाडै जोई, धरम सरावक धारै सोई ॥३४
मूलगुणनिमें निंदै एई, अष्टम व्रतमे निंदे तेई।
वार-वार यह विणज जु निंद्या, इनकू त्यागैं ते नर वंद्या ॥३५
सुवरण रूपा रतन प्रसस्ता, रूई कपरा आदि सुवस्ता।
विणज करै तो ए करि मित्रा, सबै तजौ अति ही अपवित्रा ॥३६
सुनो पांचवों और अनर्था, जे शठ सुनहिं मिथ्यामत अर्था।
इह कुसूत्र सुणवौ अघ मोटा, और पाप सब याते छोटा ॥३७
पाप सकल उपजे या सेती, उपजै कुबुधि जगतमे तेती।
भंडिम वात सुनो मति भाई, वशीकरण आदिक दुखदाई ॥३८
वशीकरण मनको करि संता, मन जीत्यौ है ज्ञान अनन्ता।
कामकथा सुनिवौ नहिं कबहू, भूलै घने चेत परि अबहू ॥३९
परनिंदा सुनियां अति पापा, निंदक लहै नरक सन्तापा।
कबहु न करिवौ राग अलापा, दोष त्यागिवौ होय निपापा ॥४०
विकथा करिवो जोगि न वीरा, धर्मकथा सुनिवौ शुभ धीरा।
आलवाल बकिवौ नहिं जोग्या, गालि काढिवौ महा अजोग्या ॥४१
विना जैनवानी सुखदानी, और चित्त धरिवौ नहिं प्रानी।
केवलिश्रुत केवलिकी आणा, ताको लागै परम सुजाणा ॥४२
ते पावे निर्वाण मुनीशा, अजरा होवे जोगीशा।
सीख श्रवण रचना कुकथाको, नही करौ जु कदापि वृथाकौ ॥४३

जीवदयामय जिनवर-पन्था, धारै श्रावक अर निरग्रन्था ।
काम क्रोध मद छल लोभादी, टारै जैनी जन रागादी ॥४४
आगम अध्यातम जिन बानी, जाहि निरूपे केवलज्ञानी ।
ताकी श्रद्धा दृढ धरि धीरा, करणगोचरी कर वर वीरा ॥४५
जाकरि छूटै सर्व अनर्था, लहिये केवल आतम अर्था ।
धर्म धारणा धारि अखण्डा, तजौ सर्व ही अनरथदण्डा ॥४६
इन पञ्चनिके भेद अनेका, त्यागौ सुबुधी धारि विवेका ।
बडो अनर्थदण्ड है जूवो, याते सर्व पाप महि डूबौ ॥४७
या सम और न अनरथ कोई, सकल वरतको नाशक होई ।
द्यूत कर्म के विसन न लागै, तब सब पाप पन्थते भागै ॥४८
द्यूत कर्ममे माहि बडाई, जाकरि बूडे भवमे भाई ।
अनरथ तजिवो अष्टम व्रत्ता, तीजो गुणव्रत्त पाप निवृत्ता ॥४९
ताके अतीचार तजि पंचा, तिन तजिया अघ रहे न रंचा ।
पहलो अतीचार कन्दर्पा, ताको भेद सुनो तजि दर्पा ॥५०
कामोद्दीपक कुकथा जोई, ताहि तजै बुधजन है सोई ।
कौतकुच्य है दोष द्वितीया, ताको त्याग व्रतिनिने कीया ॥५१
बदन मोरिवौ बाको करिवौ, भौह नचैवो मच्छर धरिवौ ।
नयनादिकको जो हि चलावौ, विषयादिकमे मन भटकावौ ॥५२
इत्यादिक जे भडिम बाते, तजौ व्रती जे सुव्रत घाते ।
कौतकुच्यको अर्थ बखानो, पुनि सुनि तीजा दोष प्रवानो ॥५३
भोगानर्थक है अति पापा, जाकरि पइये दुर्गति तापा ।
ताको सदा सर्वदा त्यागौ, श्री जिनवरके मारग लागौ ॥५४
बहुत मोल दे भोगुपभोगा, सेवै सो पावे दुख रोगा ।
भोगुपभोग-थकी यह प्रीती, सो जानो अधिकी विपरीती ॥५५
बहुरि भूखते अधिको भोजन, जल पीवौ जो विनहि प्रयोजन ।
शक्ति नही अरु नारी सेवौ, करि उपाय मैथुन उपजैवौ ॥५६
वृथा फूल फल पानादिक जे, बाधा करै लहै शठ अघ जे ।
इत्यादिक जे भोगै अर्था, जो सेवौ सो लहै अनर्था ॥५७
है मौखर्य चतुर्था दोषा, ताहि तजै श्रावक व्रत-पोषा ।
जो बाचालपनाको भावा, सो मौखर्य कहै मुनिरावा ॥५८
बिना बिचार्यो अधिको बकिवौ, झूठे वाग्-जालमे छकिवौ ।
असमीक्षित अधिकरण जु बीरा, अतीचार पचम तजि धीरा ॥५९
विन देख्यो विन पूछ्यो कोई, घट्टी मूसल उखली जोई ।
कछु भी उपकरणा विन देख्या, बिन पू छ्या गृहिवौ न असेख्या ॥६०
तब हिंसा टरिहै परवीना, हिंसा-तुल्य अनर्थ न लीना ।
ए सब अष्टम व्रत के दोषा, करै जु पापी व्रतको सोखा ॥६१

इन तजिसी व्रत निर्मल होई, तातें तजै धन्य है सोई।
गुणव्रत काहेतें जु कहाये, ताको अर्थ सुनो मनलाये ॥६२
पंच अणुव्रतको गुणकारी, ताते गुणव्रत नाम जु धारी।
जैसे नगर-तने ह्वै कोटा, तैसे व्रत-रक्षक ए मोटा ॥६३
क्षेत्रनि होय वाडि जो जैसे, पंचनिके ए तीनू तैसे।
अब सुनि चउ शिक्षाव्रत मित्रा, जिन करि होवे अष्ट पवित्रा ॥६४
अष्टनिकों शिक्षा-दायक ए, ज्ञानमूल तप व्रत नायक ए।
नवमो व्रत पहिलो शिक्षाव्रत, चित्त धीर धर धारहु अणुव्रत ॥६५
सामायिक है नाम जु ताको, धारन करत सुधीजन याका।
सामायिक शिवदायक होई, या सम नाहिं क्रिया निधि कोई ॥६६

दोहा

प्रथम हि सातों शुद्धता, भासो श्रुत अनुसार।
जिन करि सामायिक विमल, होय महा अविकार ॥६७
क्षेत्र काल आसन विनय, मन वच काय गनेहु।
सामायिककी शुद्धता, सात चित्त धरि लेहु ॥६८
जहां शब्द कलकल नही, बहु जनको न मिलाप।
दंसादिक प्राणी नही, ता क्षेत्रे करि जाप ॥६९
क्षेत्र-शुद्धता इह कही, अब सुनि काल-विशुद्धि।
प्रात दुपहरां सांझकों, करै सदा सद्‌बुद्धि ॥७०
षट षट घटिका जो करैं, सो उतकृष्टी रीति।
चउ चउ घटिका मध्य है, करै शुद्धि धरि प्रीति ॥७१
द्वै द्वै घटिका जघनि है, जेती थिरता होइ।
तेती बेला योग्य है, या सम और न होइ ॥७२
धरै सुधी एकाग्रता, मन लावै जिन-माहिं।
यहै शुद्धता कालको, समय उलघै नाहिं ॥७३
तीजी आसन-शुद्धता, ताको सुनहु विचार।
पल्यकासन धारिकै, ध्यावै त्रिभुवन सारि ॥७४
अथवा कायोत्सर्ग करि, सामायिक करतव्य।
तजि इंद्रिय-व्यापार सहु, ह्वै निश्चल जन भव्य ॥७५
विनय-शुद्धता है भया, चौथी जिनश्रुति माहिं।
जिनवचनें एकाग्रता, और विकल्पा नाहिं ॥७६
हाथ जोडि आधीन ह्वै, शिर नवाय दे ढोक।
तन मन करि दासा भयौ, सुमरें प्रभु तजि शोक ॥७७
विनय समान न धर्म कोउ, सामायिकको मूल।
अव सुन मनकी शुद्धता, ह्वै व्रतसो अनुकूल ॥७८

मन लावै जिन-रूपसो, अथवा जिन-पद माहि ।
सो मन-शुद्धि जु पचमो, यामे सशय नाहि ॥७९
छट्ठी वचन-विशुद्धता, बिन सामायिक और ।
वचन कदापि न बोलिये, यह भाषे जगमौर ॥८०
काय-शुद्धता सातमी, ताको सुनहु विचार ।
काय-कुचेष्टा नहि करै, हस्त-पदादिक सार ॥८१
क्षेत्र-प्रमाण कियौ जितौ, तजे पापके जोग ।
मुनि सम निश्चल होयकै, करै जाप भविलोक ॥८२
राग द्वेष के त्यागते, समता सब परि होइ ।
ममताको परिहार जो, सामायिक है सोइ ॥८३
सामायिक अहनिशि करे, ते पावे भव-पार ।
सामायिक सम दूसरो, और न जगमे सार ॥८४
रात्ति दिवस करनो उचित, बहु थिरता नहि होय ।
तौहु त्रिकाल न टारिवौ, यह धारै बुध सोय ॥८५
जो सामायिकके समय, थिरता गहै सुजान ।
अणुव्रत धारै सो सुधी, तौ पनि साधु समान ॥८६

चाल छन्द

सामायिक सो नहि मित्रा, दूजो व्रत सोई पवित्रा ।
गृहपतिको जतिपति तुल्या, करई इह व्रत जु अतुल्या ॥८७
तसु अतीचार तजि पंचा, जब होइ सामायिक संचा ।
मन वच तन दु प्राणिधाना, तिनको सुनि भेद वखाना ॥८८
जो पाप काज चिंतवना, सो मनको दूषण गिनना ।
पुनि पाप वचनको कहिवौ, सो वचन व्यतिक्रम लहिवौ ॥८९
सामायिक समये भाई, जो कर चरणादि चलाई ।
सो तनको दोष बतायो, सतगुरु ने ज्ञान दिखायो ॥९०
चौथो जू अनादर नामा, है अतीचार अघ-धामा ।
आदर नहि सामायिकको, निश्चय नहि जिन-नायकको ॥९१
समरण अनुपस्थाना है, इह पचम दोष गिना है ।
ताको सुनि अर्थ विचारा, सुमरणमे भूलि प्रचारा ॥९२
नहि पूरो पाठ पढै जो, परिपूरण नाहि जपै जो ।
कछुको कछु बोलै वाल, सो सामायिक नहि काल ॥९३
ए पंच अतीचारा है, सामायिक मे टारा है ।
समता सब जीवन सेती, सयम शुभ भावनि लेती ॥९४
आरति अरु रोद्र जु त्यागा, सो सामायिक वड़भागा ।
सामायिक धारी भाई, जाकरि भव-पार लहाई ॥९५

बेसरी छन्द

क्षमा करौ हमसो सब जीवा, सबसो हमरी क्षमा सदोवा ।
सर्व भूत है मित्र हमारे, वैर-भाव सबहीसो टारे ।।९६
सदा अकेलो मै अविनाशी, ज्ञान-सुदर्शनरूप प्रकाशी ।
और सकल है जो परभावा, ते सब मोते भिन्न लखावा ।।९७
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अखडा, गुण अनन्तरूपी परचडा ।
कर्मबन्धते रुलै अनादि, भटको भव-वन माहि जु वादि ।।९८
जब देखै अपनो निजरूपा, तब होवो निर्वाण-सरूपा ।
या संसार असार मझारे, एक न सुखकी ठौर करारे ।।९९
यहै भावना नित भावंतो, लहै आपनो भाव अनंतो ।
अब सूनि पोसहकी विधि भाई, जो दसमो व्रत है सुखदाई ।।९००
दूजा शिक्षाव्रत अति उत्तम, याहि धरे तेई जु नरोत्तम ।
न्हावन लेपन भूषन नारी,—सगति गध धूप नहि कारी ।।१
दीपादिक उद्योत न होई, जानहु पोसहकी विधि सोई ।
एक मासमे चउ उपवासा, द्वै अष्टामि द्वै चउदसि भासा ।।२
षोडश पहर धारनो पोसा, विधि पर्वके निर्मल निर्दोषा ।
सामायिककी सो जु अवस्था, षोडश पहर धारनी स्वस्था ।।३
पोसह करि निश्चल सामायिक, होवै यह भासे जगनायक ।
पोसह सामायिकको जोई, पोसह नाम कहावै सोई ।।४
जे शठ चउ उपवास न धारें, ते पशु-तुल्य मनुष-भव हारे ।
बहुत करै तो बहुत भला है, पोसा तुल्य न और कला है ।।५
चउ टारै चउगतिके माही, भरमे यामे सशय नाही ।
द्वै उपवासा पखवारेमें, इह आज्ञा जिनमत भारेमे ।।६
व्रतकी रीति सुनो मन लाये, जाकरि चेतन तत्त्व लखाये ।
सप्तमि तेरसि धारन धारै, करि जिनपूजा पातक टारै ।।७
एकभुक्ति करि दो पहराते, तजि आरम्भ रहै एकांते ।
नहि ममता देहादिक सेती, धरि समता बहु गुणहि समेती ।।८
चउ अहार चउ विकथा टारै, चउ कषाय तजि समता धारै ।
धरमो ध्यानारूढमती सो, जगत उदास शुद्धवरत्ती सो ।।९
स्त्री पशु षढ वालकी सगत्ति, तजि करि उरमे धारै सन्मति ।
जिनमन्दिर अथवा वन उपवन, तथा मसानभूमिमे इक तन ।।१०
अथवा और ठौर एकान्ता, भजै एक चिद्रूप महन्ता ।
सर्व पाप जोगनिते न्यारा, सर्व भोग तजि पोसह धारा ।।११
मन वच काय गुप्ति धरि ज्ञानी, परमातम सुमरे निरमानो ।
या विधि धारण दिन करि पूरा, सध्या करै साँझकी सूरा ।।१२

सुचि संथारे रात्रि गुमावै, निद्राको लवलेश न आवै ।
कै अपनो निजरूप चितारै, कै जिनवर चरणा चित धारै ॥१३
कै जिनबिम्ब निरखई मनमे, भूल न ममता धरई तनमे ।
अथवा ओकार अपारा, जपै निरन्तर धीरज धारा ॥१४
नमोकार ध्यावै वर मित्रा, भयो भर्मते रहित स्वतन्त्रा ।
जग-विरक्त जिनमत आसक्तो, सकल-मित्र जिनपति अनुरक्तो ॥१५
कर्म शुभाशुभको जु विपाका ताहि विचारै नाथ क्षमाका ।
निजको जानै सवते भिन्ना, गुण-गुणिकों मानै जु अभिन्ना ॥१६
इम चितवनते परम सुखी जो, भववासिन सो नाहि दुखी जो ।
पंच परमपदको अति दासा, इन्द्रादिक पदते हु उदासा ॥१७
रात्रि धारनाकी या विधिसो, पूरी करै भर्यो ब्रतनिधिसो ।
पुनि प्रभात सध्या करि वीरा, दिन उपवास ध्यान धरि धीरा ॥१८
पूरो करै धर्मसो जोई, सध्या करै साझको सोई ।
निशि उपवासतणी ब्रतधारी, पूरी करै ध्यानसो सारी ॥१९
करि प्रभात सामायिक सुबुधी, जाके घटमे रच न कुबुधी,
पारण दिवस करै जिनपूजा, प्रासुक द्रव्य और नहि दूजा ॥२०
अष्ट द्रव्य ले प्रासुक भाई, श्री जिनवरकी पूज रचाई ।
पात्र-दान करि दो पहरां जे, करै पारणू आप घरा जे ॥२१
ता दिन हू यह रीति बताई, ठौर अहार अल्प जल पाई ।
धारन पारन अर उपवासा, तीन दिवसलो बरत निवासा ॥२२
भूमि-शयन शीलब्रत धारै, मन वच तन करि तजै विकारै ।
इह उतकृष्टी पोसह विधि है, या पोसह सम और न निधि है ॥२३
मध्य जु पोसह बारह पहरा, जघनि आठ पहरा गुण गहरा ।
अतीचार याके तजि पचा, जाकरि छूटै सर्व प्रपचा ॥२४
बिन देखी बिन पूछे वस्तू, ताको ग्रहिवौ नाहि प्रशस्तू ।
ग्रहिवौ अतीचार पहलो है, ताको त्यागसु अति हि भलो है ॥२५
बिन देखे बिन पू छे भाई, सथारे नहि शयन कराई ।
अतीचार छूटै तब दूजो, इह आज्ञा धरि जिनवर पूजो ॥२६
बिन देखो बिन पू छो जागा, मल मूत्रादि न कर वडभागा ।
करिवौ अतीचार है तीजो, सर्व पाप तजि पोसह लीजो ॥२७
पर्व दिनाको भूलन चौथो, अतीचार यह गुणते चौथो ।
बहुरि अनादर पंचम दोषा पोसहको नहि आदर पोषा ॥२८
ये पाँचो तजियाँ ह्वै पोषा, निरमल निश्चल अति निरदोषा ।
सामायिक पोषह जयवन्ता, जिनकर पइये श्रीभगवन्ता ॥२९
मुनि होनेको एहि अभ्यासा, इन सम और न कोइ अभ्यासा ।
भुक्ति मुक्ति दायक ये ब्रता, धन्य धन्य जे करहि प्रवृत्ता ॥३०

अब सुनि व्रत ग्यारमों मित्रा, तीजो शिक्षाव्रत पवित्रा।
जे भोगोपभोग है जगके, ते सहु वटमारे जिनमगके ॥३१
त्याग राग है सकल विनासी, जो शठ इनको होय विलासी।
सो रुलिहै भवसागर माही, यामें कछु सदेहा नाही ॥३२
एक अनंतो नित्य निजातम, रहित भोग उपभोग महातम।
भोजन तांबूलादिक भोगा, वनिता वस्त्र आदि उपभोगा ३३
एक बार भोगनमें आवै, ते सहु भोगा नाम कहावै।
बार बार जे भोगे जाई, ते उपभोगा जानहु भाई ॥३४
भोगुपभोग तनो यह अर्था, इन सम और न कोइ अनर्था।
भोगुपभोग तनो परमाणा, सो तीजो शिक्षाव्रत जाणा ॥३५
छता भोग त्यागे बड़भागा, तिनके इन्द्रादिक पद लागा।
अछताहू न तजे जे मूढ़ा, ते नहि होय व्रत आरूढ़ा ॥३६
करि प्रमाण आजन्म इनूं का, बहुरि नित्य नियमादि तिनूं का।
गृहपतिके थावरकी हिंसा, इन करि ह्वै पुनि तज्या अहिंसा ॥३७
त्याग बराबर धर्म न कोई, हिंसाको नाशक यह होई।
अंग विषे नहिं जिनके रंगा, तिनके कैसे होय अनंगा ॥३८
मुख्य बारता त्याग जु भाई, त्याग समान न और बड़ाई।
त्याग बनै नहि तोहु प्रमाणा, तामे इह आज्ञा परवाणा ॥३९
भोग अजुक्त न करने कोई, तजने मन वच तन करि सोई।
जुक्त भोगको करि परिमाणा, ताहूमें नित नियम बखाणा ॥४०
नियम करौ जु घरी हि घरीको, त्याग करौ सबही जु हरीको।
जे अनतकाया दुखदाया, ते साधारण त्याग कराया ॥४१
पत्र जाति अर कन्द समूला, तजने फूलजाति अघ थूला।
तजने मद्य मांस नवनीता, सहत त्यागिवौ कहैं अजीता ॥४२
तजने कांजी आदि सबैही, अत्याणा संधाण तजैंही।
तजनें परदारादिक पापा, तजिवौ परधन पर संतापा ॥४३
इत्यादिक जे वस्तु विरुद्धा, तिनको त्यागै सो प्रतिबुद्धा।
सबही तजिवो महा अशुद्धा, अर जे भोगा है अविरुद्धा ॥४४
भोग भावमें नाहि भलाई, भोग त्यागि ह्वजै शिवराई।
अपने गुण पर-जाय स्वरूपा, तिनमे राचै रहित विरूपा ॥४५
वस्त्राभरण व्याहिता नारी, खान पान निरदूषण कारी।
इत्यादिक जे अविरुध भोगा, तिनहूको जाने ए रोगा ॥४६
जो न सर्वथा तजिया जाई तौ परमाण करौ वहु भाई।
सर्व त्यागवों कहे विवेकी, गृहपति के कछु इक अविवेकी ॥४७
तौ लगि भोगुपभोगहि अल्पा, विविरूपा धारै अविकल्पा।
मुनि के खान-पान इकवारा, सोहू दोष छियालिस टारा ॥४८

और न एको है जु बिकारा, तातै महाव्रती अणगारा।
तजै भोग-उपभोग सबैही, मुनिवरका शुभ विरद फबैही ॥४९
शक्ति प्रमाण गृही हू त्यागै, त्याग बिना व्रतमे नहिं लागै।
राति दिवसके नेम विचारै, यम-नियमादि धरै अघ टारै ॥५०
यम कहिये आजन्म जु त्यागा नियम नाम मरजादा लागा।
यम नियमादि बिना नर देही, पसुहूते मूरख गनि एही ॥५१
खान पान दिनहीको करनो, रात्रि चतुविध हार हि तजनो।
नारी सेवे रैनि विषे ही, दिनमे मैथुन नाहिं फबै ही ॥५२
निसि ही नितप्रति करनो नाही, त्याग विराग विवेक धराही।
नियम माहिं करनो नित नेमा, सीम माहिं सीमाको प्रेमा ॥५३
करि प्रमाण भोगनिको भाई, इन्द्रिनको नहिं प्रबल कराई।
जैसे फणिकू दूध जु प्यावौ, गुणकारी नहिं विष उपजावौ ॥५४
जो तजि भोग भाव अधिकाई, अलप भोग सन्तोष धराई।
सो बहुती हिंसाते छूटयौ, मोहवटे नहिं जाय जु लूटयौ ॥५५
दया भाव उपजै घट ताके, भोगभावकी प्रीति न जाके।
भोगुपभोग पापके मूला, इनकू सेवे ते भ्रम मूला ॥५६

दोहा

हिंसाके कारण कहे, सर्व भोग उपभोग।
इनको त्याग करै सुधी, दयावन्त भवि लोग ॥५७
सो श्रावक मुनि सारिखा, भोग अरुचि परणाम।
समता धरि सब जीव परि, जिनके क्रोध न काम ॥५८
भोगुपभोग प्रमाण सम, नही दूसरो और।
तृष्णाको क्षयकार जो, है व्रत्तनि सिरमौर ॥५९
अतीचार या व्रत्तको, तजो पच दुखदाय।
तिन तजिया व्रत्त बिमल ह्वै, लहिये श्री जिनराय ॥६०
नियम कियौ जु सचित्तको, भूलिर करै अहार।
सो पहलो दूषण भयो, तजि हूजे अविकार ॥६१
प्रासुक वस्तु सचित्त सो, मिश्रित कबहूँ होय।
उष्ण जले जु सीतल उदक, मिल्यो न लेव होय ॥६२
गृहे दोष दूजो लगे, अब सुनि तीजो दोष।
जो सचित्त सम्बन्ध ह्वै, तजो पापको पौष ॥६३
पातल दूना आदि जे, वस्तु सचित्त अनेक।
तिनसौं ढक्यौ अहार जो, जीमे सो अविवेक ॥६४
सुनि चौथो दूषण सुधी, नाम जु अभिषव जास।
याको अर्थ अयोग्य है, ते न भखै जिनदास ॥६५

अथवा काम-उद्दीपका, भोजन अति हि अजोगि ।
ते कबहूँ करने नही, बरजे देव अरोगि ॥६६
बहुरि तजौ बुध पंचमों, अतीचार अघरूप ।
दु पक्वो आहार जो, अव्रतको जु स्वरूप ॥६७
अति दुर्जर आहार जो, वस्तु गरिष्ठ सु होय ।
नही योग्य जिनवर कहे, तजे धन्य हैं सोय ॥६८
कछु पक्यो कछु अपक ही, दुखसो पचै जु कोय ।
सो नहि लेवो व्रतनिको, यह जिन आज्ञा होय ॥६९
अतीचार पाँचौ तज्या, व्रत निर्मल ह्वै वीर ।
निर्मल व्रत्त प्रभावतै, लहै ज्ञान गम्भीर ॥७०

चाल छन्द

धरि वरत बारमो मित्रा, जो अतिथि-विभाग पवित्रा ।
इह चौथो शिक्षाव्रत्ता, जे याको करे प्रवृत्ता ॥७१
ते पावे सुर शिव भूती, वा भोगभूमि परसूती ।
सुनि या व्रतको विधि भाई, जा विधि जिनसूत्र बताई ॥७२
त्रिबिधा हि सुपात्रा जगमे, जगको नौका जिन-मगमे ।
महाव्रत अणुव्रत समदृष्टी, जिनके घट अमृतवृष्टि ॥७३
तिनकों नवधा भक्ती ते, श्रद्धादि गुणनि जुक्ती तै ।
देवौ चउदान सदा जो, सो है व्रत द्वादशमो जो ॥७४
चउ दान सबोमे सारा, इनसे नहिं दान अपारा ।
भोजन औषध अरु ज्ञाना, पुनि दान अभय परवाना ॥७५
भोजन-दानहि धन पावै, औषधि करि रोग न आवै ।
श्रुत-दान वोध जु लहाई, इह आज्ञा श्रीजिन गाई ॥७६
अभया है अभय प्रदाता, भाषे प्रभु केवल ज्ञाता ।
इक भोजन दाने माही, चउ दान सधै शक नाही ॥७७
नहिं भूख समान न व्याधी, भव माही वडी उपाधी ।
ताते भोजन सो अन्या, नहिं दूजी औषध धन्या ॥७८
पुनि भोजन-वल करि साधू, करई जिन-सूत्र अराधू ।
भोजनते प्राण अधारा, भोजनते थिरता धारा ॥७९
ताते चउ दान सधे हैं, दानें करि पुण्य वधे हैं ।
सो सहु वांछा तजि ज्ञानी, होवै दानी गुण-खानी ॥८०
इह भव पर भवको भोगा, चाहै नहि जानहिं रोगा ।
दे भक्ती करि सुपात्रनिको, निजरूप ज्ञानमात्रनिको ॥८१
तिह रतनत्रयमें सधो, थाप्यौ चउविधिको नर सधो ।
सो पावै भुक्ति विमुक्ती, इह केवलि भाषित उक्ती ॥८२

नहिं दान समान जु कोई, सब व्रतको मूल जु कोई।
यामे भविजन चित्त धारो, ससारपार जो चाहो ॥८३
जो भाषे त्रिविधा पात्रा, तिनिमे मुनि उत्तम पात्रा।
हैं मध्यम पात्र अणुव्रती, समदृष्टो जघन्य अव्रत्ती ॥८४
इन तीननिके नव भेदा, भाषे गुरु पाप-उछेदा।
उत्तममें तीन प्रकारा, उतकृष्ट मध्य लघु धारा ॥८५
उत्तम तीर्थंकर साधू, मध्य सु गणधर आराधू।
तिनते लघु मुनिवर सर्वे, जे तप व्रतसू नहिं गर्वे ॥८६
ए त्रिविध उत्तमा पात्रा, तप संजम शील सुमात्रा।
तिनकी करि भक्ति सु वीरा, उतरै जा करि भव-नीरा ॥८७
मुनिवर ह्रोवै निरग्रंथा, चालै जिनवरके पथा।
जे विरकत भव-भोगनिते, राग न द्वेष न लोगनिते ॥८८
विश्राम आपमे पायौ, काहूमे चित्त न लायौ।
रहनो नहिं एकै ठौरा, करनो नहिं कारिज औरा ॥८९
धरनू निज-आतम-ध्यान, हरनू रागादि अज्ञान।
नहिं मुनिसे जगमे कोई. उतरे भव-सागर सोई ॥९०

दोहा

मोह कर्मकी प्रकृति सहु, होय जु अट्ठाईस।
तिनमें पन्द्रह उपशमें, तब होवै जोगोस ॥९१
पन्द्रा रोके मुनिव्रतें, ग्यारा अणुव्रति रोध।
सात जु रोकै पापिनी, सम्यग्दरसन वोध ॥९२
क्रोध मान छल लोभ ए, जीवोकों दुखदाय।
सो चडाल जु चौकरी, वरजे श्रीजिनराय ॥९३
अनतानुबन्धी प्रथम, द्वितीय अप्रत्याख्यान।
प्रत्याख्यान जु तीसरी, अर चौथी सजुलान ॥९४
तिनमे तीन जु चौकरी, अर तीन मिथ्यात।
ए पंदरा प्रकृत्तिया, तजि व्रत होइ विख्यात ॥९५
पहली दूजी चौकरी, बहुरि मिथ्यात जु तीन।
ए ग्यारां प्रकृती गया, श्रावकव्रत लवलीन ॥९६
प्रथम चौकरी दूरि ह्वै, टरैं तीन मिथ्यात।
ए सातो प्रकृति टर्यां उपजे समकित भ्रात ॥९७
तीन चौकरी मुनिव्रते, द्वै अणुव्रत विधान।
पहली रोके समकित्ती, चौथी केवलज्ञान ॥९८
तीन मिथ्यात हते महा, मुनिव्रत अर अणुव्रत।
अव्रत सम्यककूं हते, करहिं अधर्म प्रवृत्त ॥९९

प्रथम मिथ्यात अबोध अति, जहां न निज-परबोध।
अध अधर्म विचार नहि, तीव्र लोभ अर क्रोध ॥१०००
दूजी मिश्र मिथ्यात है, कछु इक बोध प्रबोध।
तीजी सम्यक प्रकृति जो, वेदक सम्यक बोध ॥१
कछु चंचल कछु मलिन जो, सर्वघाति नहिं होइ।
तीन माहि इह शुभ तहूँ, वरजनीक है सोइ ॥२
ए मिथ्यात जु तीन विधि, कहे सूत्र अनुसार।
सुनों चौकरी बात अब, चारि चारि परकार ॥३
क्रोध जु पाहन-रेख सो, पाहन-थंभ जु मान।
माया बास जु जड-समा, अति परपंच बखान ॥४
लोभ जु लाखा रग सो, नरक-योनि दातार।
भरमावै जु अनंत भव, प्रथम चौकरी भार ॥५
हलरेखा सम क्रोध हैं, अस्थि-थभसम मान।
माया मीढा सीगसी, तिथि षट मास प्रमान ॥६
रंग आलके सारखो, लोभ पशुगति दाय।
इह दूजी है चौकरी, अप्रत्याख्यान कहाय ॥७
रथरेखा सम क्रोध है, काठथंभ-सो मान।
गोमूत्रकी जु वक्रता, ता सम माया जान ॥८
लोभ कसूमा रगसो, नरभव-दायक होय।
दिन पंदरा लग वासना, तृतीय चौकरी सोइ ॥९
जलरेखा सो रोस है, बेतलता सो मान।
माया सुरभी चमरसी, लोभ पतंग समान ॥१०
तथा हरिद्रारंग सो, सुरगति-दायक जेह।
एक मुहूरत वासना, अन्त चौकरी लेह ॥११
कही चौकरी चारि ये, च्यार हि गतिको मूल।
चारि चौकरी परिहरै, करै करम निरमूल ॥१२
मुनिने तीन जु परिहरी, धरी शातता सार।
चौथी हूको नाश करि, पावै भवजल पार ॥१३
सकल कर्मकी प्रकृति सौ, अर ऊपरि अड़ताल।
मुनिवर सर्व खपावही, जीवनिके रिछपाल ॥१४
मुनिपद बिन नहिं मोक्ष पद, यह निश्चय उर-धारि।
मुनिराजनिकी भक्ति करि, अपनो जन्म सुधारि ॥१५

चाल छन्द

मुनि हैं निर्भय वनवासी, एकान्त वास सुखरासी।
निज ध्यानी आतमरामा, जगकी सगति नहि कामा ॥१६

जे मुनि रहनेको थाना, बनमें कारहिं मतिवाना।
ते पावे शिव सुर थाना, यह सूत्र-प्रमाण वखाना ॥१७
मुनि लेइ अहारइ मित्रा, लघु एक बार कर-पात्रा।
जे मुनिको भोजन देही, ते सुरपुर शिवपुर लेही ॥१८
जौ लग नहिं केवलभावा, तौं लग आहार धरावा।
केवल उपजें न अहारा, भागे भव-दूषण सारा ॥१९
नहिं भूख तृषादि सबै ही, जव केवल ज्ञान फबैही।
केवल पाये जिनराजा, केवल पद ले मुनिराजा ॥२०
मुनिकी सेवा सुखकारी, बडभाग करे उरधारी।
पुस्तक मुनिपै ले जावे, मुनि सूत्र अर्थ ते आवे ॥२१
ते पावे आत्तमज्ञाना, ज्ञानहिं करि ह्वै निरवाना।
भेषज भोजनमे युक्ता, मुनिको लखि रोग प्रव्यक्ता ॥२२
देवे ते रोग नसावे, कर्मादिक फेरि न आवें।
मुनिके उपसर्ग निवारे, ते आतम भवदधि तारे ॥२३
मुनिराज समान न दूजा, मुनि पद त्रिभुवन करि पूजा।
मुनिराज त्रिवर्णा होवै, शूद्र र नहिं मुनिपद जोवै ॥२४
मुनि आर्या एल महा ए, ह्वै क्षत्री द्विज बणिजा ए।
अव मध्यपात्रके भेदा, त्रिविधा सुनि पाप उछेदा ॥२५
उत्तकृष्ट रु मध्य जघन्या, जिनसे नहिं जगमे अन्या।
पहली पडिमासो लेई, छट्ठी तक श्रावक जेई ॥२६
मध्यनिमे जघन कहावै, गुरु धर्म देव उर लावै।
जे पंचम ठाणे भाई, अणुवृत्ती नाम धराई ॥२७
पहली पड़िमा धर बुद्धा, सम्यक् दरसन गुण शुद्धा।
त्यागें जे सातो बिसना, छाडे विषयनिकी तृष्णा ॥२८
जे अष्ट मूल गुण धारे, तजि अभख जीव न संघारे।
दूजी पडिमा धर धीरा, व्रतधारक कहिये वीरा ॥२९
बारा व्रत पालै जोई, सेवै जिनमारग सोई।
जे धारें पंच अणुव्रत, त्रय अणुव्रत चउ शिक्षाव्रत ॥३०

चौपाई

तीजी पडिमा धरि मतिवत्त, सामायिकमे मुनिसे सत्त।
पोसामे आरूढ विशाल, सो चौथी पडिमा प्रतिपाल ॥३१
पचम पडिमा धर नर धीर, त्याग सचित्त वस्तु वर वीर।
पत्र फूल फल कूपल आदि, छालि मूल अंकुर वीजादि ॥३२
मन वच तन कर नीली हरी, त्यागै उरमे दृढ व्रत धरो।
जीवदयाको रूप निधान, षट कायाको पीहर जान ॥३३

पाल्यौ जैन वचन जिन धीर, सर्व जीवकी मेटी पोर।
छट्ठी प्रतिमा धारक सोई, दिवस नारिको परस न होई ॥३४
रात्रि विषे अनसन व्रत धरै, चउ अहारको है परिहरै।
गमनागमन तजै निशि माहिं, मन वच तन दिन शील धाराहिं ॥३५
ए पहलीसो छट्ठी लगे, जघन्य श्रावकके व्रत जगे।
पतिव्रता व्रतवन्ती नारी, मध्यम पात्र जघन्य विचारी ॥३६
श्रावक और श्राविका जेह, घरवारी व्रतचारी तेह।
मध्यम पात्तर कहे जघन्य, इनकी सेव करे सो अन्य ॥३७
वस्त्राभरण अन्न जल आदि, थान मान औषध धानादि।
देने श्रुत सिद्धांत जु वीर, हरनी तिनकी सबही पीर ॥३८
अभय दान देवो गुणवान, करनी भगति कहै भगवान।
भवजल के द्रोहण ए पात्र, पार उतारे दरसन मात्र ॥३९

दोहा

सप्तम प्रतिमा धारका, ब्रह्मचर्य व्रत धार।
नारीको नागिनि गिने, लख्यौ तत्त्व अविकार ॥४०
मन वच तन करि शीलधर, कृत कारित अनुमोद।
निज नारीहूकूं तजै, पावै परम प्रमोद ॥४१
जैसे ग्यारम दशम नव, अष्टम पड़िमाधार।
मन वच तन करि शील धरि, तैसे ए अविकार ॥४२
तिनतें एतो आंतरो, ते आरंभ वितीत।
इनके अलपारभ है, क्रोध लोभ छल जीत ४३
लख्यौ आपनों तत्व जिन, नाहिं मायासो मोह।
तजै राग दोषादि सब, काम क्रोध पर द्रोह ॥४४
कछु इक धनको लेस हैं, तातें घरमे वास।
जे इनकी सेवा करें, ते पावें सुखरास ॥४५

चाल छन्द

अब सुनि अष्टम पड़िमा ए, त्रस थावर जीवदया ए।
कछु हि धधा नहिं करनो, आरंभ सवैं परिहरनो ॥४६
भजनो जिनको जगदीसा, तजनो जगजाल गरीसा।
तनसो नहिं स्वामित धरनो, हिंसासो अतिही डरनो ॥४७
श्रावकके भोजन करई, नवमी सम चेष्टा धरई।
नवमीते एतो अतर, ए हैं कछुयक परिग्रह-धर ॥४८
वन माही थोरो रहनो, शीतोष्ण जु थोरो सहनो।
जे नवमी मड़िमावंता, जगके त्यागी विकसता ॥४९
जिन धातु मात्र सव नांखे, कपडा कछुयक ही राखे।
श्रावकके भोजन भाई, नहिं माया मोह धराई ॥५०

आवै जु बुलाये जीवा, जिनको नहिं माया छीवा।
है दशमीतें कछु नूना, परिकीय कर्म अघ चूना ॥५१
एतौ ही अन्तर उनते, कबहुँक लौकिक बच जनते।
बोले परि विरकतभावा, धनको नहिं लेश धरावा ॥५२
आतेकों आरुकारा, जाते सो हल भल धारा।
दसमीते अतिहि उदासा, नहिं लौकिक वचन प्रकाशा ॥५३
सप्तम अष्टम अर नवमा, ए मध्य सरावग पडिमा।
मध्यनिमे मध्य जु पात्रा, व्रत शील ज्ञान गुण गात्रा ॥५४
अथवा हो श्राविका शुद्धा, व्रत धारक शील प्रबृद्धा।
जो ब्रह्मचारिणी बाला, आजनम शील गुण माला ॥५५
सो मध्यम पात्रा मध्या, जानो व्रत शौल अवध्या।
अथवा निजपतिको त्यागै, सो ब्रह्मचर्य अनुरागै ॥५६
सो परम श्राविका भाई, मध्यनिमे मध्य कहाई।
इनको जो देय अहारा, सो ह्वै भवसागर पारा ॥५७

दोहा

अन्न वस्त्र जल औषधी, पुस्तक उपकरणादि।
थान ज्ञान दान जु करे, ते भव तिरें अनादि ॥५८
हरे सकल उपसर्ग जे, ते निरुपद्रव होंहि।
सुर-नर पति ह्वै मोक्षमे, राजे अति सुखसो हि ॥५९

चालछन्द

जो दशमी पडिमा धारा, श्रावक सु विवेकी चारा।
जग घधाको नहिं लेशा, नहिं धधाको उपदेशा ॥६०
वनमे हु रहै वर वीरा, ग्रामे हु रहै गुणधीरा।
आवै श्रावक घरि जीवा, नहि कनकादिक कछु छीवा ॥६१
एकादशमीते छौटे, परि और सकलते मोटे।
जिनवानी बिन नहिं बोले, जे कित्तहूँ चित्त न डोले ॥६२
मुनिवरके तुल्य महानर, दशमी एकादशमी घर।
एकादशमी द्वै भेदा, एलिक छुल्लक अघछेदा ॥६३
इनसे नहिं श्रावक कोई, सबमे उतकृष्टे होई।
त्यागौ जिन जगत असारा, लाग्यौ जिन रंग अपारा ॥६४
पायौ जिनराज सुधर्मा, छाड़े मिथ्यात अधर्मा।
जिनके पंचम गुणठाणा, पूरणतारूप विधाना ॥६५
द्वय माहिं महत जु ऐला, निश्चलता करि सुरगैला।
जिनके परिग्रह कोपीना, अर कमण्डल पीछी तीना ॥६६

जिनशासनको अभ्यासा, भव-भोगनिसुं जु उदासा ।
श्रावक के घर अविकारा, ले आप उदंड अहारा ॥६७
गुणवान साव सारीसा, लुचितकेसा विन रीसा ।
ए ऐलि त्रिवर्णा होई, शूद्रा नहिं ऐलि जु कोई ॥६८
इनतें छुल्लक कछु छोटे, परि और सकलते मोटे ।
इक खंडित कपरा राखें, तिनको छुल्लक जिन भाखे ॥६९
कमडलु पीछी कोपीना, इन विन परिग्रह तजि दीना ।
जिनश्रुत-अभ्यास निरंतर, जान्यूं है निज पर अंतर ॥७०
जे हैं जु उदंड विहारा, ले भाजनमांहि अहारा ।
कातरिका केस करावै, ते छुल्लक नाम कहावै ॥७१
चारों हे वर्ण जु छुल्लक, राखें नहिं जगसूं तल्लुक ।
आनन्दी आतमरामा, सम्यग्दृष्टी अभिरामा ॥७२
ए द्वै है भेद वड़ भाई, ग्यारम पड़िमा जु कहाई ।
वन-माहि रहैं वर वीरा, निरभय निरव्याकुल धीरा ॥७३
तिनकी करि सेव जु भाया, जो जीवनिको सुखदाया ।
तिनके रहनेकों थाना, वनमे करने मतिवाना ॥७४
भोजन भेपज जिनग्रन्था, इनकों दे सो निजपंथा ।
पावै अर दे उपकरणा, सो हरै जनम जर मरणा ॥७५
उपसर्ग उपद्रव टारै, ते निरभय थान निहारै ।
दसमी अर ग्यारस दोऊ, मध्यम उत्कृष्टे होऊ ॥७६
अथवा आर्या व्रतधारी, अणुव्रतमें श्रेष्ठ अपारी ।
आर्या घर-बार जु त्यागैं, श्रीजिनवरके मत लागैं ॥७७
राखै इक वस्त्र हि मात्रा, तप करि है क्षीण जु गात्रा ।
कमडलु पीछी अर पोथी, ले भूति तजी सहु थोथी ॥७८
थावर जंगम तनवाना, जाने सव आप समाना ।
जे मुनि कर-पात्र अहारा, सिर लोंच करें तप धारा ॥७९
तिनकी सो रीति जु धारै, जगसों ममता नहिं कारै ।
द्विज क्षत्री वणिक कुला ही, ह्वै आर्या अति विमला ही ॥८०
अणुव्रत परि महाव्रत तुल्या, नारिनमे एहि अतुल्या ।
माता त्रिभुवनकी भाई, परमेसुरसों लवलाई ॥८१
आर्याको वस्त्र जु भोजन, देनें भक्ती करि भो जन ।
पुस्तक औषधि उपकरणा, देनें सहु पाप जु हरणा ॥८२
उपसर्ग हरै बुधिवाना, रहनेको उत्तम थाना ।
देवे पुन अविनासी, लेवैं अति आनंदरासी ॥८३

दोहा

छै पड़िमा जानो जघनि, मध्य जु नवमी ताइ ।
दस एकादशमी उभय, उतकृष्टी कहवाइ ॥८४
पतिव्रता जो श्राविका, मध्यम माँहि जघन्य ।
ब्रह्मचारिणी मध्य है, आर्या उत्तम धन्य ॥८५
पंचम गुण ठाणे व्रती, श्रावक मध्य जु पात्र ।
छठे सातवे ठाण मुनि, महापात्र गुणगात्र ॥८६
कहे मध्यके भेद त्रय, अर उतकिष्टे तीन ।
सुनो जघन्य जु पात्रके, तीन भेद गुणलीन ॥८७
चौथे गुणठाणे महा, क्षायिक सम्यकवन्त ।
सो उतकृष्टे जघनिमे, भाषे श्रीभगवत ॥८८
क्रोध मान छल लोभ खल, प्रथम चौकरी जानि ।
मिथ्या अर मिश्रहि तथा, सम्यक् प्रकृति पर वानि ॥८९
सात प्रकृति ए खय गई, रह्यौ अलप ससार ।
जीवनमुक्त दशा धरै, सो क्षायिकसम धार ॥९०
सातो जाके उपसमे, रमै आपमे धीर ।
सो उपसम-सम्यक धनी, जघनि माँहि मधि वीर ॥९१
सात माँहि षट उपसमे, एक तृतीय मिथ्यात ।
उदै होय है जा समे, सो वेदक विख्यात ॥९२
वेदक सम्यकवन्त जो, जघनि जघनिमे जानि ।
कहे तीन विधि जघनि ए, जिन आज्ञा उर आनि ॥९३
जघनि पात्रकूं अन्न जल, औषध पुस्तक आदि ।
वस्त्राभूषण आदि शुभ, थान मान दानादि ॥९४
देवो गुरु भाषे भया, करनो बहु उपगार ।
हरनी पीरा कष्ट सहु, धरनो नेह अपार ॥९५
सब ही सम्यकधारका, सदा शात रसलीन ।
निकट भव्य जिनधर्मके, धोरी परम प्रवीन ॥९६
नव भेदा सम्यक्तके, तामे उत्तम एक ।
सात भेद गनि मध्यके, जघनि एक सुविवेक ॥९७
वेदक एक जघन्य है, उत्तम क्षायिक एक ।
और सबै गनि मध्य ए, इह धारौ जु विवेक ॥९८
क्षयोपसम वरते त्रिविध, वेदक चारि प्रकार ।
क्षायिक उपसम जुगल जुत, नवधा समकित धर ॥९९
वेदक कछुयक चचला, तौ पनि मर्म-उछेद ।
लखै आपकी शुद्धता जाने निज पर भेद ॥११००

सेवा जोग्य सुपात्र ए, कहे जिनागम माहिं ।
भक्ति सहित जे दान दे, ते भवभ्रांति नसाहि ॥१
त्रिविध पात्रके भेद नव, कहे सूत्र-परवान ।
मुनिको नवधा भक्ति करि, देहि दान बुधिमान ॥२
विधिपूर्वक शुभ वस्तुको, स्वपर अनुग्रह हेत ।
पातरको दान जु करै, सो शिवपुरको लेत ॥३
नवधा भक्ति जु कौनसी, सो सुनि सूत्र-प्रवानि
मिथ्या मारग छाड़ि करि, निज श्रद्धा उर आनि ॥४
आवौ आवौ शब्द कहि, तिष्ठ तिष्ठ भासेहि ।
सो संग्रह जानो बुधा अघ-सग्रह टारेहि ॥५
ऊँचौ आसन देय शुभ, पात्रनिको परवीन ।
पग धोवैं अरचै बहुरि, होय बहुत आधीन ॥६
करै प्रणाम विनय करी, त्रिकरण शुद्धि धरेहि ।
खान-पानकी शुद्धता, ये नव भक्ति करेहि ॥७
सुनो सात गुण पंडिता, दातारनिके जेह ।
धारै धरमौ धीर नर, उधरै भव-जल तेह ॥८
इह भव फल चाहै नही, क्रियावान अति होय ।
कपट-रहित ईर्षा-रहित, धरै विषाद न सोय ॥९
हुइ उदारता गुण सहित, अहंकार नहिं जानि ।
ए दाताके सत्त गुण, कहे सूत्र-परवानि ॥१०
श्रद्धा धरि निज शक्तिजुत लोभ रहित ह्वै धीर ।
दया क्षमा दृढ़ चित्त करि, देय अन्न अर नीर ॥११
राग द्वेष मद भोग भय, निद्रा मन्मथपीर ।
उपजावै जु असंजमा, सो देवौ नहिं वीर ॥१२
यह आज्ञा जिनराजकी, तप स्वाध्याय सु ध्यान ।
वृद्धि-करण देवौ सदा, जाकरि लहिये ज्ञान ॥१३
मोक्ष कारणा जे गुणा, पात्र गुणनिके धीर ।
ताते पात्र पुनीत ए, भाखे श्रीजिनवीर ॥१४
संविभाग अतिथीनको, व्रत्त बारमो सोइ ।
दया तनो कारण इहै, हिंसा नाशक होइ ॥१५
हिंसाके कारण महा, लोभ अजसकी खानि ।
दान करै नासै भया, इह निश्चय उर आनि ॥१६
भोग-रहित निज जोग धरि, परमेश्वर के लोग ।
जिनके दर्शन मात्र ही, मिटै सकल दुख सोग ॥१७
मधुकर वृति धारें मुनी, पर पीडा न करेय ।
पुण्यजोग आवे घरै, जिन आज्ञा जु धरेय ॥१८

तिनको जो सु अहार दे, ता सम और न कोइ।
दानधर्मते रहित जे, किरपण कहिये सोइ ॥१९
कियौ आपने अर्थ जो, सो ही भोजन भ्रात।
मुनिको अरति विषाद तजि, दे भवपार लहात ॥२०
शिथिल कियौ जिह लोभकों, परम पथके हेत।
तेई पात्रनिको सदा, विधि करि दान जु देत ॥२१
सम्यग्दृष्टी दान करि, पावै पुर निरवान।
अथवा भव धरनो परै, तौ पावै सुरथान ॥२२
विन सम्यक्त जु दान दे, त्रिविधि पात्रको जोहि।
पावै इन्द्री भोग सुख, भोगभूमि मे सोहि ॥२३
उत्तस पात्र सु दानते, भोगभूमि उतकृष्ट।
पावै दशधा कल्पतरु, जहाँ न एक अनिष्ट ॥२४
मध्य पात्रके दान करि, मध्य भोगभू माँहि।
जघनि पात्रके दानकरि, जघनि भोगभू जाँहि ॥२५
पात्रदानको फल इहै, भाषे गणधरदेव।
धन्य धन्य जे जगतमे, करे पात्रकी सेव ॥२६

चाल छन्द

देने औषध सु अहारा, देने श्रुत पाप प्रहारा।
रहने को देनी ठौरा, करने अति ही जु निहौरा ॥२७
हरने उपसर्ग तिन्होंके, धरने गुण चित्त जिन्होके।
सुख साता देनी भाई, सेवा करनी मन लाई ॥२८
ए नवविधि पात्र जु भाखे, आगम अध्यातम साखे।
बहुरी त्रय भेद कुपात्रा, धारे बाहिज व्रतमात्रा ॥२९
जे शुभ किरिया करि युक्ता, जिनके नहिं रीति अयुक्ता।
सम्यग्दर्शन बिन साधू, तप सजम शील अराधू ॥३०
पावै नहिं भवजल पारा, जावे सुरलोक विचारा।
पहुचे नव ग्रीव लगै भी, जिनतै अघकर्म भगै भी ॥३१
पण भावलिंग बिनु भाई, मिथ्यादृष्टी हि कहाई।
द्रव्यलिंग धारक जति जेई, उतकृष्ट कुपात्रा तेई ॥३२
जे सम्यक बिन अणुव्रत्ती, द्रव्य-श्रावकव्रत प्रवृत्ती।
ते मध्य कुपात्र बखाने, गुरुने नहि श्रावक माने ॥३३
आपा पर परचे नाही, गनिये बहिरातम माही।
षोडश सुरगलो जावे, आतम अनुभव नहिं पावे ॥३४

दोहा

जघनि कुपात्रा अव्रती, बाहिर धर्मप्रतीति।
दीखे समदृष्टी समा, नहिं सम्यककी रीति ॥३५

शुभगत्ति पावै तौ कहा, लहै न केवल भाव।
ये संसारी जानिये. भाषै श्रीजिनराव ॥३६
इनको जानि सुपात्र जा, धारे भक्ति विधान।
सो कुभोगभूमी लहै, अल्पभोग परवान ॥३७
पर उपगार दया निमित्त, सदा सकलको देय।
पात्रनिकी सेवा करै, सो शिवपुर सुख लेय ॥३८
नहिं श्रावक नहिं व्रत जती, नहिं श्रावक व्रत जानि।
नहिं प्रतीति जिनधर्मकी, ते अपात्र परवानि ॥३९
विनै न करनो तिनतनो, दया सकल परि जोग।
करनी भक्ति सु पात्रकी, भक्ति अपात्र अजोगि ॥४०
करनी करुणा सकल परि, हरनी सवकी पीर।
धरनी सेवा सन्तकी, इह भाषै श्रीवीर ॥४१
पात्रापात्र द्विभेद ए, कहे सूत्र अनुसार।
अव सुनि करुणादानको, भेद विविधि परकार ॥४२
सर्व आतमा आपसे, चेतनगुण भरपूर।
निज परकी पहिचान बिन, भ्रमे जगतमे कूर ॥४३
उदय कर्मके है दुखी, आधि व्याधिके रूप।
परे पिंडमे मूढ़धी, लखे नही चिद्रूप ॥४४
तिन सव पर धरिके दया, करै सदा उपगार।
नर तिर सव ही जीवको, हरै कष्ट व्रतधार ॥४५
अपनी शक्ति प्रमाण जो, मेटै परकी पीर।
तन मन धन करि सर्वको, साता दे वर वीर ॥४६
अन्न वस्त्र जल औषधी, त्रण आदिक जे देय।
जाने अपने मित्र सहु, करुणाभाव वरेय ॥४७
बाल वृद्ध रोगीनिको, अति ही जतन कराय।
अन्ध पगु कुष्टीनि परि, करै दया अधिकाय ॥४८
वन्दि छुडावै द्रव्य दे, जीव बचावै सर्व।
अभयदान दे सर्वको, धरै न धनको गर्व ॥४९
काल दुकालै माहिं जो, अन्नदान वहु देय।
रकनिकी पीहर जिको, नरभवको फल लेय ॥५०
जाको जगमे कोउ नही, ताको भीरी सोइ।
दुरवलको वल शुभमती, प्रभुको दासा होइ ॥५१
शीतकालमे शीतहर, दे वस्त्रादिक वीर।
उष्णकालमे तापहर, वस्तु प्रदायक धीर ॥५२
वर्षाकालै धर्मधी, दे आश्रय सुखदाय।
जल वाधाहर वस्तु दे, कोमल भाव धराय ॥५३

भाँति भाँतिकी औषधी, भाँति भाँतिके चीर ।
भाँति भाँतिकी वस्तु दे, सो जनो जगवीर ॥५४
दान विधी जु अनन्त है, कौ लग करे बखान ।
जाने श्रीजिनरायजू, किह दाता बुधिवान ॥५५
भक्ति दया द्वै विधि कही, दानधर्मकी रीति ।
ते नर अगीकृत करे, जिनके जैन प्रतीति ॥५६
लक्ष्मी दासी दानकी, दान मुकतिको मूल ।
दान समान न आन कोउ, जिन मारण अनूकूल ॥५७
अतीचार या व्रतके, तजे पच परकार ।
तव पावै व्रतशुद्धता, लहै धर्म अविकार ॥५८
भोजनको मुनि आवही, तव जो मूढ कदापि ।
मनमे ऐसी चितवै, दान करता क्वापि ॥५९
लगि है वेला चूकिहो जगतकाजते आज ।
ताते काहूको कहै, जाय करे जगकाज ॥६०
मो विन काम न होइगो, ताते जानो मोहि ।
दान करेगे भातृ-सुत, इहहू कारिज होहि ॥६१
धनको जाने सार जो, धर्म न जाने रंच ।
सो मूढनि सिरमौर है, घटमे बहुत प्रपच ॥६२
कहै भ्रात पुत्रादिको, दानतनो शुभ काम ।
आप सिधारै जडमती, जग धधाके ठाम ॥६३
परदात्री उपदेश यह, दूपण पहलो जानि ।
पराधीन ह्वै या थकी, यह निश्चै उर आनि ॥६४
मुनि सम ह्वैगौ धन कहा, इह धारै उर धीर ।
मुक्ति-मुक्ति दाता मुनि, पटकायनिके वीर ॥६५
पुनि सचित्तनिक्षेप है, दूजौ दोप अजोगि ।
ताहि तजे तेई भया, दानव्रत्तको जोगि ॥६६
सचित्त वस्तु कदली दला, ढाक पत्र इत्यादि ।
तिनमे मेली वस्तु जो, मुनिको देवो वादि ॥६७
दोष लगै जु सचित्तको, मुनिके अचित अहार ।
तातै सचितनिक्षेपको, त्याग करै व्रत धारा ॥६८
तीजौ सचितपिधान है, ताहि तजौ गुणवान ।
कमलपत्र आदिक सचित्त, तिन करि ढाक्यौ धान ॥६९
नहि देनो मुनिरायको, लगै सचितको दोष ।
प्रासुक आहारी मुनी, व्रत तप सजम कोष ॥७०
काल उलघन दानको, योग्य होत नहि दान ।
सो चौथो दूषण भया त्यागे ते मतिवान ॥७१

है मत्सरता पचमो, दूषण दुखकी खानि ।
करे अनादर दानको, ता सम मूढ न आनि ॥७२
देखि न सकै विभूति पर, पर-गुण देखि सकै न ।
सहि न सकै पर उच्चता, सो भव-वास तजै न ॥७३
नहि मात्सर्य समान कोउ, दूषण जगमे आन ।
जाहि निषेधे सूत्रमे, तीर्थंकर भगवान ॥७४
अतीचार ए दानके कहे जु श्रुत अनुसार ।
इनके त्याग किये शुभा, होवै व्रत अविकार ॥७५
नमों नमो चउ दानको, जे द्वादश व्रत-मूल ।
भोजन भेषज भय-हरण, ज्ञानदान हर भूल ॥७६
भोजन दाने ऋद्धि ह्वै, औषध रोग निवार ।
अभयदानते निर्भया, श्रुति दाने श्रुत-पार ॥७७
कहे व्रत द्वादश सवै, दया आदि सुखदाय ।
दान पर्यन्त शुभकरा, जिन करि सब दुख जाय ॥७८
एक एक व्रतके कहे, पंच पच अतिचार ।
पाले निरतीचार व्रत, ते पावे भव पार ॥७९
सम्यक बिन नहिं व्रत ह्वै, व्रत विन नहि वैराग ।
विन वैराग न ज्ञान ह्वै, राग तजे बड़भाग ॥८०

चाल छन्द

अब सुनि सब व्रतको कोटा, देशावकाशिव्रत मोटा ।
ताकी सुनि रीति जु भाई, जैसी जिनराज बताई ॥८१
पहले जु करौ परमाणा, दिसि विदिशाको विधि जाणा ।
इन्द्री विषयनिका नेमा, कीयौ धरि व्रतसो प्रेमा ॥८२
धन धान्य अन्न वस्त्रादी, भोजन पानाभरणादी ।
मरजादा सबकी धारी, जीवितलो धर्म सम्हारी ॥८३
जामें मरजादा बरसी, तामे छै मासी दरसी ।
करनी चउमासो तामे, वहुरि द्वै मासी जामे ॥८४
ताहूमे मासी नेमा, मासीमें पाखी प्रेमा ।
पाखीमे आधी पाखी, ताहूमे दिन-दिन भाखी ॥८५
दिन माही पहरां धारै, पहरनिमे घरी विचारै ।
पल-पलके धारै नेमा, जाके जिनमतसों प्रेमा ॥८६
भोगनिसों घटतो जाई, व्रतहै चढतो अधिकाई ।
सीमामें सीमा कारै, जिन-मारग जतने धारै ॥८७
ह्वै वाड़ि फले क्षेत्रनिके, जैसे कोट जु नगरीके ।
तैसे यह द्वादश व्रतके, देशावकाश व्रत सबके ॥८४

देसावकाशि व्रत माही, सतरा नेम जु सक नाही।
तिनकी सुनि रीत्ति जु मित्रा, जिन करि ह्वै व्रत पवित्रा ॥८९

दोहा

नियम किये व्रत शोभ ही, नियम बिना नहिं शोभ।
ताते व्रत धरि नेमको, धारै तजि मद लोभ ॥९०

सतरा नेमके नाम उक्त च श्रावकाचारे

भोजने षटरसे पाने, कुंकुमादिविलेपने।
पुष्पताम्बूलगीतेषु, नृत्यादौ ब्रह्मचर्यके ॥१
स्नानभूषण वस्त्रादौ, वाहने शयनाशने।
सचित्तवस्तुसख्यादौ, प्रमाण भज प्रत्यहम् ॥२

चौपाई

भोजनकी मरजादा गहै, वारवार न भोजन लहै।
पर घर भोजन तोहि जु करै, प्रात समै जो सख्या धरै ॥९१
अन्न मिठाई मेवा आदि, भोजन माहिं गिने जु अनादि।
बहुरि चवीणी अर पकवान, भोजन जात्ति कहे भगवान ॥९२
सब मरजादा माफिक गहै, बार-वार ना लीयौ चहै।
षट रसमे राखे जो रसा, सोई लेय नेममे बसा ॥९३
और न रस चाखौ बुधिवन्त, इह आज्ञा भाषे भगवन्त।
काम-उदीपक है रसजाति, रस परित्याग महातप भाति ॥९४
जो रसजाति तजी नहिं जाय, करि प्रमाण जियमे ठहराय।
पानी सरबत दूध रु मही, इत्यादिक पीवेके सही ॥९५
तिनमे लेवौ राखै जोहि, ता मापिक लेवौ बुध सोहि।
चोवा चन्दन तेल फुलेल, कुकुम और अरगजा मेल ॥९६
औषधि आदि लेप हैं जेह, सख्या बिन न लगावै तेह।
जाने येह देह दुरगन्ध, याके कहा लगावै सुगन्ध ॥९७
जो न सर्वथा त्यागै वीर, तोहु प्रमाण ग्रहै नर धीर।
पहुपजातिसो छाडै प्रेम, अति दोषीक कहे गुरु एम ॥९८
भोग उदय जो त्यागि न सकै, थोरे लेप पापतें सकै।
पान सुपारी डोड़ा आदि, लोंगादिक मुखसोध अनादि ॥९९
दालचिनी जावित्री जानि, जातीफल इत्यादि वखानि।
सबमे पान महा दोषीक, जैसे पापनि माहिं अलीक ॥१२००
पान त्यागिवौ जावो जीव, पाननिमे प्राणी जु अतीव।
जो अतिभोगी छांडि न सकै, थोरे खाय दोषतें सकै ॥१

गीत नृत्य वादित्र जु सर्व, उपजावै अति मनमथ गर्व ।
ए कौतूहल अधिके बन्ध, इनमे जो राचै सो अन्ध ॥२
जो न सर्वथा छाड़े जाय, तोहु न अधिक न राग धराय ।
मरजादा माफिक ही भजै, औसर पाय सकल ही तजै ॥३
एक भेद या माही, और, आपुन बैठी अपनी ठौर ।
गावत गीतत्रिया नीकली, सुनिकर हरखै चित्तधरि रली ॥४
तामे दोष लगै अधिकाय, भाव सराग महा दुखदाय ।
पातरि नृत्य अखारे माहि, नट नटवा अथ नृत्य कराहिं ॥५
वादीगर आदिक वहु ख्याल, विनु परमाण न देखौ लाल ।
अब सुनि ब्रह्मचर्यकी वात, याहि जु पाले तेहि उदात ॥६
परनारीकौ है परिहार, निजनारी मे इह निरधार ।
जावो जीव दिवसकौ त्याग, रात्रि विषै हूँ अलपहि राग ॥७
पाँचूं परवी शील गहेय, अर सब व्रतके दिवस धरेय ।
कबहुक मैथुन सेवन परै सो मरजादा माफिक करै ॥८
महा दोषको मूल कुशील, या तजिवेमे ना करि ढील ।
सेवत मनमथ जीव-विघात, इहै काम है अति उतपात ॥९
जा न सर्वथा त्यागयौ जाहि, तौहू अलप सेववौ ताहि ।
नदी तलाव वापिका कूप, तहाँ जाय न्हावौ जु विरूप ॥१०
जो न्हावै बिनछाणे जले, ते सब धर्म-कर्मतैं टलै ।
जैसौ रुधिरथकी ह्वै स्नान, तैसौ अनगाले जल जान ॥११
अचित जले न्हावौ है भया, प्रासुक निर्मल विधिकरि लया ।
ताहूकी मरजादा धरै, विना नेम कारिज नहिं करै ॥१२
रात्री न्हावौ नाहि कदापि, जीव न सूझै मित्र कदापि ।
हिंसा सम नहि पाप जु और दया सकल धर्मनि सिर मौर ॥१३
आभूषण पहिरे हैं जित्ते, घरमै और धरै है तित्ते ।
नियम विना नहिं भूपण धरै, सकल वस्तुकौ नियम जु करै ॥१४
परके दीये पहरै जे हि, नियम माहि राखै है तेहि ।
रतनत्रय भूषण विनु आन, पाहन सम जाने मतिवान ॥१५
वस्त्रनिकी जेती मरजाद, ता माफिक पहरै अविवाद ।
अथवा नये ऊजरे और, नियमरूप पहरै सुभतौर ॥१६
सुसरादिकके दीने भया, अथवा मित्रादिकतैं लया ।
राजादिकने की वकसीस, अदभुत अवर मोल नरीस ॥१७
नित्य नेममे राखै होइ, तौ पहिरे नातर नहिं कोइ ।
पावंनिकी पनही है जेहि, तेऊ वस्त्रनि माहिं गिनेहि ॥१८
नई पुरानी निज परतणी, राखे सो पहिरै इम भणी ।
पनही तजै पहरवौ भया, तौ उपजै प्राणिनिकी दया ॥१९

रथ वाहन सुखपाल इत्यादि, हस्ती ऊट रु घोटक आदि ।
एहै थलके वाहन सबै, पुनि बिमान आदिक नभ फबै ॥२०
नाव जिहाज आदि जलकेह, इनमे ममता नाहि धरेह ।
कोइक जावो जावै तजै, कोइक राखे नियमा भजै ॥२१
तिनहूँमे निति नेम करेइ, बहु अभिलाषा छाडि जु देइ ।
मुनि हूवौ चाहे मन माहि, जगमाही जाको चित नाहिं ॥२२
वाहन चढै होइ नहि दया, तातै तजै धन्य ते भया ।
मुनि आर्या अर श्रावक बडे, है जु निरारभी अति छडे ॥२३
ते बाहनको नाम न धरै, जीवदया मारग अनुसरै ।
आरम्भी श्रावक राजादि, तिनके बाहन है जु अनादि ॥२४
तेऊ करै प्रमाण सुवीर, नित्यनेम धारै जगवीर ।
तीर्थंकर चक्री अरु काम, मुनि ह्वै फिरै पयादे राम ॥२५
तातै पगां चालिवौ भला, पर सिर चलिवौ है अघमिला।
इहै भावना भावत रहै, सो वेगा शिवकारन लहै ॥२६
रतनत्रय शिवकारण कहे, दरसन ज्ञान चरण जिन लहे ।
अब सुनि शयनासनकौ नेम, धारै श्रावक ब्रतसो प्रेम ॥२७
जोहि पलंगपरि सोवो तनो, सोहू शयन परिग्रह गनो ।
सौड दुलाई तकिया आदि, ए सब सज्जा माहि अनादि ॥२८
इनकौ नेम धरै व्रतवान, भूमि-शयन चाहै मतिवान ।
भूमि-शयन जोगीश्वर करै, उत्तम श्रावक हू अनुसरै ॥२९
आरभी गृहपतिके सेज, तेहू नियम सहित अधिकेज ।
जापरि परनारी सोवैहि, सो सज्ज्या बुध नहि जोवैहि ॥३०
निज सज्जा राखी है भया, ताहूमे परमित अति लया ।
व्रतके दिन भू-सज्जा करै, भोग भावते प्रेम न धरै ॥३१
गादी गाऊ तकिया आदि, चौकी चौका पाट इत्यादि ।
सिंहासन प्रमुखा जेतेक, आसन माहिं गिनौ जु अनेक ॥३२
गिलम गलीचा सतरजादि, जाजम चादर आदि अनादि ।
इन चीजोसे मोह निवार, जासे होय पार ससार ॥३३
जेती जाति बिछौनाकी हि, सो सव आसन माहि गनीहि ।
निज घरके अथवा परठाम, जेते मुकते राखे धाम ॥३४
तिनपरि बैसे और जु त्याग, है जाको ब्रतसू अनुराग ।
सचित्त वस्तुको भोजन निंद जाहि निषेधै त्रिभुवनचंद ॥३५
मुनि आर्या त्यागेहि सचित्त, उत्तम श्रावक ले हि अचित्त ।
पचम पडिमा आदि सुधीर, एकादस पडिमा लो वीर ॥३६
कवहु न लेइ सचित्त अहार, गहै अचित्त वस्तु अविकार ।
पहलो पडिमा आदि चतुर्थ, पड़िमा लो ले सचित्तहि अर्थ ॥३७

पै मनमें कम्पै सु विवेक, तजै सचित्त जु वस्तु अनेक ।
केडक राखी तामे नेम, नितप्रति धारै व्रतसो प्रेम ।।३८
कहा कहावै वस्तु सचित्त, सो धारौ भाई निज चित्त ।
पत्र फूल फल छांड़ि इत्यादि, कूंपल मूल कन्द वीजादि ।।३९
पृथिवी पाणी अग्नि जु वाय, ए सहु सचित्त कहे जिनराय ।
जीव-सहित जो पुदगल पिंड, सो सव सचित तजै गुणपिंड ।।४०
ये सहु भाति सचित्त तजेय, सो निहचै जिनराज भजेय ।
जो न सर्वथा त्यागी जाय, तौ कैयक ले नेम धराय ।।४१
संख्या सचित वस्तुकी करै, सकल वस्तुको नियम जु धरै ।
गिनती करि राखै सव वस्तु, तवहि जानिये व्रत्त प्रशस्त ।।४२
लाडू पेडा पाक इत्यादि, औषधि रस अर चूरण आदि ।
वहुत वस्तु करि जे निपजेह, एक द्रव्य जानो वुध तेह ।।४३
वस्तु गरिष्ठ न खावे जोग, ए सव काम तने उपयोग ।
जो कदापि ये खाने परै, अलप-थकी अलपजु आहरै ।।४४
सत्रह नेम चितारै नित्य, जानो ए सहु ठाठ अनित्य ।
प्रातथकी सध्यालों करे, पुनि संध्या समये वुध धरै ।।४५
इती वस्तु तौ त्यागै वीर, राति परै नहि सेवै वीर ।
भोजन पटरस पान समस्त, चंदनलेप आदि परसस्त ।।४६
तजे राति तंबोल सुवीर, दया धर्म उर धारै धीर ।
गीत्त श्रवण जो होय कदापि, राखै नेम माहि सो क्वापि ।।४७
नृत्यहुंसो नहि जाको भाव, पै न सर्वथा छांड्यौ चाव ।
जौ लग गृहपति कवहुंक लखै, सोहू नेममाहि जो रखै ।।४८
ब्रह्मचर्यसों जाको हेत्त, परनारीसो वीर सचेत ।
निज नारीहीमे संतोष, दिनको कवहु न मनमथ पोष ।।४९
रात्रिहुमे पहले पहरौ न, चौथी पहरौ मनमथको न ।
दूजी तीजौ पहर कदापि, परै सेवनी मैथुन क्वापि ।।५०
सोहू अलप-थको अति अल्प, नित प्रति नहि याकौ सकल्प ।
राखै नेम माहि सहु वात, विना नेम नहि पांव धरात ।।५१
स्नान रातिको कबहु न करै, दिनको स्नान तनी विधि धरै ।
भूषण वस्त्रादिकको नेम, राखै जाविधि धारै प्रेम ।।५२
वाहन शयनासनकी रीत, नेम माहि धारै सहु नीति ।
वस्तु सचित नहि निशिको भखै, रजनीमे जलमात्र न चखै ।।५३
खान पानकी वस्तु समस्त, रात्रिविषैं कोई न प्रशस्त ।
याविधि सतरा नेम जु धरै, सो व्रत धारि परम गति वरै ।।५४
नियम विना धिग धिग नर जन्म, नियमवान होवेहि अजन्म ।
यमनियमासन प्राणायाम, प्रत्याहार धारना राम ।।५५

ध्यान समाधि अष्ट ए अंग, योगतनै भापै जु असंग ।
सबमे श्रेष्ट कही सुसमाधि, नियमथकी उपजै निरुपाधि ॥५६
राग-द्वेषकौ त्याग समाधि, जाकरि टरै आधि अरु व्याधि ।
परम शातता उपजै जहां, लहिए आतम भाव जु तहा ॥५७
मरण-काल उपजै जु समाधि, आय प्राप्त ह्वै आधि रु व्याधि ।
नित्य अभ्यासी होय समाधि, तौ न नीपजै एक उपाधि ॥५८
जो समाधितै छाडै प्राण, तौ सदगति पावैहि सुजाण ।
नाहि ममाधिसमान जु और, है समाधि व्रत्तनि सिरमौर ॥५९

छन्द चाल

अव सुनि सल्लेखण भाई, जाकरि सहु व्रत सुधराई ।
उत्तम जन याकौ भावे, याकरि भवभ्राति नसावे ॥६०
जे द्वादस व्रत संजुक्ता, सल्लेखण कारई युक्ता ।
होवे जु महा उपशाता, पावे सुरसौख्य सुकाता ॥६१
अनुक्रम पहुचै थिर थानै, परकी सहु परणति भानै ।
यह एकहु निर्मलव्रत्ता, समदृष्टी जो दृढचित्ता ॥६२
करई सौ सुरपति होवै, पुनि नरपति ह्वै शिव जोवै ।
इह भुक्ति मुक्तिदायक है, सव व्रत्तनिको नायक है ॥६३

सोरठा

मेरौ जो निजधर्म, ज्ञान सुदर्शन आचरण ।
सो नाशक वसु कर्म, भासक अमित सुभावको ॥६४
मै भूल्यौ निज धर्म, भयौ अधर्मा जगविषै ।
तातै वाँधे कर्म, किये कुमरण अनंत मै ॥६५
मरि-मरि चहुगति माहि, जनम्यौ मै शठ भ्राति घर ।
सो पद पायौ नाहि, जहां जन्म मरण न हुवै ॥६६
विना समाधि जु मर्ण, मर्ण मिटै नहि ह्मतनो ।
यह एकैव जु सर्ण, है सल्लेखण अति गुणो ॥६७
निज परणतिसो मोहि, एकत्त्व करिवे मक इहै ।
देख्यौ श्रुतिमे टोहि, ठौर ठौर याको जना ॥६८
धरै निरतर याहि, अंतिम सल्लेखण चरन ।
उपजै उत्तम ताहि, मरणकाल निम्मथना ॥६९
करिहो पंडित मर्ण, किये वाल मर्णा अमिन ।
लै जिनवरको सर्ण तजिहो काया कालिमा ॥७०
जिन आज्ञा अनुसार, अवश्य कर्मणो अननन ।
सल्लेखणव्रत धार, इहै भावना नित धरै ॥७१

बेसरी छन्द

मरण काल धरियेगो भाई, परि याको नित प्रति चित्तराई।
व्रत्त अनागत या विधि पाले, या व्रत करि सहु दूषण टालै ॥७२
मरणो नाही आतमतामे, तातै निरभय होय रह्या मै।
पर संबंध ऊपनी काया, ताका नाश अवश्य बताया ॥७३
इनका ज्ञान हुए यह जीव, पावे निश्चय सुगति सदीव।
मै अनादि सिद्धो अविनाशी, सिद्धसमानो अति सुखरासी ॥७४
सो अनादि कालहुतै भूल्यौ, परपरिणतिके रसमे फूल्यौ।
परपरिणत्ति करि भयौ सदोषी, कर्म-कलक उपार्जक रोषी ॥७५
जातै देह अनन्ती धारी, किये कुमर्णं अनन्ता भारी।
मै नहिं कबहू उपज्यो मूवौ, मै चेतन मायाते दूवौ ॥७६
मोतै भिन्न सकल परभावा, मैं चिद्रूप अनन्त प्रभावा।
भयो कषाय-कलकित चित्ता, मैं पापी अति ही अपवित्ता ॥७७
बहु तन धरि धरि डारै भाई, तन तजिवौ इह मरण कहाई।
तातैं कुमरण मूल कषाया, क्षीण करै ध्याऊं जिनराया ॥७८
रागादिक तजि करौ सुमरणा, बहुरि न मेरे होइ कुमरणा।
इहै धारना धरि व्रत धारी, दुर्बल करै कषाय जु सारी ॥७९
कै गुरुके उपदेशथकी जो, कै असाध्य लखि रोग अती जो।
मरणकाल जानै जब नीरे, तब कायरता धरइ न तीरे ॥८०
चउ अहार तजि चारि कषाया, तजि करि त्यागै त्यागी काया।
तन-सम्बन्ध उदय मति आवौ, तनमे हमरौ नाहिं सुभावौ ॥८१

सोरठा

कर्मं सजोगे देह, उपज्यौ सो न रहायगो।
ताते यासौ नेह, करनौ सो अति कुमति है ॥८२

चौपाई

इहै भावना धारि विरागी, तजै कारिमा काय सभागी।
सो श्रावक पावै शुभ लोका, षोड़श स्वर्ग लगै सुखथोका ॥८३
नर ह्वै फिर मुनिके व्रत धारै, सिद्ध लोकको शीघ्र निहारै।
सल्लेखण सम व्रत नहिं दूजा, इह सल्लेखण त्रिभुवन पूजा ॥८४
तजि कषाय त्यागै बुध काया, सो संन्यास महा फलदाया।
सल्लेखण सन्यास समाधी, अनसन एक अर्थ निरुपाधी ॥८५
पंडित मरणा वीरियमरणा, ये सब नाम कहे जु सुमरणा।
सुमरणते कुमरण सब नासे, अविनासी पद शीघ्र प्रकासे ॥८६
यह संन्यास न आतम-घाता, कर्म-विघाता है सुख-दाता।
अर जो शठ करि तीव्र कषाया, जलमें डूवि मरै भरमाया ॥८७

जीवत गड़े भूमिमे कुमती, सो पावै दुरगति अति विमती ।
अगनि दाह लें अथवा विप करि, तजै मूढधी काया दुख करि ।।८८
शस्त्र प्रहारि जो त्यागै प्राणा, अथवा झपापात वखाणा ।
ए सव आतम-घात वतावे, इनकरि वड भव-भव भरमाये ।।८९
हिंसाके कारण ये पापा, है जु कषाय प्रदायक तापा ।
तिनको क्षीण पारिवो भाई, सौ सन्यास कहे जिनराई ।।९०
जीव-दयाको हेतु समाधी, विना समाधि मिटै न उपाधी ।
दया उपाधि मिटै विन नाही, तातै दया समाधि ही माही ।।९१
व्रत शीलनिकौ सर्वस एही, इह सन्यास महा सुख देही ।
मुनिको अनशन शिवसुख देई, अथवा सुर अहमिन्द्र करेई ।।९२
श्रावकको सुर उत्तम कारै, नर करि मुनि करि भवदधि तारै ।
उभय धर्मको मूल समाधी, मेटे सकल आधि अर व्याधी ।।९३
कायर मरणे वहुतहि मूवा, अव धरि वीर मरण जगदूवा ।
वहुत भेद है अनशनके जी, सबमे आराधन चउ ले जी ।।९४
दरसन ज्ञान चरन तप शुद्धा, ए चारो ध्यावै प्रतिवुद्धा ।
निश्चय अर व्यवहार नयनि करि, चउ आराधन सेवै चितकरि ।।९५
ताकी सुनहु विचारि पवित्रा, जा करि छूटै भव भ्रम मित्रा ।
देव जिनेसर गुरु निरग्रन्था, सूत्र दयामय जैन सुपन्था ।।९६
नव तत्त्वनिकी श्रद्धा करिवौ, सो व्यवहार सुदर्शन धरिवो ।
निश्चय अपनो आतमरामा जिनवर सो अविनश्वर धामा ।।९७
गुण-पर्याय स्वभाव अनन्ता, द्रव्य थकी न्यारे नहिं सन्ता ।
गुण-गुणिको एकत्व सुलखिवौ, आतमरुचि श्रद्धाको धरिवौ ।।९८
करि प्रतीति जे तत्त्वतनी जो, हनै कर्मकी प्रकृति घनी जो ।
सो सम्यकदर्शन तुम जानो, केवल आतम भाव प्रवानो ।।९९
अव सुनि ज्ञान अराधन भाई, सम्यकज्ञानमयी सुखदाई ।
नव पदार्थको जातै भेदा, जिनवानी परमान सुवेदा ।।१३००
पच परम पदको प्रभु जानै, भयो जु दासा वोध प्रवानै ।
इह व्यवहारतनो हि स्वरूपा, निश्चय जानै हूँ जु अरूपा ।।१
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध प्रवृद्धा, अतुल शक्तिरूपी अनुरुद्धा ।
।।२
चेतन अनन्त गुणातम ज्ञानी, सिद्ध सरीखौ लोक प्रमानी ।
अपनो भाव भायवौ भाई, सो निश्चय ज्ञान जु शिवदाई ।।३
पुनि सुनि सम्यकचारित्त रतना, त्रस-थावरको अति ही जतना ।
आचरिवौ भक्ति जिन मुनिकी, आदरिवौ विधि जोहि सु पुनकी ।।४
पच महाव्रत पच सु समिती, तीन गुपति धारै हि जु सुजती ।
अथवा द्वादस व्रत्त सुधरिवौ, श्रावक सयमको अनुसरिवौ ।।५

ए सब है व्यवहार चरित्रा, निम्चय आतम अनुभव मित्रा ।
जो सु स्वरूपाचरण चवित्रा, थिरता निजमे सो सु पवित्रा ॥६
ए रतनत्रय भाषे भाई, चौथो सम्यक तप सुखदाई ।
व्यवहारें द्वादस तप सन्ता, अनसन आदि ध्यान परजन्ता ॥७
निश्चय इच्छाको जु निरोधा, पर परिणति तजि आतम शोधा ।
अपनो आतम तेजकरी जो, सो तप भाषहि कर्महरी जो ॥८
ए चउ आराधन आराधै, सो संन्यास धरै शिव साधै ।
अरहन्ता सिद्धा साधू जे, केवलि कथित सुधर्म दया जे ॥९
ए चउ शरणा लेइ सु ज्ञानी, ध्यावै परम ब्रह्मपद ध्यानी ।
णमोकार मन्तर जपतो जो, ओंकार प्रणवे रटतौ जो ॥१०
सोहं अजपा अनादह सुनतौ, श्रीजिन बिम्ब चित्तमों मुनतौ ।
धर्मध्यान धरन्तौ धोरी, लगो जिनेसुर पदसों डोरी ॥११
ध्यावन्तौ जिनवर गुन धीरा, निजरस रातौ विरकत वीरा ।
दुर्बल देह-अनेह जगतसो, करि कषाय दुर्बल निज धृतिसो ॥१२
क्षमा करै सब प्राणी गणसो, त्यागै प्राण लाय लव जिनसो ।
सो पण्डितमरणा जु कहावै, ताकौ जस श्रुतिकेवलि गावै ॥१३
सल्लेखणके वहुते भेदा, भाषे जिनमत पाप उछेदा ।
है प्रायोपगमन सब माहे, उत्तमसों उत्तम सक नाहे ॥१४
ताकौ अर्थ सुनौ मनलाये, जाकरि अपनो तत्त्व लखाये ।
प्राय कहिये मित्र सर्वथा, उप कहिये स्वसमीप निर्ग्रंथा ॥१५
गमन जु कहिये जाग्रत होवौ, रात दिवस कवहू नहिं सोवौ ।
सो प्रायोपगमन सन्यासा, सर्व गुणाकरि धर्म अध्यासा ॥१६
जिनकों वारंवार चितारै, क्षण-क्षण चेतन तत्त्व निहारै ।
जग सन्तति तजि होइ इकाकी, कीरति गावे श्रीगुरु ताकी ॥१७
तजै आहार विहार समस्ता, भजै विचार समस्त प्रशस्ता ।
इह भव पर भवकी अभिलाषा, जिन करि होइ निरोह अभासा ॥१८
या जड़ तनका सेवा आपु न, करै न करावे विधि सो थापु न ।
अति वैराग्य परायण सोई, तजै अनातम भाव सवोई ॥१९
गहन वनें भू सज्जा धारी, निसप्रह जगतजोगथो भारी ।
चित्त दयाल सहनशीलो जो, सहै परिसह नहि ढीलो जो ॥२०
जो उपसर्ग थकां नहि कंपै, जाको कायरता नहि चंपै ।
भागौ लोक प्रपच-थकी जो, परपरिणति जातै दिसिको जो ॥२१
या सन्यास थकी जो प्राणा, त्यागै सो नहि मुवौ सुजाणा ।
सुर-शिवदायक है यह व्रता, यामैं बुधजन करै प्रवृत्ता ॥२२
पंच अतिचारा जो त्यागै, तव संन्यास-पंथको लागै ।
सो तजि पाचो ही अतिचारा, ये तो सल्लेखण व्रत धारा ॥२३

जीवित-अभिलाषा अघ पहिला, ताको धारइ सो गिनि गहिला।
देखि प्रतिष्ठा जीयौ चाहै, सो सल्लेखण नहिं अवगाहै ॥२४
दूजौ मरण-तर्नी अभिलाषा, जो धारै निज रस नहिं चाखा।
रोग कष्ट करि पीड्यो अति गति, मरिवौ चाहै सो है शठमति ॥२५
ताजौ सुहृदनुराग सुगनिये, मित्रथकी अनुराग सु धरिये।
मरिवौ आनि बन्यू परि मित्रा, मिल्यौ न हमसो जाहु पवित्रा ॥२६
दूरि जु सज्जन तामै भावा, मिलिवेको अति करहि अपावा।
अथवा मित्र कनारे जो है, ताके मोह-थको मन मोहै ॥२७
यो अज्ञानथको भव भरमै, पावै नहिं सल्लेखण धरमै।
पुनि सुखानुबंधो है चौथो, सुख ससार तनो सहु थोथौ ॥२८
या तनमे भुगते सुख भोगा, सो सब यादि करै शठ लोगा।
यो नहि जाने भव सुख दुख ए, तीन कालमै नाही सुख ए ॥२९
इनको सुख जाने जो भाई, भोदू इनसो चित्त लगाई।
सो दुख लहै अनता जगके, पावै नहिं गुण जे जिन-मगके ॥३०
पंचम दोष निदान प्रबधा, जो धारइ सो जानहु अधा।
परभवमै चाहे सुख भोगा, यो नहिं जाने ए सहु रोगा ॥३१
इन्द्र चन्द्र नागेन्द्र नरेन्द्रा, हूवौ चाहे पुनि अहमिन्द्रा।
व्रतको बेचै विषयनि साटे, सो जड कर्मबध नहिं काटे ॥३२
ए पाचौ तजि धरहि समाधी, सो पावै सद्गति निरुपाधी।
या व्रत सम नहिं दूजौ कोई, सबमै सार जु इह व्रत होई ॥३३
याकौ जस सुर नर मुनि गावे, धीर चित्त यासो लव लावै।
नमो नमो या सुमरणको है, जो काटै जलदी कुमरणको है ॥३४

दोहा

उदय होउ सल्लेखणा, जोहि निवारै भ्राति।
आवै बोध जु घटिविषै, पइये परम प्रशाति ॥३५
कहे बरत द्वादश सबै, अर सल्लेखण सार।
अब सुनि तप द्वादश तनो, भेद निर्जराकार ॥३६
प्रथमहिं बारह तपविषै, है अनशन अविकार।
जाहि कहै उपवास गुरु, ताकौ सुनहु विचार ॥३७
इन्द्रिनिकी उपसातता, सो कहिये उपवास।
भोजन करते हू मुनी, उपवासे जिनदास ॥३८
जो इन्द्रिनिके दास है, अज्ञानि अविवेक।
करै उपासा तउ शठा, नहिं व्रत धार अनेक ॥३९
मुनि श्रावक दोऊनिको, अनशन अति गुणदाय।
जाकरि पाप विनाश ह्वै, भाषै श्रीजिनराय ॥४०

इन्द्रिनिको उपशांत करि, करै चित्तकौ रोध।
ते उपवासे उत्तमा, लहैं आपकौ वोध ॥४१
गनि उपवासे ते नरा, मन इन्द्रिनिको जीति।
करै वास चेतनविषै, शुद्धभावसों प्रीति ॥४२
इस भव परभव भोगकी, तजि आशा ते धीर।
करम-निर्जरा कारणे, करै उपास सु वीर ॥४३
आतम ध्यान धरै बुधा, कै जिन श्रुत अभ्यास।
तब अनसनकौ फल लहै, केवल तत्त्व अध्यास ॥४४
चऊ अहार विकथा चऊ, तजिवौ चारि कषाय।
इन्द्री विषया त्यागिवौ, सो उपवास कहाय ॥४५
द्वै विधि अनसनकी कहैं, महामुनी श्रुतिमाहिं।
सावधि निरवधि गुण धरी, जाकरि कर्म नशाहिं ॥४६
एक दिवस द्वै तीन दिन, च्यारि पाच पखवार।
मासा द्वय त्रय च्यारि हू, मास छमास विचार ॥४७
वर्षावधि उपवास करि, करै पारनो जोहि।
सावधि अनसन तप भया, भाषै श्री गुरु सोहि ॥४८
आयु-कर्म थोरी रहै, तब ज्ञानी व्रत धीर।
जावौजीव तजै सबै, असन पान जगवीर ॥४९
मरणावधि अनसन करै, सो निरवधि उपवास।
जे धारैं उपवासकों, ते जु करैं अघ नाश ॥५०
करते थके उपासकों, जे न तजै आरम्भ।
जग धंधेमे चित धरै, तजैं न शठमति दंभ ॥५१
मोहगहल चंचल दशा, लहै न फल उपवास।
कछुयक काय-क्लेशका, फल पावै जगवास ॥५२
कर्म-निर्जरा फल सही, सो नहिं तिनको होइ।
इह निश्चय सतगुरु कहैं, धारै, बुधजन सोइ ॥५३
धन्य धन्य उपवास है, देइ सासतो वास।
अब सुनि अवमोदर्य जो, दूजौ तप सुखरास ॥५४
जो मुनि करै अनोदरी, तजि अहारकी वृद्धि।
प्रासुक योग सु अलप अति, ले अहार तप-वृद्धि ॥५५
करै सु अवमौदर्यको, करै निर्जरा हेत।
नहिं कीरतिको लोभ है, सो मुनिजिन पद लेत ॥५६
श्रावक होइ जु व्रत करै, लेइ अलप आहार।
जब स्वाध्याय सु ध्यान ह्वै, मिटैं अनेक विकार ॥५७
संध्या पोसह पडिकमण, तासो सबै अदोप।
जो अहार वहुत न करै, धरै महागुण कोप ॥५८

कै अनसन अघ नाश कर, कै यह अवमोदर्य ।
इन सम और न जगविषै, ए तप अति सौदर्य ॥५९
इन विन कदै न जो रहे, सो पावै व्रतशुद्धि ।
ध्यान कारणे जो करै, सो होवै प्रतिबुद्ध ॥६०
अरु जो मायावी अधम, धरि कीरतिको लोभ ।
करै सु अलप अहारको, सो नहिं होइ अक्षोभ ॥६१
अथवा जो शठ अघधो, यह विचार जियमाहिं ।
करै सु अलप अहार जो, सोहू व्रतधरि नाहि ॥६२
जो करिहो जु अहार अति, तौ जैसो तैसो हि ।
मिलि हैं मोदक स्वादकरि, तातैं इह न भलौ हि ॥६३
अलप अहार जु खाहुगो, वहुत रसीली वस्तु ।
इहैं भाव धरि जो करै, सो नहिं व्रत्त प्रशस्त ॥६४
मिष्ट भोज्य अथवा सुजस, कारण अल्प अहार ।
करै न फल तपको प्रबल, कर्म निर्जराकार ॥६५
केवल आतमध्यानके, अर्थ करै व्रत्त धार ।
कै स्वाध्याय सु व्रतके, कारण अल्प आहार ॥६६
अल्प अहार-थकी बुधा, रोग न उपजे क्वापि ।
निद्रा मनमथ आदि सहु, नहिं पीरै जु कदापि ॥६७
वहु अहार सम दोष नहिं, महा रोगकी खानि ।
निद्रा मनमथ प्रमुख जो, उपजै पाप निदान ॥६८
लोकमाहिं कहवत्त इहै, मरै मूढ अति खाय ।
कै विन बुद्धि जु बोझको, भोद्र मरै उचाय ॥६९
तातै धनो न खाइवौ, करिबो अलप अहार ।
याहि करै सतगुरु सदा, व्रतको बीज अपार ॥७०
व्रतपरिसख्या तीसरो तप ताको सु विचार ।
सुनो सुगुरु भाषै भया, परम निर्जराकार ॥७१
मुनि उतरें आहारको, करि ऐसी परतिज्ञ ।
मनमे तौऊ छांटको (?) सो धारौ तुम विज्ञ ॥७२
एक घरे नहिं पाय हो, तौ न आन घर जाहुँ ।
और कछू नहिं खाय हो, यह मिलि है तौ खाहु ॥७३
अथवा ऐसी मन धरै, या विधिके तन चीर ।
पहिरे होगी श्राविका, तौ लेहूँ अन नीर ॥७४
तथा विचारै सो सुधी, कारो बलधा जोहि ।
धरै सीग परि गुड़-डला, मिलै पथमे मोहि ॥७५
जाऊँ भोजन कारनै, नातरि नही अहार ।
इत्यादिक जे अटपटी, करै प्रतिज्ञा सार ॥७६

व्रतपरिसंख्या तप लहै, जे मुनिराय महंत ।
श्रावक हू इह तप करें, कौन रीति सुन सत ॥७७
प्रातहिं सध्या विधि करे, धारहिं सतरा नेम ।
तासम कबहूं व्रत करे, परिसख्यासो प्रेम ॥७८
धारि गुप्ति चितवै सुधी, अपने चित्त मँझारि ।
साखि जिनेश्वर देव हैं, ज्ञायक ज्ञेय अपार ॥७९
और न जाने वात इह, जो धारे वुध नेम ।
नही प्रेम भव-भावसो, जप तप व्रतसो प्रेम ॥८०
अनायास भोजन समय, मिलि हैं मोहि कदापि ।
रूखी रोटी मू गकी, लेहूँ और न क्वापि ॥८१
इत्यादिक जे अटपटी, धरै प्रतिज्ञा धीर ।
व्रतपरिसंख्या व्रत लहै, ते श्रावक गभीर ॥८२
अब सुनि चौथा तप महा, रस परित्याग प्रवीन ।
मुनि श्रावक दोऊनिकों, भाषे आतमलीन ॥८३
अति दुखको सागर जगत, तामे सुख नहिं लेश ।
चहुंगति भ्रमण जु कब मिटै, कटै कलक अशेष ॥८४
जगके झूँठे रस सबै, एक सरस अतिसार ।
इहै धारना धर सुधा, होइ महा अविकार ॥८५
भवतैं अति भयभीत जो, डर्यो भ्रमणतैं धीर ।
निर्वानी निर्वान जो, चाखै निजरस वीर ॥८६
विषहूंते अति विषम जे, विषया दुख की खानि ।
भव-भव मोकूं दुख दियौ, सुख परिणतिको मानि ॥८७
ताते इनकों त्याग करि, धरौ ज्ञानको मित्र ।
तप जो भव आतप हरै, करण पुनीत पवित्र ॥८८
इह चितवतौ धीर जो, रसपरित्याग करेय ।
नीरस भोजन लेयकै, ध्यावै आतम ध्येय ॥८९
दूध दही घृत तेल अर, मीठो लवण इत्यादि ।
रस तजि नीरस अन्न ले, काटै कर्म अनादि ॥९०
अथवा मिष्ट कषायलो, खारो खाटो जानि ।
कड़वौ और जु चिरपरौ, यह षटरस परवानि ॥९१
तजि रस नीरस जो भखै, सो आतम-रस पाय ।
देय जलांजलि भ्रमणको, सूधो शिवपुर जाय ॥९२
भव वाकी ह्वै जो भया, तो पावै सुर-लोक ।
सुरथी नर ह्वै मुनिदशा, धारि लहै शिव-थोक ॥९३
अथवा सिंगारादिका, नव रस जगत विख्यात ।
तिनमे शांति सुरस गहै, जो सव रसको तात ॥९४

पर रस तजि जिनरस गहै, जाकै राग न रोष ।
सो पावै समभावको, दूरि करै सहु दोष ॥९५
रसपरित्याग समान नहि, दूजौ तप जगमांहि ।
जहा जीभके स्वाद सहु, त्यागै सशय नाहि ॥९६
अब विविक्तशय्यासना, पचम तप सुनि वीर ।
राग द्वेषके हेतु जे, आसन सज्जा चीर ॥९७
तजि मुनिवर निरग्रन्थ ह्वै, वसै आपमै धीर ।
तन खीणा मन उनमना, जगतरूढ़ गभीर ॥९८
पूजा हमरी होयगी, बहुत भजेगे लोक ।
इह बांछा नहि चित्तमे, नही हरष अर शोक ॥९९
सकल कामना-रहित्त जे, ते साधू शिवमूल ।
पापथकी प्रतिकूल ह्वै, भये ब्रह्म अनुकूल ॥१४००
ते ससार शरीर अरु, भोगथकी जु उदास ।
अभ्यंतर निज बोध धर, तप कुशला जिनदास ॥१
उपशमशीला शातधी, महासत्त्व परवीन ।
निवसै निर्जन वनविषै, ध्यान लीन तन खीन ॥२
गिरिसिर गुफा मंझार जे, अथवा बसै मसान ।
भूमिमांहि निरव्याकुला, धीर वीर बहु जान ॥३
तरुकोटर सूना घरी, नदी-तीर निवसंत ।
कर्म-क्षपावन उद्यमी, ते जैनी मतिवंत ॥४
ककरीली धरतीविषै, विषम भूमिमे साध ।
तिष्ठै ध्यावै तत्त्वको, आराधन आराधि ॥५
जगवासिनकी सगती, ध्यान-विघनकौ मूल ।
तातै तजि जड संगतौ, भये ज्ञान अनुकूल ॥६
स्त्री-पशु-बाल-विमूढकी, सगति अति दुखदाय ।
कायरकी सगति थकी, सूरापन विनसाय ॥७
जे एकात वसै सुधी, अनेकात धरि चित्त ।
ते पावै परमेसुरो, लहि रतनत्रय चित्त ॥८
मुनिकी रीति कही भया, सुनि श्रावककी रीति ।
जा विधि पचम तप करै, धरि जिन वचन प्रतीत ॥९
निज नारीहूतै विरत, परनारीका वीर ।
शीलवान शातिक अती, तप धारे अति धीर ॥१०
परनारीकी सेज अर, आसन चीर इत्यादि ।
कबहु न भीटै भव्य जो, तजै काम रागादि ॥११
निज नारीहूको तजै, जौलग त्याग न होय ।
तौलग कबहक सेवही, बहुत राग नहि कोय ॥१२

एक सेज सोवे नही, जुदौ जु सोवै जोहि।
जव विविक्तशय्यासना, पावै तप अति सोहि ॥१३
करै परोस न दुष्टको, तजे दुष्टकौ संग।
व्यसनीतै दूरी रहै, पालै व्रत्त अभंग ॥१४
जे मिथ्यामत धारका, अलगौ तिनसों होइ।
जिनधरमीकी सगती, धारै उत्तम सोइ ॥१५
कुगुरु कुदेव कुधर्मका, करै न जो विश्वास।
है विश्वासी जैनको, जिनदासनिको दास ॥१६
सामायिक पोषा समै, गहै इकंत सुथान।
सो विविक्तशय्यासना, भाषै श्रीभगवान ॥१७
करनों पंचम तप भया, अव छट्ठो तप धार।
कायकलेस जु नाम है कहूं सूत्र अनुसार ॥१८
अति उपसर्ग उदय भयौ, ताकरि मन न डिगाय।
क्षमावान शांतिक महा, मेरु समान रहाय ॥१९
देव मनुज तिरजंच कृत, अथवा स्वतः स्वभाव।
उपजौ जो उपसर्ग है, तामै निर्मल भाव ॥२०
खेद न आने चित्तमे, कायकलेस सहेय।
सो कलेस नहि पावई, ज्ञान शरीर लहेय ॥२१
गिरि-सिर ग्रीषममैं रहै, शीतकाल जल-तीर।
वर्षाऋतु तरु-तल वसइ, सो पावै अशरीर ॥२२
आतापन जोग जु धरै, कष्ट सहै जु अशेष।
अति उपवास करै सुधी, सो तप कायकलेश ॥२३
कायकलेसे सहु मिटै, तन मनके जु कलेस।
महापाप कर्म जु कटै, गुण उपजेंहि अशेष ॥२४
मुनि श्रावक दोऊनिकों, करिवा कायकलेश।
संकलेसता भाव तजि, इह आज्ञा जगतेश ॥२५
वनवासीके अति तपा, घरवासीके अल्प।
अपनी शक्ति प्रमाण तप, करिवां त्याग विकल्प ॥२६
ए षट वाहिज तप कहै, अव अभ्यन्तर धारि।
इह भाषैं श्रुतकेवली, जिनवाणी अनुसार ॥२७
दोष न करई आप जो, करवावै न कदापि।
दोषतनो अनुमोदना, करै नही वुध कापि ॥२८
मन वच तन करि गुणमई, निरदोषो निरुपाधि।
आनन्दी आनंद मय, धारै परम समाधि ॥२९
अथवा कदं प्रमादतैं, किंचित लागै दोप।
तौ अपने औगुण सुधी, नहि गोपैं व्रतपोष ॥३०

श्रीगुरु पास प्रकाशई, सरल चित्तकरि धीर ।
स्वामी लाग्यो दोप मुझ, दण्ड देहु जगवीर ॥३१
तब जो श्रीगुरु दण्ड दे, व्रत तप दान सुयोग ।
सो सब श्रद्धा ते करै, पावै पथ निरोग ॥३२
ऐसी मनमे ना धरै, अलप हुतो यह दोष ।
दियौ दण्ड गुरुने महा, जाकरि तनको शोष ॥३३
सबै त्यागि शंका सुधी, सकल विकलपा डारि ।
प्रायश्चित्त करै तपा, गुरु आज्ञा अनुसारि ॥३४
बहुरि इच्छै दोषको, त्यागै मन वच काय ।
देहतनै सौ टूक ह्वै, तोहु न दोष उपाय ॥३५
या विधिके निश्चय सहित, वरतै ज्ञानी जीव ।
ताकै तप ह्वै सातमो, भाषै त्रिभुवन-पीव ॥३६
जो चितवै निजरूपको, ज्ञानस्वरूप अनूप ।
चेतनता मडित विमल, सकल लोकको भूप ॥३७
वार वार ही निज लखै, जानै वारम्वार ।
वार वार अनुभव करै, सो ज्ञानी अविकार ॥३८
विकथा विषय कषायतै, न्यारो वरतै सन्त ।
ता विरकतके दोष कहु, कैसे उपजे मित ॥३९
निरदोषी वहुगुण धरै, गुणी महाचिद्रूप ।
तासो परचै पाइयो, सो तप धारि अनूप ॥४०
दोषतनो परिहार जो, कहिये प्रायश्चित्त ।
धारै सो निजपुर लहै, गहै सासतो वित्त ॥४१
अव सुनि भाई आठमो, विनय नाम तप धार ।
विनय मूल जिनधर्म है, विनय सु पच प्रकार ॥४२
दरसन ज्ञान चरित्र तप, ए चउ उत्तम होइ ।
अर इन चउके धारका, उत्तम कहिये सोइ ॥४३
इन पाचनिको अति विनय, सो तप विनय प्रधान ।
ताके भेद सुनू भया, जाकरि पद निरवान ॥४४
दरसन कहिये तत्त्वकी, श्रद्धा अति दृढरूप ।
ज्ञान जानिवौ तत्त्वकौ, सशय रहित अनूप ॥४५
चारित थिरता तत्त्वमे, अति गलतानी होइ ।
तप इच्छाको रोकिवौ, तन मन दण्डन सोइ ॥४६
ए है चउ आराधना, इन बिन सिद्ध न कोय ।
इनको अति आराधिवौ, विनयरूप तप सोय ॥४७
रतनत्रय-धारक जना, तप द्वादश विधि धार ।
तिनकी अति सेवा करै, तन मन करि अविकार ॥४८

सो उपचार कह्यौ विनय, ताके बहुत्त विभेद ।
जिनवर जिन प्रतिमा बहुरि, जिनमन्दिर हर खेद ॥४९
जिनवानी जिन तीरथा. मुनि आर्याव्रत्त धार ।
श्रावक और सु श्राविका समदृष्टी अविकार ॥५०
इनको विनय जु धारिवौ, गुण अनुरागी होइ ।
सो तप विनय कहावई, धारै उत्तम सोइ ॥५१
जैसे सेवक लोग अति, सेवे नरपति-द्वार ।
तैसे चउविधि सघको, सेवै सौ तप धार ॥५२
आप थकी जो उत्तमा, तिनको दासा होइ ।
सवसो समता भावई, विनयरूप तप सोइ ॥५३
व्रत बिन छोटे आपतै, जे सम्यक्त निवास ।
जिनधर्मी जिनदास है, तिनहूँ सो हित पास ॥५४
धर्मराग जाके भयो, सो इह विनय धरेय ।
पंच प्रकार विनय करि, भव-सागर उतरेय ॥५५
अव सुनि वैयावृत्त जो नवमो तप सुखदाय ।
जो उपचार करै सुधी, पर दुखहर अधिकाय ॥५६
हरै सकल उपसर्ग जो, ज्ञानिनिके तप धार ।
सुधी वृद्ध रोगीनिको, करै सदा उपगार ॥५७
महिमादिक चाहै नही, निरापेक्ष व्रतधार ।
वैयावृत्त करै भया, जिनवाणी अनुसार ॥५८
मुनिको उचित मुनी करै, टहल मुनिनिकी धीर ।
मुनि सेवासम नाहि कोउ, त्रिभुवनमे गभीर ॥५९
श्रावक भोजन पथ्य दे, औषधि आश्रय आदि ।
करै भक्ति साधूनिकी, इह विधि है जु अनादि ॥६०
जो ध्यावे निजरूपको, सर्व विकलपा टारि ।
सम दम भाव हि दृढ़ धरै, वैयावृत्त सो धारि ॥६१
सम कहिये समदृष्टिता, सकल जीवको तुल्य ।
देखै ज्ञान विचारतै, इह दृष्टी जु अतुल्य ॥६२
दम कहिये मन इन्द्रियां, दमै महा तप धारि ।
चित्त लगावै आपसों, सहै लोककी गारि ॥६३
तजै लोक व्यवहारको, धरै अलौकिक वृत्ति ।
सो चउगतिको दे जला, पावै महानिवृत्ति ॥६४
सुनो सुवुद्धी कान धरि, दसमो तप स्वाध्याय ।
सर्व तपनिमै है सिरै, भाषै त्रिभुवनराय ॥६५
नहि चाहै जु महंतता, करवावे नहि सेव ।
चाह नही परभावकी, सेवै श्रीजिनदेव ॥६६

दुष्ट विकलपनिको भया, जो नासन समरत्थ ।
सो पावै स्वाध्यायको, फल केवल परमत्थ ।।६७
तत्त्व सुनिश्चय कारने, करै शुद्ध स्वाध्याय ।
सिद्धि करै निज ऋद्धिको, सो आतम लवलाय ।।६८
आगम अध्यातममई, जिनवरकौ सिद्धान्त ।
ताहि भक्ति करि जो पढै, सो स्वाध्याय सुकान्त ।।६९
केवल आतम अर्थ जो, करै सूत्र अभ्यास ।
अपनी पूजा नहि चहै, पावै तत्त्व अध्यास ।।७०
अपने कर्म कलकके, काटनको श्रुतपाठ ।
करै निरन्तर धर्मधी, नासै कर्म जु आठ ।।७१
भेद पंच स्वाध्यायके, उपाध्याय भाषेहि ।
जे धारै ते शांतधी, आतम रस चाखेहिं ।।७२
कही वाचना पृच्छना, अनुप्रेक्षा गुरु देव ।
आमनाय पुनि धर्मको, उपदेशौ बहुभेव ।।७३
ग्रन्थ बांचवौ वाचना, पृछना पूछनरीति ।
वारंवार विचारिवौ, अनुप्रेक्षो परतीत्ति ।।७४
आमनायकौ जानिवौ, जिनमारगकी वीर ।
धर्म-कथन करिवौ सदा, कहै धर्मधर धीर ७५
निसप्रेही भवभावतै, जो स्वाध्याय करेय ।
पावै निजज्ञानको, भवसागर उतरेय ।।७६
जो सेवै जिनसूत्रको, जग अभिलाष धरेय ।
गर्व धरै विद्यातनो, सो चउगति भरमेय ।।७७
हम पडित बहुश्रुत महा, जानै सकल जु अर्थ ।
हमहिं न सेवै मूढधी, देखौ बडौ अनर्थ ।।७८
इहै वासना जो धरै, सो नहिं पडित कोइ ।
आतम भावे जो रमै, सो बुध पडित होइ ।।७९
मान वढाइ कारने, जे श्रुत्ति सेवै अंध ।
ते नहिं पावै तत्त्वको, करै कर्मको बन्ध ।।८०
जैनसूत्र मद मान हर, ताकरि गर्वित होय ।
ताहि उपाय न दूसरौ, भ्रमै जगतमै सोय ।।८१
अमृत विषरूपी भयौ, जाकौ और इलाज ।
कहौ, कहा जु बताइये, भाषै पडितराज ।।८२
जो प्रतिकूल विमूढधी, साधर्मिनिते होइ ।
पढिवौ गुनिवौ तासके, हालाहल सम जोइ ।।८३
रागद्वेष करि परिणम्यूं, करै असूत्र अभ्यास ।
सो पावै नहिं धर्मको, करै न कर्म विनास ।।८४

युद्ध कथा कामादिका, कुकथा चावै मूढ ।
लोक-रिझावन कारणे, सो पद लहै न गूढ ।।८५
जो जानै निजरूपकूं, अशुचि देहतैं भिन्न ।
सो निकसै भवकूपतैं, भटकै भाव अभिन्न ।।८६
जानैं निज पर भेद जो, आतमज्ञान प्रवीन ।
सो स्वामी सव लोककौ, सदा सात-रस लीन ।।८७
विना निजातम जानिवै, ह्वै न कर्म को रोध ।
आगम पाठ करै तऊ, नाहिं नाहिं कछु वोध ।।८८
लखिवौ आतमभावकौ, सो स्वाध्याय बखानि ।
मुनि श्रावक दोऊनिकौ, यह परमारथ जानि ।।८९
अव सुनि ग्यारम तप महा, कायोत्सर्ग शिवदाय ।
कायाकौ उतसर्ग जो, निर्ममता ठहराय ।।९०
त्याग्या बैठ्यो देहकों, नही देहसों नेह ।
लग्यौ रंग निजरूपसो, बरसैं आनंद मेह ।।९१
छिदौ भिदौ ले जाहु कोउ, प्रलय होउ निजसंग ।
यह काया हमरी नही, हम चेतन चिद अग ।।९२
इहै भावना उर धरै, जल-मल-लिप्त शरीर ।
महारोग पीड़ै तऊ, भजै न औषध धीर ।।९३
व्याधितनो न उपायको, शिवकौ करै उपाय ।
इन्दी-विषय न सेवई, सेवै चेतनराय ।।९४
भयौ विरक्त जु भोगतैं, भोजन सज्जा आदि ।
काहूकी परवा नही, भेटौ ब्रह्म अनादि ।।९५
निजस्वरूप चितवन जग्यौ, भग्यौ भोगकौ भाव ।
लग्यौ चित्त चेतनथकी प्रकट्यो परम प्रभाव ।।९६
शत्रु मित्र सहु सम गिनै, तजै राग अरु दोष ।
बंध-मोक्षते रहित निज, रूप लख्यौ गुण कोष ।।९७

बेसरी छन्द

है विरकत पुरुषनिकों भाई, इह कायोतसर्ग सुख-दाई ।
अरु जे तन पाषनहै लागा, ते पावैं नहिं भाव विरागा ।।९८
उपकरणादिकमे मन राखे, ते नहिं ज्ञान सुधारस चाखैं ।
जग व्यवहार तजै नहिं जौलो, नहिं कायोत्सर्ग तप तौलो ।।९९
नाम त्यागकौ है उतसर्गा, कंपै नहिं जा है उपसर्गा ।
तब कायोत्सर्ग तप पावै, निज चेतनसों चित्त लगावै ।।१५००
एक दिवस द्वै दिवसा भाई, पाख मास ऊभौ हि रहाई ।
चउमासी छहमासी वर्षा, रहै जु ऊभौ चितमे हरषा ।।१

लहि निज ज्ञान भयौ अति पुष्टा, जाहि न घेरै विकलप दुष्टा ।
सो कायोत्सर्ग तपधारी, पावै शिवपुर आनन्दकारी ॥२
मुनिके यह तप पूरण होई, श्रावकके किंचित तप जोई ।
श्रावक हू नहिं देह-सनेही, जानो आतम तत्त्व विदेही ॥३
मरणतनो भय तिनके नाही, ते कायोत्सर्ग तपमाही ।
अब सुनि बारम तप है ध्याना, जा परसाद लहै निज ज्ञाना ॥४
अन्तर एक मुहूरत काला, ह्वै एकाग्रचित्त व्रत पाला ।
ताकौ नाम ध्यान है भाई, च्यारि भेद भाषै जिनराई ॥५
द्वै प्रशस्त द्वै निंद्य बखानै, श्रुत अनुसार मुनिननै जानै ।
आरति रौद्र अशुभ ए दोई, धर्म सुकल अति उत्तम होई ॥६
आरति तीव्र कषायें होई, महा तीव्रतै रौद्र जु सोई ।
मन्द कषाये धर्म सु ध्याना, जाहि न पावै जीव अज्ञाना ॥७
धर्मध्यानतैं सुकल सु ध्यान, सुकलध्यानतै केवल ज्ञान ।
रहित कषाय सुकल है सूधा, जा सम और न ध्यान प्रबूधा ॥८
चार ध्यान ए भाषै भाई, तिनके सोला भेद कहाई ।
ते तुम सुनहु चित्त धरि मित्रा, त्यागौ आरति रौद्र विचित्रा ॥९
आरतिके चउ भेद जु खोटे, पशुगति दायक औगुण मोटे ।
इष्टवियोग अनिष्टसजोगा, पीरा चिंतन होई अजोगा ॥१०
चौथो बधनिदान कहावै, जो जीवनिको भव भरमावै ।
वस्तु मनोहरको जु वियोगा, होय तबै धारै शठ सोगा ॥११
इष्ट वियोगारत सो जानो, दु.खतरुवरकौ मूल बखानो ।
दूजौ भेद अनिष्ट सजोगा, ताकौ भाव सुनौ भविलोगा ॥१२
वस्तु अनिष्ट मिलै जब आई, शोच करै तब भोदू भाई ।
भववनमे भरमै शठमति सो, पाप बाधि पावै दुरगति सो ॥१३
रोगनिकरि पीड्या अति शठजन, आरति धार जो अपने मन ।
सो पीरा-चितवन है तीजौ, आरतध्यान सदा तजि दीजौ ॥१४
चौथौ आरति त्यागौ भाई, बधनिदान महा दुखदाई ।
जप तप व्रत करि चाहै भोगा, ते जगमाहिं महाशठ लोगा ॥१५
ए चारो आरति दुखदाई, भव-कारण भाषै जिनराई ।
रौद्रध्यानके चारि विभेदा, अब सुनि जे दायक अतिखेदा १६
हिंसाकरि आनन्द जु मानै, हिंसानन्दी धर्म न जानै ।
मृषावाद करि धरै अनदा, मृषानन्द सो जियको फन्दा ॥१७
चोरीतै आनद उपजावै, सो अघ चौर्यानन्द कहावै ।
परिग्रह बढै होय आनन्दा, सो जानो जु परिग्रहानन्दा ॥१८
ए चउ भेद हरै सुख साता, दुरमतिरूप उग्र दुखदाता ।
पर विभूतिकी घटतौ चाहै, अपनी सपत्ति देखि उमाहैं ॥१९

रौद्रध्यानके लक्षण एई, त्यागैं धन्य धन्य हैं तेई।
आरति रुद्र ध्यान ए खोटा, इनकरि उपजै पाप जु मोटा ॥२०
दुखके मूल सुखनिके खोवा, ए पापी हैं जगत डवोवा।
चउ आरतिके पाये भाई, तिर्यग्गतिकारण दुखदाई ॥२१
रौद्रध्यानके चार ए पाये, अधोलोकके दायक गाये।
अशुभध्यान ये दोय विरूपा, लगे जीवके विकलप रूपा ॥२२
नरक निगोद प्रदायक तेई, वसै मिथ्यात धरामैं एई।
कवहुं कदाचित अणुव्रत ताई, काहूके रौद्र जु उपजाई ॥२३
महावृत्तलो आरतध्याना, कवहूंक छट्ठे परमित थाना।
काहूके उपजे त्रय पाये, सप्तम ठाणे सर्व नसाये ॥२४
भोगारति उपजै नहिं भाई, जो उपजै तो मुनि न कहाई।
अव सुन धर्मध्यानकी वार्त्तें, जे सहु पाप पथको घाते ॥२५
धर्म जु स्वतैं स्वभाव कहावैं, पण्डितजन तासो लव लावैं।
क्षमा आदि दशलक्षण धर्मा, जीवदया विनु कटइ न कर्मा ॥२६
इत्यादिक जिन-भापित जेई, धारै धर्म धीर हैं तेई।
धर्मविषैं एकाग्र सुचित्ता, विषय-भोगसे अतिहि विरत्ता ॥२७
जे वैराग्यपरायण ज्ञानी, धर्मध्यानके होहिं सु ध्यानी।
जो विशुद्धभावनिमें लागा, जिनतें रागदोष सहु भागा ॥२८
एक अवस्था अंतर वाहिर, निरविकल्प निज निधिके माहिर।
ध्यावै आतमभाव सुवीरा, ह्वै एकाग्रमना वर वीरा ॥२९
जे निजरूपा हैं समभावा, ममत वितीता जग निरदावा।
इन्द्री जीति भये जु जितिन्द्री, तिनको ध्यानी कहैं अतिन्द्री ॥३०
चितवन्ता चेतन गुण-धामा, ध्यानहिं लीना आतमरामा।
निरमोहा निरद्वन्द सदा ही, चितमे कालिम नाहिं कदा ही ॥३१
जेहि अनुभवैं निज चितधनको, रोकैं मनको सौखे तनको।
आनन्दी निज ज्ञानस्वरूपा, तिनके धर्म रु ध्यान निरूपा ॥३२
मैत्री मुदिता करुणा भाई, अर मध्यस्थ महासुखदाई।
एहि भावना भावै जोई, धर्मध्यानको ध्याता सोई ॥३३
सर्वजीवसो मैत्रीभावा, गुणी देखि चितमैं हरषावा।
दुखी देखि करुणा उर आनैं, लखि विपरीत राग नहि ठानैं ॥३४
द्वेष जु नाहिं धरै जु महन्ता, हैं मध्यस्थ महा गुणवन्ता।
वहुरि धर्मके चारि जु पाया, ते सम्यक्दृष्टिनिको भाया ॥३५
आज्ञाविचय कहावै जोई, श्रीजिनवरने भाख्यौ सोई।
ताकी दृढ परतीति करै जो, संशय विभ्रम मोह हरै जो ॥३६
कर्म नाशको उद्यम ठानैं, रागद्वेषकी परणति भानैं।
सो अपायविचयो है दूजौ, तिरै जगतथी ध्यावै तू जौ ॥३७

करै उपाय शुद्ध भावनिकौ, अर निरवाणपुरी पावनिकौ।
तीजौ नाम विपाकविचय है, भव-भावनितैं भिन्न रहै है ॥ ३८
शुभके उदय संपदा आवै, अशुभ उदय आपद बहु पावै।
दोऊ जानै तुल्य सदाही, हर्ष विषाद धरै न कदा ही ॥३९
पुनि संठाणविचय है चौथौ, सर्व जगतको जानैं थोथौ।
तीन लोकको जानि सरूपा, जिनमारग अनुसार अनूपा ॥४०
सबकौ भूषण चेतनराया, चेतनसो नहिं दूजौ भाया।
सर्व लोकसू छाडि जु प्रीती, चेतनकी धारै परतीतो ॥४१
चेतन भावनिमै लौ लावै, अपनो रूप आपमे ध्यावै।
ए है धरमध्यानके भेदा, सुकल-प्रदायक पाप-उछेदा ॥४२
चौथे गुण ठाणे होइ धर्मा, सपूरण गुण ठाणे परमा।
धर्मध्यानके चउ गुणठाणा, तें देवाधिदेवने जाणा ॥४३
अहमिन्द्रादिक पद फल ताकौ, वरणे जाहिं न अति गुण जाकौ।
कारण सुकल ध्यानकौ एही, धर्मध्यानतै सुकल जु लेही ॥४४
मुनि श्रावक दोऊके गाया, धर्मध्यान सो नही उपाया।
मुनिको पूरणरूप प्रवानो, श्रावकके कछु नून बखानों ॥४५
मुनिके अति ही निश्चलताई, श्रावकके किंचित थिरताई।
परिग्रह चंचलताकौ मूला, जातै धर्म न होय सथूला ॥४६
पै तृष्णा छांडी बहुतेरी, करि मरजादा परिग्रहकेरी।
तातैं धर्मध्यानके पात्रा, श्रावक हू जाणो गुणगात्रा ॥४७
धर्मध्यानके च्यारि स्वरूपा, और हु श्रीगुरु कहे अनूपा।
इक पिंडस्थ पदस्थ द्वितीया, रूपस्था तीजौ गनि लीया ॥४८
रूपातीत चतुर्थम भेदा, हद्द धर्मकी पाप-उछेदा।
इनके भेद सुनौ मन लाये, जाकरि सुकलध्यानकूं पाये ॥४९
पिंडमाहि सब लोक विभूती, चितवै ज्ञानी निज अनुभूती।
पिंडलोककौ राजा चेतन, जाहि स्पर्श सकै न अचेतन ॥५०
ताकौ ध्यान करै जो ध्यानी, सो होवै केवल निज ज्ञानी।
बहुरि पदस्थ ध्यान बुध धारै, जिनभाषित पद मन्त्र विचारै ॥५१
पच परमगुरुमंत्र अनादी, ध्यावै धीर त्याग क्रोधादी।
नमोकारके अक्षर भाई, पैंतीसौ पूरण सुख दाई ॥५२
षोडश अक्षर मंत्र महंता, पंच परमगुरु नाम कहन्ता।
मन्त्र षड़ाक्षर अ र हं त सि द्धा, अ सि आ उ सा पच प्रबुद्धा ॥५३
नमोकारके पैंतिस अक्षर, प्रसिद्ध छै अरु षोडस अक्षर।
अरहंत सिध आयरिय उवझाया, साहू जपेते अंक गिनाया ॥५४
चउ अक्षर अ र हं त जपौ जू, सिद्ध नाम उरमाहिं थपौ जू।
द्वे अक्षर भूलौ मति भाई, सिद्ध-सिद्ध यह जाप कराई ॥५५

मन्त्र इकाक्षर है ओंकारा, ब्रह्मवीज इह प्रणव अपारा।
पंच परमपद या अक्षरमे, याहि ध्याय जगमै नहिं भरमैं ॥५६
शुक्लरूप अति उज्जल सजला, ध्यावै प्रणवाते हैं विमला।
सौऽहं सोऽहं अजपाजापा, हरै सन्तके सब सन्तापा ॥५७
इह सुर सबही प्राणीगणके, होवै श्वास उश्वास सबनिके।
पै नहिं याकी भेद जु पावै, तातैं भोदू भव भरमावै ॥५८
जो यह नाद सुनै वरवीरा, पावै शुक्लध्यान गुणधीरा।
उज्जलरूप दाय ए अंका, ध्यावै सो नासै अघ-पका ॥५९
जिनवर सो नहिं देव जु कोई, अजपा सो नहिं जाप सु होई।
मन्त्र अनेक जिनागम गाये, ते ध्यानी पुरुषनिने ध्याये ॥६०
सबमे पंच परम गुरु नामा, पच इष्ट विन मंत्र निकामा।
मन्त्राक्षरमाला जो ध्यावै, नाम पदस्थ ध्यान सो पावै ॥६१
अब सुनि तीजौ भेद सु भाई, है रूपस्थ महासुखदाई।
कृत्रिम और अकृत्रिम मूरत्ति, जिनवरकी ध्यावै शुभ सूरति ॥६२
जिनवरकौ साकार स्वरूपा, तेरम गुणठाणे जु अनूपा।
अतिशय प्रातिहार्यधर स्वामी, धरै अनंत चतुष्टय नामी ॥६३
समवसरण शोभित जिनदेवा, ताहि चितारै उर धरि सेवा।
पुनि तजि रूप रग गुणवाना, ध्यावै चौथौ भेद सुजाना ॥६४
रूपातीत समान न कोई, धर्मध्यानकौ भेद जु होई।
ध्यावै सिद्धरूप अतिशुद्धा, निराकार निरलेप प्रबुद्धा ॥६५
पुरुषाकार अरूप गुसांई, निरविकार निरदूषण सांई।
वसु गुण आदि अनंत गुणाकर, अवगुण-रहित अनत प्रभाधर ॥६६
लोकशिखर परमेसुर राजै, केवलरूप अनूप विराजै।
जिनको उर-अन्तर जे ध्यावै, रूपातीत ध्यान ते पावै ॥६७
सिद्ध समान आपको देखै, निश्चयनय कछु भेद न पेखै।
व्यवहारे प्रभुके हम दासा, निश्चय शुद्ध बुद्ध अविनाशा ॥६८
ए चारूं ध्यावै जो धर्मा, ते हि पिछानै श्रुतकौ मर्मा।
धर्मध्यान चहु गतिमै होई, सम्यक बिन पावै नहिं कोई ॥६९
छट्टम सप्तम मुनिके ठाणा, पंचम ठाणे श्रावक जाणा।
चौथे अव्रत सम्यकज्ञानी, तेऊ धर्मध्यानके ध्यानी ॥७०
चौथेसो ते सप्तमताई, धर्मध्यानको कहै गुसाई।
धर्मध्यान परभाव सुज्ञानी, नासै दस प्रकृती निजध्यानी ॥७१
प्रथम चौकरी तीन मिथ्याता, सुर नारक अर आयु विख्याता।
अष्टमसों चौदमलो सुकला, सुकल समान न कोई विमला ॥७२
शुकलध्यान मुनिराज हि ध्यावै, शुकलकरी केवलपद पावै।
शुकल नसावै प्रकृति समस्ता, करै शुकल रागादि विध्वस्ता ॥७३

जे जिन आतमसो लव लावैं शुकल तिनोके श्रीगुरु गावैं।
शुकलध्यानके चारि जु पाये, ते सर्वज्ञदेवने गाये ॥७४
द्वै सुकला द्वै सुकल जु पर्मा, जानै श्रीजिनवर सहु मर्मा।
प्रथम पृथक्त वितर्कविचारा, पृथक नाम है भिन्न प्रचारा ॥७५
भिन्न भिन्न निज भाव विचारै, गुण पर्याय स्वभाव निहारै।
नाम वितर्क सूत्रकौ होई, श्रुति अनुसार लखै निज सोई ॥७६
भावथकी भावातर भावै, पहलो शुकल नाम सो पावै।
दूजौ है एकत्ववितर्का, अवीचार अगणित द्रुति अर्का ॥७७
भयो एकतामे लवलीना, एकीभाव प्रकट जिन कीना।
श्रुत अनुसार भयौ अविचारी, भेदभाव परिणति सब टारी ॥७८
तीजौ सूक्षम किरियाधारी, सूक्षम जोग करै अविकारी।
चौथो जोगरहित निहकिरिया, जाहि ध्याय साधू भव तिरिया ॥७९
अष्टम ठाणे पहलो पायो, बारमठाणै दूजौ गायौ।
तीजौ तेरमठाणे जानो, चौथो चौदमठाणे मानो ॥८०
इनके भेद सुनो धरि, भावा, जिनकरि नासै सकल विभावा।
होहिं पवित्र भाव अधिकाई, जे अब तक हुए नहि भाई ॥८१
भाव अनन्त ज्ञान सुख आदी, तिनको धारक वस्तु अनादी।
लिये अनन्ता शक्ति महन्ती, धरै विभूति अनन्तानन्ती ॥८२
अपनी आप माहिं अनुभूती, अति अनतता अतुल प्रभूती।
अपने भाव तेहि निज अर्था, और सबै रागादि अनर्था ॥८३
अपनो अर्थ आपमे जानै, आतम सत्ता आप पिछानै।
इक गुणतै दूजौ गुण जावै, ज्ञानथकी आनन्द बढावै ॥८४
गुण अनन्तमे लीलाधारी, सो पृथक्त वीतर्क विचारी।
अर्थथकी अर्थान्तर जावै, निज गुण सत्ता माहिं रमावै ॥८५
योगथकी योगान्तर गमना, राग द्वेष मोहादिक वमना।
शब्दथकी शब्दान्तर सोई, ध्यावै शब्द-रहित ह्वै सोई ॥८६
व्यजन नाम शुद्ध परजाया, जाकौ नाश न कबहुँ वताया।
वस्तुशक्ति गुणशक्ति अनन्ती, तेई पर्यय जानि महन्ती ॥८७
व्यजनतै व्यजन परि आवे, निज स्वभाव तजि कितहु न जावै।
श्रुति अनुसार लखै निजरूपा, चिनमूरति चैतन्य स्वरूपा ॥८८
जैनसूत्रमे भाव श्रुती जो, प्रगटै अनुभव ज्ञानमती जो।
सो पृथक्तवितर्क विचारा, ध्यावै साधू ब्रह्म विहारा ॥८९

दोहा

जानि पृथक्त अनन्तता, नाम वितर्क सिद्धत।
है विचार अविचार निज, इह जानो विरतन्त ॥९०

बेसरी छन्द

लश्या सुकल भाव अति शुद्धा, मन वच-काय सबै जु निरुद्धा।
यामै एक और है भेदा, सो तुम धारहु टारहु खेदा ॥९१
उपशमश्रेणी क्षपक जु श्रेणी, तिनमें क्षायक मुक्ति निसैनी।
पहलो शुक्ल जु दोऊ धारै, दूजौ क्षपकविना न निहारै ॥९२
उपशम बारे ग्यारम ठाणा, परम्परै उत्तरै गुणठाणा।
जो कदाचि भवहूतैं जाई, तौ अहमिन्द्रलोककों जाई ॥९३
नर ह्वै करि धारे फिर धर्मा, चढै क्षपकश्रेणी जु अमर्मा।
क्षपक श्रेणिधर धीर मुनिन्द्रा, होवे केवलरूपजिनिन्द्रा ॥९४
बारम ठाणे दूजौ सुकला, प्रकटै जा सम और न बिमला।
द्वैमें क्षपकश्रेणि अधिकाई, कही जाय नहिं क्षपक बढ़ाई ॥९५
अष्टम ठाणे प्रगटै श्रेणी, सप्तमलो श्रेणी नहिं लेणी।
क्षपक श्रेणिधर सुकल निवासा, प्रकृति छतीस नवें गुण नासा ॥९६
दशमें सूक्षम लोभ खिपावै, दशमाथी बारमको जावै।
ग्यारमकों पैडौ नहिं लेवे, दूजौ सुकलध्यान सुख बेवे ॥९७
साधकताकी हद्द बताई, बारमठाण महा सुखदाई।
जहां षोड़शा प्रकृति खिपावै, शुद्ध एकतामें लव लावै ॥९८

सोरठा

मार्यो मोह पिशाच, पहले पायेसे श्रीमुनी।
तजौ जगतको नाच, पायो ध्यायौ दूसरौ ॥९९
है एकत्ववितर्क, अवीचार दूजौ महा।
कोटि अनन्ता अर्क, जाकौ सो तेज न लहै ॥१६००
ज्ञानावरणीकर्म, दर्शनावरणी हू हते।
रह्यौ नाहि कछु मर्म, अन्तराय अन्त जु भयौ ॥१
निरविकल्प रस माँहि, लीन भयौ मुनिराज सो।
जहाँ भेद कछु नाहि, निजगुण पर्ययभावतें ॥२
द्रव्य सूत्र परताप, भावसूत्र दरस्यो तहाँ।
गयो सकल सन्ताप, पाप पुण्य दोऊ मिटै ॥३
एक भावमे भाव, लखै अनन्तानन्त ही।
भागे सकल विभाव, प्रगटे ज्ञानादिक गुणा ॥४
अपनो रूप निहार, केवलके सन्मुख भयौ।
कर्म गये सब हारि, लरि न सकै जासें न को ॥५
एकहि अर्थे लीन, एकहि शब्दे माँहि जो।
एकहि योग प्रवीन, एकहि व्यंजन धारियौ ॥६

एकत्व नाम अभेद, नाम वितर्क सिद्धंतकौ ।
निरविचार निरवेद, दूजौ पायो इह कह्यौ ।।७
जहाँ विचार न कोय, भागे विकलप जाल सहु ।
क्षीणकषायी होइ, ध्यानारूढ भयौ मुनी ।।८
दूजौ पायो येह, गायौ गुरु आज्ञा थकी ।
करै कर्मको छेह, अब सुनि तीजौ शुकल तू ।।९
सूक्षमकिरिया नाम, प्रगटै तेरम ठाण जो ।
जो निज केवल धाम, श्रुतज्ञानीके है परे ।।१०
लोकालोक समस्त, भासै केवल बोधमे ।
केवल सो न प्रशस्त, सर्वलोकमे और कोउ ।।११
जे अघातिया नाम, गोत्र वेदनी आयु हैं ।
तिनको नाशै राम, परम शुकल केवल थकी ।।१२
पिच्यासी प्रकृतो जु, जिनके ठाणे तेरमे ।
जरो जेवरी सी जु, तिनकूं नाशै सो प्रभू ।।१३
सूक्षमक्रिया प्रवृत्ति, ध्यावै तीजौ शुकल सो ।
वादरजोग निवृत्ति, कायजोग सक्षम रहै ।।१४
करै जु सूक्षम जोग, तेरम गुणके छेहु रै ।
पावै तबै अजोग, चौदम गुणठाणे प्रभू ।।१५
तहा सु चौथो ध्यान, है जु समुच्छिन्नक्रिया ।
ताकरि श्रीभगवान, बेहत्तरि तेरा हतै ।।१६
गई प्रकृति समस्त, सौ ऊपरि अड़ताल जे ।
भये भाव जड अस्त, चेतन गुण प्रगटे सबै ।।१७
करनी सकल उठाय, कृत्यकृत्य हूवौ प्रभू ।
सो चौथो शिवदाय, परम शुकल जानो भया ।।१८
पंच लघुक्षर काल, चौदम ठाणे थिति करै ।
रहित जगत जजाल, जगत-शिखर राजै सदा ।।१९
बहुरि न आवै सोय, लोकशिखामणि जगततैं ।
त्रिभुवनकौ प्रभु होय, निराकार निर्मल महा ।।२०
सबकी करनी सोइ, जानै अतरगत प्रभू ।
सर्व-व्यापको होइ, साखीभूत अव्यापको ।।२१
ध्यान समान न कोइ, ध्यान ज्ञानकौ मित्र है ।
सो निज ध्यानी होइ, ताको मेरी वंदना ।।२२
धर्ममूल ए दोय, ध्यान प्रशसा योग्य है ।
आरति रूद्र न होय, सा उपाय करि जीव तू ।।२३
धर्म अगनिकौ दीप, शुकल रतनकौ दीप है ।
निज गुण आप समीप, तिनको ध्यावौ लोक तजि ।।२४

ध्यान तनूं विस्तार, कहि न सकें गणधर मुनी ।
कैसे पावै पार, हमसे अलपमती भया ॥२५
तप जप ध्यान निमित्त, ध्यान समान न दूसरी ।
ध्यान धरौ निज चित्त, जाकरि भवसागर तिरौ ॥२६
तपकूं हमरी ढोक, जामैं ध्यान जु पाइये ।
मेटै जगकौ शोक करै कर्मकी निर्जरा ॥२७
अनशन आदि पवित्र, ध्यान लगें तप गाइया ।
बारा भेद विचित्र, सुनौ अबै समभाव जो ॥२८
इति द्वादश तप निरूपणम् ।

अथ सम भाव वर्णन

छप्पय चाल

राग द्वेष अर मोह, एहि रोकैं समभावै ।
जिनकरि जगके जीव, नांहि शिवथानक पावै ।
तेरा प्रकृति राग, द्वेषकी बारा जानो ।
मोहतनी हैं तीन, ए अट्ठाईस वखानो ॥
एक मोहके भेद दो, दर्शन चारित्र ए ।
दर्शन मोह मिथ्यात भव, जहां न सम्यक सोहए ॥२९
राग द्वेष ए दोय, जानि चारित्र जु मोहा ।
इनकरि तप नही व्रत, एह पापो पर द्रोहा ॥
इनकी प्रकृति पचीस, तेहि तजि आतमरामा ।
छांडौ तीन मिथ्यात, यही दोषनिके धामा ॥
स्वपर विवेक विचार विना, धर्म अधर्म न जो लखै।
सौ मिथ्यात अनादि प्रथम, ताहि त्यागि निजरस चखै ॥३०
दूजौ मिश्र मिथ्यात, होय तीजे गुण ठाणे ।
जहां न एक स्वभाव, शुद्ध आतम नहिं जाणें ॥
सत्य असत्य प्रतीति, होय दुविधामय भावे ।
ताहि त्यागि गुणखानि, शुद्ध निजभाव लखावै ॥
तीजी सम्यक् प्रकृति मिथ्यात, समकितमैं उदवेग कर ।
भलौ दोयते तीसरौ, तौ पन चंचलभाव धर ॥३१

दोहा

कहे तीन मिथ्यात ए, दरशन मोह विकार ।
अब चारित्र जु मोहकौ, भेद सुनौ निरधार ॥३२
कही कषाय जु षोडसो, नो-कषाय नव मेलि ।
ए पच्चीसों जानिये, राग द्वेषकी वेलि ॥३३

चउ माया चउ लोभ अर, हासि रती त्रय वेद ।
ए तेरा है रागकी, देहिं प्रकृति अति खेद ॥३४
चार क्रोध अर मान चउ, अरति शोक भय जानि ।
दुरगंधा ये द्वादशा, प्रकृति द्वेषकी मानि ॥३५
लगी अनादि जु कालकी, भरमावै जु अनंत ।
विनसै भव्यनिके भया, ह्वै न अभविके अन्त ॥३६
रोकै सम्यक्‌दृष्टिको, कोकै सकल विभाव ।
ढोकै मिथ्यादृष्टिको, नहिं जामे समभाव ॥३७
अनंतानुवन्धी इहै, प्रथम चौकरी जानि ।
त्यागै तीन मिथ्यात जुत, सो समदृष्टी मानि ॥३८

छप्पय छन्द

समकित बिनु नहिं होत, शातिरूपी समभावा ।
चौथे गुण ठाणे जु कछुक, समभाव लखावा ।
द्वितिय चौकरी बहुरि, सोहु अव्रतमय भाई ।
नाम अप्रत्याख्यान, जा छतै व्रत न पाई ॥
दोय चौकरी तीन मिथ्या, त्याग होय श्रावकव्रत्ती ।
प्रगटै गुणठाण जु पचमै, पापनिकी परिणति हत्ती ॥३९
चढै तहां समभाव, होय रागादिक नूना ।
अव्रततै गनि ऊंच, साधुव्रत्तनितैं ऊना ॥
तृतिय चौकरी जानि, नाम है प्रत्याख्यानी ।
रोकै मुनिव्रत एहु, ठाण छट्‌ठो शुभध्यानी ॥
तीन चौकरी तीन मिथ्या, छांडि साधु ह्वै सजमी ।
वृद्धि होय समभावई, मन इन्द्री सब ही दमी ॥४०

दोहा

चौथी सजुलना सही, रोकै केवलज्ञान ।
जाके तीव्र उदय-थकी, होय न निश्चल ध्यान ॥४१

छप्पय छन्द

चौथी चौकरि टारै, नाम संजुलन जवै ही ।
नौ-कषाय नव भेद, नाशि जावै जु सबै ही ॥
यथाख्यात चारित्र, ऊपजै बारम ठाणे ।
पूरण तब समभाव, होय जिनसूत्र प्रमाणें ॥
क्रोध मान छल लोभ, चारू एक एक चउ भेद ए ।
ह्वै षोडश नव युक्त ये, मोह प्रकृत्ति अति खेद ए ॥४२

दोहा

अनंतानुवंधी प्रथम, द्रितीय अप्रत्याख्यान ।
तीजी प्रत्याख्यान है, चउथी है संजुलान ॥४३
कही चौकरी चारि ए, चारो गतिको मूल ।
चार-तनी सोला भई, भेद मोक्ष प्रतिकूल ॥४४
हास्य अरति रति शोक भय, दुरगंधा दुखदाय ।
नो-कषाय ए नव कही, पंचवीस समुदाय ॥४५
राग द्वेषकी प्रकृति ए, कही पचीस प्रमान ।
तीन मिथ्यात समेत ए, अट्ठाईस वखान ॥४६
जायं जवै सव ही भया, तव पूरण समभाव ।
यथाख्यातचारित्र ह्वै, क्षीणकषाय प्रभाव ॥४७
मुनिके जातै अलप हैं, छठे सातमे ठाण ।
पन्द्रा प्रकृति अभावतैं, ता माफिक सम जाण ॥४८
श्रावकके यातें अलप, पचम ठाणे जाण ।
ग्यारा प्रकृति गयां थकी, ता माफिक परवाण ॥४९
श्रावकके अणुवृत्त है, इह जानों निरवार ।
मुनिके पंच महाव्रता, समिति गुपत्ति अविकार ॥५०
श्रावकके चौथे अलप, चौथो अव्रत्त ठाण ।
तहां सात प्रकृति गई, ता माफिक ही जाण ॥५१
गुणठाणा समभावके, ह्वै ग्यारा तहकीक ।
चौथे सूं ले चौदमा--तक नहिं वात अलीक ॥५२
चौथे जघन जु जानिये, मध्य पंचमे ठाण ।
छट्ठासूं दसमा लगै, बढ़तो वढ़तो जाण ॥५३
वारम तेरम चौदवे, है पूरण समभाव ।
जिन शासनको सार यह, भव-सागरकी नाव ॥५४

छप्पय

छट्ठमसों ले ···· ·· जुगल मुनीके जाणा ।
तिनकौ सुनहु विचार, जैनशासन परवाणा ॥
छट्टम सप्तम ठाण, प्रकृति पंद्रा जव त्यागी ।
तीन मिथ्यात विख्यात, चौकरी ईक तीन उ भागी ॥
तव उपजै समभावई, श्रावकके अधिकौ महा ।
पै तथापि तेरा रही, तातें पूरण नहिं कहा ॥५५
रहो चौकरो एक, और गनि नो-कषाय नव ।
तिनकौ नाश करेय, सो न पावै कोई भव ॥

छट्टे तीव्र जु उदै, सातवे मंद जु इनकी ।
इनमै षट हास्यादि, आठवे अन्त जु तिनकी ॥
क्रोध मान अर कपट नो वेद तीनही नहिं या ।
चौथे चौकरि लोभ सूक्षम दश वेठाण विनाशिया ॥५६

चाल छन्द

एकादशमा द्वादशमा, पुनि तेरम अर चौदशमा ।
समभावतने गुणथाना, ए चार कहे भगवाना ॥५७
ग्यारम है पतन स्वभावा, डिगि जाय तहाँ समभावा ।
बारहमैं परम पुनीता, जासम नहिं कोइ अजीता ॥५८
तेरम चौदम गुणठाणा, परमातरूप बखाना ।
समभाव तहाँ है पूरा, कीये रागादिक चूरा ॥५९
नहिं यथाख्यात सौ कोई, समभाव-सरूपी सोई ॥
इह सम उतपत्ति बताई, रागादिक नाश कराई ॥६०
अब सुनि सम लक्क्षण संता, जा विधि भाषै भगवंता ।
जीवौ-मरिवौ सम जानै, अरि-मित्र समान बखानै ॥६१
सुख-दुख अर पुण्य जु पापा, जानै सम ज्ञान-प्रतापा ।
सब जीव समान विचारै, अपने से सर्व निहारै ॥६२
चिंतामणि-पाहन तुल्या, जिसके समभाव अतुल्या ।
सुरगति अर नरक समाना, सब राव रंक सम जाना ॥६३
जिनके घरमै नहिं ममता, उपजी सुखसागर समता ।
वन-नगर समान पिछानै, सेवक साहिव सम जानै ॥६४
समसान-महल सम भावै, जिनके न विषमता आवै ।
है लाभ-अलभ समाना, अपमान-मान सम जाना ॥६५
गिरि-ग्राम समान जिनूँके, सुर-कीट समान तिनूँके ।
सुरतरु-विषतरु सम दोऊ, चन्दन-कर्दम सम होऊ ॥६६
गुरु-शिष्य न भेद विचारै, समता परिपूरण धारै ।
जानै सम सिंह-सियाला, जिनके समभाव विशाला ॥६७
संपत्ति-विपदा द्वै सरिखी, लघुता-गुरुता सम परखी ।
कंचन लोहा सम जाके, रंच न है विभ्रम ताके ॥६८
रति-अरति हानि अर वृद्धी, रज सम जानै सब ऋद्धी ।
खर-कुंजर तुल्य पिछानै, अहि फूलमाल सम जानैं ॥६९
नारी नागिन सम देखै, गृह कारागृह सम पेखै ।
सम जानै इष्ट-अनिष्टा, सम मानै अवलि-वलिष्टा ॥७०
जे भोग रोग सम जानैं, सब हर्ष रोग सम मानैं ।
रस नीरस रंग कुरंगा, सुसवद कुसवद सम अंगा ॥७१

शीतल अर उष्ण समाना, दुरगंध सुगंध प्रमाना ।
नहिं रूप कुरूप जु भेदा, जिनके समभाव निवेदा ।।७२
चक्री अर निरधन दोई, कछु भेदभाव नहिं होई ।
चक्राणी अर इन्द्राणी, अति दीन नारि सम जाणी ।।७३
इन्द्र नागेन्द्र नरेन्द्रा, पुनि सर्वोत्तम अहमिन्द्रा ।
सूक्षम जीवनि सम देखैं, कछु भेद भाव नहिं पेखें ।।७४
थुति निंदा तुल्य गिनैं जो, पापनिके पुंज हनै जो ।
कृमि कुन्थुकृष्ण सम तुल्या, पायौ समभाव अतुल्या ।।७५
सेवा उपसर्ग समाना, वैरी बाँधव सम माना ।
जिनके द्विज शुद्र सरीखा, सीखी सदगुरुकी सीखा ।।७६
वन्दै निन्दै सो सरिखौ, समभावनि तन जिन परिखौ ।
समतारस पूरण प्रगट्यौ, मिथ्यात्त महाभ्रम विघट्यौ ।।७७
तिनकी लखि शांत सु मुद्रा, रौद्र जु त्यागै अति रुद्रा ।
चीता मृगवर्ग न मारै, अति प्रीति परस्पर धारै ।।७८
गरुड़ा नहिं नाग विनासै, नागा नहिं दादर नासै ।
उन्दर मारै न विडाला, पखिनिसौ प्रीति विशाला ।।७९
तिर विद्याधर नर कोई, सुर असुर न वाधक होई ।
काहूकूं राव न दंडै, दुरजन दुरजनता छंडै ।।८०
काहूके चोर न पैसे, चोरी होवै कहु कैसे ।
लखि समता-धारक मुनिकों, त्यागै पापी पापनिको ।।८१
डाकिनिको जोर न चालै, हिंसक हिंसा सब टालै ।
भूता नहिं लागन पावै, राक्षस व्यत्तर भजि जावै ।।८२
मत्तर न चलैं जु किसीके, ये है परभाव रिषीके ।
कोहू काहू नहिं मारै, सब जीव मित्रता धारै ।।८३
हरिनी मृगपतिके छावा, देखै निज-सुत समभावा ।
बाघनिकूं गाय चुखावै, मार्जारी हंस खिलावै ।।८४
ल्याही अर मीढा इकठे, नाहर अर बकरा बइठे ।
काहूकौ जोर न चालै, समभाव दुखनिकों टालै ।।८५
रोगिनि के रोग नसावे, सोगिनि सोग बिलावै ।
कारागृह तें सब छूटें, कोउ काहू कोनहिं लूटै ।।८६
इह ब्रह्म सुविद्यारूपा, निरदोष विराग अनूपा ।
अति शांतिभावको मूला, समसो नहिं शिव अनुकूला ।।८७
नहिं समता पर छै कोऊ, सब श्रुतिकौ सार जु होऊ ।
जो ममताकौ परित्यागी, सो कहिये सम वड़भागी ।।८८
मन इन्द्रीकौ जु निरोधा, सो दम कहिये प्रतिवोधा ।
समते क्रोधादि नशाया, दमतें भोगादि भगाया ।।८९

सम दम निरवाण प्रदाया, काहे घारौ नहिं भाया ।
सब जैनसूत्र समरूपा, समरूप जिनेश्वर भूपा ॥९०
समताधर चउविधि सघा, समभाव भवोदधि लंघा ।
पूरण सम प्रभुके पइये, तिनतै लघु मुनिके लइये ॥९१
तिनतै श्रावकके नूना, सम करै कर्मगण चूना ।
श्रावकतैं चौथे ठाणें, कछुइक घटता परमाणे ॥९२
सम्यक बिन समता नाही, सम नाहिं मिथ्यामत माही ।
ममता है मोह सरूपा, समता है ज्ञान प्ररूपा ॥९३
सब छांडि विषमता भाई, ध्यावौ समता शिवदाई ।
समकी महिमा मुनि गावै, समको सुरपति शिर नावै ॥९४
समसौ नहिं दूजौ जगमैं, इह सम केवल जिनमगमैं ।
सम अर्थ सकल तप वृत्ता, सम है मारग निरवृत्ता ॥९५
जो प्राणी समरस भावै, सो जनम मरण नहिं पावै ।
यम नियमादिक जे जोगा, सबमैं समभाव अलोगा ॥९६
समकौ जस कहत न आवै, जो सहस जीभ करि गावै ।
अनुभव अमृतरस चाखै, सोई समता दिढ़ राखै ॥९७

इति समभाव निरूपण ।

अथ सम्यक्त्व वर्णन

सवैया इकतीसा ।

अष्ट मूलगुण कहे, वारह वरत कहे, कहे तप द्वादश जु समभाव साधका ।
सम सा न कोऊ और सर्वकौ जु सिरमोर, याही करि पावै ठौर आतम आराधका ।
विषमता त्यागि अर समताके पथ लागि, छाडी सब पाप जेहि धर्मके विराधका ।
ग्यारै पडिमा जु भेद दोषनिकौ करै छेद, धारैं नर धीर धरि सकै नाहिं बाधका ॥९८

दोहा

पड़िमा नाम जु तुल्यकौ, मुनिमारगकी तुल्य ।
मारग श्रावककौ महा, भाषैं देव अतुल्य ॥९९
बहुरि प्रतिज्ञाको कहैं, पड़िमा श्रीभगवान ।
होहिं प्रतिज्ञा धारका, श्रावक समतावान ॥१७००
मुनिके लहुरे वीर हैं, श्रावक पड़िमाधार ।
मुनि श्रावकके धर्मको, मूल जु समकित सार ॥१
सम्यक चउ गतिके लहैं, कहैं कहालो कोइ ।
पै तथापि वरणन करूँ, सवेगादिक सोइ ॥२

सम्यकके गुण अतुल है, श्रावक तिरि नर होय।
मुनिव्रत मनुजहि धारही, द्विज छत वाणिज होय ।।३
संवेगो निरवेद अर, निंदन गरुहा जानि।
समता भक्ति दयालुता, बात्सल्यादिक मानि ।।४
धर्म जिनेसुर कथित जो, जीवदयामय सार।
तासौ अधिक सनेह है, सो संवेग विचार ।।५

भव तन भोग समस्ततै, विरक्त भाव अखेद।
सो दूजौ निरवेद गुण, करै कर्मकौ छेद ।।६
तीजौ निंदन गुण कह्यौ, निजको निंदै जोइ।
मनमै पछितावौ करै, भव भरमणकौ सोइ ।।७
चौथौ गरहा गुन महा, गुरुपै भाखै वीर।
अपने औगुन समकित्ती, नही छिपावै धीर ।।८

पचम उपशम गुण महा, उपशमत्ता अधिकाय।
प्राण हरै ताहू थकी, बैर न चित्त धराय ।।९
छट्टौ गुण भक्ती धरै, सम्यकदृष्टी संत।
पंच परमपदकी महा, धारै सेव महत्त ।।१०
सप्तम गुण वात्सल्य जो, जिन धर्मिनिसो राग।
अष्टम अनुकंपा गुणो, जीवदया व्रत लाग ।।११

उक्त च गाथा—

संवेओ णिव्वेओ, णिदण गरुहा य उवसमो भत्ती।
वच्छल्ल अणुकंपा, अट्ट गुणा हुति सम्मत्ते ।।१२

चौपाई

भव्यजीव चहुँगत्तिके माही, पावै समकित सशय नाही।
पंचेन्द्री सैनी बिनु कोय, और न सम्यकदृष्टी होय ।।१३
जब ससार अलप ही रहै, तब सम्यक दरशनको गहै।
प्रथम चौकरी तीन मिथ्यात्त, ए सातो प्रकृती विख्यात ।।१४
इनके उपशमतै जो होय, उपशम नाम कहावै सोय।
इनके क्षयतै क्षायिक नाम, पावै मनुष महागुण धाम ।।१५
क्षायिक मनुष विना नहिं लहै, क्षायिक तुरत ही भव-वन दहै।
केवल आदि मूल इह होय, क्षायिक सो नहिं सम्यक कोय ।।१६
अब सुनि क्षय-उपसमकौ रूप, तीन प्रकार कह्यौ जिनभूप।
प्रथम चौकरी क्षय है जहा, तीन मिथ्यात उपसमै तहां ।।१७
पहली क्षय-उपशम सो जानि, जिनवानी उरमै परवानि।
प्रथम चौकरी पहल मिथ्यात, ए पाचौं क्षय ह्वै दुखदात ।।१८

द्वै मिथ्यात उपशमे जहा दूजौ क्षय-उपशम है तहा ।
प्रथम चौकरी द्वै मिथ्यात, ए षट क्षय होवै जडतात ॥१९
तृतिय मिथ्यात उपशमै भया, तीजौ क्षय-उपशम सो लया ।
वेदकसम्यक चार प्रकार, ताके भेद सुनो निरधार ॥२०
प्रथम चौकरी क्षय है जहा, दोय मिथ्यात उपशमै तहाँ ।
तृतिय मिथ्यात उदय जब होय, पहलौ वेदक जानौ सोय ॥२१
प्रथम चौकरी प्रथम मिथ्यात, ए पाचौ क्षय होय विख्यात ।
द्वितिय मिथ्यात उपशमै जहा, उदय होय तीजेकौ तहा ॥२२
भेद दूसरो वेदकतणो, जिनमारग अनुसारे भणो ।
प्रथम चौकरी दो मिथ्यात, ए षट प्रकृति होय जब घात ॥२३
उदय तीसरौ मिथ्या होय, तीजौ वेदक कहिये सोय ।
प्रथम चौकरी मिथ्या दोय, इन छहूँको उपशम जब होय ॥२४
उदय होय तीजो मिथ्यात, सो चौथौ वेदक विख्यात ।
ए नव भेद सु सम्यक कहे, निकट भव्य जीवनिने गहे ॥२५

दोहा

क्षय-उपशम वरतै त्रिविध, वेदक च्यारि प्रकार ।
क्षायिक उपशम भेलि करि, नवधा समकित धार ॥२६
नवमे क्षायिक सारिखौ, समकित होय न और ।
अविनाशी आनदमय, सो सबकौ सिर मौर ॥२७
पहली उपशम ऊपजै, पहली और न कोय ।
उपशमके परसादतै पाछे क्षायिक होय ॥२८
क्षायिक बिनु नहिं कर्मक्षय, इह निश्चय परवानि ।
क्षायिक दायक सर्व ए, सम्यकदर्शन मानि ॥२९
उपशमादि सम्यक्त सर्व, आदि अन्त जुत जानि ।
क्षायिककौ नहिं अन्त है, सादि अनन्त बखानि ॥३०
सम्यकदृष्टी सर्व ही, जिनमारगके दास ।
देव धर्म गुरु तत्त्वको, श्रद्धा अविचल भास ॥३१
अनेकात सरधा लिया, शातभाव धर धीर ।
सप्तभग वाणी रुचै, जिनवरकी गभीर ॥३२
जीव अजीवादिक सबै, जिन आज्ञा परवान ।
जानै सशय रहित जो, धारै दृढ सरधान ॥३३
सप्त तत्त्व षट द्रव्य अर, नव पदार्थ परतक्ष ।
अस्तिकाय हैं पच ही, तिनकी धारे पक्ष ॥३४
इष्ट पच परमेष्ठिकौ, और इष्ट नहिं कोय ।
मिष्ट वचन बोले सदा, मनमै कपट न होय ॥३५

तजै अष्ट ही गर्व जो, है निगर्व गुणवान ।
पुत्र-कलत्रादिक उपरि, ममता नाहिं वखान ॥३६
तृण सम मानै देहकों, निजसम जानै जीव ।
धरै महा उपशांतता, त्यागै भाव अजीव ॥३७
सेवै विषयनिको तऊ, नही विषयसू राग ।
वरतै गृह आरम्भमे, धारि भाव वैराग ॥३८
कवै दशा वह होयगी, धरियेगा मुनिवृत्त ।
अथवा श्रावक वृत्त ही, करियेगो जु प्रवृत्त ॥३९
धिग धिग अव्रतभावको, या सम और न पाप ।
क्षणभगुर विषया सवै, देहि कुगत्ति दुख ताप ॥४०
इहै भावना भावतो, भोगनितै जु उदास ।
सो सम्यकदरसी भया पावै तत्त्वविलास ॥४१
सप्तम गुणके ग्रहणको, रागी होय अपार ।
साधुनिकी सेवा करै, सो सम्यक गुण धार ॥४२
साधर्मिनसौ नेह अति, नहिं कुटुम्वसी नेह ।
मन नहिं मोह-विलासमैं, गिनैं न अपनी देह ॥४३
जीव अनादि जु कालको, बसै देहमे एह ।
बंध्यौ कर्म प्रपंचसो, भवमै भ्रमौ अच्छेह ॥४४
त्याग जोग जगजाल सब, लेन जोग निजभाव ।
इह जाके निश्चय भयौ, सो सम्यक परभाव ॥४५
भिन्न भिन्न जानै सुधी, जड-चेतनकौ रूप ।
त्यागै देह सनेह जो, भावै भाव अनूप ॥४६
क्षीर नीरकी भाति ये, मिलै जीव अर कर्म ।
नांहि तथापि मिलैं कदे, भिन्न भिन्न है धर्म ॥४७
यथा सर्पकी कंचुकी, यथा खडगकौ म्यान ।
तथा लखै बुध देहको, पायौ आतमज्ञान ॥४८
दोष समस्त वितीत जो, वीतराग भगवान ।
ता विन दूजौ देव नहिं, इह धारै सरधान ॥४९
सर्व जीवकी जो दया, ताहि सरदहै धर्म ।
गुरु माने निरग्रन्थको, जाके रंच न भर्म ॥५०
जपै देव अरहंतकों दास भाव धरि धीर ।
रागी दोषी देवको, सेव तजै वर वीर ॥५१
रागी दोषी देवको, जो मानै मतिहीन ।
धर्म गिनै हिंसा विषैं, सो मिथ्या मत लीन ॥५२
परिग्रह धारककों गुरु, जो जानैं जग माहिं ।
सो मिथ्यादृष्टी महा, यामैं संशय नांहि ॥५३

कुगुरु कुदेव कुधर्मकों, जो ध्यावै हिय अंध ।
सो पावै दुरगत्ति दुखा, करै पापको बध ॥५४
सम्यकदृष्टी चिंतवै, या ससार मझार ।
सुखकौ लेश न पाइये, दीखै दुःख अपार ॥५५
लक्ष्मी-दाता और नहिं, जीवनिकों जग माहिं ।
लक्ष्मी दासी धर्मकी, पापथकी विनसाहि ॥५६
जैसौ उदय जु आवही, पूरव बांध्यौ कर्म ।
तैसौ भुगतै जीव सब, यामै होय न भर्म ॥५७
पुण्य भलाई कार है, पाप बुराई कार ।
सुख-दुखदाता होय यह, और न कोइ विचार ॥५८
निमितमात्र पर जीव है, इह निहचै निरधार ।
अपने कीये आप ही, फल भुगते ससार ॥५९
पुण्यथकी सुर नर हुवै, पापथकी भरमाय ।
तिर नारक दुरगत्ति विषै, भव-भव अति दुख पाय ॥६०
पाप समान न शत्रु है, धर्म समान न मित्र ।
पाप महा अपवित्र है, पुण्य कछुक पवित्र ॥६१
पुण्य-पापतें रहित जो, केवल आतमभाव ।
सो उपाय निरवाणकौ, जामै नही विभाव ॥६२
झूठी माया जगतकी, झूठौ सब संसार ।
सत्य जिनेसुर धर्म है, जा करि ह्वै भव-पार ॥६३
व्यंतर देवादिकनिको, जे शठ लक्ष्मीहेत ।
पूजै ते आपद लहैं, लक्ष्मी देय न प्रेत ॥६४
भक्ति किये पूजे थके, जो व्यन्तर धन देय ।
तौ सब ही धनवन्त ह्वै, जगजन तिनकों सेय ॥६५
क्षेत्रपाल चडी प्रमुख, पुत्र कलत्र धनादि ।
देन समर्थ न कोइको, पूजै शठ जन बादि ॥६६
जो भवितव्यता जीवकौ, जा विधान करि होय ।
जाहि क्षेत्र जा कालमै, नि सदेह ह्वै सोय ॥६७
जान्यौ जिनवर देवने, केवलज्ञान मझार ।
होनहार संसारकौ, ता विधि ह्वै निरधार ॥६८
इह निश्चय जाके भयौ, सो नर सम्यकवन्त ।
लखै भेद षट द्रव्य के, भावै भाव अनन्त ॥६९
शका भागी चित्ततें, भयो निशकित्त वीर ।
गुण परजाय स्वभाव निज, लखै आप मै धीर ॥७०
दृढ प्रतीत जिनवैन की, सम्यकदृष्टी सोय ।
जाकै संशय जीव में, सो मिथ्याती होय ॥७१

सोरठा

जो नहिं समझी जाय, जिनवाणी अति सूक्षमा।
तो ऐसे उर लाय, संदेह न मन आनै सुधी ।।७२
वुद्धि हमारी मन्द, कछु समझैं कछु नाहिं।
जो भाष्यौ जिनचन्द, सो सव सत्य स्वरूप है ।।७४
उदय होयगो ज्ञान, जव आवरणु नसाइगौ।
प्रगटेगौ निज ध्यान, तव सव जानी जायगी ।।७४

जिनवानी सम और, अमृत नाहिं संसार में।
तीन भुवन सिरमौर, हरै जन्म जर-मरण जो ।।७५
जिनधर्मिनि सो नेह, लग्यौ नेह जिनधर्मसू।
वरसै आनन्द मेह, भक्त भयो जिनराज को ।।७६
सो सम्यक धरि धीर, लहै निजातम भावना।
पावै भवजल तीर, दरसन ज्ञान चरित्त तै ।।७७

ऋद्धिनि मे वड़ ऋद्धि, रतननि मे रतन जु महा।
या सम और न सिद्धि, इह निश्चय धारौ भया ।।७८
योगिनि मे निज योग, सम्यक दरसन जानि तू।
हनै सदा सव शोक, है आनन्दमयी महा ।।७९

जोगीरासा

वन्दनीक है सम्यकदृष्टी, यद्यपि व्रत्त न कोई।
निन्दनीक है मिथ्यादृष्टी, जों तपसी हू होई ।।
मुक्ति न मिथ्यादृष्टी पावै, तपसी पावै स्वर्गा।
ज्ञानी व्रत्त विना सुरपुर ले, तपधरि ले अपवर्गा ।।८०

दुरगति वन्ध करै नहिं ज्ञानी, सम्यकभावनि माही।
मिथ्याभावनि में दुरगति को, वन्ध होय वुधि नाही ।।
समकित विन नहिं श्रावकव्रत्ती, अर मुनिव्रत हू नाही।
मोक्ष हु सम्यक वाहिर नाही, सम्यक आपहि माही ।।८१

अंग निशंकित आदि जु अष्टा, धारै सम्यक सोई।
शंका आदि दोष मल रहिता, निरमल दरशन होई ।।
जिनमारग भाषै जु अहिंसा, हिंसा परमन भाषै।
हिंसा मारगकी तजि सरधा, दयाधर्म दृढ राखै ।।८२
संदेह न जाके जिय माही, स्यादवादकी पंथा।
पकरै त्यागि एक नयवादी, सुनै जिनागम ग्रंथा ।।
पहली अंग निसंसै सोई, दूजो कांक्षा रहिता।
जामैं जगकी वांछा नाही, आतम अनुभव महिता ।।८३

शुभ करणी करि फल नहिं चाहै, इह भव परभवके जो।
करै कामना-रहित जु धर्मा, ज्ञानामृत फल ले जो॥
इह भाष्यौ नि कांक्षित अंगा, अब सुनि तीजै भेदा।
निरविचिकित्सा अंग है भाई, जा करि भव-भ्रम छेदा॥८४
जे दश लक्षण धर्म धरैया, साधु शांतरस लीना।
तिनकौ लखि रोगादिक युक्ता, सेव करै परवीना॥
सूग न आनै मनमै क्यू ही, हरै मुनिनिकी पीरा।
सो सम्यकदृष्टी जिनधर्मा, तिरै तुरत भवनीरा॥८५
चौथौ अंग अमूढ स्वभावा, नही मूढता जाकै।
जीवघातमै धर्म न जानै, संशयमोह न ताके।
अति अवगाढ गाढ परतीती, कुगुरु कुदेव न पूजै।
जिन शासनकौ शरणो ले करि, जाय न मारग दूजै॥८६
जानै जीवदयामै धर्मा, दया जैन ही माही।
आन धर्ममै करुणा नाही, परतछ जीव हताई॥
जो शठ लज्जा लोभ तथा, भय करिके हिंसा माही।
मानै धर्म सो हि मिथ्याती, जामै समकित नाही॥८७
पंचम अंग नाम उपगूहन, ताकौ सुनहु विवेका।
पर जीवनिके आखिनि देखैं, ढाकै दोष अनेका॥
आप जु दोष करै नहिं, ज्ञानी सुकृत रूप सदा ही।
अपने सुकृत नाहिं प्रकाशैं, धरै न एक मदा ही॥८८

दोहा

ढाकै अपने शुभ गुणा, ढाके परके दोष।
गावै गुण परजीवके, रहै सदा निरदोष॥८९
जो कदाचि दूषण लगै, मन वच काय करेय।
तौ गुरु पैं परकाशिकै, ताकौ दंड जु लेय॥९०
जप तप व्रत दानादि कर, दूषण सर्व हरेय।
करै जु निंदा आपकी, परनिंदा न करेय॥९१
जे परकासै पारके, औगुन तेहि अयान।
जे परकासैं आपके, औगुण ते हि सयान॥९२
जे गावै गुन आपने, ते मिथ्याती जानि।
जे गावैं गुन गुरुनिके, ते समदृष्टी जानि॥९३
छट्ठो अंग कहो अवै, थिरकरणा गुणवान।
धर्मथकी विचलेनिकूं प्रतिवोधै मतिवान॥९४
थापैं धर्म मझार जो, करै धर्मकी पक्ष।
आप डिगै नहिं धर्मतैं, भावै भाव अलक्ष॥९५

थिरता गुण सम्यक्तकी, प्रगट बात है एक ।
चित्त अथिरता रूप जो, तौ मिथ्यात गिनेह ॥९६
सुनों सातमूं अंग अब, जिन मारगसों नेह ।
जिनधर्मीकूं देखि करि, बरसै आनंद मेह ॥९७
तुरत जात बछरानि परि, नेह धरै ज्यूं गाय ।
त्यूं यह साधर्मी उपरि, नेह करै अधिकाय ॥९८
जे ज्ञानी धरमातमा, मुनि श्रावक व्रतवंत ।
आर्या और सुश्राविका, चउविधि संघ महंत ॥९९
तथा अव्रती समकिती, जिनधर्मी जग माँहि ।
तिनसो राखै प्रीति जो, यामै संशय नाँहि ॥१८००
तन मन धन जिनधर्मं परि, जो नर वारै डारि ।
सो वात्सल्य जु अग है, भाख्यौ सूत्र विचारि ॥१
अष्टम अंग प्रभावना, कह्यौ सुनो धरि कान ।
जा विधि सिद्धान्तनि विषै, भाख्यौ श्रीभगवान ॥२
भाँति-भाँति करि भासई, जिनमारगको जो हि ।
करै प्रतिष्ठा जैनकी, अंग आठमो होहि ॥३
जिनमंदिर जिनतीरथा, जिनप्रतिमा जिनधर्म ।
जिनधर्मीं जिनसूँत्रकी, करै सेव विन भर्म ॥४
जो अति श्रद्धा करि करैं, जिनशासनकी सेव ।
बोलै प्रिय वाणी महा, ताहि प्रशंसै देव ॥५
जो दशलक्षण धर्मकी, महिमा करै सुजान ।
इन्द्रिनके सुखको गिनै, नरक निगोद निसान ॥६
कथनी करै न पारकी, पुनि-पुनि ध्यावै तत्त्व ।
भावै आतमभाव जो, त्यागै सर्व ममत्व ॥७
कहे अंग ये प्रथम ही, मूलगुणनिके माँहि ।
अब हू पड़िमा मै कहै, इन सम और जु नाँहि ॥८
बार-बार थुति जोग ये, सम्यकदरसन अंग ।
इनकों धारै सो सुधी, करै कर्मकौ भंग ॥९
अष्ट अगकौ धारिवौ, अष्ट मदनिकौ त्याग ।
षट अनायतन त्यागिवौ, अतीचार नँहि लाग ॥१०
ते भाषै गुरु पचविधि, वहुरि मूढ़ता तीन ।
तजिवौ सातो व्यसनकौ, भय सातौ नँहि कीन ॥११
ए सब पहले हू कहै, अब हू भाषे वीर ।
बार-बार सम्यक्त्व की, महिमा गावै धीर ॥१२
अग निशंकित आदि वहु, अठ गुण संवेगादि ।
अष्ट मदनिको त्याग पुनि, अर वसु मूलगुणादि ॥१३

सात व्यसनकौ त्यागिवौ, अर तजिवौ भय सात ।
तीन मूढता त्यागिवौ, तीन शल्य पुनि भ्रात ॥१४
षट अनायतन त्यागिवौ, अर पाँचो अतिचार ।
ए त्रेसठ त्यागै जु कोउ, सो समदृष्टी सार ॥१५
चौथे गुणठाणें तनी, कही बात ए भ्रात ।
है अव्रत परि जगत तें, विरकित रूप रहात ॥१६
नहिं चाहै अव्रत दशा, चाहे व्रत्त-विधान ।
मन मे मुनिव्रत की लगन, सो नर सम्यकवान ॥१७
जैसे पकरयो चोरकूं, दे तलवर दुख घोर ।
परवश बध बन्धन सहै, नही चोरकौ जोर ॥१८
त्यू हि अप्रत्याख्याननें, पकरयो सम्यकवन्त ।
परवश अव्रत मे रहै, चाहै व्रत्त महन्त ॥१९
चाहै चोर जु छूटिवाँ, यथा बन्धतें वीर ।
चाहै गृहतैं छूटिवाँ, त्यो सम्यक धर धीर ॥२०
सात प्रकृतिके त्यागतें, जेती थिरता जोय ।
तेती चौथे ठाणि है, इह जिन आज्ञा होय ॥२१

अथ ग्यारा व्रत वर्णन । दोहा

ग्यारा प्रकृति वियोगतै, होय पंचमो ठाण ।
तब पड़िमा धारैं सुधी, एकादश परिमाण ॥२२
तिनके नाम सुनो सुधी, जा विधि कहै जिनद ।
धारैं श्रावक धीर जे, तिन सम नाहि नरिद ॥२३
दरसन प्रतिमा प्रथम है, दूजी व्रत अधिकार ।
तोजी सामायिक महा, चौथी पोसह धार ॥२४
सचित्तत्याग है पचमी, छट्ठो दिन-तिय-त्याग ।
तथा रात्रि-अनसन व्रती, धारैं तपसो राग ॥२५
जानो पड़िमा सातवी, ब्रह्मचर्यव्रत धार ।
तजी नारि नागिन गिनें, तजै मोह जजार ॥२६
निरारंभ ह्वै अष्टमी, नवमी परिग्रह त्याग ।
लौकिक वचन न बोलिवौ, सो दशमी वड़भाग ॥२७
एकादशमी दोय विधि, क्षुल्लक ऐलि विवेक ।
है उदंडाहार द्वै, तिनमैं मुनिव्रत एक ॥२८
ऐलि महा उतकृष्ट हैं, ऐलि समान न कोय ।
मुनि आर्या अर ऐलि ए, लिंग तीन शुभ होय ॥२९
भाषी एकादश सवें, प्रतिमा नाम जु मात्र ।
अव इनकौ विस्तार सुनि, ए सव भव्य सुपात्र ॥३०

चौपाई

प्रथम हि दरशन प्रतिमा सुणो, आतमरूप अनूप जु मुणों ।
दरशन मोक्ष-बीज है सही, दरशन करि शिव परसन लही ।।३१
दरशन सहित मूलगुण धरै, सात व्यसन मन बच तन हरै ।
बिन अरहंत देव नहि कोय, गुरु निरग्रन्थ विना नहिं होय ।।३२
जीवदया बिन और न धर्म, इह निहचै करि टारै भर्म ।
संजम बिन तप होय न कदा, इह प्रतीति धारै बुध सदा ।।३३
पहली प्रतिमाकौ सो धनी, दरशनवन्त कुमति सब हनी ।
आठ मूल गुण व्यसन जु सात, भाषै प्रथम कथनमै भ्रात ।।३४
तातैं कथन कियौ अब नाहिं, श्रावक वहु आरम्भ तजाहिं ।
है स्वारथमैं सांचौ सदा, कूट कपट धारै नहिं कदा ।।३५
धरै शुद्ध व्यवहार सुधीर, परपीड़ाहर है जगवीर ।
सम्यक् दरशन दृढ करि धरै, पापकर्मकी परणति हरै ।।३६
क्रय विक्रयमैं कसर न कोय, लेन देनमैं कपट न होय ।
कियौ करार न लोपै जोहि, सा पहिली पड़िमा गुण होहि ।।३७
जाके उर कालिम नहिं रच, जाके घटमै नाहिं प्रपच ।
जिनपूजा जप तप व्रत दान, धर्मध्यान धारे हि सुजान ।।३८
गुण इकतीस प्रथम जे कहै, ते पहली पड़िमामैं लहै ।
अब सुनि दूजी पड़िमाधार, द्वादश व्रत पालै अविकार ।।३९
पंच अणुव्रत गुणव्रत तीन, शिक्षाव्रत धारै परवीन ।
निरतीचार महामतिवान, जिनकौ पहली कियौ बखान ।।४०
अब तीजी पड़िमा सुनि संत, सामायिक धारी गुणवन्त ।
मुनिसम सामायिककी वार, थिरताभाव अतुल्य अपार ।।४१
करि तनकौ मनतैं परित्याग, भव भोगिनतैं होइ विराग ।
धरि कायोत्सर्ग वर वीर, अथवा पदमासन धरि धीर ।।४२
षट षट घटिका तीनूं काल, ध्यावै केवलरूप विशाल ।
सब जीवनिसूं समता भाव, पंच परम पद सेवै पाव ।।४३
सो सब वर्णन पहली कियौ, बारा वरत कथनमैं लियौ ।
चौथी प्रतिमा पोसह जानि, पोसहमै थिरता परवानि ।।४४
सो पोसहकौ सर्व सरूप, आगे गायौ अब न प्ररूप ।
पोसा समये साधु समान, होवै चौथी प्रतिमावान ।।४५
दूजी पड़िमा धारक जेहि, सामायिक पोसह विधि तेहि ।
धारै परि इनकी सम नाहिं, नहिं ऐसी थिरता तिन माहिं ।।४६
तीजी सामायिक निरदोष, चौथी पडिमा पोसह पोष ।
पंचम पड़िमा धरि बड़भाग, करै सचित्त वस्तुनिकी त्याग ।।४७

काचौ जल अर कोरो धान, दल फल फूल तजै बुधिवान ।
छाल मूल कन्दादि न चखै, कूंपल बीज अकूर न भखै ॥४८
हरितकायको त्यागी होय, जीवदयाको पालक सोय ।
सूको फल फोड्या बिन नांहि, लेवौ जोगि न ग्रन्थनि मांहि ॥४९
लोन न ऊपरसे ले धीर, लोन हु सचित्त गिनै वर वीर ।
माटी हाथ धोयवे काज, लेय अचित्त दयाके काज ॥५०
खार तथा माटी जो जली, सोई लेय न काची डली ।
पृथ्वीकाय विराधै नांहि, जीव असख कहै ता माहि ॥५१
जलकायाकी पालै दया, सर्व जीवको भाई भया ।
अगनिकायसो नांहि बिरोध, दयावन्त पावै निज बोध ॥५२
पवन करै न करावे सोय, षट कायाको पीहर होय ।
नांहि वनस्पति करै विराघ, जिनशासनकी धरै अगाध ॥५३
विकलत्रय अर नर तिर्यंच, सबको मित्र रहित परपच ।
जो सचित्तको त्यागी होय, दयावान कहिये नर सोय ॥५४
आप भखै नहि सचित्त कदेय, भोजन सचित्त न औरहिं देय ।
जिह सचित्तको कीयौ त्याग, जीती जीभ तज्यौ रस-राग ॥५५
दयाधर्म धारयौ तिह धीर, पाल्यौ जैन वचन गम्भीर ।
अब सुनि छट्ठी प्रतिमा सन्त, जा विधि भाषी वीर महन्त ॥५६
द्वै मुहूर्त जब बाकी रहै, दिवस तहाते अनशन गहै ।
द्वै मुहूर्त जब चढिहै भान, तो लग अनशनरूप बखान ॥५७
दिनमे शील धरै जो कोय, सो छट्ठी प्रतिमाधर होय ।
खान पान नहिं रैनि मझार, दिवस नारिको है परिहार ॥५८
पूछै प्रश्न यहाँ भवि लोग, निशिभोजन अर दिनको भोग ।
ज्ञानी जीव न कोई करै, छट्ठो कहा विशेष जु धरै ॥५९
ताकौ उत्तर धारौ एह, औरनिको व्रत न्यून गिनेह ।
मन वच तन कृत कारित त्याग, करै न अनुमोदन वडभाग ॥६०
तब त्यागी कहिते श्रुति माहि, या माही कछु सशय नांहि ।
गमनागमन सकल आरम्भ, तजै रैनिमे नांहि अचभ ॥६१
महाधीर वर वीर विशाल, दिनको ब्रह्मचर्य प्रतिपाल ।
निरतीचार विचार विशेष, त्यागै पापारम्भ अशेष ॥६२
जैनी जिनदासनि को दास, जिनशासनको करे प्रकाश ।
जो निशिभोजन त्यागी होय, छ मासा उपवासी सोय ॥६३
वर्ष एकमे इहै विचार, जावो जीव लगै विस्तार ।
ह्वै उपवासनिको सुनि वीर, ताते निशिभोजन तजि धीर ॥६४
जो निशिको त्यागै आरम्भ, दिनहू जाके अलपारम्भ ।
अब सुनि सप्तम पड़िमा धनी, नारिनकू नागिन सम गिनी ॥६५

धार्‌यौ ब्रह्मचर्य व्रत शुद्ध, जिनमारगमै भयो प्रबुद्ध।
निशि वासर नारीको त्याग, तज्यौ सकल जाने अनुराग ॥६६
मन वच काय तजी सब नारि, कृत कारित अनुमोद विचारि।
योनिरध्र नारीको महा, दुरगति-द्वार इहै उर लहा ॥६७
इन्द्राणी चक्राणी देखि, निंद्य वस्तु सम गिनै विशेष।
विषय-वासनामे नहिं राग, जाने भोग जु काले नाग ॥६८
विषय-मगनता अति हि मलीन, विषयी जगमे दीखै दीन।
विषय समान न बैरी कोय, जीवनिकू भरमावै सोय ॥६९
शील समान न सार न कोय, भवसागर तारक है सोय।
अब सुनि अष्टम पड़िमा भेद, सर्वारम्भ तजै निरखेद ॥७०
आप करै नहिं कछु आरम्भ, तजै लोभ छल त्यागै दभ।
करवावै न करै अनुमोद, साधुनिको लखि धरै प्रमोद ॥७१
मन वच काय शुद्ध करि संत, जग धधा धारै न महंत।
जीव घाततै कांप्यौ जोहि, सो अष्टम पड़िमाधर होहि ॥७२
असि मसि कृषि वाणिज इत्यादि, तजै जगत कारज गति वादि।
जाय पराये जीमै सोइ, गृह आरम्भ कछू नहिं होइ ॥७३
कहि करवावै नाही वीर, सहज मिलै तो जीमे धीर।
ले जावै कुल किरियावन्त, ताके भोजन ले बुधिवन्त ॥७४
जगत काज तजि आतम काज, करै सदा ध्यावै जिनराज।
दया नही आरम्भ मँझार, करि आरम्भ भ्रमै संसार ॥७५
तातै तजै गृहस्थारभ, जीवदयाकौ रोप्यौ थंभ।
करि कुटुम्बकौ त्याग सुजान, हिंसारम्भ तजै मतिवान ॥७६
दया समान न जगमे कोइ, दया हेत त्यागै जग सोइ।
अव नवमी प्रतिमा कौ रूप, धारौ भवि तजि जगत विरूप ॥७७
नवमी पड़िमा धारक धीर, तजै परिग्रहको वर वीर।
अन्तरगके त्यागै संग, रागादिकको नाहिं प्रसग ॥७८
वाहिरके परिग्रह घर आदि, त्यागै सर्व धातु रतनादि।
वस्त्र मात्र राखै वुधिवन्त, कनकादिक भीटे न महत ॥७९
वस्त्र हु वहु मोले नहिं गहै, अलप वस्त्र ले आनन्द लहै।
परिग्रहको जानै दु:खरूप, इह परिग्रह है पापस्वरूप ॥८०
जहा परिग्रह लोभ तहा हि, या करि दया सत्य विनशाहि।
हिंसारम्भ उपावै एह, या सम और न शत्रु गिनेह ॥८१
तजे परिग्रह सो हि सुजान, तृष्णा त्याग करै वुधिवान।
जाकी चाह गई सो सुखी, चाह करै तें दीखैं दुखी ॥८२
वाहिज ग्रन्थ-रहित जग माहि, दारिद्री मानव शक नाहिं।
ते नहिं परिग्रह-त्यागी कहैं, चाह करंते अति दुख लहैं ॥८३

जे अभ्यन्तर त्यागैं संग, मूर्च्छा रहित लहै निजरंग ।
परिग्रहत्यागी है राम, वाछा-रहित सदा सुखधाम ॥८४
ज्ञानी विन भीतरको संग, और न त्यागि सके दुख अग ।
राग-द्वेष मिथ्यात्त विभाव, ए भीतरके संग कहाव ॥८५
तजि भीतरके बाहिर तजै, सो बुध नवमी पडिमा भजै ।
वस्त्र मात्र है परिग्रह जहां, धातुमात्रको लेश न तहा ॥८६
नर्म पूजणी धारै धीर, षट कायनिकी टारै पीर ।
जल-भाजन राखे शुचि-काज, त्यागै धन धान्यादि समाज ॥८७
काठ तथा माटीको जोय, और पात्र राखै नहिं कोय ।
जाय बुलायो जीमें जोय, श्रावकके घर भोजन होय ॥८८
दशमी प्रतिमा-धर बडभाग, लौकिक वचनथको नहिं राग ।
विना जैनवानी कछु बोल, जो नहिं बोलै चित्त अडोल ॥८९
जगत काज सब ही दुखरूप, पापमूल परपच स्वरूप ।
ताते लौकिक वचन न कहै, जिनमारगकी सरधा गहै ॥९०
मौन गहै जगसेती सोय, सो दशमी पडिमाधर होय ।
श्रुति अनुसार धर्मकी कथा, करै जिनेश्वर भाषी यथा ॥९१
जगतकाजको नहिं उपदेश, ध्यावै धीरज धारि जिनेश ।
बोलै अमृत वानी वीर, षट कायनिकी टारै पीर ॥९२
तजै शुभाशुभ जगके काम, भयो कामना-रहित अकाम ।
जे नर करे शुभाशुभ काज, ते नहिं लहै देश जिनराज ॥९३
राग-द्वेष कलहके धाम, दीसैं सकल जगतके काम ।
जगतरीतिमे जे नर बसा, सो नहिं पावै उत्तम दसा ॥९४
दशमी पडिमा धारक सन्त, ज्ञानी ध्यानी अति मतिवन्त ।
गिने रतन-पाहन सम जेह, तृण-कचन सम जाने तेह ॥९५
शत्रु-मित्र सम राजा-रक, तुल्य गिने मनमे नहिं सक ।
बांधव-पुत्र कुटुम्ब धनादि, तिनकू भूलि गये गनि वादि ॥९६
जाने सकल जीव समरूप, गई विषमता भागि विरूप ।
पर घर भोजन करे सुजान, श्रावककुल जो किरियावान ॥९७
अल्प अहार तहा लें धीर, नहिं चिन्ता धारे वर वीर ।
कोमल पीछी कमडल एक, बिना धातुकी परम विवेक ॥९८
इक कोपिन कणगती लया, छह हस्ता इक वस्त्र हु भया ।
इक तह एक पाटकौ जोय, यही रीति दशमीकी होय ॥९९
जिन शासनको है अभ्यास, आगम अध्यातम अभ्यास ।
अब सुनि एकादशमी धार, सबमे उत्तकृष्टे निरधार ॥१००
वनवासी निरदोष अहार, कृत कारित अनुमोदन कार ।
मन वच काय शुद्ध अविकार, सो एकादश पड़िमा धार ॥१

ताके दोय भेद हैं भया, क्षुल्लक ऐलिक श्रावक लया ।
क्षुल्लक खण्डित्त कपड़ा धरै, अरु कमण्डल पीछी आदरै ॥२
इक कोपीन कणगतो गहै, और कछू नहिं परिग्रह चहै ।
जिनशासनकौ दासा होय, क्षुल्लक ब्रह्मचारि है सोय ॥३
ऐलि धरे कोपीन हि मात्र, अर इक शौचतनूं है पात्र ।
कोमल पीछी दया निमित्त, जिनवानीकौ पाठ पवित्त ॥४
पंच घरनिमें एक घरेहि, भोजन मुनिकी भाँति करेहि ।
ये है चिदानन्दमैं लीन, धर्मध्यानके पात्र प्रवीन ॥५
क्षुल्लक जीमै पात्र मँझार, ऐलि करै करपात्र अहार ।
मुनिवर ऊभा लेय अहार, ऐलि अर्यिका बैठा सार ॥६
क्षुल्लक कतरावै निज केश, ऐलि करे शिरलोच अशेष ।
पहली पडिमा आदि जु लेय, क्षुल्लकलो व्रत सवकूं देय ॥७
श्रीगुरु तीन वर्ण विन कदे, नहिं मुनि ऐलितने व्रत दे ।
पहलीसौं छट्‌ठीलो जेहि, जघन्य श्रावक जानो तेहि ॥८
सप्तमि अष्टमि नवमी धार, मध्य सरावक है अविकार ।
दशमी एकादशमीवन्त, उतकृष्टे भाषे भगवन्त ॥९
तिनहूमे ऐलि जु निरधार, ऐलिथकी मुनि वड़े विचार ।
मुनिगणमें गणधर हैं वड़े, ते जिनवरके सनमुख खड़े ॥१०
जिनपति शुद्धरूप हैं भया, सिद्ध परें नहिं दूजौ लया ।
सिद्ध मनुज विन और न होय, चहुगतिमे नहिं नर सम कोय ॥११
नरमे सम्यकदृष्टी नरा, तिनतें वर श्रावक व्रत धरा ।
षोडश स्वर्गलोकलों जाहिं, अनुक्रम मोक्षपुरी पहुंचाहिं ॥१२
पंचमठाणें ग्यारा भेद, धारे तेहि करे अघछेद ।
इह श्रावककी रीति जु कही, निकट भव्य जीवनिनें गही ॥१३
ऊपरि ऊपरि चढ़ते भाव, विरकतभाव अधिक ठहराव ।
नीव होय मन्दिरके यथा, सर्व व्रतनिके सम्यक तथा ॥१४

अथ दान वर्णन । दोहा

प्रतिमा ग्याराकौ कथन, जिन आज्ञा परवान ।
परिपूरण कीनूं भया, अब सुनि दान बखान ॥१५
कियौ दान वरणन प्रथम, अतिथिविभाग के माहिं ।
अबहू दान प्रबन्ध कछु, कहिहौं दूषण नाहिं ॥१६

मनोहर छन्द

ए मूढ अचेतो कछु इक चेतौ, आखिर जगमैं मरना है ।
धन रह ही इहां ही संग न जाही, तातैं दान सु करना है ॥१७

विन दान न सिद्धी ह्वै अघवृद्धी, दुरगति दुख अनुसरना है।
करपणता धारी शठमत्ति भारी, तिनहिं न सुभ गति वरना है ॥१८
यामै नहिं संसा नृप श्रेयंसा, कियउ दान दुख हरना है।
सो ऋषभ प्रतापे त्याग त्रितापे, पायौ धाम अमरना है ॥१९
श्रीषेण सुराजा दान प्रभावा, गहि जिनशासन सरना है।
लहि सुख बहु भांती ह्वै जिन शांती, पायो वर्ण अवर्णा है ॥२०
इक अकृतपुण्या कियउ सुपुण्या, लहिउ तुरत जिय मरना है।
ह्वै धन्यकुमारा चारित्त धारा, सरवारथ सिधि धरना है ॥२१
सूकर अर नाहर नकुल रु वानरु, नमि चारन मुनि चरना है।
करि दान प्रशंसा लहि शुभ वंशा, हरै जनम जर मरना है ॥२२

दोहा

वज्रजंघ अर श्रीमती, दानतने परभाव।
नर सुर सुख लहि उत्तमा, भये जगत की नाव ॥२३
वज्रजंघ आदीश्वरा, भए जगतके ईश।
भये दानपति श्रीमती, कुल कर माहिं अधीश ॥२४
अन्नदान मुनिराजको, देत हुते श्रीराम।
करि अनुमोदन गीध इक, पंछी अति अभिराम ॥२५
भयौ धर्मथी अणुव्रती, कियौ रामकौ संग।
राममुखे जिन नाम सुनि, लह्यो स्वर्ग अतिरंग ॥२६
अनुक्रम पहुँचैगौ भया, राम सुरग वह जीव।
धारैगौ निजभाव सहु, तजिकै भाव अजीव ॥२७
दानकारका अमित ही, सीझे भवथी भ्रात।
बहुरि दान अनुमोदका, को लग नाम गिनात ॥२८
पात्रदान सम दान अर, करुणादान बखान।
सकल दान है अन्तिमो, जिन आज्ञा वरवान ॥२९
आपथकी गुण अधिक जो, ताहि चतुरविधि दान।
देवौ है अति भक्ति करि, पात्रदान सो जान ॥३०
जो पुनि सम गुन आपतैं, ताको दैनो दान।
सो समदान कहै बुधा, करिकै बहु सनमान ॥३१
दुखी देखि करुणा करै, देवै विविध प्रकार।
सो हैं करुणादान शुभ, भाषै मुनिगणधार ॥३२
सकल त्यागि ऋषिव्रत धरै, अथवा अनशन लेइ।
सो है सकल प्रदानवर, जाकरि भव उतरेइ ॥३३
दान अनेक प्रकारके, तिनमै मुखिया चार।
भोजन औषधि शास्त्र अर, अभयदान अविकार ॥३४

तिनकौ वर्णन प्रथम ही, अतिथि विभाग मंझार।
कियौ अबै पुनरुक्तके, कारण नहि विसतार ॥३५

सप्तक्षेत्र अर्णन

जो करवावै जिनभवन, धन खरचै अधिकाय।
सो सुर नर सुख पायकै, लहै धाम जिनराय ॥३६
जो करवावै विधिथकी, जिनप्रतिमा बुधिवन्त।
मन्दिरमै पधरावई, सो सुख लहै अनन्त ॥३७
यव-समान जिनराजकी, प्रतिमा जो पधराय।
किंदूरीसम देहुरो, सोहू धन्य कहाय ॥३८
शिखर बंध करवावई, जिन चैत्यालय कोय।
प्रतिमा उच्च करावई, पावै, शिवपुर सोइ ॥३९
जल चंदन अक्षत पहुप, अर नैवेद्य सुदीप।
धूप फलनि जिन पूजई, सो ह्वै जग अवनीप ॥४०
जो देवल करि विधिथकी, करै प्रतिष्ठा धीर।
सुर नर पतिके भोग लहि, सो उतरै भवतीर ॥४१
जो जिन तीरथको महा, यात्रा करै सुजान।
सफल जनम ताही तनों, भाषैं पुरुष प्रधान ॥४२
चउ अनुयोगमई महा, द्वादशांग अविकार।
सो जिनवाणी है भया, करै जगतथी पार ॥४३
ताके पुस्तक बोधकर, लिखै लिखावै शुद्ध।
धन खरचै या वस्तु मे, सो होवै प्रतिबुद्ध ॥४४
ग्रन्थनिकूं पूठे करै, करवावै धरि चित्त।
भले भले वस्त्रनि विषै, राखै महा पवित्त ॥४५
जीरणि ग्रन्थनिके महा, जतन करै बुधिवान।
ज्ञानदान देवै सदा, सो पावै निरवान ॥४६
जीरण जिनमदिरतणी, मरमत जो मतिवान।
करवावै अति भक्ति सो, सो सुख लहै निदान ॥४३
शिखर चढ़ावै देहुरा, धन खरचै या भाति।
कलश धरै जिनमंदिरां, पावै पूरण शांति ॥४८
छत्र चमर घटादिका, वहु उपकरणां कोय।
पधरावै चेत्यालये, पावै शिवपुर सोय ॥४९
टीप करावै द्रव्य दे, धवलावै जिनगेह।
धुजा चढावै देवलो, पावै धाम विदेह ॥५०

जो जिनमंदिर कारने, धरती देय सु वीर।
सो पावै अष्टम धरा, मोक्ष काम गभीर ॥५१
चउविधि संघनिकी भया, मन वच तनकरि भक्ति।
करै हरै पीरा सबै, सो पावै निजशक्ति ॥५२
सप्त क्षेत्र ये धर्मके, कहे जिनागमरूप।
इनमै धन खरचे बुधा, पावै वित्त अनूप ॥५३

अथ वचनिका

प्रतिमा करावै, देवल करावै, पूजा तथा प्रतिष्ठा करै, जिन तीरथकी यात्रा करै शास्त्र लिखावै, चउविधि सघकी भक्ति करै ए सप्त क्षेत्र जानि। यहा कोई प्रश्न करै, प्रतिमाजी अचेतन छै, निग्रह अनुग्रह करवा समर्थ नाही, सो प्रतिमाका सेवनथकी स्वर्गमुक्ति फलप्राप्ति किसी भाँति होय ? ताका समाधान। प्रतिमाजी शात स्वरूपने धार्या छै ध्यानकी रीतिने दिखावे छै। दृढ आसन, नासाग्र दृष्टी, नगन, निराभरण, निर्विकार जिसौ भगवानकौ साक्षात् स्वरूप छै तिस्यौ प्रतिमाजीने देख्या यादि आवै छै। परिणाम ऐते निर्मल होइ छै। अर श्रीप्रतिमाजीने सागोपाग अपना चितमै ध्यावै तो वीतराग भावने पावै। यथा स्त्रीको मूरति चित्रामकी, पाषाणकी काष्ठादिककी देखि विकारभाव उपजै छै, तथा वीतरागकी प्रतिमाका दर्शनथकी ध्यानथकी निर्विकार चित्त होइ छै। अर आन देवकी मूरति रागी द्वेषी छै। उन्मादने धारै छै। सो वाका दरशन ध्यान करि राग द्वेष उन्माद बढै छै। तीसौ आराधवा जोग्य, दरसन जोग्य, ध्यान जोग्य जिनप्रतिमा ही छै। जीवाने भुक्ति, मुक्तिदाता छै। यथा कलपवृक्ष, चिंतामणि औषधि मन्त्रादिक सर्व अचेतन छै, पणि फलदाता छै, तथा भगवतकी प्रतिमा अचेतन छै, परन्तु फलदाता छै। ज्ञानी तो एक शातभावका अभिलाषी छै। सो शातभावने जिनप्रतिमा मूर्तवन्त दिखावै छै। तीसू ज्ञानी जनांने सदा वन्दिवा ध्यावा जोग्य छे। अर जगतका प्राणी संसारीक भोग चावै छै। सो जिनप्रतिमाका पूजनथकी सर्व प्राप्ति होय छै। ऐसो जानि, हित मानि, सशय भानि जिनप्रतिमाकी सेवा जोग्य छै।

कवित्त

श्रीजिनदेवतनी अरचा अर साधु दिगम्बरकी अतिसेव।
श्रीजिनसूत्र सुनै गुरु सन्मुख, त्यागै कुगुरु कुधर्म कुदेव ॥५४
धारै दान शील तप उत्तम, ध्यावै आतमभाव अछेव।
सो सब जीव लखै आपन सम, जाके सहज दयाकी टेव ॥५५
दानतनी विधि है जु अनन्त, सबै महिं मुख्य किमिच्छक दाना।
ताके अर्थ सुनू मनवाछित, दान करै भवि सूत्र प्रवाना ॥५६
तीरथकारक चक्र जु धारक, देहि सकें इह दान निधाना।
और सबै निज शक्ति प्रमाण, करै शुभ दान महा मतिवाना ॥५७

सोरठा

कोउ कुबुद्धी कूर, चितवै चितमे इह भया।
लहिहौ धन अतिपूर, तब करिहूँ दानहि विधी ॥५८

अब तो धन कछु नाहि, पास हमारे दानको ।
किस विधि दान कराहि, इन मनमे धरि कृपण ह्वै ।।५९
यो न विचारै मूढ, शक्ति प्रमाणे त्याग है ।
होय धर्म आरूढ, करे दान जिनवैन सुनि ।।६०
कछु हू नाहि जुरै जु, तौहू रोटी एक ही ।
ज्ञानी दान करै जु, दान विना घृग जनम है ।।६१
रोटी एक हु माहि, तोहू रोटी आध ही ।
जिनमारगके माहि, दान विना भोजन नही ।।६२
एक ग्रास ही मात्र, देवै अतिहि अशक्त जो ।
अर्ध ग्रासही मात्र, देवै, परि नहि कृपण ह्वै ।।६३
गेह मसान समान, भापै किरपणको श्रुति ।
मृतक समान वखान, जीवत ही कृपणा नरा ।।६४
जानौ गृद्ध समान, ताके सुत दारादिका ।
जो नहि करै सुदान, ताकौ धन आमिप समा ।।६५
जैसे आमिष खाय, गिरध मसाणा मृतककौ ।
तैसे धन विनशाहि, कृपणतनो सुत-दारका ।।६६
सबकों देनौ दान, नाकारी नहि कोइसू ।
करुणाभाव प्रधान, सब ही आतमराम हैं ।।६७
सब ही प्राणिनकों जु, अन्न वस्त्र जल औषधी ।
सूखे तृण विधिसो जु, देने तिरजंचानिको ।।६८
गुनी देखि अति भक्ति, भावथकी देनौ महा ।
दान भुक्ति अरु मुक्ति, कारण मूल कहैं गुरु ।।६९
पर परिणतिकौ त्याग, ता सम आन न दान कोउ ।
देहादिकको राग, त्यागे ते दाता वड़े ।।७०
कह्यौ दान परभाव, अब सुनि जलगालण विधी ।
छांडौ मुगध स्वभाव, जलगालण विधि आदरौ ।।७१

जलगालण विधि । अडिल्ल छन्द

अव जल गालन रीति सुनौ वुध कान दे,
जीव असखिनिको हि प्राणको दान दे ।
जो जल वरतै छांणि सोहि किरिया धनी,
जलगालणकी रीति धर्ममे मुख भनो ।।७२
नूतन गाढ़ो वस्त्र गुड़ी विनु जो भया,
ताकौ गलनो करै चित्त धरिके दया ।
डेढ हाथ लम्बो जु हाथ चौरो गहै,
ताहि दुपड़तो करै छांणि जल सुख लहै ।।७३

वस्त्र पुरानो अवर रंगको नांतिनां,
राखै तिनतै ज्ञानवन्तकी पीति ना ।
छाणन एक हु बूद महीपरि जो परै,
भाषै श्रीगुरुदेव जीव अगणित मरै ॥७४

बरतै मूरख लोग अगाल्यौ नीर जे, तिनको केतौ पाप सुनो नर धीर जे ।
असी बरसलो पाप करै धीवर महा, अवर पारधी मोल वागुरादिक लहा ॥७५
तेतो पाप लहै जु एक ही वार जे, अणछाण्यू बरते हि वारि तनधार जे ।
ऐसौ जांनि कदापि अगाल्यौ तोय जी, बरतौ मति ता मांहि महा अघहोय जी ॥७६
मकरीके मुखथकी तन्तु निकसैं जिसौ, अति सूक्षम जो वीर नीर कृमि है तिसौ ।
तामे जीव असखि उडै ह्वै भ्रमर ही जम्बूद्वीप न भाय जिनेश्वर यो कही ॥७७
शुद्ध नातणे छाणि पान जलको करै, छाण्या जलथी धोय नांतणो जो धरै ।
जतनथकी मतिवन्त जिवाण्यू जलविषै, पहुँचावै सो धन्य श्रुतविषै यू लिखे ॥७८
जा निर्वाणको होय नीर ताही महै, पधरावैं बुधिवान परम गुरु यो कहे ।
ओछै कपडे तीर गालही जे नरा, पावैं ओछी योनि कहे मुनि श्रुतधरा ॥७९
जलगालन सम किरिया और नाही कही, जलगालणमे निपुण सोहि श्रावक सही ।
चउथी पडिमा लगे लेई काचौ जला, आगे काचौ नाहि प्रासुको निर्मला ॥८०
जाण्यू काचौ नीर इकेन्द्रो जानिये, द्वै घटिका त्रसजीव रहित सो मानिये ।
प्रासुक मिरच लवग कपूरादिक मिला, बहुरि कसेला आदि वस्तुते जो मिला ॥८१
सो लेनो दोय पहर पहली ही जैनमे, आगे त्रस निपजन्त कह्यौ जिनवैनमे ।
तातौ भात उकालि वारि वसु पहर ही, आगे जंगम जीवहु उपजै सहज ही ॥८२

चौपाई

जे नर जिन आज्ञा नहिं जानै, चित्तमें आवै सो ही ठानै ।
भात उकाल करैं नहिं पानी, कछू इक उष्ण करै मनमानी ॥८३
ताहि जु वरतैं अष्टहि पहरा, ते व्रत वर्जित अर श्रुति वहरा ।
मरजादा माफिक नहिं सोई, ऐसे वरतो भवि मत्ति कोई ॥८४
जो जन जैनधर्म प्रतिपाला, ता घरि जलकी है इह चाला ।
काचौ प्राशुक तातौ नीरा, मरजादामे वरतै वीरा ॥८५
प्रथमहि श्रावकको आचारा, जलगालण विधि है निरधारा ।
जे अणछाण्यो पीवैं पाणी, ते धीवर वागुर सम जाणी ॥८६
बिन गाल्यो औरै नहिं प्याजे, अभख न खाजे और न स्वाजै ।
तजि आलस अर सब परमादा, गालै जल चित धरि अहलादा ॥८७
जलगालण नहिं चित करै जो, जल छाननमै चित धरै जो ।
अणछाण्याकी बूंद हु धरती, नाखै नही कदाचित वरती ॥८८
बून्द परै तौ ले प्रायश्चित्ता, जाके घटमै दया पवित्ता ।
जलगालणकी विधि भाई, गुरु आज्ञा अनुसार वताई ॥८९

निशि-भोजनका दोष । दोहा

अब सुनि रात्रि अहारका, दोष महा दुखदाय ।
द्वै मुहुरत दिन जब रहै, तबतैं त्याग कराय ॥९०
दिवस मुहूरत द्वै चढै, तबलों अनसन होय ।
निशि अहार परिहार सो, व्रत न दूजौ कोय ॥९१
निशिभोजनके त्यागतैं, पावै उत्तम लोक ।
सुर नर विद्या धरनके, लहै महासुख थोक ॥९२
जे निशि भोजन कारका, तेहि निशाचर जानि ।
पावै नित्य निगोदके, जनम महा दुखखानि ॥९३
निशि वासरकौ भेद नहिं, खात तृप्ति नहिं होय ।
सो काहेके मानवा, पशुहूंतें अधिकोय ॥९४
नाम निशाचर चारकौ, चोर समाना ते हि ।
चरैं निशाकों पापिया, हरैं धर्ममति जे हि ॥९५
बहुरि निशाचर नाम है, राक्षसकौ श्रुतिमांहि ।
राक्षस सम जो नर कुधी, रात्रि अहार कराहिं ॥९६
दिन भोजन तजि रैनिमैं, भोजन करै विमूढ़ ।
ते उलूक सम जानिये, महापाप आरूढ़ ॥९७
मांस अहारी सारिखे, निशिभोजी मतिहीन ।
जनम जनम या पापतें, लहैं कुगति दुखदीन ॥९८

नाराच छन्द

उलूक काक औ बिलाव श्वान गर्दभादिका,
गहैं कुजन्म पापिया जु ग्राम शूकरादिका ।
कुछारछोवि १ मांहि कीट होय रात्रिभोजका,
तजैं निशा अहारको विमुक्ति पंथ खोजका ॥९९
निशा महैं करैं अहार ते हि मूढ़धी नरा,
लहैं अनेक दोषकू सुधर्महीन पामरा ।
जु कीट माछरादिका भखैं अहार मांहि ते,
महा अधर्म धारिकैं जु नर्क मांहि जाहि ते ॥२०००॥

छन्द चाल

निशिमाहीं भोजन करही, ते पिंडु अभखते भरही ।
भोजनमैं कीड़ा खाये, तातैं बुधि मूल नशाये ॥१
जो जूंका उदरैं जाये, तो रोग जलोदर पाये ।
मांखी भोजनमैं आवै, ततखिन सो वमन उपावै ॥२
मकरी आवै भोजनमैं, तो कुष्ट रोग होय तनमें ।
कंटक अरु काठजु खंडा, फनि है जा गले प्रचंडा ॥३

तौ कंठविथा विस्तारे, इत्यादिक दोष निहारै।
भोजनमै आवै बाला, सुर भग होय ततकाला ॥४
निशिभोजन करके जीवा, पावैं दुख कष्ट सदीवा।
होवैं अति ही जु विरूपा, मनुजा अति विकल कुरूपा ॥५
अति रोगी आयुस थोरा, ह्वै भागहीन निरजोरा।
आदर-रहिता सुख-रहिता, अति ऊँच-नीचता सहिता ॥६
इक बात सुनो मन लाई, हथनापुर पुर है भाई।
तामै इक हूतौ विप्रा, मिथ्यामत धारक लिप्रा ॥७
रुद्रदत्त नाम है जाकौ, हिंसामारग मत ताकौ।
सो रात्रि-अहारी मूढा, कुगुरुनिके मत आरूढ़ा ॥८
इक निशिको भोदू भाई, रोटीमै चीटी खाई।
बैगनमै मीडक खायौ, उत्तम कुल तिहं विनशायौ ॥९
कालान्तर तजि निज प्राणा, सो घूघू भयौ अयाणा।
पुनि मरि करि गयौ जु नर्का, पायौ अति दुख सम्पर्का ॥१०
नीसरि नरकजुतै कागा, वह भयौ पाप-पथ लागा।
बहुरे नर्कजुके कष्टा, पायौ ताने जु सपष्टा ॥११
पुनि भयौ विडाल सु पापी, जीवनिकूं अति संतापी।
सो गयौ नर्कमै दुष्टा, हिंसा करिके वो पुष्टा ॥१२
तहांतैं जु भयौ वह गृद्धा, पुनि गयौ नर्क अघवृद्धा।
नर्कजुतैं नीसरि पापी, हूवौ पसु पाप-प्रतापी ॥१३
वहुरे जु गयौ शठ कुगती, घोर जु नर्के अति विमती।
नीसरिकैं तिरजच हूवौ, वहु पाप करी पशु मूवौ ॥१४
पुनि गयौ नर्कमे कुमती, नारकतैं अजगर अमती।
अजगरतै वहुरी नर्का, पायौ अति दुख सम्पर्का ॥१५
नर्कजुतै भयौ वघेरा, तहा किये पाप वहुतेरा।
बहुरे नारकगति पाई, तहातै गोधा पशु जाई ॥१६
गोधातैं नर्क निवासा, नारकतै मच्छ विभासा।
सो मच्छ नरकमै जायौ, नारकमैं वहु दुख पायौ ॥१७
नारकते नीसरि सोई, वहुरी द्विजकुलमे होई।
लोमस प्रोहितको पुत्रा, सो धर्मकर्मके शत्रा ॥१८
जो महीदत्त है नामा, सातो विसनजुसो कामा।
नग्रजुतैं लह्यौ निकासा, मामाके गयौ निरासा ॥१९
मामे हू राख्यौ नाही, तव काशीके वनमाही।
मुनिवर भेटे निरग्रन्था, जे देहि मुकतिको पन्था ॥२०
ज्ञानी ध्यानी निजरत्ता, भव-भोग-शरीर-विरत्ता।
जानै जनमान्तर वातें, जिनके जियमे नहिं घातें ॥२१

तिनको लखि द्विज शिर नायौ, सब पापकर्म विनशायौ ।
पूछी जनमान्तर बातां, जा विधि पाई बहु घातां ॥२२
सो मुनिने सारी भाखी, कछु बात चीच नहिं राखी ।
निशिभोजन सम नहिं पापा, जाकरि पायौ दुखतापा ॥२३
सुनि करि मुनिवरके बैना, ब्राह्मण धार्यो मत जैना ।
सम्यक्त अणुव्रत धारी, श्रावक हूवौ अविकारी ॥२४

दोहा

मात पिता अति हित कियौ, दियौ भूप अति मान ।
पुण्य उदय लक्षमी अतुल, पाप किये बहु हान ॥२५

चौपाई

पूजा करै जपै अरहन्त, महीदत्त हूवौ अतिसन्त ।
जिनमन्दिर जिनबिम्ब रचाय, करी प्रतिष्ठा पुण्य उपाय ॥२६
सिद्धक्षेत्र वन्दै अधिकाय, जिनसिद्धात सुनै अधिकाय ।
केतौ काल गयौ इह भांति, समय पाय धारी उपशाति ॥२७
शुभ भावनिते छांडै प्रान, पायो षोडश स्वर्ग विमान ।
ऋद्धि महा अणिमादिक लई, आयु बीस द्वै सागर भई ॥२८
चयौ स्वर्ग थी सो परवीन, राजपुत्र हूवौ शुभ लीन ।
देश अवन्ती उत्तम बसै, नगर उजैणी अति ही लसै ॥२९
तहां नरपती पृथ्वीमल्ल, जिनधर्मी सम्यक्ति अचल्ल ।
प्रेमकारिणी रानी महा, ताके उदर जन्म सो लहा ॥३०
नाम सुधारस ताकौ भयौ, मात पिता अति आनन्द लयौ ।
अनुक्रम वर्ष सातको जबै, विद्या पढ़ने सोप्यौ तबै ॥३१
शस्त्र शस्त्रमे बहु परवीण, भयौ अणुव्रती समकित लीन ।
जोवनवंत भयौ सुकुमार, व्याह कियौ नहिं धर्म सम्हार ॥३२
एक दिवस वनक्रीड़ा गयौ, वडतरु विजुरीतै क्षय भयौ ।
ताको लखि उपनो वैराग, अनुप्रेक्षा चितई वडभाग ॥३३
चन्द्रकीर्ति मुनिके ढिग जाय, जिनदीक्षा लीनी शिर नाय ।
अभ्यन्तर बाहिर चौवीस, ग्रन्थ तजे मुनिकू नमि शीश ॥३४
पंच महाव्रत गुप्ति जु तीन, पंच समिति धारी परवीन ।
सुकल ध्यान करि कर्म विनाशि, केवल पायौ अति सुखराशि ॥३५
वहुत भव्य उपदेशे जिनें, आयुकर्म पूरण करि तिनें ।
शेष अघातियको करि नाश, पायौ मोक्षपुरी सुखवास ॥३६
निशि भोजनतैं जे दुख लये, अर त्यागेतें सुख अनुभये ।
तिनके फलको वर्णन करी, कथा अणथमी पूरण करी ॥३७

छप्पय

इक चंडाली सुरझि व्रत सेठनिपै लीयौ ।
मन बच तन दृढ़ होय त्यागि निशिभोजन कीयौ ।।
व्रत्ततनो परभाव त्याग तन अतिज जाया ।
वाही सेठनिके जु उदर उपनी वर काया ।
गहि जैनधर्म धरि शीलव्रत, पापकर्म सब ही दहा ।
लहि सुरगलोक नरलोक सुख, लोकसिखरकौ पथ गहा ।।३८
एक हुतौ जु शृगाल कर सुदरशन मुनिराया ।
त्यागौ निशि को खान पान जिनधर्म सुहाया ।
मरि करि हूवौ सेठ नाम प्रीतकर जाकौ ।
अदभुत रूपनिधान धर्ममै अति चित ताकौ ।
भयौ मुनीश्वर सब त्यागिकै, केवल लहि शिवपुर गयौ ।
नहिं रात्रिभुक्ति परित्याग सम, और दूसरौ व्रत लयौ ।।३९

सोरठा

निशि भोजन करि जीव, हिसक ह्वै चहुगति भ्रमै ।
जे त्यागैं जु सदीव, निशिभोजन ते शिव लहै ।।४०
अर्ध उमरि उपवास, माही बीतै तिन तनी ।
जे जन है जिनदास, निशिभोजन त्यागै सुधी ।।४१
दिवस नारिकौ त्याग, निशिको भोजन त्यागई ।
निशिदिन जिनमत्त राग, सदा व्रतमूरति बुधा ।।४२
एक मासमै भ्रात, पाख उपास फलै फला ।
जे निशि माहिं न खात, चारि अहारा धीधना ।।४३
निशि भोजन सम दोष, भयौ न ह्वै है होयगौ ।
महा पापकौ कोष, मद्य मांस आहार सम ।।४४
त्यागै निशिकौ खान, तिन्हे हमारी वदना ।
देही अभय प्रदान, जीवगणनिको ते नरा ।।४५
कौलग कहै सुबीर, निशि भोजनके अवगुणा ।
जाने श्रीमहाबीर, केवलज्ञान महत सब ।।४६

रत्नत्रय वर्णन

सोरठा

अब सुनि दरसन ज्ञान, चरण मोक्षके मूल है ।
रत्नत्रय निज ध्यान, तिन विन मोक्ष न ह्वै भया ।।४७
सम्यकदर्शन सो हि, आतम रुचि श्रद्धा महा ।
करनौ निश्चय जो हि, अपने शुद्ध स्वभावकौं ।।४८

निजको जानपनो हि, सम्यकज्ञान कहै जिना।
थिरता भाव घनो हि, सो सम्यकचारित्र है ॥४९

चौपाई

प्रथमहि अखिल जतन करि भाई, सम्यकदरशन चित्त धराई।
ताके होत सहज ही होई, सम्यकज्ञान चरन गुन दोई ॥५०
जीवाजीवादिक नव अर्था, तिनकी श्रद्धा बिन सब व्यर्था।
है श्रद्धान-रहित विपरीता, आतमरूप अनूप अजीता ॥५१
सकल वस्तु है उभय स्वरूपा, अस्ति-नास्तिरूपी जु निरूपा।
अनेकांतमय नित्य अनित्या, भगवतने भाषे सहु सत्या ॥५२
तामै संशय नाहिं जु करनौ, सम्यक दरसन ही दिढ धरनौ।
या भवमै विभवादि न चाहै, परभव भोगनिकूं न उमाहै ॥५३
चक्री केशवादि जे पदई, इन्द्रादिक शुभ पदई गिनई।
कबहू वांछै कछु हि न भोगा, ते कहिये भगवतके लोगा ॥५४
जो एकांतवाद करि दूषित, परमत गुण करि नाहिं जु भूषित।
ताहि न चाहै मन वच तन करि, तै दरसन धारी उरमै धरि ॥५५
क्षुधा तृषा अर उष्ण जु सीता, इनहिं आदि सुखभाव वितीता।
दुखकारणमै नाहिं गिलानी, सो सम्यकदरशन गुणखानी ॥५६
लोकविषै नहिं मूढतभावा, श्रुति अनुसार लखै निरदावा।
जैनशास्त्र बिनु और जु ग्रंथा, शास्त्राभास गिनैं अघपंथा ॥५७
जैनसमय विनु और जु समया, समयाभास गिनैं सहु अदया।
विनु जिनदेव और है जेते, लखै जु देवाभास सु ते ते ॥५८
श्रद्धानी सौ तत्त्वविज्ञानी, धरै सुदर्शव आतमध्यानी।
करै धर्मकी जो बढवारी, सदा सु मार्दव आर्जवधारी ॥५९
पर औगुन ढाकै वुधिवत्ता, सो सम्यकदरशनधर संता।
काम क्रोध मद आदि विकारा, तिनकरि भये विकलमति धारा ॥६०
न्यायमार्गते विचल्यौ चाहै, मिथ्यामारगकौ जु उमाहै।
तिनको ज्ञानी थिर चित कारै, युकथकी भ्रमभाव निवारै ॥ १
आप सुथिर औरे थिर कारै, सो सम्यकदरशन गुण धारै।
दयाधर्ममै जो हि निरन्तर, करै भावना उर अभ्यतर ॥६२
शिवसुख लक्ष्मी कारण धर्मो, जिनभाषित भवनाशित पर्मो।
तासौ प्रीति धरै अधिकेरी, अर जिनधर्मिनसू वहुतेरी ॥६३
प्रीति करै सो दर्शनधारी, पावै लोकशिखर अविकारी।
यथा तुरतके बछरा ऊपरि, गौ हित राखै मन वच तन करि ॥६४
तथा धर्म धर्मिनिसौ प्रीती, जाके ताने शठता जीती।
आतम निर्मल करणो भाई, अतिशयरूप महा सुखदाई ॥६५

दर्शन ज्ञान चरण सेवन करि, केवल उतपति करनौ भ्रम हरि।
सो सम्यक परभावनि होई, पर-भावनिकौ लेश न कोई ।।६६
दान तपो जिनपूजा करिकै, विद्या अतिशय आदि जु धरिकै ।
जैनधर्मकी महिमा कारै, सो सम्यकदरशन गुण धारै ।।६७
ए दरशनके अष्ट जु अंगा, जे धारै उर माहि अभगा ।
ते सम्यक्ती कहिये वीरा, जिन आज्ञा पालक ते धीरा ।।६८
सेवनीय है सम्यकज्ञानी, माया मिथ्या ममता भानी ।
सदा आत्मरस पीवै धन्या, ते ज्ञानी कहिये नहि अन्या ।।६९
यद्यपि दरशन ज्ञान न भिन्ना, एकरूप है सदा अभिन्ना ।
सहभावी ए दोऊ भाई, तौ पनि किंचित भेद धराई ।।७०
भिन्न, भिन्न आराधन तिनका, ज्ञानवंतके होई जिनका ।
एक चेतनाके द्वै भावा, दरसन ज्ञान महा सुप्रभावा ।।७१
दरसन है सामान्य स्वरूपा, ज्ञान विशेष स्वरूप निरूपा ।
दरसन कारन ज्ञान सु कार्या, ए दोऊ न लहै हि अनार्या ।।७२
निराकार दर्शन उपयोगा, ज्ञान धरै साकार नियोगा ।
कोऊ प्रश्न करै इह भाई, एककाल उत्पत्ति बताई ।।७३
दरसन ज्ञान दुहुनिको तातै, कारन कारिज होइ न तातैं ।
ताकौ समाधान गुरु भाषै, जे धारै ते निजरस चाखै ।।७४
जैसे दीपक अर परकासा, एककाल दुहुँ कौ प्रतिभासा ।
पर दीपक है कारनरूपा, कारिजरूप प्रकाशनरूपा ।।७५
तैसै दरशन ज्ञान अनूपा, एककाल उपजै निजरूपा ।
दरशन कारनरूपी कहिये, कारिजरूपी ज्ञान सु गहिये ।।७६
विद्यमान है तत्त्व सबै ही, अनेकांततारूप फबै ही ।
तिनकौ जानपनों जो भाई, सशय विभ्रम मोह नशाई ।।७७
जो विपरीत रहित निजरूपा, आतमभाव अनूप निरूपा ।
सो है सम्यकज्ञान महंता, निजको जानपनो विलसता ।।७८
अष्ट अगकरि शोभित सोई, सम्यकज्ञान सिद्ध कर होई ।
ते धारौ भवि आठो शुद्धा, जिनवाणी अनुसार प्रबुद्धा ।।७९
शब्द-शुद्धता पहलो अंगा, शुद्ध पाठ पढई जु अभगा ।
अर्थ-शुद्धता अग द्वितीया, करै शुद्धअर्थ जु विधि लीया ।।८०
शब्द अर्थ दुहुकी निर्मलता, मन वच तन काया निहचलता ।
सो है तीजो अग विशुद्धा, सम्यक्ता धारै प्रतिबुद्धा ।।८१
कालाध्यायन चतुर्थम अगा, ताकौ भेद सुनौ अतिरगा ।
जा विरिया जो पाठ उचित्ता, सोहा पाठ करै जु पवित्ता ।।८२
विनय अंग है पंचम भाई, विनयरूप रहिवौ सुखदाई ।
सो उपधान है छट्टम अगा, योग्य क्रिया करिवौ जु अभंगा ।।८३

जिनभाषितको अंगी करनौ, सो उपधान अंगकौ धरनौ।
सप्तम है बहुमान विख्याता, ताकौ अर्थ सुनू तजि वाता ॥८४
बहुसतकार सु आदर करिकै, जिन आज्ञा पालै उर धरिकै।
अष्टम अंग अनिन्हव धारै, ते अष्टम भूमी जु निहारै ॥८५
जा गुरुके ढिग तत्त्वविज्ञाना, पायौ अदभुत रूप निधाना।
ता गुरुकौ नहि नाम छिपावै, वार वार महागुण गावै ॥८६
को कहिये जु अनिन्हव अंगा, ज्ञानस्वरूप अनूप अभगा।
सम्यक ज्ञान तनूं आराधन, ज्ञानिनिको करनूं शिव-साधन ॥८७
दरशन मोह रहित जो ज्ञानी, तत्त्वभावना दृढ ठहरानी।
जे हि जथारथ जानैं भावा, ते चारित्र धरै निरदावा ॥८८
बिना ज्ञान नहि चारित सोहै, बिना ज्ञान मनमथ मन मोहै।
तातै ज्ञान पीछे जु चरित्रा, भाष्यौ जिनवर परम पवित्रा ॥८९
सर्व पाप-मारग परिहारा, सकल कषाय-रहित अविकारा।
निर्मल उदासीनता रूपा, आतमभाव सु चरन अनूपा ॥९०
सो चारित्र दोय विधि भाई, मुनि-श्रावक व्रत प्रगट कराई।
मुनिको चारित सर्व जु त्यागा, पापरीतिके पथ न लागा ॥९१
ताके तेरह भेद बखानैं, जिनवानी अनुसार प्रवानैं।
पंच महाव्रत पंच जु समिती, तीन गुपतिके धारक सुजती ॥९२
चउविधि जंगम पंचम थावर, निश्चयनय करि सब हि बराबर।
तिन सर्वनिकी रक्षा करिवौ, सो पहलो सु महाव्रत धरिवौ ॥९३
संतत सत्य वचनको कहिवौ, अथवा मौनव्रतकों गहिवौ।
मृषावाद वौलै नहि जोई, दूजौ महाव्रत है साई ॥९४
कौड़ी आदि रतन परजंता, घटि अघटित तसु भेद अनन्ता।
दत्त अदत्त न परसै जोई, तीजो महाव्रत है सोई ॥९५
पशु पंछी नर दानव देवा, भववासा रमनी-रत मेवा।
तजै निरन्तर मदन विकारा, सो चौथो जु महाव्रत भारा ॥९६
द्विविधि परिग्रह त्यागै भाई, अन्तर बाहिर संग न काई।
नगन दिगम्बर मुद्रा धारा, सो हि महाव्रत पंचम सारा ॥९७
ईर्यासिमिति ऋषी जो चालै, भाषासमिति कुभाषा टालै।
भखै अहार अदोष मुनीशा, ताहि एषणा कहै अधीशा ॥९८
है आदान निक्षेपा सोई, लेहि निरखि शास्त्रादिक जोई।
अर परिठवणा पंचम समिति, निरखि शास्त्रादिक जोई।
अर परिठवणा पंचम समिती, निरखि भूमि डारै मल सुजती ॥९९
मनोगुप्ति कहिये मन-रोधा, वचन गुप्ति जो वचन निरोधा।
कायगुप्ति काया वस करिवौ, ए तेरह विधि चारित धरिवौ ॥२१००

एकदेश गृहपति चारित्रा, द्वादश व्रतरूपी हि पवित्रा।
जो पहली भाख्यौ अब तातैं, कह्यौ नहीं श्रावकव्रत तातैं ॥१
इह रतनत्रय मुनिके पूरा, होवैं अष्टकर्म दल चूरा।
श्रावक के नहिं पूरण होई, धरै न्यूनतारूप जु सोई ॥२
इह रतनत्रय करि शिव लेवै, चहुँ गतिको भवि पानी देवे।
या करि सीझे अरु सीझेंगे, यह लहि परमे नहिं रीझेगे ॥३
या करि इन्द्रादिक पद होवै, सो दूषण शुभको बुध जोवै।
इह तौ केवल मुक्ति प्रदाई, बधनरूप होय नहिं पाई ॥४
बध-विदारन मुक्ति-सुकारण, इह रतनत्रय जगत उधारण।
रत्नत्रय सम और न दूजो, इह रतनत्रय त्रिभुवन पूजो ॥५
रतनत्रय विनु मोक्ष न होई, कोटि उपाव करै जो कोई।
नमस्कार या रतनत्रयको, जो दै परम भाव अक्षयको ॥६
रतनत्रय की महिमा पूरन, जानि सकै वसु कर्म-विचूरन।
मुनिवर हू पूरण नहिं जानै, जिन-आज्ञा अनुसार प्रवानैं ॥७
सहस जोभ करि वरणन करई, तिनहूँ पै नहिं जाय वरणई।
हमसे अलपमती कहो कैसे, भाषैं बुधजन धारहु ऐसे ॥८
त्रेपन किरिया कौ यह मूला. रतनत्रय चेतन अनुकूला।
जिन धार्यो तिन आपौ तार्यो, याकरि बहुतनि कारिज सार्यो ॥९
धन्य घरी वह ह्वैगी भाई, रतनत्रयसो जीव मिलाई।
पहुचेगो शिवपुर अविनाशी, होवेगो अति आनन्द राशी ॥१०
सब ग्रन्थनि मे त्रेपन किरिया, इन करि, इन बिन भववन फिरिया।
जो ए त्रेपन किरिया धारै, सो भवि अपना कारिज सारै ॥११
सुरग मुकति दाता ए किरिया, जिनवानी सुनि जिनि ए धरिया।
तिन पाई निज परणति शुद्धा, ज्ञानस्वरूपा अति प्रतिबुद्धा ॥१२
है अनादि सिद्धा ए सर्वा, ए किरिया धरिवौ तजि गर्वा।
ठौर ठौर इनको जस भाई, ए किरिया गावैं जिनराई ॥१३
गणधर गावैं मुनिवर गावै, देव भाषमे शबद सुनावै।
पंचम काल माहिं सुर-भाषा, विरला समझै जिनमत साखा ॥१४
ताते यह नर-भाषा कीनी, सुर-भाषा अनुसारे लीनी।
जो नर-नारि पढै मन लाई, सो सुख पावै अति अधिकाई ॥१५
सवत सत्रासै पच्याण्णव, भादव सुदि बारस तिथि जाणव।
मगलवार उदयपुर माहैं, पूरन कीनी संशय नाहैं ॥१६
आनन्द-सुत जयसुतकौ मत्री, जयकौ अनुचर जाहि कहै।
सौ दौलत जिन-दासनि दासा, जिनमारग की शरण गहै ॥१७

इति।

■

परिशिष्ट

क्रियाकोषोंमें उद्धृत गाथा-श्लोक-सूची

श्री किसनसिंह-कृत क्रियाकोषमें

गुण-वय-तव-सम-पडिमा दाणं जलगालण च अणत्थमियं ।
दंसण-णाण-चरित्तं किरिया तेवण्ण सावया भणिया ॥ (पृष्ठ ११५)

हेमंते तीस दिणा, गिम्हे पणरस दिणाणि पक्कण्णं ।
वासासु य सत्त दिणा, इय भणियं सूय-जंगेहिं ॥ (पृष्ठ ११६)

इक्खु-दही-संजुत्त, भवति सम्मुच्छिमा जीवा ।
अंतोमुहुत्त-मज्झे, जम्हा भणति जिणणाहा ॥ (पृष्ठ ११८)

चउ एइदी विण छह-अठ्ठह तिण्णिणि भणति दह ।
चौरिंदी जीवडा वार बारह पच भणंति ॥ (पृष्ठ ११९)

अन्न जल किंचि ठिई, पच्चक्खाण न भुजए भिक्खू ।
घड़ी दोय अंतरीया, णिगोइया हुति वहु जीवा ॥ (पृष्ठ १४२)

संवत्सरेण-मेकत्वं चैवर्तकस्य हिंसक: ।
एकादश दवादाहे अपूतजल-संग्रही ॥ (पृष्ठ १६२)

लूतास्यतन्तु-गलिते ये बिन्दौ सन्ति जन्तव: ।
सूक्ष्मा भ्रमरमानापि, नैव मान्ति त्रिविष्टपे ॥ (पृष्ठ १६२)

षट्त्रिंशदङ्गुल वस्त्र चतुर्विंशतिविस्तृतम् ।
तद्वस्त्रं द्विगुणीकृत्य तोयं तेन तु गालयेत् ॥ (पृष्ठ १६२)

तस्मिन् मध्यस्थिताञ्जीवान् जलमध्ये तु स्थाप्यते ।
एव कृत्वा पिबेत्तोयं, स याति परमा गतिम् ॥ (पृष्ठ १६२)

राहु-अरिट्ठविमाणं किंचूणा किं पि जोयण अधोगता ।
छम्मासे पव्वन्ते चन्दं रविं छादयदि कमेण ॥ (पृष्ठ २०१)

स्नानं पूर्वामुखी भूप, प्रतीच्यां दन्त-धावनम् ।
उदीच्यां श्वेतवस्त्राणि, पूजा पूर्वोत्तरामुखी ॥ (पृष्ठ २०३)

अरहंता छैयाला सिद्धा अट्ठेव सूरि छत्तीसा ।
उवझाया पणवीसा साहूणं हुति अडवीसा ॥ (पृष्ठ २२३)

श्री दौलतराम-कृत क्रियाकोष में

गुण-वय-तव-सम-पडिमा, दाण जलगालण च अणत्थमिय ।
दसण णाण चरित्त किरिया तेवण्ण सावया भणिया ॥ (पृष्ठ २२४)

मय-मूढमणायदणं सकाइ वसण्ण भयमईयार ।
एहिं चउदालेदे ण सति ते हुति सद्दिट्ठी ॥ (पृष्ठ २६२)

आद्यं शरीर-सस्कारो द्वितीय वृष्यसेवनम् ।
तौर्यत्रिक तृतीय स्यात्ससर्गस्तुर्यं भण्यते ॥ (पृष्ठ ३००)

योषिद्विषसकल्प पञ्चम परिकीर्तितम् ।
तदङ्गवीक्षणं षष्ठ सत्कारः सप्तमो मतः ॥ (पृष्ठ ३००)

पूर्वानुभूत-सभोग' स्मरणं स्यात्तदष्टमम् ।
नवमे भावनी चिन्ता दशमे वस्तिमोक्षणम् ॥ (पृष्ठ ३००)

भोजने षट्रसे पाने, कुकुमादि-विलेपने ।
पुष्पताम्बूल-गीतेषु, नृत्यादौ ब्रह्मचर्यके ॥ (पृष्ठ ३३३)

स्नान-भूषण-वस्त्रादौ, वाहने शयनाशने ।
सचित्त वस्तु-सख्यादौ, प्रमाण भज प्रत्यहम् ॥ (पृष्ठ ३३३)

पं० दौलतराम जीने भी अपने क्रिया-कोषका आधार संस्कृत क्रिया-कोषको ही ` है । जैसा कि उनके निम्न पद्यसे स्पष्ट है—

'तातैं' नर-भाषा यह कीनी, सुर-भाषा अनुसारै लीनी ॥
पंचम काल माहि सुर-भाषा, विरला समझै जिन-मत साखा ॥

इस पद्यमें 'नर-भाषा' से अभिप्राय वर्तमानमें बोली जानेवाली हिन्दी भाषासे है औ सुर-भाषासे अभिप्राय देवभाषा सस्कृतसे है ।

इस उल्लेखसे यह सिद्ध है कि उनके सम्मुख कोई संस्कृत क्रिया-कोष विद्यमान था ।

पदम कविने अपने श्रावकाचार की प्रशस्तिमें जिन आचार्यो, भट्टारकों एवं ब्रह ।रियों उल्लेख किया है। उनके नाम इस प्रकार है—

आचार्य—१. आ० कुन्दकुन्द, २. समन्तभद्र, ३. जिनसेन, ४. गुणभद्र, ५. अकलं ६. अमृतचन्द्र, ७. प्रभाचन्द्र, ८. वसुनन्दि।

पंडित—आशाधर।

भट्टारक—१. पद्मनन्दी, २. सकलकीर्ति, ३. भुवनकीर्ति, ४. ज्ञानभूषण, ५. विज क। ६. शुभचन्द्र, ७. कुमुदचन्द्र।

गुरुजन—आम्नाय गुरु—शुभचन्द्र।
आगम गुरु—विनयचन्द्र।
अध्यात्मगुरु—कर्मश्री ब्रह्म।
शिक्षागुरु—हीरब्रह्मेन्द्र।

श्रावकाचारके आधारभूत ग्रन्थोंके नाम—

१. स्वामी समन्तभद्रका रत्नकरण्ड श्रावकाचार।
२ आचार्य वसुनन्दीका श्रावकाचार।
३. पं० आशाधरका सागारधर्मामृत।
४. श्री सकलकीर्त्तिका प्रश्नोत्तर श्रावकाचार।

पदम कविने त्रेपन क्रियाओंके वर्णनका आधार किसी ग्रन्थको न बता करके श्रेणिकके प्रश्न पर गौतमके द्वारा श्रावकके सम्पूर्ण आचारका वर्णन कराया है। जैसा कि इसकी मंगला-चरणके पश्चात् दी गई उत्थानिकासे प्रकट है।